और न ठीक व्यवस्था रखता है। अव्लास्की का घर आना-जाना प्राय: बन्द है। आता भी है तो कोई उससे बात करनेवाला नहीं। उसकी पत्नी अपने कमरे से निकल कर उसके पास आती तक नहीं।

आज कई दिन के बाद अव्लास्की ने घर पर रात बिताई। सवेरे नींद खुली तो उसे बड़ी सुस्ती मालूम हुई। निदान तकिये में मुँह गाड़कर फिर पड़ रहा, पर इस अवस्था में वह अधिक देर तक नहीं रह सका। थोड़ी देर के बाद ही वह चौंक कर उठ पड़ा और आँखें मल-मल कर अपने चारो ओर देखने लगा। उसकी आकृति से यही प्रतीत होता था, मानों अभी-अभी वह कोई अद्भुत दृश्य देख रहा था, जो एकाएक उसकी आंखों से ओट हो गया।

थोड़ी देर तक उसी तरह विस्मय के साथ इधर-उधर निगाह दौड़ाने के बाद वह आप ही आप बोल उठा—"क्या ही मनोरम दृश्य था। अमेरिका की मनोहारिणी भूमि के एक सुसज्जित होटल में अलविन ने भोज दिया है। जिस टेबुल पर हम लोग भोजन कर रहे हैं, वह तिलस्मी है। उसमें से किसी सुन्दर रमणी के गले का सुमधुर सुर सुनाई देता है। इतना ही क्यों, गानेवाली सुन्दरी की पैजनियों की झमझमाहट और ही आनन्द दे रही थी।"

अव्लास्की का चेहरा खिल उठा। उसके ओठों पर मन्द मुस्कान पतली रेखा दौड़ गई। वह फिर कहने लगा—"कितना आनन्दमय र था। क्या उसका वर्णन यह तुच्छ जिह्वा कर सकती है ?

ै—'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' आँखों ही को

े ही उसका वर्णन कर सकती हैं।"

द की तरंगों में न जाने कितनी

सोते सोता रहता; पर उसकी मोह-निद्रा एकाएक टूट पड़ी, उसका सारा मजा किरकिरा हो गया। सहसा उसे अपनी पत्नी का ख्याल आ गया। इस स्मृति के साथ ही साथ गृह-कलह के सारे दृश्य एक-एक कर के उसकी आँखों के सामने उपस्थित होने लगे। बेचारा उदास होकर बैठ गया। उसके दुःख की सीमा न रही, जब उसे यह बात ध्यान में आई कि इन सब उपाधियों का मूल कारण मैं ही हूँ।

उसके मुँह से एकाएक निकल पड़ा— "मैं जानता हूँ कि वह मुझे कभी क्षमा नहीं करेगी और उसका रोष स्वाभाविक है। अपनी कमज़ोरी के कारण मैंने यह बला पाली है; पर अब तो लाचार हूँ।" इस दुःखद अवस्था का स्मरण कर उसका कलेजा फटने लगा और आह की सदायें उसके मुँह से निकलने लगीं।

अब्लास्की को उस रात की घटना याद आगई, जब वह थियेटर में गया था और अपनी प्रियतमा के लिये बढ़िया नाशपाती लाया था। बिस्तरे से उठकर हाथ में नाशपाती लिये वह उसे ढूँढ़ता-ढूँढ़ता शयनागार में पहुंचा, जहां वह हाथ में एक पत्र लिये मनमारे बैठी थी। उस की दशा देखकर ही अब्लास्की ताड़ गया कि कोई महान् संकट उपस्थित होनेवाला है। पतिदेव को देखते ही उसने उसके सामने पत्र फेंक दिया और पूछा—"कहिये, यह क्या माजरा है?"

पत्र को देखते ही अब्लास्की पानी-पानी होगया। उसे वहीं काठ मार गया, काटो तो उसके बदनमें खून नहीं। उसे अपने आचरण पर उतना खेद नहीं था, जितना कि उस पत्र के पत्नी के हाथ में पड़जाने से था। इसी पापी पत्र ने उसके सिरपर यह सब विपत्ति ढाह दी थी।

अब्लास्की की उस अवस्था का अनुमान वे ही लोग कर सक

उसने एक ठंढी सांस भरी और कहा—"देखा जायगा"। इतना कहकर वह उठा और खिड़की के पास गया और उसने घंटी बजाई। आवाज के साथ ही चपरासी कुछ कागज और एक तार हाथ में लिये उपस्थित हुआ।

अब्लास्की ने कागज टेबुल पर रख दिया और तार फाड़कर पढ़ा, बोला—"मैटपे! (यही चपरासी का नाम था) अन्ना का तार है, कल वह यहां पहुंच जायगी।"

अन्ना आर्कडायना अब्लास्की की बहन का नाम था।

मैटपे—"बड़ी खुशी की बात है। अकेली आरही हैं कि अपने पति के साथ?"

मैटपे के चेहरे से जो खुशी टपकती थी, उससे अब्लास्की भली भांति समझ गया कि अन्ना के आगमन में क्या विशेषता है। उसे यह साधारण नौकर भी समझता है।

अब्लास्की—अकेली।

मैटपे—क्या ऊपर का कमरा साफ करना होगा?

अब्लास्की—डाली से जाकर यह समाचार कहो, वही ठीक करेगी।

मैटपे ने विस्मय तथा आश्चर्य के साथ दबी जबान से कहा—'डाली!'

अब्लास्की—हां, यह तार उसे दे दो, वही सब बन्दोबस्त करेगी।

मैटपे ने तार हाथ में ले लिया और मनही मन कहा—"यह उसकी परीक्षा करना चाहते हैं या अब भी तुले हुए हैं।" ऊपर से कहा,—"अच्छी बात ..." इतना कहकर वह चला गया और थोड़ी देर में लौट आया, बोला— "... ने कहा है कि मैं बाहर जा रही हूँ। जैसा उन्हें भावे, करें। मैं ...ीं जानती।" इतना कह कर उसने तार अब्लास्की के हाथ में ...या और उसका मुंह देखने लगा।

अब्लास्की का चेहरा गम्भीर हो गया। कुछ क्षण तक वह चुपचाप सोचता रहा। एकाएक उसके मुंह से एक लम्बी आह निकल पड़ी।

मैटपे को आन्तरिक वेदना हुई। उसने ढाढ़स बँधाते हुए कहा—"आप अभी से अधीर न हो जायँ। ईश्वर की कृपा से सब ठीक हो जायगा।"

अब्लास्की—ठीक हो जायगा!

मैटपे—मेरा तो यही विश्वास है।

अब्लास्की—"तुम्हें ऐसा विश्वास है?" अब्लास्की इतना ही कह पाया था कि किसी स्त्री के पैर की आवाज उसे सुनाई दी। उसने पूछा—कौन है?

"मैं हूँ"—कहती हुई मैट्रोना ने कमरे में प्रवेश किया।

मैट्रोना दूसरी दाई का नाम था।

अब्लास्की दरवाजे तक उसके पास गया और उसने पूछा—"अब क्या होना है?"

अब्लास्की भलीभाँति समझता था कि मैंने अपनी पत्नी के साथ ज्यादती की है और सोलहो-आना मेरा दोष है। फिर भी घर के सभी लोग इसके पक्ष में थे। यहाँ तक कि मैट्रोना (जो डाली की प्रधान सहायिका थी) भी अब्लास्की के ही पक्ष में थी।

मैट्रोना—मेरी तो बार बार यही सलाह है कि आप अपना दोष स्वीकार करलें और उनसे क्षमा मांगले। मुझे पूरी आशा है कि वे आपको क्षमा कर देंगी। उनकी अवस्था बड़ी शोचनीय है। उन्हें देखकर तरस आती है। घर में भी सभी ओर अस्तव्यस्तता छाई है। बच्चों की हालत देखिये, कितनी खराब हो रही है। लड़कों पर दया करके आप क्षमा माँगलें। मेरी समझ में आपकी करनी का यह साधारण फल है।

अब्लास्की—पर वह तो मेरा मुंह नहीं देखना चाहती।

मैट्रोना—न सही। आप क्यों चूकते हैं? आपको अपना कर्तव्य पूरा करना चाहिये। बाकी ईश्वर पर छोड़ दीजिये।

अब्लास्की—अच्छी बात है। जैसा तुम कहती हो, मैं करूँगा।

इतना कहकर अब्लास्की कपड़ा पहनने लग गया और मैट्रोना वहाँ से चली गई।

कपड़ा पहन कर अब्लास्की शीशे के सामने जाकर खड़ा हो गया। उसका यौवनपूर्ण चेहरा दमक रहा था। उसके चेहरे पर प्रसन्नता छागई। अब्लास्की जलपान के लिये बैठ गया।

टेबुल पर दफ्तर के कागज-पत्र और चिट्ठियां रक्खी थीं। अब्लास्की चाय पीने लगा और चिट्ठियों को पढ़ने लगा। पहला पत्र पढ़कर उसने रख दिया। उसका चेहरा फिर उदास होगया। यह पत्र एक सौदागर ने लिखा था। उसमें एक जंगल के खरीदने की बातचीत थी, जिसे बेचना अत्यन्त आवश्यक था। अब्लास्की ने देखा कि केवल इसके लिये उसे अपनी पत्नी के सामने सिर झुकाना पड़ेगा। क्योंकि बिना उसकी मर्जी के यह जंगल बिक नहीं सकता था। यह उसकी ही सम्पत्ति थी। हा! नीच स्वार्थ!

उस पत्र को उसने एक बार फिर पढ़ा और उसी तरह टेबुलपर रख दिया। इसके बाद उसने दफ्तर के कागजों को उठाया और उलटना आरंभ किया। इस तरह आवश्यक पत्रों को देखकर उनसे नोट लेकर उसने अखबार उठाया।

ा उदार मत का था। गरम दल में उसका विश्वास नहीं
भी अधिक मतवालों का वह पक्षपाती था। उसका कोई स्थिर
मत नहीं था। प्रचलित प्रथा का वह कट्टर अनुयायी था।

उदार मत या नरम दल को वह पसन्द करता है, इसका कारण यह नहीं था कि वह स्वयं उदार या नरम है, बल्कि समाज में यही मत प्रचलित था और इसी के अनुसार समाज के अधिकांश लोग चल रहे थे। यही कारण था कि उदार दल से उसकी सहानुभूति थी। उदाहरण के लिये उदार दल का कहना था कि रूस की अवस्था एकदम खराब है। अब्लान्स्की भी इसका पोषक था। क्योंकि वह ऋणी था और स्वयं पैसे की उसे सदा चिन्ता रहा करती थी। उदार दलवालों का मत था कि विवाह की रस्में पुरानी होगई हैं और बिना सुधार के काम नहीं चल सकता। अब्लान्स्की का भी यही मत था। वह प्रत्यक्ष देख रहा था कि उसका गार्हस्थ्य जीवन निरीह और शुष्क था और उसकी दैन्यावस्था दिन-दिन बढ़ती जा रही थी। उदार दल का कहना था कि धर्म एक प्रकार का दांव-पेंच है और असभ्य जातियों को बांधकर रखने का फन्दा है। अब्लान्स्की का धार्मिक विश्वास भी इसी तरह ढीला था। प्रार्थना करने के लिये खड़ा होना भी उसके लिये भार था। दिनभर चलने से उसे जितनी थकावट नहीं मालूम होती थी, उतनी थकावट केवल प्रार्थना करने में उसे मालूम होता था। कभी-कभी वह अपने मन में सोचता, इस संसार में इतना सुख है, इतना आनन्द है, इस सुख और आनन्द का कहीं वारापार नहीं है, तब क्यों किसी अन्य संसार के सुख की कल्पना में लच्छेदार बातें कही जाती हैं। सीधे-सादे आदमियों को पाकर वह उनकी मजाक उड़ाता और कहता कि यदि आपको मनुष्य होने का अभिमान है तो आपको अपने पूर्वजों * को

---

* डार्विन साहब ने आविष्कार करके बतलाया है कि मनुष्यकी उत्पत्ति बन्दर से है अर्थात् ये ही मानव जाति के पूर्वज हैं।

अनुवादक—

नहीं भूल जाना चाहिये। यही कारण था कि वह उदार मत वालों का ही समाचार पत्र पढ़ा करता था और इस पत्रसे वह उतना ही स्नेह रखता था, जितना स्नेह उसे अपने सिगार से था।

इस तरह अखबार के पन्ने उलट वह लेखों को पढ़ने में तल्लीन हो गया और सम्पादकीय लेखों का आनन्द लूटने लगा; पर उसकी यह अवस्था अधिक काल तक न रही। किसी वस्तु की तीखी आवाज ने उसकी शान्ति भंग करदी। उसने चौंककर देखा कि उसका छोटा लड़का और बड़ी लड़की दोनों मिलकर कुछ लेजा रही थी और रास्ते में उसे गिरा दिया।

उसके गिरते ही लड़की ने कहा—"मैंने पहले ही कहा था कि छतपर किसी को मत बैठने दो। आखिर एक गिर ही पड़ा। उसे उठा लो।"

अब्लास्की ने उनका खेल देखा, उन्हें अपने पास बुलाया। उसकी आवाज सुनते ही दोनों उस सन्दूक को फेंककर (जिसकी उन्होंने गाड़ी बनाई थी) अब्लास्की के पास पहुंचे।

लड़की का नाम टेनिया था। अब्लास्की उसे सबसे अधिक प्यार करता था। इससे वह अपने पिता की बड़ी दुलारी और ढीठ थी। वह दौड़ी हुई अब्लास्की के पास चली गई और उससे लिपट गई। उसे प्यार किया और भाग जाना चाहती थी। अब्लास्की ने उसे पकड़ कर अपने पास बिठाया।

इतने में उसका छोटा पुत्र भी आ पहुंचा उसे अपनी गोद में लेकर उसके धीरे-धीरे हाथ फेरते हुए अब्लास्की ने उससे पूछा—"मां की [illegible] है?"

बच्चे का नाम ग्रीशा था। अब्लास्की का टेनिया पर विशेष

स्नेह था। इस कारण अन्य लड़कों से वह कम स्नेह रखता था, पर वह सबों को समान दृष्टि से देखना चाहता था। अब्लास्की ने अपने हृदय के भाव छिपाये और कभी हंसी हंसा, पर ग्रीशा समझता था। उसका चेहरा उदासीन हो गया, उसने पिताकी हंसीका उत्तर हंसी से नहीं दिया।

टेनिया—मां, ऊपर कमरे में हैं।

टेनिया का उत्तर सुनकर अब्लास्की ने गहरी सांस भरी और मन में कहा—मालूम होता है आज रात भी उसे नींद नसीब नहीं हुई। पूछा—"तबीयत तो अच्छी है?"

टेनिया जानती थी कि माता-पिता में कलह हुआ है। इस कारण माँ का चित्त प्रसन्न नहीं था। उसके पिता से भी यह बात छिपी नहीं रह सकती थी। केवल बात बनाने के लिये ही पिता ने उससे यह प्रश्न किया था। इसलिये उसने इस प्रश्न का कुछ भी उत्तर नहीं दिया। केवल पिता के मुँह की ओर ताकती रही। अब्लास्की समझ गया कि इस तरह ताकने का क्या अभिप्राय है। शर्म से उसकी आंखें गड़ गईं।

टेनिया ने कहा—मैं नहीं जानती वे कैसी हैं। आज उन्होंने हमें सबक नहीं दिया। आज हमलोगों को घूमने की छुट्टी दी है।

अब्लास्की—अच्छा है, जाओ सबलोग घूम आओ। (रुककर) पर जरा ठहरो। इतना कहकर उसने मिठाई की सन्दूक उठाई और उसमें से दो मिठाई निकालकर उसे दी।

टेनिया—ग्रीशा के लिये भी दे दीजिये।

अब्लास्की—ग्रीशाके लिये भी लो। इतना कहकर उसने उसे दो मिठाई और दी, उसका मुँह चूम लिया और छोड़दिया। टेनिया चली गई।

इतने में मैटपे ने आकर कहा—"गाड़ी तैयार है। एक फ़रियादी दरवाजे पर खड़ा है।"

अब्लास्की—क्या वह देर से है ?

मैटपे—कोई आध घंटे से ।

अब्लास्की—पहले ही क्यों नहीं लाया । मैंने तुझसे बार २ कहा कि जो कोई फ़रियादी आवे, उसे उसी समय ले आया कर; पर तू मेरी बातों पर ध्यान नहीं देता ।

मैटपे—आप चाय पी रहे थे ।

उपरोक्त शब्द मैटपे ने इतने स्नेह से कहा था कि अब्लास्की का सारा क्रोध उतर गया । बोला—"अच्छा उसे भीतर लाओ ।"

फरियादी एक महिला थी । उसका पति कप्तान था । उसकी फरयाद फजूल थी। फिर भी अब्लास्की ने उसे आदर से बिठाया। उसकी बातें ध्यान से सुनीं । अन्त में उसे बतलाया कि उसे किस अधिकारी के पास जाना होगा और क्या कहना होगा । अपने एक परिचितके नाम उसने एक पत्र भी लिख दिया कि यथासाध्य उसकी सहायता करना ।

इस काम से छुट्टी पाकर वह चलने के लिये उठ खड़ा हुआ। रुककर वह सोचने लगा कि कोई काम भूल तो नहीं गया हूँ । उसे मैट्रोना की बातें याद आगईं । वह सोचने लगा कि क्या करूं । जाकर क्षमाप्रार्थना करूं या नहीं । क्षणभर सोचने के बाद उसने अपने मन में कहा—"जाना व्यर्थ है, धोखा मेरी प्रकृति के विरुद्ध है । हमारा उसका मेल नहीं हो सकता । वह मुझे सन्तुष्ट नहीं कर सकती। उससे मेरी प्रेमपिपासा नहीं शान्त हो सकती । प्रेम रस को मुझे कहीं अन्यत्र पीना और पिलाना ही होगा । पर इस समय तो कुछ न कुछ करना ही होगा ।" इतना सोचकर

चल पड़ा और वेग के साथ अपनी पत्नी के कमरे में घुसा ।

२

अब्लास्की अपनी पत्नी को डाली के नाम से पुकारता था; पर उसका असल नाम डायरा अलेक्ज़ेंड्रोवा था। इस घटना से डाली का हृदय भग्न हो गया था, उसका चेहरा सुस्त पड़ गया था, शरीर क्षीण हो गया था, पर उसकी चमकीली हरिणोंकीसी आँखें उसी तरह ज्योति बरसा रही थीं।

डाली अपने पति के साथ क्षणभर भी रहना नहीं चाहती थी। अपने बच्चों को लेकर वह अपनी माँ के पास चली जाना चाहती थी और इसकी तैयारी वह तीन दिन से लगातार कर रही थी; पर फिर भी वह कोई भी योजना नहीं कर सकी थी। इस समय भी वह उसी काम में लगी थी। उसे इस काम में जितनी असफलता मिलती, उतनी ही दृढ़ता से वह अपने मन में कहती–"यह कभी नहीं हो सकता। उसे उसकी नीचता का मजा चखाना ही होगा, उसने मुझे जिस तरह नीचा दिखाया है, मेरी मिट्टी पलीद की है, उसका बिना बदला लिये मुझे शान्ति नहीं मिल सकती।" वह सदा सोचा करती कि मैं उसे त्याग दूं; पर वह जानती थी कि यह असंभव है। लाख यत्न करने पर भी डाली का हृदय अब्लास्की की ओर से नहीं फिरता था। उसकी पतिभक्ति, उसका प्राकृत स्नेह उसे इसकी ओर खींच लेता था। इसके अलावा वह देख रही थी कि जब अपने ही घर में पाँचों बच्चों की देख-रेख वह पूरी तरह नहीं कर सकती तो जहाँ वह जा रही है, वहाँ क्या गति होगी। तोभी वह भरसक यत्न कर रही थी। इस समय भी वह उसी प्रयास में थी।

उसी समय अव्लास्की ने कमरे में प्रवेश किया। डाली ने उसके पैर की आवाज सुनी; पर अन्यमनस्क होने की चेष्टा करने लगी, मानों उसने कुछ नहीं सुना। अव्लास्की कमरे में घुसा और उसके समीप चला आया। डाली ने आंखें फेरकर उसकी ओर देखा। उसके चेहरे से दीनता टपक रही थी, निराशा की पूरी छाया पड़ रही थी।

अव्लास्की ने लाख यत्न किया कि उसके चेहरे पर उदासीनता के भाव आजायँ; पर उसका बाहरी प्रयत्न निष्फल रहा। उसका चेहरा पहले की भाँति देदीप्यमान था, प्रसन्नता की किरणें झलक रही थीं। डाली ने देखा और अपने मन में कहा—"इसकी दशा से मेरी दशा का मिलान कर देखो। जिस कारण मैं रो रही हूँ, उसी में यह प्रसन्न है।" इतने विचार के आते ही घृणा से उसका चेहरा विकृत हो गया, उसकी भौंहें चढ़गईं, उसके होठ हिलने लग गये। इतने में अव्लास्की ने अतिशय दीन और विनीत स्वर में कहा—'डाली' इसके आगे वह कुछ नहीं कह सका। उसकी जबान रुक गई।

अस्वाभाविकता से भरी हुई कड़ी आवाज में डाली ने कड़वड़ाकर पूछा—"क्या चाहते हो?"

अव्लास्की काँप उठा। उसने उसी दीनता के साथ कहा—"आज की गाड़ी से अन्ना आ रही है।"

डाली—मुझसे मतलब! मैं उनसे नहीं मिलना चाहती।

अव्लास्की—प्रिये, तुम्हें मिलना ही होगा।

डाली ने अपनी दृष्टि अव्लास्की पर से हटाली और विकृत स्वर ोली—"हमारे ऊपर दया कीजिये और यहाँ से पधारिये। मुझे आपसे ....."इससे आगे वह नहीं बोल सकी।

अव्लास्की अपनी करनी पर पछताता अवश्य था, पर वह नहीं समझता था कि मामला इतना बढ़ गया था। मैडपे की बातों ने उसे और भी आशा दिला दी थी कि पति-पत्नी का मेल-मिलाप हो ही जायगा। पर इस समय डाली की दयनीय मुखाकृति देखकर उसका दिल भर आया, उसकी आँखों में आँसू भर आये, उसने धीमे स्वर से कहा—"प्रिये, मेरा क्या अपराध है ? ईश्वर के लिये मुझे क्षमा करो।"

डाली—"मानों तुम बिलकुल अनजान हो···" इतने आगे वह नहीं बोल सकी। उसकी घिग्घी बंध गई। आंचल से उसने अपना चेहरा छिपा लिया।

अव्लास्की—प्रिये! इस समय मैं अधिक क्या कह सकता हूँ। तुम मुझे क्षमा करो। उन नौ वर्ष की बीती बातों का स्मरण करो। क्या मेरा यह एक अपराध भी क्षमा योग्य नहीं है ?

डाली की आँखें जमीन की ओर झुकी थीं। वह उसकी बातों पर विचार कर रही थी कि क्या उत्तर दें। उसकी अवस्था से साफ झलकता था कि उसका हृदय इस बात का प्रार्थी है कि किसी तरह दिल में उठे हुए भ्रम को मिटा दे।

अव्लास्की की जबान चलती जा रही थी। उसने कहा—"मेरा कुछ भी अपराध नहीं था। पापी काम के वश होकर······"इतना कहते कहते उसने देखा कि इन शब्दों से डाली को घोर मानसिक यन्त्रणा हो रही है, उसके चेहरे पर घृणा के भाव फिर उदय होने लग गये हैं, वह चुप हो गया।

डाली के क्रोध का पारा और ऊपर चढ़ गया था। उसने झिझक

कर कहा—"हमारे ऊपर दया कीजिये और यहाँ से चले जाइये। आपकी काम-कहानी मैं नहीं सुनना चाहती।"

डाली उस कमरे से बाहर चली जाना चाहती थी, पर उसके पैर काँपने लगे। बगल की कुर्सी थाम कर वह खड़ी हो गई।

अब्लास्की यह अवस्था नहीं देख सका। उसकी आँखों में आँसू भर आये। वह रोते-रोते बोला—"प्रिये, जरा विचार कर देखो, बच्चों की क्या गति होगी। उन बेचारों ने क्या अपराध किया है। मैं तुम्हारा अपराधी हूँ, मुझे चाहो सो दण्ड दो। दोनों हाथ जोड़कर मैं तुमसे क्षमा चाहता हूँ।"

डाली खड़ी नहीं रह सकी। वह वहीं बैठ गई। उसकी सांस जोर-जोर से चलने लगी। उसने कई बार बोलने का यत्न किया; पर उसके मुंहसे एक भी शब्द नहीं निकल सके। बड़ी कोशिश के बाद उसने कहा—"मैं खूब समझ रही हूँ कि बच्चों का जीवन नष्ट हो जायगा।" इतना कहकर उसने कृतज्ञता पूर्ण नेत्रों से अब्लास्की की ओर देखा और प्रेम से उसके हाथ को अपने हाथ में लेने के लिये हाथ बढ़ाया, पर उसी समय पीछे खींच लिया और कहना शुरू किया—"मुझे लड़कों का ख्याल है। उनके कल्याण के लिये मैं सब कुछ करने को तैयार हूँ। पर मेरी समझ में अभी तक यह नहीं आया कि उनका कल्याण किस तरह हो सकता है। उन्हें अपने साथ लेती जाऊँ या उनके अधम कुकर्मी पिता के पास इन्हें छोड़ती जाऊँ। इस अवस्था में मैं तुम्हारे साथ भी नहीं रह सकती। यह सभव भी नहीं है। आह! कितनी [illegible] की बात है। मेरा पति मेरी आँखों के देखते दाइयों और दुर्नियों के साथ प्रेमालाप करे।"

अब्लास्की का चेहरा सुर्ख पड़ गया। वह नहीं समझ सकता था कि क्या कहे, बोला,—"तुम्हीं समझो, मेरा क्या दोष है ? मैं क्या कर सकता था।"

डाली का क्रोध बढ़ता गया। उसने चिल्ला कर कहा—"मैं तुम्हारा पापी मुंह नहीं देखना चाहती। तुम नीच हो। क्या तुम समझते हो, तुम्हारे आँसू से मैं पिघल जाऊँगी। तुम्हारे हृदय में मेरे लिये प्रेम का नाम नहीं था। न तो तुम्हें अपनी बातों की कोई परवा है न तुम मान-मर्यादा की ही परवा करते हो।"

अब्लास्की अवाक् था। विषण्ण हृदय से वह डाली की बातें सुन रहा था। उसका हृदय डाली के लिये दया से पूर्ण था; पर उसमें प्रेम नहीं था। उसने अपने मन में कहा—"ठीक है। वह मुझसे घृणा करती है। उचित ही है। वह मुझे प्रेम किस तरह कर सकती है।"

उसी समय बगल के कमरे से किसी लड़के के रोने की आवाज़ आई। डाली ने रोने की आवाज़ सुनी और उसका चेहरा मुलायम हो गया। वह बालक की ओर लपकी।

अब्लास्की डाली के चेहरे का उतार-चढ़ाव देख रहा था। मन में सोचने लगा, जो मेरे बच्चों को स्नेह से देखती है, वह मुझसे किस तरह घृणा कर सकती है।

डाली के पीछे-पीछे जाते हुए अब्लास्की ने कहा—प्रिये, मेरे ऊपर दया करके एक शब्द और सुन लो, मुझे और कुछ नहीं कहना है।

डाली—(उत्तेजित होकर) यदि तुम मेरे साथ आये तो मैं शोर-गुल मचाकर नौकर-चाकर और बच्चों को इकट्ठा कर दूंगी और सबों को बतला दूंगी कि तुम कितने नीच और पतित हो। मैं आज ही ए

छोड़ कर चली जाती हूँ। अपनी रानी को लेकर तुम यहाँ विलसो।

इतना कहते कहते वह कमरे से बाहर होगई।

उसके चले जाने के बाद अव्लास्की ने एक लम्बी सांस ली। आँखों के आँसू पोछे और धीरे–धीरे कमरे में टहलने लगा। अपने मन में कहा मैटपे कहता था, सुलह हो जायगी, वह मान जायगी; पर इस बात की आशा करना व्यर्थ है। उसकी बातें कितनी निर्दयता पूर्ण थीं। उसने चिल्ला--चिल्ला कर कहा–"तू नीच है, पापी है, अब अपनी प्रेयसी को लेकर विलस!" क्या दाइयों ने उसकी ये बातें न सुनी होगी। ओह! अत्याचार और क्रूरता की हद है। क्षणभर वह यही बकता–झकता रहा और फिर धीरे–धीरे कमरे से बाहर हो गया।

सामने मैटपे मिला। उसने चिल्लाकर कहा–"मेरिया को साथ लेकर ऊपरवाले कमरे की सफाई कर डालना। अन्ना के ठहरने के लिये वहाँ ठीक होगा।"

मैटपे–जो आज्ञा।

इतना कह कर अव्लास्की ने अपना ओवर–कोट उठाया और घर से बाहर हो गया। चलते-चलते मैटपे ने उसे रोक कर पूछा–"क्या आज भोजन घर पर नहीं कीजियेगा?"

अव्लास्की–"देखा जायगा।" इतना कह कर उसने जेब से दस रुपये का नोट निकाल कर मैटपे को दिया और समझाकर बतला दिया कि अन्ना के लिये सब ठीक कर रखना। अव्लास्की गाड़ी पर बैठा और घोड़े ने आगे कदम बढ़ाया।

इतने में बच्चे को चुप करा कर डाली कमरे में लौटी तो उसने देखा कि ी की गाड़ी चली जा रही है। कमरे में जाकर वह पहले की भांति

बैठ गई और जो बातें उसने अब्लास्की ने की थी उनका विचार करने लगी-"वह चले गये। तो क्या उसे छोड़ कर चले गये? क्या उसे त्याग देंगे। क्या उससे संबंध रखना चाहते हैं? मैंने उनसे पूछा क्यों नहीं, पर पूछ कर ही क्या करती, अब मेल होना तो संभव नहीं। इस घर में रहने पर भी हम दोनों एक दूसरे के लिये अजनबी हैं। ईश्वर! तुम साक्षी हो। मैं उसे किस तरह प्यार करती थी। क्या मैं आज भी उसे उसी तरह प्यार नहीं करती। आज मेरा हृदय उसके प्रेम के लिये और भी विस्तृत हो गया है, पर उसने......"इससे आगे वह और कुछ नहीं कह सकी। मैट्रोना ने कमरे में पैर रखा।

मैट्रोना—क्या लड़कों के लिये आज भी भोजन नहीं तैयार होगा। क्या शाम तक उन्हें आज भी भूखों मारना है?

डाली—मैं अभी आकर इन्तजाम करती हूँ। दूध के लिये को भेजा या नहीं?

इतना कहकर डाली अपने स्थान से उठी और घर के काम में गई। कुछ काल के लिये उसका सारा दुःख भूल गया।

३

अब्लास्की की बुद्धि स्कूल से ही तीव्र थी; पर वह पक्का शैतान और खिलाड़ी था। यही कारण था कि वह क्लास में सदा नीचे रहा। आलहदी भी वह एक नम्बर का था। इन सब असुविधाओं के होते हुए भी उसे अच्छी नौकरी मिल गई थी। इस समय वह मास्को नगर के सरकारी बोर्ड के एक महकमे का अफसर था। यह पद उसे अलक्ज़े अलेकूजेंड्रो-

विच करनाइन की कृपा से मिला था। अलक्ले करनाइन अब्लास्की की बहन अन्ना का पति था।

अब्लास्की बड़ा ही मिलनसार आदमी था। मास्को तथा पीटर्सवर्ग (इस समय पेट्रोग्रेट, रूस की राजधानी) के आधे से अधिक निवासी उसके परिचित मित्र थे। मास्को सरकार के आधे से अधिक कर्मचारी उसके पिता के दोस्त या कृपापात्र रह चुके थे। एक हिस्सा उसके बालसखा थे और शेष सब उसके परिचित मित्र थे। इस तरह शासन अधिकार पर एक प्रकार से अब्लास्की का अच्छा प्रभाव था। उसका स्वभाव बहुत नर्म था, वह इतना हंसोड था कि उससे झगड़ा हो ही नहीं सकता था, और किसी से डाह नहीं रखता था, घृणा नहीं करता था, किसी की बातों सा भी नहीं मानता था। इन सब अनुकूल कारणों के होते हुए यह ऊपरवाले पद पाजाना भी उसके लिये कोई कठिन बात नहीं थी। यदि ठीक होग करनाइन ने उसकी सहायता न भी की होती तो वह ऐसा ही वा इसी प्रकार का अन्य कोई पद अवश्य प्राप्त कर लेता।

उसके हंसोड़पन, उसकी ईमानदारी तथा उसके नर्म स्वभाव से सभी ख़ुश रहते थे। उसे सब चाहते थे। जो कोई उससे मिलने जाता था, उस पर बड़ा ही अच्छा प्रभाव पड़ता था। उसका प्रसन्न मुख, उसकी चमकीली आंखें, उसका सुन्दर चेहरा सब को मोह लेता था। जो उसे देखता था, वही समझता था कि उसके चेहरे से दया के भाव टपक रहे हैं, वह कल्प-वृक्ष है, जो कोई उसके नीचे आवेगा, सफल मनोरथ होकर ही जायगा। सभी उससे मिलने की चाह रखते थे। सभी उससे मिलकर प्रसन्न होते। उससे मिलकर उससे बातें कर किसी की भी तबीयत नहीं भरती। फिर मिलने की इच्छा बनी ही रह जाती थी।

मास्को के सरकारी महकमे में भी ऐसा कोई नहीं था, जो उसे न चाहता हो। उसके मातहत कर्मचारी उसे जी जान से चाहते थे। उसमें एक प्रधान गुण और था। वह अपनी कमजोरी और अज्ञानता को समझता था, तथा दूसरों की सहायता के लिये सदा प्राणपण से तैयार रहता था। दूसरे वह उदार मन का था; पर उसकी उदारता केवल समाचार-पत्रों की और कारखानों की उदारता नहीं थी। उदारता के सच्चे भाव उसके रग-रग में फैले हुए थे। जो कुछ उसके हृदय में था, वही उसकी ज़बान पर था और उसी के अनुसार उसका आचरण होता था।

गाड़ी दफ्तर के बरामदे के सामने जाकर खड़ी होगई। अब्लास्की गाड़ी पर से उतरा और सभा भवन में जाकर अपने आसन पर बैठ गया। साहब-सलामत के बाद दो-चार हँसी-मजाक करके वह काम करने लगा। अब्लास्की भली भांति जानता था कि किसी तरह से बातचीत करना किस अवसर के लिये उपयुक्त होगा। उसी के अनुसार उसके मातहत कर्मचारी भी उससे पेश आते थे।

अब्लास्की ने काम आरंभ ही किया था कि उसके महकमे के एक विभाग का मन्त्री कुछ कागज-पत्र लेकर आया और उसी तरह बोलने लगा—"हम लोगों ने किसी न किसी तरह पेंजा के सरकारी विभाग से वह सूचना प्राप्त करने का यत्न किया है। क्या आप इसे देखना पसन्द करते हैं?"

अब्लास्की-(कागज को हाथ में लेते हुए) तुम लोगों ने इस सूचना को प्राप्त कर ही लिया। अब तो बोर्ड की बैठक आरंभ होनी चाहिये।

बोर्ड की बैठक आरंभ हुई और बिना किसी बाधा के दो बजे तक

चलेगी। दो बजे के वाद जलपान का समय आवेगा और उसी समय वैठक भी उठेगी।

वोर्ड की वैठक हो रही थी कि एकाएक सामने का वड़ा दरवाजा खुला और एक आदमी भीतर घुसते हुए दिखाई दिया।

इस अचानक बाधा से सभा भवन में उपस्थित सभी कर्मचारी प्रसन्न थे। क्योंकि वे चाहते थे कि इस तरह की कोई वाधा उपस्थित हो और सभा स्थागित की जाय। इस लिये सव की आंखें दरवाजे की ओर टंग गईं, पर सभा भवन के सन्तरी ने उनकी प्रसन्नता को अधिक काल तक नहीं रहने दी। उसने उसी समय उस आदमी को वाहर ढकेल दिया और द्वार वन्द कर दिया।

कागज पत्र पूरी तौर से पढ़े भी न गये होंगे कि अव्लास्की अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ और सिगरेट जलाता एकान्त कमरे में चला गया। उसके साथ सभा के दो और सदस्य भी चले गये। उनसे उसने कहा—"जलपान के वाद भी तो काफी समय रहेगा।"

पहला सदस्य—सामने जो काम है, उसे समाप्त करने के लिये पर्याप्त समय है।

इतने में दूसरे सदस्य ने उस व्यक्ति के वारे में कुछ कहा, जिसके अभियोग पर ये लोग विचार कर रहे थे।

अव्लास्की को यह अच्छा नहीं लगा। क्यों कि पूरा अभियोग सुन लेने के पहिले वह अपनी राय जाहिर करना अनुचित समझता था। सन्तरी की ओर फिर कर उसने कहा—अभी सभा भवन में कौन घुसने की चेष्टा कर रहा था।

सन्तरी—हुजूर, ज्योंही मैं पीछे घूमा, एक व्यक्ति विना आज्ञा लिये

ही घुस आया। वह आप से ही मिलना चाहता था। मैंने उसे यह कह कर बाहर किया कि सभा भवन से बाहर निकलने पर मुलाकात होगी।

अव्लास्की—वह किधर गया ?

सन्तरी—मैं ठीक नहीं कह सकता (सामने देखकर) वह तो आ रहे हैं। ये ही महाशय थे। इतने में एक मोटा-ताजा, घुंघराले बालवाला लम्बी दाढ़ी बढ़ाये सामने से इधर ही आता दिखाई दिया।

इस व्यक्ति को देखते ही अव्लास्की ने चिल्लाकर कहा—"ओह ! ओह !! लेविन ! आज तो तुमने बड़ा कष्ट उठाया। इस दफ्तर तक हमें तलाश करते आगये। यहां कब आये ?" इतना कहते-कहते उसने अपने मित्र को हृदय से लगाकर गाढ़ आलिंगन किया।

लेविन—मैं अभी आया हूं और तुम से इसी समय मिलना चाहता था। इतना कह कर वह इधर उधर देखने लगा जिससे साफ मालूम होता था कि कोई घटना ऐसी घट गई है, जिसके कारण उसे क्षोभ और क्रोध उत्पन्न होगया है !

अव्लास्की लेविन के मिजाज से भली भांति परिचित था। वह जानता था कि लेविन जिस प्रकार सरल हृदय और उदार है, उसी प्रकार चिड़चिड़ा और जोशीला भी है। उसने अपने मित्र का हाथ पकड़ लिया और अपने कमरे की ओर ले चला।

अव्लास्की अपने सभी परिचित व्यक्तियों से हिल-मिल कर रहता था। दस वर्ष के बच्चे, २५ या ३० वर्ष के जवान, ५० या ६० वर्ष के बूढ़े, सभी उसकी निगाह में एक समान थे। सब के साथ वह उसी तरह हिल-मिल कर रहता, बोलता-चालता और हँसी-मजाक करता। साधारण आदमी से लेकर बड़े बड़े-ओहदेदार तक उससे इसी तरह का

व्यवहार पाते थे। उसके मित्रों की गिनती नहीं थी। जिस किसी के साथ उसने दो बातें कीं वही उसका मित्र होगया। इस प्रकार सभी तरह के लोग उसके मित्रों में थे; पर वह सब की अवस्था से पूरी तरह परिचित था और इसी तरह का व्यवहार करता था, जिससे किसी की आत्मा को दुःख न हो। अब्लास्की जानता था कि लेविन यह बात पसन्द नहीं करता कि मातहत कर्मचारियों के सामने मैं उससे हँसी मज़ाक करूं या उसकी खिल्ली उड़ाऊं। यही कारण था कि लेविन को लेकर वह एकान्त कमरे में चला गया।

लेविन की अवस्था अभी अधिक नहीं थी। वह भी अभी करीब ३०-३५ वर्ष का युवक था। अब्लास्की का वह घनिष्ठ मित्र था। बाल्य-काल से ही दोनों की मैत्री थी। सिद्धान्त में मतभेद होने पर भी दोनों में प्रगाढ़ प्रेम था। दोनों अपने मत के कट्टर पक्षपाती थे। मैत्री के लिये वे अपने सिद्धान्तों का इञ्च भर भी बलिदान करने के लिये तैयार नहीं थे। इधर कई महीनों से लेविन जल्दी-जल्दी मास्को में आता था और एक दो दिन रहकर लौट जाता था। जब कभी वह आता, उसके चेहरे से परेशानी और जल्दीबाजी टपकती थी। उसकी बातें भी विचित्र तरह की होती थीं। अब्लास्की इन सब का कारण नहीं समझ सकता था। वह समझता था कि लेविन देहाती आदमी है, शहर की हालत वह क्या जाने। शहर की चहल पहल देखकर वह घबरा जाता है। इस कारण वह अपने मित्र पर सदा हँसा करता था। उधर लेविन शहर की इस भीड़-भड़क्के से घृणा करता था और अपने मित्र अब्लास्की के जीवन पर खाता था। इस तरह दोनों मित्र एक दूसरे की दशा पर हँसते थे। केवल इतना ही था कि अब्लास्की सब बातें हँसी मजाक में

कह जाता और लेविन की बातें रूखी तथा क्रोध भरी होती थीं।

कमरे में जाकर अब्लास्की ने लेविन का हाथ छोड़ दिया और कहा-“कई दिनों से तुम्हारी बाट जोह रहे थे। आज तुम्हारे दर्शन हुए। अच्छे तो रहे ?”

लेविन निरुत्तर रहा। वह अब्लास्की के दोनों अपरिचित साथियों की तरफ टकटकी लगाकर देख रहा था। उनमें से एक ने उसका ध्यान इस तरह खींच लिया था कि वह उसी में निमग्न हो गया था। अब्लास्की ने यह देखा तो मुस्कराकर बोला—“मित्र ! क्षमा करना। मैंने इनसे परिचय नहीं कराया।” इतना कहकर उसने सब का परिचय कराया। ये हमारे अभिन्न हृदय मित्र कान्स्टेन्टाइन लेविन हैं। मास्को के एक जिले के कौंसिलर हैं। बड़े भारी कसरती और पहलवान हैं, गोपालन और शिकार से इन्हें बड़ा प्रेम है, आप सर्जे इवानविच कोनिशे के सगे भाई हैं।

पहला सदस्य—मुझे आप से मिल कर बड़ी प्रसन्नता हुई।

दूसरा सदस्य-आपके बड़े भाई से मेरा खूब परिचय है। आज आपसे भी मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

लेविन इस परिचय से प्रसन्न नहीं हुआ। उसे यह बात सदा खटकती थी कि लोग इसका आदर इसलिये करते हैं कि वह प्रसिद्ध ग्रन्थकार कोनिशे का सौतेला भाई है। उसने चुपचाप उन लोगों से हाथ मिलाया और बिना कुछ बोले अब्लास्की की ओर मुखातिब हो कर कहने लगा—“अब मैं जिले का कौंसिलर नहीं रहा। मुझसे सबों से झगड़ा हो गया। मैं सभा में कभी नहीं जाता।”

अब्लास्की-तुम्हारा सब काम ऐसी ही नासमझी का होता है। क्यों, क्या हुआ था ?

लेविन–"किस्सा लम्बा-चौड़ा है, फिर कभी बतलाऊँगा।"–इतना कह कर उसने इस तरह उत्तेजित होकर कहना आरंभ किया, मानों किसी ने उसका अपमान किया हो, "मुझे पक्का विश्वास हो गया कि इन कौंसिलों से कोई उपकार नहीं हो सकता। कौंसिल भवन को उन सबों ने तमाशगाह बना लिया है। तुम जानते ही हो कि मुझे हँसी मजाक पसन्द नहीं। दूसरे सब के सब रिश्वत खाते हैं।"

अव्लास्की–मैं देखता हूं कि तुम्हारा विचार बदलता जा रहा है। तुम फिर अनुदार पक्ष का समर्थन करना चाहते हो। इस बात पर हम लोग फिर कभी विचार करेंगे।

लेविन—ठीक है। इस समय मैं तुमसे मिलने आया हूं। उन बातों पर बहस करने नहीं। इतना कहकर उसने दूसरे सदस्य की ओर घृणा से देखा।

अव्लास्की ने हँसकर यह भाव प्रगट किया कि हम तुम्हारे अभिप्राय को समझते हैं। बोला–"तुम तो कहा करते थे कि भविष्य में हम यूरोपियन पोशाक नहीं पहनेंगे। पर यह क्या है। (लेविन ने जो पोशाक पहनी थी, वह पेरिस की बनी थी)

मित्र की बातों से लेविन शर्मा गया। उसे नहीं समझ पड़ा कि इसका क्या उत्तर दिया जाय। वह बगलें झाँकने लगा।

अव्लास्की चुप होगया।

लेविन—हमें तुम से कुछ गुप्त बातें करनी हैं।

अव्लास्की–(कुछ सोचकर) चलो होटल चलें। जलपान भी करेंगे बातचीत भी करेंगे। तीन बजे तक हमें फुरसत है।

लेविन–पर मुझे अभी एक जगह जाना है।

अब्लास्की—तब रात को आज हमारे घर पर ही भोजन करना।

लेविन—रात को! कोई खास बात नहीं है। मुझे केवल दो शब्द कहने हैं। एक दो बातें पूछनी हैं।

अब्लास्की—तो कह डालो। बातचीत पीछे सही।

लेविन ने बड़ी कठिनाई से पूछा—"श्चेरबात्स्की की क्या हालत है?"

अब्लास्की—वही रफ्तार बेढंगी जो पहले थी सो अब भी है।

अब्लास्की से यह बात छिपी न थी कि लेविन उसकी ... । किटी के प्रेम के जाल में फँसा है। इसी से इतनी जाँच पड़ताल रही है। लेविन के प्रश्न पर उसने हँस दिया और कहा—"भाई! तो कहा था कि केवल दो शब्द हैं; पर तुमने ऐसा विकट प्रश्न कि कि मैं सहसा ठीक उत्तर नहीं दे सकता।"

इतने में किसी विभाग का मन्त्री कुछ कागज-पत्र लिये अब्लास्की के पास आया और हँस कर उसकी कुछ हिदायतों का विरोध करने लगा। अब्लास्की ने उसकी गर्दन पर हाथ रख कर प्रेम से कहा—"नहीं, जैसा मैंने कहा है, उसी तरह करो।" इतना कह कर उसने अपना अभिप्राय उसे एक वार फिर समझाया और उसे विदा किया।

लेविन को थोड़ा समय मिल गया। उसने अपने को सम्हाला और घबराहट को दूर किया। मन्त्री के चले जाने पर उसने अब्लास्की को लक्ष्य करके कहा—"मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है।"

अब्लास्की—(मुस्कराकर) क्या तुम्हारी समझ में नहीं आ रहा है?

लेविन—तुम लोग यह सब क्या कर रहे हो? इन सब कामों में गम्भीर होने की तो आवश्यकता नहीं।

अव्लास्की—क्यों ?

लेविन—क्योंकि इसमें कुछ भी नहीं है।

अव्लास्की—तुम ऐसा समझते होगे, पर यहां तो काम के भार से दबे जा रहे हैं।

लेविन—हो सकता है। मुझे तो इसी बात की खुशी है कि हमें नहे रुतबे का मित्र मिला है......पर तुमने मेरे प्रश्न का उत्तर ही नहीं।

तुम अव्लास्की—कह तो दिया कि वही रफ्तार बेढंगी जो पहले थी सो लोग भी है। तुम इतने दिनों तक गायब रहते हो, यही खराबी कर रहा ! अच्छा इस विषय में फिर बातें करेंगे। पहले यह तो बतलाओ पर तुम यहां तक आये क्यों ?

से लेविन—उसी वक्त यह भी बतलाऊँगा।

अव्लास्की—ठीक है। यदि तुम उन लोगों से मुलाकात करना चाहते हो तो चिड़ियाखाने तक चलने का कष्ट उठावो। ४ से ५ तक वे लोग वहीं रहेंगे। आज किटी का नाच है। तुम वहीं चलो। मैं तुम से वहीं मिलूंगा।

लेविन—यही पक्की रही। तब चलता हूँ।

चलते-चलते अव्लास्की ने रोक कर कहा—"कहीं नीचे उतरते-उतरते भूल न जाना और चिड़ियाखाने की जगह गांव का रास्ता न ले लेना।"

लेविन—(हँसकर) नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होगा।

इतना कह कर लेविन कमरे से बाहर हो गया। नीचे उतर कर उसे स्मरण हुआ कि उसने अव्लास्की के दोनों मित्रों से हाथ नहीं मिलाया।

लेविन के चले जाने पर अब्लास्की के एक मित्र ने कहा—"आदमी तो तेज मालूम होता है।" अब्लास्की ने सिर हिलाते हुए कहा—"बड़ा ही भाग्यवान आदमी है। करजिन्स्की प्रान्त में ६ हजार एकड़ भूमि है। ईश्वर ने शरीर में ताकत भी अच्छी दी है।"

दूसरा सदस्य—तुम्हें तो अपनी अवस्था में अवश्य कष्ट होगा?

अब्लास्की—अवश्य, मुझसा अभागा दूसरा नहीं हो सकता। इतना कह कर उसने ठंडी सांस ली।

४

मास्को में लेविन के आने का एकमात्र कारण किटी के पिता से किटी के पाणिग्रहण के लिये अभ्यर्थना करना था। यह अभिप्राय उसने एक दम गुप्त रखा था और यही कारण था कि जब अब्लास्की ने उससे इस यात्रा का कारण पूछा तो शर्मा गया और कुछ ठीक ठीक उत्तर नहीं दे सका।

लेविन और शेचरबास्की का परिवार मास्को राजधानी का अतीव प्राचीन वंश था। दोनों की प्रतिष्ठा और मर्यादा प्राचीन काल से ही प्रतिष्ठित थी। दोनों वंश का परस्पर प्रेम प्राचीन समय से ही चला आता था। इस प्रेम और संबंध को लेविन ने और भी घनिष्ठ कर दिया था। किटी और डाली का भाई लेविन का सहपाठी था। दोनों ने एक ही साथ पढ़ा था और एक ही साथ परीक्षा में सम्मिलित हुए थे। दोनों का परस्पर प्रेम भी प्रगाढ़ था। लेविन अपने मित्र प्रिंस

शेचरवास्की के घर बहुधा आया–जाया करता था और घर में उसका बड़ा आदर था। विशेष कर स्त्रियां उससे अधिक स्नेह रखती थीं। लेविन के माता-पिता बाल्यकाल में ही परलोकवासी हो चुके थे। इससे लेविन माता-पिता के सुख तथा गार्हस्थ्य जीवन के सुख से भी वञ्चित था। इस खानदान में हिल मिल कर लेविन को माता–पिता के सुख का आनन्द मिला। घर की स्त्रियां उससे बड़े प्रेम से मिलतीं। वह भी उन लोगों के साथ रह कर बातचीत कर एक विशेष आनन्द का अनुभव करता। उन लोगों की कितनी ही बातें उसके समझ में कुछ न आतीं, उनका वह कोई भो यथेष्ट कारण न बतला सकता। फिर भी न जाने क्यों उनके प्रत्येक आचरण में वह एक तरह का आनन्द अनुभव करता।

जिस समय लेविन पढ़ता था, डाली पर उसका विशेष अनुराग था। डाली का विवाह अब्लास्की के साथ हो गया था। डाली के चले जाने के बाद उसका प्रेम दूसरी बहिन पर आकृष्ट हुआ-मानों बारी-बारी से एक न एक को प्रेम करते रहना ही उसके लिये आवश्यक है। लेविन के दुर्भाग्य से नतालिया का भी विवाह हो गया। उस समय तक किटी निरी बालिका थी। लेविन की शिक्षा इसी समय समाप्त हो गई। उसके मित्र ने तो सेनाविभाग में नाम लिखाया और किसी बेड़े के साथ समुद्र में प्राण खो दिया। इससे लेविन का संबंध भी एक तरह से टूट गया। पर अगले जाड़े में एक वर्ष के बाद जब वह मास्को आया और उन लोगों से मिलने गया तो उसकी निगाह किटी पर पड़ी। उसी समय उसके सूखे हृदय में आशालता का पौधा पुनः लह-लहा उठा।

साधारण व्यक्ति तो यही कह सकता है कि किसी भी कन्या के लिये इससे बढ़ कर भाग्य की बात और क्या हो सकती है। लेविन सर्वगुण सम्पन्न था। उसमें रूप था, धन था, यौवन था, विवेक था। ऐसे पुरुष से पाणिग्रहण करना कौन युवती नहीं चाहेगी। पर लेविन के हृदय में सच्चा अनुराग था। वह किटी को स्वर्ग की देवी समझता था। उसके हृदय में यही भाव रह-रह कर उठता था कि मैं उसके चरण-रज के भी बराबर नहीं हूँ।

इसी शंकित अवस्था में लेविन उस समय दो मास तक मास्को में पड़ा रहा। किटी वगैरह से रोज मिलता; पर उसे अपने मन की बात कहने का साहस एक बार भी नहीं हुआ। उसने उस बात को एक दम से असम्भव समझ लिया और जिस तरह आया था, उसी तरह घर लौट गया।

लेविन के हृदय में यह भाव उत्पन्न हो गया था कि किटी के पिता-माता मुझे सर्वथा अयोग्य समझते हैं और किटी को भी मुझ से अनुराग नहीं है। उसके सभी साथी इस समय तक किसी न किसी ऊँचे ओहदे पर पहुंच चुके थे; पर लेविन ने अभी तक जीवन का कोई निर्दिष्ट पथ नहीं बना लिया था। उसने जो काम उठाया था, उसमें भी लोगों को दिलचस्पी नहीं थी। लोगों का ख्याल था कि वह साधारण किसान है और यह काम तो साधारण लोग भी कर सकते हैं। भला हमारे सदृश साधारण आदमी को किटी प्रेम की दृष्टि से कैसे देख सकती है!

यह तो था ही। इसके अलावा लेविन के मार्ग में एक बाधा और थी। जिस समय लेविन किटी के भाई के साथ पढ़ता था। किटी एक

दम छोटी बालिका थी। आज भी लेविन के हृदय में वही भाव जमा है कि एक अबोध बालिका के साथ मैं किस तरह प्रेम प्रकाशित करूँ। किटी से हमारा परिचय अवश्य हो सकता है; पर प्रेम की आशा करना व्यर्थ है।

उसने किताबों में पढ़ा था कि स्त्रियाँ अन्य गुणों के कारण गंदे पुरुष से भी प्रेम कर लेती हैं; पर उस पर उसका विश्वास नहीं जमता था। क्योंकि ठीक उसी अवस्था में स्वयं वह किसी बदसूरत रमणी का पाणिग्रहण नहीं कर सकता था।

घर गये दो मास भी नहीं बीता था कि लेविन का चित्त चञ्चल हो उठा। जिस नयी अवस्था का उसे अनुभव हो रहा था, उसने उसे परेशान कर दिया। वह शान्त नहीं रह सका। उसने देखा कि अपने मन से निबटारा कर लेना सहज नहीं है। इस समस्या को हल करना ही होगा। उसी से चल कर तै करना होगा कि वह मुझे चाहती है अथवा नहीं, उसका मेरा संबंध संभव है अथवा नहीं। यही सोचकर लेविन ने मास्को की यात्रा की थी।

मास्को पहुँच कर लेविन सब से पहले अपने बड़े भाई कोनिशे के पास गया। किसी तरह की कार्रवाई करने के पहले वह अपने भाई की राय ले लेना उचित समझता था। उसने देखा कि उसका भाई किसी विद्वान् अध्यापक के साथ किसी विषय पर विवाद कर रहा है। उपयुक्त अवसर न देख कर वह अभिवादन कर के एक तरफ कुर्सी पर बैठ गया।

कोनिशे ने लेविन के अभिवादन का उत्तर दिया, अध्यापक से उसका परिचय कराया और पुनः विवाद में लग गया।

लेविन चुपचाप उन लोगों की बातें सुनने लगा। उसे भी दिलचस्पी थी।

प्रायः दो घण्टे तक विवाद होता रहा। इसके बाद अध्यापक चला गया। कोनिशे ने लेविन से पूछा—"अच्छे तो हो। तुम्हारी खेती की क्या अवस्था है?

लेविन जानता था कि इन्हें खेती पसन्द नहीं है। केवल मेरे मान के लिये उन्होंने पूछा है। इसलिये उसने संक्षेप में उन्हें पैदावार बतला दी।

लेविन अपनी शादी के विषय में सलाह लेने यहाँ आया था; पर कोनिशे की बातें सुन कर उसने उस प्रसंग को न छेड़ना ही उचित समझा।

इतने में कोनिशे ने पूछा—"जिला कौंसिल में क्या हो रहा है? कोनिशे जिला कौंसिलों का कट्टर पक्षपाती था और उन्हें उन्नति का प्रधान साधन मानता था।"

लेविन—मैं कोई निश्चित उत्तर नहीं दे सकता।

कोनिशे—क्यों, तुम भी तो सदस्य हो।

लेविन—नहीं, मुझसे अब कोई सम्बन्ध नहीं रहा। मैंने स्तीफा दे दिया। मैं सभा में कभी नहीं जाता।

कोनिशे—आश्चर्य है!

इस पर लेविन ने वह सब किस्स सुनाना आरम्भ किया जो उसके जिला कौंसिल में हुआ था।

बीच में ही कोनिशे ने उसे रोक कर कहा—इसमें नई बात क्या है। यह तो होता ही रहता है। हम अपनी कमजोरी को पहचानने लग

गये, यह हमारे लिये हताश होने की बात नहीं है। पर हम लोग उसमें लगे नहीं रहते। अन्य स्वतन्त्र देशों को देखो। इसी तरह उन्हों ने अपना मार्ग साफ किया और स्वराज्य प्राप्त किया। जो अधिकार हमें मिलता है, उसका प्रयोग न कर, उससे लाभ न उठाकर हम केवल उसकी खिल्ली उड़ाना जानते हैं।

लेविन—(स्थिर होकर) दूसरा चारा ही क्या है? मैंने यथासाध्य यत्न किया। कोई उपाय मैंने बचा नहीं रखा। जब मैंने देखा कि मैं कोई उपकार नहीं कर सकता तो विवश होकर मुझे पीछे हटना पड़ा।

कोनिशे—बात बिलकुल उलटी है। तुम कुछ उपकार नहीं कर सकते, यह बात नहीं है। असल बात यह है कि तुम इस दृष्टि से देखते ही नहीं कि इनसे कुछ उपकार भी हो सकता है।

लेविन—मैं आप की यह बात स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं हूँ।

कोनिशे—(प्रसंग को बदलते हुए) बड़े भाई साहब निकोले तो फिर प्रगट हुए।

निकोले तीनों भाइयों में सब से बड़ा था, पर बुरी संगत में पड़ कर वह अपना सर्वस्व गँवा चुका था, नीच और पतित आदमियों के साथ रहता था, मान-मर्यादा तथा प्रतिष्ठा सब कुछ खो चुका था।

लेविन—(विस्मय के साथ) आपको कैसे मालूम?

कोनिशे—प्रोकोफी ने उन्हें मास्को की सड़कों पर फिरते देखा है।

लेविन—क्या आपको उनका पता मालूम है?—इतना कहते कहते लेविन कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ मानों जाने के लिये तैयार है।

कोनिशे—मुझे खेद है कि तुम्हारे सामने मैंने इस बात की चर्चा

को। मैंने उनका पता लगाने के लिये अपना आदमी भेजा। उन्होंने जो उत्तर दिया, वह हमारे पास पड़ा है।

इतना कहकर कोनिशे ने एक चिट निकाल कर लेविन के हाथ पर रख दिया। उसमें लिखा था—"आप से मेरी प्रार्थना है कि आप मेरी फिकर छोड़दें। इसी में मुझे शान्ति है—आपका निकोले।"

लेविन ने इस नोट को पढ़ा और चुप हो गया। उसे कुछ न समझ पड़ा कि वह क्या करे। अपने भाई को भूल जाना नीचता थी। उसकी सहायता करना कठिन था।

कोनिशे—वह मेरा अपमान करना चाहते थे, पर यह सम्भव नहीं था। उनकी बातों से मैं उद्विग्न होनेवाला नहीं हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा थी कि मैं उनकी सहायता करता; पर उन्होंने असक्त कर दिया।

लेविन—आपका कहना ठीक है। पर मैं तो एक बार उनसे अवश्य मिलूँगा।

कोनिशे—तुम्हारी जैसी इच्छा। पर मेरी राय नहीं होती। मैं बाधा भी नहीं दे सकता; पर तुम उनकी सहायता नहीं कर सकते।

लेविन—मैं यह भी जानता हूँ; पर बिना उनसे एक बार मिले मुझे शान्ति नहीं मिल सकती।

कोनिशे—जैसी तुम्हारी इच्छा।

निकोले का पता लेकर वह प्रस्थान करने ही वाला था कि लेविन को अपनी यात्रा का उद्देश्य स्मरण आ गया। निदान उसने निकोले से मिलना दूसरे दिन के लिये स्थगित किया और सीधे अब्लास्की के पास गया। अब्लास्की से मुलाकात करने पर उसे मालूम हुआ।

इस मुस्कराहट ने लेविन पर जादू का काम किया। वह सोचने लगा—"ईश्वर ने सौन्दर्य का सभी साधन एकत्रित करके इसकी रचना आरम्भ की थी। क्या ही सुडौल वदन है, कैसी रसीली आंखें हैं, इसकी चितवन में कैसी अदा भरी है। इसकी मुस्कराहट से अमृत की वर्षा हो रही है।"

इतने में किटी नाचते-नाचते उसके पास आगई और उसका हाथ पकड़ कर बोली—"आप यहां कब आये?"

लेविन की विचित्र दशा हो गई। अंग-अंग में बिजली दौड़ पड़ी घबराहट के मारे वह साफ उत्तर भी नहीं दे सकता था। बोला—"मैं अभी कल, नहीं-नहीं आज ही तो आया हूँ। तुमसे मिलने की प्रबल कामना थी। इसी से चला आया।"

किटी से मिलने का अभिप्राय स्मरण कर लेविन को बड़ी शर्म आई बोला—"मैं नहीं जानता था कि तुम नाचने में इतनी चतुर हो।"

किटी—क्या खूब! पर यहाँ तो यही प्रसिद्ध है कि नाचने में आप रूस भर में अपना सानी नहीं रखते।

लेविन—किसी समय मुझे नाचने का बड़ा अभ्यास था। उस समय मुझे उत्साह भी अधिक था।

किटी—यही तो आप में गुण है कि जो कुछ आप करते हैं, पूर्ण जोश और उत्साह के साथ करते हैं। क्या आप अपना कौशल मुझे दिखलावेंगे। आज मैं आपके साथ नाचना चाहती हुँ।

लेविन आंखें फाड़-फाड़ कर उसकी तरफ देखने लगा। उसे सहसा विश्वास नहीं हुआ कि वह सच कह रही है। बोला—"जैसी तुम्हारी इच्छा।"

नाचने के लिये सज-धज कर लेविन मैदान में आया। किटी ने मुस्करा कर उसे अपना हाथ दे दिया। दोनों नाचने लगे। नाचते-नाचते किटी ने कहा—"मैं आपके साथ जल्दी सीख लूंगी। मुझे आप पर पूरा भरोसा है।"

लेविन—जब तुम मेरे सहारे हो तो मुझे भी तुम से पूरी उम्मीद है। जल्दी में लेविन इतना कह तो अवश्य गया; पर उसे बड़ी शर्म आई कि बिना विचारे उसकी जबान से क्या निकल गया।

लेविन के ये शब्द किटी को न रुचे। उसका चेहरा उदास पड़ गया उसके मुख की कान्ति उसी तरह गायब हो गई, जिस तरह बादलों के बीच में आजाने से सूर्य तेज-हीन हो जाता है।

लेविन ने उसकी यह दशा देखी, पूछा—"क्या तुम्हें कुछ तकलीफ है?"

किटी—नहीं तो, क्या आपने लिनन से मुलाकात की?

लेविन—नहीं।

किटी—आपको वह बहुधा याद किया करती है। उससे मिल लेना चाहिये।

लेविन हताश हो गया। उसने अपने मन में कहा—"ईश्वर! यह मैंने क्या किया। वह मुझ से खफा हो गई।" यही सोचते २ वह लिनन के पास पहुँचा। लिनन एक फरासीसी महिला थी। वह पास ही एक बेंच पर बैठी थी। लेविन को देख कर उसने बड़े आव-भगत से स्वागत किया। बोली—"बीच में ही नाचना क्यों बन्द कर दिया। किटी ने अच्छा नाचना सीख लिया है। उसके साथ नाचने में तुम्हें विशेष आनन्द मिलेगा।"

लेविन ने किटी की ओर देखा, उसके चेहरे पर वह उदासीनता नहीं रह गई थी। फिर भी वह चञ्चलता नहीं रही। चञ्चलता का स्थान

गम्भीरता ने ग्रहण कर लिया था। उसे मार्मिक वेदना हुई। इतने में लिनन ने पूछा—"देहातों में तो तुम बड़े उदासीन रहते होगे। जाड़े में तो बेकारी के कारण यह उदासीनता और भी बढ़ जाती होगी?"

लेविन—नहीं, आपका अनुमान गलत है। मुझे तो कभी भी फ़ुरसत नहीं रहती।

इतने में किटी ने पूछा—"क्या यहां कुछ अधिक दिन तक रहने का विचार है?"

लेविन को नहीं समझ पड़ा कि क्या उत्तर दिया जाय। उसने कहा—"ठीक नहीं कह सकता।"

किटी—इसके क्या माने?

लेविन—सब कुछ तुम पर निर्भर है। कहने को तो लेविन कह गया; पर लज्जा से उसका सिर नीचा हो गया।

किटी ने लेविन की बातें सुनीं या नहीं, यह तो नहीं कहा जा सकता; पर उसी दम वह उससे हाथ छुड़ा कर दूर चली गई और लिनन के कान में कुछ कहकर उसने नाचने का साज उतार दिया।

लेविन को अपनी करनी पर घोर पश्चात्ताप हुआ; पर अब हो ही क्या सकता था। तीर कमान से निकल गया था। उसने मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना की कि "प्रभो! तुम अन्तर्यामी हो। तुम मेरे हृदय की बातें जानते हो। तुम्हारे ही सहारे मैं खड़ा हूँ।"

इतने में उसने देखा कि एक व्यक्ति नाचने के लिये तैयार मैंदान में उतर रहा है। उसने एक नये तौर्के का नाच नाचा। लेविन फौरन उसकी नकल करने को तैयार हो गया। इतने में चेरवास्की ने चिल्ला कर कहा—"तुम अभ्यस्त नहीं हो। गिर पड़ोगे तो गर्दन टूट जायगी।"

पर लेविन ने नाचना आरम्भ किया और बड़ी योग्यता से अपने को बचाता वह नाच, नाच गया।

किटी लिनन के साथ खड़ी यह नाच देख रही थी, चार आँखें होते ही उसने एक बार फिर मुस्करा दिया। किटी सोचने लगी—"कैसा सज्जन पुरुष है, सुन्दर भी कितना है। मैं जानती हूँ कि मेरा हृदय इसे स्नेह नहीं करता, फिर भी इसे देख कर मैं अत्यन्त सुखी होती हूँ। यह सदा प्रसन्न चित्त रहता है। पर......पर उसने वह बात क्यों कही।"

लेविन ने देखा कि किटी अपनी मां के साथ जा रही है। उसने फौरन कपड़ा बदला और दरवाजे पर जा मिला।

किटी की मां—तुम से मिल कर मैं अतिशय प्रसन्न हुई। सदा की भांति बीफे को अब तक-तक भोज होता है।

लेविन—बीफे तो आज ही है।

किटी की मां०—आज तुम्हें निमन्त्रण देती हूँ।

यह बात किटी की मां ने जिस स्वर में कहा था किटी को नहीं भाया; पर वह करती क्या? उसने फिर कर लेविन को अभिवादन किया और कहा—"आशा है शाम को अवश्य मुलाकात होगी।"

बात खतम भी न होने पाई थी कि अब्लास्की वहीं आ पहुंचा और अपनी सास (किटी की मां) को अभिवादन करने के लिये आगे बढ़ा। डाली का समाचार पूछे जाने पर उसने कुछ इधर-उधर का उत्तर दे दिया। सास से मिलकर वह लेविन के पास आया और उसके गले में हाथ डाल कर बोला—"क्या अभी लौट चलना चाहिये। मुझे तो आशा नहीं थी कि तुम यहां तक आने का कष्ट उठावोगे।"

लेविन किटी के अभिवादन और प्रश्न का उत्तर देकर अब्लास्की से बोला—चलो।

अब्लासकी—कहां ?

लेविन—जहां तुम्हारी इच्छा हो।

निदान दोनों मित्र वहाँ से किसी होटल के लिये रवाना हुए। रास्ते में दोनों चुपचाप थे। लेविन अपने भविष्य पर विचार कर रहा था और अब्लास्की भोजन के चुनाव में व्यस्त था।

होटल में आकर दोनों मित्र भोजन करने बैठ गये। भोजन करते-करते अब्लास्की ने कहा—"लेविन ! तुम बड़े भाग्यवान् हो।"

लेविन—कैसे ?

अब्लास्की—तुम्हारा भविष्य प्रकाशमय है।

लेविन—पर तुम तो जीवन का सारा सुख अभी भोग रहे हो।

अब्लास्की—किसी अंश में तुम्हारा कहना सच है।

लेविन—यह कैसे ?

अब्लास्की—वह सब बात जाने दो; पर तुम्हारी मास्को यात्रा का क्या प्रयोजन है ?

लेविन—(अब्लास्की की ओर देखता हुआ) क्या तुम समझ सकते हो ?

अब्लास्की—मैं सब समझता हूँ, पर अपनी जबान से कुछ कहना नहीं चाहता।

लेविन—अस्तु, पर मुझे तुम क्या सलाह देते हो। इस संबंध में तुम्हारा क्या विचार है ?

अब्लास्की—मेरी दृष्टि में इससे उत्तम दूसरी बात नहीं हो सकती।

लेविन—पर क्या वह संभव है ?

अब्लास्की—मेरी समझ में तो किसी तरह की आपत्ति नहीं खड़ी होनी चाहिये।

लेविन—यह उत्तर इतना सहज नहीं है, जितना समझ रहे हो। जरा गौर से विचार कर लो। यदि उसने अस्वीकार किया तो।

अब्लास्की—ऐसी बात मन में लाते ही क्यों हो ?

लेविन—न जाने क्यों मेरे मन में ऐसी आशंका उठती है। यदि ऐसा हो गया तो मेरी बुरी हालत होगी।

अब्लास्की—यह कोई बड़ी बात नहीं है। इसकी तुम्हें परवा भी नहीं करनी चाहिये। आजकल इस देश की रमणियों का दिमाग आस्मान से बातें करता है। यदि कोई बात करनेवाला मिल गया तो वे सातवें आसमान पर चढ़ जाती हैं।

लेविन—पर उसमें तो अभिमान छू नहीं गया है।

अब्लास्की हँसा। वह लेविन के हृदय की बात जानता था। वह जानता था कि लेविन किटी को इस विश्व में अद्वितीय समझता है। बोला—"भोजन करो, देखा जायगा।"

लेविन—नहीं, इस बात पर पहले ही विचार कर लेना आवश्यक है। आज तक मैंने अपने मन की यह बात किसी पर प्रगट नहीं की और न तुम्हारे अतिरिक्त किसी से कह सकता हूँ। यह मेरे लिये जीवन-मरण का प्रश्न है। तुम जानते हो कि सिद्धान्ततः हम में तुम में घोर मतभेद है। हम दोनों की रुचि भी उसी प्रकार भिन्न है। पर मैं तुम्हारे स्नेह में बँधा हूँ क्योंकि मैं जानता हूँ कि तुम्हारे ऐसा मेरा दूसरा कोई हितू नहीं है। इस लिये तुम सोच-विचार कर मुझे सलाह दो।

अब्लास्की-मेरी बात सुनो। इन सब मामलों में मेरी स्त्री बड़ी होशियार है और वह तुम्हारे पक्ष में है। वह तुम्हें तो चाहती ही है; पर साथ ही वह यह कहती है कि किटी किसी अन्य पुरुष को नहीं स्वीकार करेगी।

लेविन का चेहरा दमक उठा। उसकी आँखों से उल्लास के आँसू आने लगे। उसने उछल कर कहा-"जब उनका यह ख्याल है, तो मुझे पूरा विश्वास हो गया।"

अब्लास्की-पर बैठ तो जाओ।

लेविन स्थिर न रह सका। वह कमरे में थोड़ी देर तक टहलता रहा। बोला-"न जाने कौन शक्ति मुझे खींच कर उसके चरणों पर पटक रही है। उस बार मैं यही सोच कर लौट गया कि यह असम्भव है। पर मैं शान्त न रह सका। मेरी व्यग्रता इतनी बढ़ गई कि मुझे फिर कर आना पड़ा। इस बार मैं निर्णय कर डालना चाहता हूँ।"

अब्लास्की-मैं तुम से एक बात कह देना चाहता हूँ। तुम रंस्की को जानते हो?

लेविन-यह रंस्की कौन है?

अब्लास्की-यही तुम्हारा रकीब (प्रतिद्वन्दी) है।

लेविन का चेहरा लाल हो गया। उसने ओठों को ऐंठकर कहा-रंस्की। यह कौन है?

अब्लास्की-काउण्ट किरिल इवानविच का यह सगा लड़का है। देखने में बड़ा ही सुन्दर है, सम्पत्ति भी ईश्वर ने अपार दी है। मेरा उससे टेवर में परिचय हुआ। उस समय मैं वहाँ सरकारी काम से गया

था। उससे तुम्हें सावधान और सतर्क रहना होगा। वह बड़ा ही चतुर और आकर्षक है।

लेविन चुप रहा।

अब्लास्की—तुम्हारे जाने के बाद ही वह यहाँ आया। जहाँ तक मेरा अनुमान है, वह किटी पर आसक्त है, किटी की मां का स्वभाव तो तुमसे छिपा न होगा।

लेविन—क्षमा करो। मैं यह सब नहीं सुनना चाहता।

अब्लास्की—जो कुछ मैं जानता था, कह दिया। पर मैं यह भी कह सकता हूँ कि तुम्हारी सफलता की अधिक आशा है।

लेविन कुर्सी के सहारे बैठ गया। उसका चेहरा पीला पड़ गया था।

अब्लास्की—अब इसमें सुस्ती नहीं करनी चाहिये। जहाँ तक हो, इसे तुरत तैं कर डालो। आज कुछ मत कहना। कल जाना और अपना अभिप्राय स्पष्ट रूप से व्यक्त करना। आशा है ईश्वर तुम्हारी सहायता अवश्य करेगा।

लेविन विचार-सागर की तरंगों में गोता खा रहा था। चौंक कर बोला—"मैं देखता हूँ कि इस मनुष्य जीवन का आधार यही रमणियां हैं। वे इसे जिस ओर चाहें प्रवाहित करें। तुम्हारी क्या राय है?

अब्लास्की—किस विषय पर?

लेविन—मानलो तुम्हारी शादी हो गई। तुम अपनी पत्नी से अतिशय अनुराग रखते हो। संयोग वश तुम्हारी दृष्टि किसी दूसरी रमणी पर पड़ गई तो तुम क्या करोगे?

अब्लास्की—यह तो अंगूर खाकर इमली के लिये तर्सना है।

लेविन–यह असम्भव नहीं है। कभी-कभी बैंगन सलगम क
मात कर देता है।

अब्लास्की—हँसी की बात छोड़ दो। गम्भीरता से विचार कर
देखो। स्त्री क्या है। संसार में सबसे मधुर, सबसे प्रिय, दीना, औ
अनाथ। तुम्हारे सुखसाधन के लिये उसने अपना सर्वस्व निछा
कर दिया है। क्या कोई ऐसा स्वार्थी हो सकता है कि अपना मतल
निकाल कर उसे फटकार दे।

लेविन–पर स्त्रियों के पतन की ओर देख कर मुझे बड़ी निराश
होती है।

अब्लास्की–मैगडेलन भी तो स्त्री ही थी।

लेविन-उसकी बात छोड़ दीजिये। यदि स्त्रियों का यह चरि
महात्मा ईसा ने देखा होता तो उन्होंने इनके लिये उन शब्दों का प्रयो
नहीं किया होता।

अब्लास्की–तुम्हारा कहना भी ठीक ही है। पर किसी बात क
केवल अस्वीकार करना उसका ठीक उत्तर नहीं है। तुम मुझसे पूछ
हो क्या करना चाहिये। मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ। मान लो कि
तुम्हारी पत्नी बुढ़िया हो गई और तुम अभी जवानी के जोश में भ
हो। तुम्हें अपनी पत्नी का बहुत ख्याल है; पर तुम देखते हो कि तुम
उससे अनुराग नहीं रख सकते। एकाएक तुम्हारा स्नेह दूसरी जगह
आकर्षित हुआ, बस तुम गये। तुम्हारा नाश हो गया।

लेविन हँस पड़ा।

अब्लास्की-पर दूसरा चारा ही क्या है। अब तुम्हारी क्या अवस्था
होगी। तुम्हारे दो पत्नियां हो गईं। एक तो तुम्हारे प्रेम पर अधिकार

जमाना चाहती है; पर तुम अपना प्रेम भी उसे नहीं दे रहे हो। दूसरी अपना सर्वस्व तुम्हारे लिये निछावर कर देती है; पर उसके बदले कुछ नहीं चाहती। इस अवस्था में तुम क्या करोगे? तुम्हारे लिये एक तरफ कुँआ है तो दूसरी ओर खाई है।

लेविन—इसमें कोई आपत्ति नहीं है। प्रेम पवित्र है, पाक है, साफ है। इसलिये उसका हर स्थान पर निवास है। इतने में उसे अपने पापाचरण का स्मरण आया, और वह काँप उठा बोला—नहीं-नहीं, मैं भूला हूँ। तुम्हारा कहना ठीक है। मैं कुछ नहीं जानता।

अब्लास्की—यही देखो। तुम्हें अपना अधूरापन साफ दिखाई देगा। यह अधूरापन दुर्बलता भी है और गुण भी है। तुम्हारा चरित्र अधूरा है, इसलिये तुम अपने जीवन को भी अधूरा बनाना चाहते हो। सार्वजनिक कामको तुम घृणा की दृष्टि से देखते हो। क्यों? क्योंकि तुम उसमें सफलता नहीं पाते। उनका कहना कुछ है और करना कुछ है। तुम चाहते हो मनुष्य का आचारण सदा निर्दोष लक्ष्यकी ओर ही जाय। तुम चाहते हो कि गार्हस्थ्यजीवन में सदा एक अभिन्न हो। पर यह संभव नहीं।

लेविन ने ठंढी सांस ली। वह अपने चित्त में इस तरह निमग्न था कि उसपर अब्लास्की की बातों का कुछ असर नहीं पड़ा।

इतने में अब्लास्की ने बिल मांगा, चपरासी बिल लाया। उसे चुका कर दोनों मित्र उठे और होटल से बाहर हो गये।

६

किटी की अवस्था अभी केवल १८ वर्ष की थी; पर इतनी ही छोटी

उम्र में उसके रूप की ख्याति चारों ओर फैल गई थी और दो प्रेमी भ..
तैयार हो चुके थे—लेविन तथा रंस्की।

विगत जाड़े में लेविन किटी के घर लगातार कई बार आया-गया। इससे किटी के माता-पिता को सन्देह हुआ। एक दिन इस विषय पर दोनों में बात-चीत भी हुई थी। किटी के पिता लेविन के पक्ष में थे। उनका कहना था कि लेविन से योग्य वर किटी के भाग्य में नहीं बदा है। किटी की माता का कहना था कि एक तो किटी की अवस्था बहुत ही कम है और दूसरे लेविन के व्यवहार से यह नहीं टपकता कि वह वास्तव में किटी को वरण करना चाहता है। इसके अलावा किटी का भी विशेष अनुराग उस पर नहीं दिखाई देता। इसके बाद ही लेविन एकाएक मास्को छोड़कर चला गया। उसी दिन किटी की माता ने अपने पतिसे कहा—"मैंने पहले ही कहा था कि लेविन का विचार दृढ़ नहीं है।" इसके बाद रंस्की का आवागमन होने लगा। किटी की माता रंस्की से बड़ी सन्तुष्ट थी। उनका मन था कि किटी के लिये यही सबसे योग्य वर हो सकता है।

किटी की मां की दृष्टि में लेविन और रंस्की में कोई तुलना नहीं हो सकती थी; लेविन सदा अजनबी की भांति रहता था, उसके विचार अटल थे, वह समाज में बहुत मिलना जुलना नहीं पसन्द करता था। इसे किटी की मां एक तरह का अभिमान समझती थी और घृणा करती थी। दूसरे उसके किसानी वृत्ति से भी उसे घृणा थी। उसे यह बात नहीं पसन्द थी कि लेविन उसके घर में बराबर महीनों आता रहा और बिना अपना अभिप्राय प्रगट किये ही चला जाता था। जब वह मास्को छोड़ कर चला गया तो उसकी मां को एक तरह का सन्तोष हुआ कि चलो बखेड़ा दूर हुआ।

रंस्की की चाल-ढाल, रहन-सहन, मिलने का तरीका सभी किटी की मां के मन माफिक था। सभी बातें अनुकूल थीं। इससे बढ़कर क्या चाहिये था।

रंस्की बराबर किटी से मिलता। उससे प्रेमालाप करता। नाचघरों में उसके साथ नाचता। इससे यह आशंका नहीं की जासकती थी कि वह किटी का पाणिग्रहण नहीं करना चाहता। इतनेपर भी किटी की मां की चिन्ता दूर नहीं हुई थी।

किटी की मां का विवाह किटी के पिता के साथ जितनी आसानी से हुआ था, अपनी सन्तति के विवाह में उसे उतनी ही कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था। किटी की मां को प्रत्येक पुत्री की शादी में पति से कलह करना पड़ा था। इस बार भी यही अवस्था उत्पन्न थी। उसकी चिन्ता प्रति दिन बढ़ती जाती थी। नये-नये प्रश्न का आकार उसके सामने उपस्थित होते थे। वह जितना ही लोगों से पूछ-ताछ करती, इस समस्या को हल करने की चेष्टा करती, उतनी ही अधिक उस की चिन्ता और बढ़ती जाती।

कभी वह सोचती किटी रंस्की को चाहती है; पर कहीं वह विश्वास-घात न कर बैठे। मायाजाल में इस अबोध बालिका को फंसा कर इसका सर्वस्व नाश कर कहीं इसे छोड़ न दे। फिर सोचती रंस्की भला आदमी है। वह ऐसा नहीं कर सकता। एक दिन बातों ही बातों में रंस्की ने किटी से यह भी कह दिया था कि हम अपनी मां की आज्ञा बिना कोई काम नहीं करते। मां शीघ्र ही यहाँ आनेवाली हैं।

किटी ने बिना किसी ख्याल के सब बातें अपनी मां से कह दी थीं। किटी की मां ने इसे दूसरे भाव से ग्रहण किया था। इसका

ख्याल था कि रंस्की की मां इस संयोग से प्रसन्न होगी; पर उसे आशंका हो रही थी कि कहीं अपनी मां के भय से रंस्की इस संबंध की चर्चा ही इससे न करे। डाली की जो हालत हो रही थी, उससे किटी की मां की चिन्ता अधिकाधिक बढ़ती जा रही थी। इतने दिनों के बाद लेविन को उसने पुनः रंगमंच पर देखा। इससे उसकी चिन्ता और भी बढ़ गई। उसे डर हो गया कि लेविन को देख कर कहीं किटी का विचार बदल न जाय और वह रंस्की को जवाब न दे दे।

रास्ते में किटी की मां ने उससे पूछा—लेविन को यहां आये कितने दिन हुए?

किटी—कल ही तो आये हैं।

किटी की मां—मैं एक बात कह देना चाहती हूँ। इतना कहते-कहते उसका चेहरा गम्भीर हो गया। किटी उसका अभिप्राय भलीभाँति समझ गई।

किटी-मैं सब समझती हूँ। आप कृपा कर उस संबंध में कुछ न कहें।

वह अपनी मां के मन से सहमत थी, फिर भी उसे आन्तरिक वेदना हुई।

किटी की मां—मैं केवल इतना ही कहना चाहती थी कि नयी-नयी आशाओं का पुल बाँधना......

किटी (बीच में ही रोककर) मैं आपको हाथ जोड़ रही हूँ, इस संबंध की चर्चा मत कीजिये। मेरा कलेजा काँप उठता है।

किटी की आखों में आंसू भर आये।

किटी की मां—मैं कुछ नहीं कहूँगी। तुमने वचन दिया है कि मुझसे कोई बात नहीं छिपाओगी और मैं उसी का स्मरण दिला रही थी।

किटी—कभी नहीं। मैं फिर वही बात दोहराती हूँ।

किटी की मां—अच्छा मैं निश्चिन्त हो गई।

७

आज किटी की विचित्र दशा थी। रणक्षेत्र में पैर रखने के पहले नये सिपाही की जो अवस्था होती है, ठीक वही अवस्था किटी की थी। उसका कलेजा धड़क रहा था, वह अस्थिर थी।

आज उसके जीवन में नवयुग होनेवाला था। आज उसके दोनों प्रार्थी उसके सामने भिक्षार्थ आनेवाले थे और उसे अपना आखिरी फैसला करना था। वह रह-रह कर उन्हीं लोगों का ध्यान करती और उन्ही के बारे में सोचती। लेविन का ख्याल कर वह आनन्द सागर में डूब जाती, उसकी आत्मा उल्लास से भर जाती। लेविन उसके घर का बालसखा था, उसके परलोकवासी भाई का घनिष्ठ मित्र था, इससे लेविन एक तरह से उसका अपना था। वह जानती थी कि लेविन का प्रेम अटल है। रंस्की के स्मरण से उसे वह आनन्द नहीं मिलता था। पर वह जानती थी कि रंस्की का भविष्य प्रकाशमय और उज्ज्वल है; पर लेविन का भविष्य अन्धकारमय और अनिश्चित है।

वेषभूषा से सुसज्जित होकर उसने शीशे में अपना मुंह देखा। सुन्दरता अंग-अंग से चू रही थी। उसने मन में सोचा आज जिस परीक्षा में मुझे उतरना है, उसके लिये यह वेष ठीक है।

सज-धज कर वह नीचे बैठक में पहुंची ही थी कि दरबान ने लेविन के आगमन की सूचना दी। किटी समझ गई कि लेविन इतने सबेरे क्यों आया है। किटी के सामने एक विचित्र समस्या उपस्थित हो गई। उसका कलेजा कांप उठा। "ईश्वर! आज हमें कितना कठोर होना पड़ेगा। आज हमें इस सरल हृदय मनुष्य को कड़ी चोट पहुँचानी पड़ेगी, क्यों! क्योंकि वह खुद प्रेम करता है, अपना सर्वस्व हमारे चरणों पर निछावर करना चाहता है। पर चारा ही क्या है। ......पर क्या यह अशुभ समाचार मुझे ही कहना पड़ेगा? क्या मेरे मुंह से यह निकल सकेगा कि तुम पर मेरा अनुराग नहीं है। यह तो सरासर झूठ उगलना होगा तब मैं क्या कहूँ? एक दूसरे व्यक्ति पर मेरा अनुराग अधिक है। यह भी नहीं हो सकता तो इस समय मेरा न मिलना ही उचित होगा।"

इतना कह यही सोचती वह आगे बढ़ी। दरवाजे तक भी नहीं गई होगी कि उसे लेविन के पैर की आहट मालूम हुई। वह रुक गई और फिर अपने मनमें कहने लगी—"यह भी उचित नहीं होगा मुझे डर किस बात का है। मैंने कोई पाप नहीं किया है। जो कुछ बदा होगा, होगा मैं सब बातें साफ-साफ कह दूंगी।"

इतने में लेविन कमरे में आ पहुँचा। उसके प्यासे नेत्र किटी के मुखश्री का पान कर रहे थे—वह बोला—"क्षमा करना मैं जरा जल्द आ गया हूँ।"

किटी—अपना घर है। यहां किस बात का विचार। इसके बाद दोनों आमने-सामने दो कुर्सी पर बैठ गये।

लेविन—मैं तुमसे एकान्त में मिलना ही चाहता था, इसीलिये मैं जरा सबेरे आया।

किटी—(अनसुनी करके) मां अभी नीचे आवेंगी । कल उन्हें थकावट आगई ।

लेविन ने उसकी ओर घूर कर ताका । वह शरमा गई और उसका सिर नीचा हो गया ।

लेविन—मैंने उस दिन तुम से कहा था कि मैं यहां कब तक रहूँगा, यह तुम पर ही निर्भर है ।

किटी अंगूठे से ज़मीन खोदने लगी । वह यह नहीं स्थिर कर सकी कि इस प्रश्न का क्या उत्तर दिया जाय ।

लेविन—मैं इस समय यह पूँछने आया हूँ कि क्या तुम मेरी पाणि-गृहीता पत्नी हो सकती हो ?

किटी का कलेजा धड़क रहा था । वह जोरों से सांस ले रही थी । उसकी सारी इन्द्रियां चञ्चल हो रही थीं । वह आनन्द-सरोवर में गोते मार रही थी । प्रेमोच्छ्वास में यह आनन्द मिलेगा, वह नहीं जानती थी; पर यह क्षणिक था । उसी समय उसे रंस्की का स्मरण आगया । उसने दिल कड़ा करके आंखें ऊपर की और जल्दी में बोल उठी—"यह असंभव है, आप मुझे क्षमा करें ।"

लेविन—मैं पहले से ही जानता था कि यही होना है ।

इतना कह कर उसने किटी को अभिवादन किया और लौट कर जाना ही चाहता था कि उसी समय किटी की मां ने कमरे में प्रवेश किया । उसने देखा कि दोनों के चेहरों पर हवाइयां उड रही हैं ।

लेविन ने उसे अभिवादन किया । किटी नीचा सिर किये उसी तरह खड़ी रही । दोनों की अवस्था से किटी की माँ को विश्वास हो [illegible] कि किटी ने लेविन को कोरा जवाव दे दिया है । उसके दिल

हुआ, उसकी चिन्ता मिट गई। वह बैठ गई और लेविन से बात-चीत करने लगी।

पांच ही मिनिट बाद किटी की एक सखी का आगमन हुआ। गत वर्ष इसका विवाह हो चुका था। इसका नाम था काउण्टेस नार्सडन। सदा बीमार रहने के कारण उसका शरीर कृपित और दुबला-पतला था; पर उसकी आंखें रसीली थीं। किटी पर उसका विशेष अनुराग था। उसकी कामना थी कि किटी को उसके ऐसा ही वर मिले। रंस्की उसकी निगाह में उपयुक्त वर था। लेविन से वह सदा जलती थी। जब कभी लेविन से सामना हो जाता तो वह उसकी दिल्लगी उड़ाया करती। दोनों का सामना हुआ कि वाणवर्षा शुरू हुई।

कमरे में प्रवेश करते ही नार्सडन ने लेविन को बैठे देखा। उससे हाथ मिलाते-मिलाते बोल उठी—"कौन! लेविन! इस नरकागार में आपने किस तरह कदम रखा। क्या यह वह नहीं रहा, या आप वह नहीं रहे। आप तो मास्को की तुलना वाविलोन से किया करते हैं?"

लेविन—(सम्हल कर) मेरा अहो भाग्य कि आप को मेरे वे शब्द अब तक याद हैं। उनका आप पर विचित्र प्रभाव पड़ता होगा।

नार्सडन—इसमें भी कोई शक है। मैं सदा उन्हें लिख लेती हूँ। (किटी से) क्या इधर हाल में तुमने फिर नाचा था।

काउण्टेस नार्सडन किटी से बातें करने लगी। लेविन का पिण्ड छूटा। वह जाने के लिये प्रस्तुत हुआ। इसी समय किटी की मां ने उससे फिर पूछा—"मास्को में कब तक रहोगे? इन दिनों तो तुम जिला कौंसिलों में फँसे होगे। इससे शायद यहां अधिक समय तक नहीं रह सकोगे?"

लेविन—अब मैं उन कौंसिलों का मेम्बर नहीं रहा। फिर भी मैं अधिक दिन तक नहीं ठहर सकूंगा।

नार्मडन ने लेविन के उदास चेहरे को लक्ष्य कर देखा कि उसमें पहले की सी बातें नहीं हैं। आज वह अधिक बात-चीत करना नहीं चाहता; पर मैं उसे कहाँ छोड़ती हूँ। किटी के सामने इसे उल्लू बनाने में मुझे विशेष आनन्द आता है। बोली—"मैं आपसे एक बात पूंछती हूँ। कलूगा गाँव के हमारे सभी असामी मालगुजारी खाकर बैठ गये। एक पैसा भी नहीं दे रहे हैं। यह कहाँ का न्याय है। क्या इन्हीं किसानों की आप इस तरह प्रशंसा किया करते हैं?"

इसी समय कमरे में एक दूसरी महिला ने प्रवेश किया और लेविन उसके सम्मानार्थ उठ खड़ा हुआ। बोला—"काउण्टेस, मुझे क्षमा कीजिये। मैं उस संबंध में कुछ नहीं जानता। इस लिये कुछ उत्तर नहीं दे सकता।' इतना कह कर उसने उस अफसर पर दृष्टि गड़ाई जो उस महिला के पीछे-पीछे आया।

उसको देख कर लेविन को आशंका हुई, कदाचित् यही रंस्की हो। उसने किटी के चेहरे पर दृष्टि दौड़ाई। किटी का चेहरा दमक उठा था। लेविन ने अपने मनमें कहा किटी इसीसे प्रेम करती है। रुककर देखना चाहिये कि इस व्यक्ति में कौन से गुण हैं, जिन पर किटी मुग्ध है।

संसार का नियम हैं कि जहाँ दो प्रतिस्पर्धी मिले कि एक दूसरे का छिद्रान्वेषण करने लग जाते हैं। गुण की ओर किसी की निगाह ही नहीं जाती। पर ऐसे भी कुछ लोग हैं, जो केवल उन गुणों की टोह में रहते हैं, जिनके कारण उनका प्रतिस्पर्धी विजयी हुआ है। लेविन इन्हीं लोगों में से था। प्रथम साक्षात् में ही उसने देख लिया कि रंस्की में

कौनसी विशेषता है। रंस्की के शरीर की गठन सुडौल थी, न ज्या
लम्बा था, न नाटा, रंग पक्का, चेहरा हसमुख, शान्त और स्थिर था
उसकी पोशाक सादी पर भड़कीली थी। रंस्की ने पहले किटी की म
से हाथ मिलाया और फिर किटी से।

चार आँखें होते ही किटी का चेहरा खिल उठा। उसकी आँ
चमकने लगीं। मन्द मुस्कान ने उसके सौन्दर्य को और भी दीप्त
मान कर दिया।

सबको यथावत् अभिवादन कर रंस्की एक कुर्सी पर बैठ गया
उसने लेविन की ओर ताकने की भी परवा नहीं की, यद्यपि उसकी आँ
रंस्की के चेहरे पर गड़ी सी थीं।

किटी की मां ने दोनों का परिचय कराया। दोनों ने उठ
आदर अभिवादन किया। रंस्की बोला—"विगत जाड़े में आपके दर्शन व
आशा थी; पर अभाग्यवश आप गाँव चले गये।"

काउण्टेस नार्लडन—लेविन को शहर पसन्द नहीं। आप अधिकत
देहातों में ही रहते हैं।

रंस्की ने काउण्टेस की ओर देखकर लेविन की ओर देखा औ
मुस्कराकर बोला—जाड़े के दिनों में तो देहातों में उदासीनता आती होगी

लेविन—यदि बेकारी न रहे तो उदासी नहीं आ सकती। फिर अपन
उदासी तो आप ही दूरकर दी जा सकती है।

रंस्की—मुझे भी ग्राम्यजीवन पसन्द है।

काउण्टेस—पर मैं नहीं समझती कि आप बारहो मास देहातों में
रह सकेंगे।

रंस्की—मैंने कभी रह कर देखा नहीं है, इससे ठीक नहीं कह सकता।

किसी समय में अपनी मां के साथ नीस प्रान्त के देहातों में रहता था। नीस उदासीन प्रदेश है, फिर भी उसने मेरा दिल हर लिया था।

बातों के सिलसिला ने रुख बदला। भूत-प्रेतों की बात चल पड़ी। काउण्टेस नार्सडन इन सब बातों में बहुत विश्वास रखती थीं, कई एक विस्मयजनक बातें सुना गईं।

रंस्की—मैंने आज तक ऐसी घटना कभी नहीं देखी। मेरी प्रबल इच्छा देखने की रहती है। काउण्टेस, यदि आप मुझे दिखला दें तो मैं आपका बड़ा उपकार मानूंगा।

काउण्टेस—आगामी शनिवार को ही। (लेविन से) आपका क्या विश्वास है, प्रेतयोनि आप मानते हैं या नहीं ?

लेविन—आप मुझ से क्यों पूछती हैं, जब आप मेरा मत जानती हैं।

काउण्टेस—फिर भी मैं सुन लेना चाहती हूँ।

लेविन—इन सब बातों से यही प्रगट होता है कि शिक्षित समाज की अवस्था किसानों से बहुत उन्नत नहीं है। नजर, टोना, ओझा आदि को वे मानते हैं और हम लोग भी······

काउण्टेस—(बीचमें ही काटकर) आप इन बातों में विश्वास नहीं करते! क्यों ?

लेविन—मैं इन सब बातों को नहीं मान सकता।

काउण्टेस—पर यदि मैंने यह सब लीला अपनी आँखों देखी है, तब ?

लेविन—किसान की स्त्रियां भी यही कहा करती हैं कि हमने भूत देखा है।

काउण्टेस—तुम्हारा अभिप्राय है कि मैं झूठ बोल रही हूँ। यह कह कर उसने रूखी हँसी, हँसी।

किटी को लेविन की दशा पर दया आई। उसने उसे सम्हालते हुए कहा—"उनका कहना तो केवल इतना ही है कि मैं इन बातों में विश्वास नहीं करता।"

लेविन कुछ उत्तर देना चाहता था; पर रंस्की ने देखा कि मामला बढ़ जायगा, इससे बीच में ही बोल उठा—"इसमें कौन बड़ी बात है। बिजली के बारे में हम लोग कुछ नहीं जानते; पर उसका होना मानते हैं या नहीं। इसी तरह प्रेतयोनि भी हो सकती है, जिसके बारे में हम लोग कुछ नहीं जानते।

लेविन—बिजली के आविष्कार में एक बात थी। लोगों ने पहले उसका रूप पहचाना, फिर उसके उद्गम का कारण खोज निकाला। तब उसके प्रयोग का पता लगाया। पर ओझा लोग तो सब कुछ करके भी प्रेतयोनि को अज्ञात शक्ति बतलाना चाहते हैं।

रंस्की ने लेविन की बातें गौर से सुनीं। उसे उनमें कुछ सार्थकता मालूम हुई।

रंस्की—ओझा लोगों का भी तो यही कहना है कि हम लोग इसका पता नहीं लगा सके हैं; पर यह निराधार नहीं है। वैज्ञानिकों की अवस्था भी तो इसीतरह की है।

लेविन—नहीं, आप दो वस्तुओं को लेकर रगड़ें बिजली पैदा हो जायगी; पर प्रेतयोनि के साथ यह बात सदा नहीं घटती।

रंस्की ने देखा कि मामला बढ़ता जा रहा है। वह चुप हो गया। प्रसंग बदलने के लिये उसने महिलाओं की ओर दृष्टि फेरी। बोला—"काउण्टेस एक बार हमें अवश्य दिखलाइये।"

लेविन चुप न हुआ बोला—प्रेतयोनि को माननेवाले अपनी इस

शक्ति को प्राकृतिक बतलाते हैं, यह निरर्थक प्रतीत होता है। लेविन और कुछ कहता; पर उसने देखा कि लोगों की अरुचि बढ़ती जा रही है। वह चुप हो गया।

रंस्की–इसी समय क्यों न आजमाइश की जाय। (किटी की मां से) यदि आप की आज्ञा हो।

इतना कहकर रंस्की उठ खडा हुआ और टेबुल की खोज करने लगा।

किटी टेबुल लेने के लिये उठी। चलते-चलते लेविन से उसकी चार आँखें हो गईं। लेविन पर उसे बड़ी दया आई। उसने अपने मनमें कहा–"तुम्हारी इस दुरवस्था का कारण मैं ही हूँ। फिर भी मैं तुमसे क्षमा चाहती हूँ।"

लेविन की आंखों ने किटी से साफ-साफ कह दिया–"मुझे इन सबों से घृणा है, तुम से घृणा है और अपने से भी घृणा है।" इसके बाद जाने के लिये वह प्रस्तुत हो गया। पर उसी समय किटी के पिता ने कमरे में प्रवेश किया। लेविन से बोले–"बेटा तुम कब से यहां हो। मुझे यह भी नहीं मालूम था कि तुम शहर में आये हो।" इतना कह कर उसने लेविन को छाती से लगा लिया, प्रेम के उमंग में वे इतने मतवाले हो गये थे कि उनको कुछ सुध-बुध नहीं रही। विचारा रंस्की उनके आगे अभिवादन के लिये खड़ा ही रह गया।

काउन्टेस–(किटी के पिता से) लेविन को थोड़ी देर के लिये छोड़ दीजिये। हम लोग एक बात की परीक्षा कर रहे हैं।

किटी के पिता–क्या भूत प्रेत को बुलाना। यह फजूल की बातें जाने दीजिये। इससे अच्छा तो अंगूठी का खेल होगा।

रंस्की ने उदास हो कर उधर से मुँह फेर लिया और काउन्टेस से

किटी को लेविन की दशा पर दया आई। उसने उसे सम्हालते हुए कहा—"उनका कहना तो केवल इतना ही है कि मैं इन बातों में विश्वास नहीं करता।"

लेविन कुछ उत्तर देना चाहता था; पर रंस्की ने देखा कि मामला बढ़ जायगा, इससे बीच में ही बोल उठा—"इसमें कौन बड़ी बात है। बिजली के बारे में हम लोग कुछ नहीं जानते; पर उसका होना मानते हैं या नहीं। इसी तरह प्रेतयोनि भी हो सकती है, जिसके बारे में हम लोग कुछ नहीं जानते।

लेविन—बिजली के आविष्कार में एक बात थी। लोगों ने पहले उसका रूप पहचाना, फिर उसके उद्गम का कारण खोज निकाला। तब उसके प्रयोग का पता लगाया। पर ओझा लोग तो सब कुछ करके भी प्रेतयोनि को अज्ञात शक्ति बतलाना चाहते हैं।

रंस्की ने लेविन की बातें गौर से सुनीं। उसे उनमें कुछ सार्थकता मालूम हुई।

रंस्की—ओझा लोगों का भी तो यही कहना है कि हम लोग इसका पता नहीं लगा सके हैं; पर यह निराधार नहीं है। वैज्ञानिकों की अवस्था भी तो इसीतरह की है।

लेविन—नहीं, आप दो वस्तुओं को लेकर रगड़ें बिजली पैदा हो जायगी; पर प्रेतयोनि के साथ यह बात सदा नहीं घटती।

रंस्की ने देखा कि मामला बढ़ता जा रहा है। वह चुप हो गया। प्रसंग बदलने के लिये उसने महिलाओं की ओर दृष्टि फेरी। बोला—"काउण्टेस एक बार हमें अवश्य दिखलाइये।"

लेविन चुप न हुआ बोला—प्रेतयोनि को माननेवाले अपनी इस

शक्ति को प्राकृतिक वतलाते हैं, यह निरर्थक प्रतीत होता है। लेविन और कुछ कहता; पर उसने देखा कि लोगों की अरुचि बढ़ती जा रही है। वह चुप हो गया।

रंस्की—इसी समय क्यों न आजमाइश की जाय। (किटी की मां से) यदि आप की आज्ञा हो।

इतना कहकर रंस्की उठ खडा हुआ और टेवुल की खोज करने लगा।

किटी टेवुल लेने के लिये उठी। चलते-चलते लेविन से उसकी चार आँखें हो गईं। लेविन पर उसे बड़ी दया आई। उसने अपने मनमें कहा—"तुम्हारी इस दुरवस्था का कारण मैं ही हूँ। फिर भी मैं तुमसे क्षमा चाहती हूँ।"

लेविन की आंखों ने किटी से साफ-साफ कह दिया—"मुझे इन सवों से घृणा है, तुम से घृणा है और अपने से भी घृणा है।" इसके वाद जाने के लिये वह प्रस्तुत हो गया। पर उसी समय किटी के पिता ने कमरे में प्रवेश किया। लेविन से वोले—"वेटा तुम कव से यहां हो। मुझे यह भी नहीं मालूम था कि तुम शहर में आये हो।" इतना कह कर उसने लेविन को छाती से लगा लिया, प्रेम के उमंग में वे इतने मतवाले हो गये थे कि उनको कुछ सुध-वुध नहीं रही। विचारा रंस्की उनके आगे अभिवादन के लिये खड़ा ही रह गया।

काउन्टेस—(किटी के पिता से) लेविन को थोड़ी देर के लिये छोड़ दीजिये। हम लोग एक वात की परीक्षा कर रहे हैं।

किटी के पिता—क्या भूत प्रेत को वुलाना। यह फ़ज़ूल की वातें जाने दीजिये। इससे अच्छा तो अंगूठी का खेल होगा।

रंस्की ने उदास हो कर उधर से मुँह फेर लिया और काउन्टेस से

आगामी नाच की बातें करने लगा । किटी से पूछा—"आप भी तो वहां जायगी ?"

इतने में किटी के पिता भीतर चले गये। लेविन को मौका मिल गया। वह चुपके से उठा और अपना रास्ता लिया।

रात को किटी ने अपनी माता से सब बातें साफ-साफ कह दीं। जो कुछ उसने किया था उस पर उसे सन्तोष था; पर जब वह बिछौने पर गई एकाएक उसकी बेचैनी बढ़गई। उसकी आंखों में नींद नहीं थी। लेविन की सौम्य मूर्ति उसके सामने विराज रही थी। उसकी आंखों से आंसू आने लगे। उसने अपने को सम्हाला और रंस्की का ध्यान किया। रंस्की के लिये ही उसने लेविन का त्याग किया था। उसका चेहरा दमक उठा, उसका चित्त शान्त हो गया। पर उसकी आत्मा सन्तुष्ट नहीं थी। उसके भीतर से एक अव्यक्त आवाज कुछ और ही कह रही थी। वह नहीं निर्णय कर सकी कि उसने जो कुछ किया है, अच्छा किया है या बुरा। पर उसे सुख नहीं था, शान्ति नहीं थी। आशंका का विष उसकी रग-रग में फैल रहा था। उसी दशा में उसनेतीन बार ईश्वर का नाम लिया और सोने चली गई।

इधर किटीकी यह दशा थी, उधर उसके माता-पिता में अलग विवाद-जंग छिड़ा था।

किटी का पिता—मैं क्या कहूँ, तुम्हें मान-मर्यादा का ज़रा भी ध्यान नहीं है। न जाने तुम उस पर क्यों लट्टू हो रही हो और किटी का सर्व नाश कर रही हो।

किटी की मां—मैंने क्या किया है ?

किटी से सब बातें सुनकर उसकी मां को बड़ा सन्तोष हुआ था।

उसके चित्तको शान्ति मिल गई थी। खुशी खुशी उसने पतिके कमरे में प्रवेश किया हँस कर बोली "किटी की सगाई पक्की हो गई। अपनी मां के आजाने के वाद रंस्की शादी का दिन नियत करेगा।"

पत्नी की वात सुनकर किटी के पिता को बड़ा क्षोभ हुआ। क्रोध से उसका चेहरा लाल होगया। वह वक-झक करने लगा।

किटी के पिता—ठीक है, तुमने किया क्या है। पर तुम यह थोड़े ही जानती हो कि लेविन रंस्की से हजार गुना अच्छा है। तुम तो तड़क-भड़क के वशीभूत होकर अपनी बुद्धि खो बैठी हो। वंश की मर्यादा का भी तो ख्याल करना था।

किटी की मां—पर इसमें मेरा क्या दोप है!

किटी के पिता—तुमने......

किटी की मां-(बीच में ही) यदि कोई तुम्हारी वातें सुने तो किटी का पाणिग्रहण कभी भी करने के लिये तैयार न हो और हमें फिर देहात की ही शरण लेनी पड़े।

किटी के पिता—मैं उसे ही उत्तम समझता हूँ।

किटी की मां—जरा विचार कर देखिये कि मेरा क्या अपराध है। दोनों का परस्पर प्रेम है। एक दूसरे को चाहते हैं। इसमें मैंने क्या किया।

किटी के पिता—ठीक है। यदि यही वातें सच होतीं। मैं खूब समझता हूं कि इनका प्रेम कितनी गहराई तक गया है। भूत-प्रेत का तमाशा! नीस प्रदेश का प्रलोभन! वालनाच! यही सव किटी के प्रेम का आधार है और यही उसका सर्वनाश करेगा। यदि उसके दिल में सच्चे प्रेम का उदय होता!

किटी की मां—पर तुम किस तरह कह सकते हो कि सच्चा प्रेम नहीं है ?

किटी की मां—मैं सब बातें जानता हूँ। हम संसार को चराते-चराते बुड्ढे हो गये। हमारी आँखों में कौन धूल डाल सकता है। किसके मनमें क्या है, मैं भली-भाँति जानता हूँ। रंस्की को मैं खूब पहचानता हूँ। वह किटी से कभी भी विवाह नहीं करेगा। उसे अपने मायाजाल में फँसा कर वह उसका सर्वनाश करना चाहता है। वह 'विषकुम्भं पयोमुखम्' है अथवा अनारुन का फल है जो देखने में बड़ाही मधुर होता है; पर उसके भीतर हलाहल भरा रहता है। और लेविन का अनुराग सच्चा है।

किटी की मां—आपके दिल में जो बात जम जाती है, वह जल्दी निकलती नहीं।

किटी के पिता—डाली के बारे में मैंने जो कुछ कहा था, वह सच उतरा या नहीं। यहाँ भी देखोगी कि वही होगा।

इसके बाद दोनों सोने की तैयारी करने लगे। किटी की माँ को किटी की रुचि पर सन्तोष था; पर पति की बातों से उसे बड़ा दुःख हुआ था। सोने के पहले उसने भी ईश्वर से प्रार्थना की कि दयामय ! मेरी रक्षा कर। हम सब तेरी सन्तान हैं। तेरे ही भरोसे हैं।

८

रंस्की गार्हस्थ्य जीवन के सुख से वञ्चित था। उसकी माँ के में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित थीं। बाल्य-काल में ही उसके पिता

का स्वर्गवास हो चुका था। रंस्की की शिक्षा-दीक्षा भी विचित्र प्रकार से हुई थी।

छोटी अवस्था में ही उसने पढ़ाई-लिखाई समाप्त कर दी और सेना में भर्ती हो गया। पीटर्सवर्ग के लोगों से वह बहुत मेल-मिलाप रखता था; पर प्रेम कहानी वह सदा उनसे अलग रह कर पढ़ा करता था।

पीटर्सवर्ग में इस प्रकार नीरस जीवन व्यतीत कर वह मास्को में आया और उसका पहला ही सहवास सुखकर हुआ। उसका प्रेम एक नवोढ़ा युवती से हुआ, जो किसी बात में उससे घटकर नहीं थी। उसने स्वप्न में भी यह नहीं सोचा कि किटी के साथ संबंध उसके लिये अच्छा नहीं है। नाचों में वह बहुधा किटी के साथ ही नाचा करता, उसके घर बहुधा आया-जाया करता, उससे मिलाप की बातें करता। यद्यपि उसकी कितनी ही बातें असभ्यता पूर्ण होतीं, तो भी वह देखता कि किटी को उनसे आनन्द मिलता है। उसका प्रेम नित नया रूप धारण करता जा रहा है। इससे रंस्की का अनुराग और भी बढ़ता था। पर वह यह समझता था कि इस तरह का व्यवहार एक खास माने रखता है। नवयुवकों का इस तरह का व्यवहार प्रगट करता है कि उनके हृदय में नायिका के प्रति अनुराग है; पर विवाह की कामना नहीं है।

यदि उसने किटी के माता-पिता की बातें सुनी होती, यदि वह उनकी अवस्था में अपने को रख कर यह अनुमान करता कि यदि मैं विवाह नहीं करूँगा तो किटी की आत्मा को कड़ी चोट पहुँचेगी तो उसे विस्मय होता और उसपर वह विश्वास न करता। वह यही सोचता

कि जिस बात से हम दोनों को इतना आनन्द मिल रहा है, भला वह भी कभी गलत हो सकती है। वह इस बात पर भी विश्वास नहीं करता था कि उसे विवाह करना ही होगा।

उसे विवाह से कोई संबंध नहीं था और न वह वैवाहिक जीवन बिताना चाहता था। न तो उसे गार्हस्थ्य जीवन पसन्द था और न वह उसकी झंझट को ढोना चाहता था।

किटी के माता-पिता की बातें वह कुछ नहीं जानता था। फिर भी उस रात के व्यवहार से उसे स्पष्ट हो गया कि किटी का अनुराग इतना अधिक बढ़ता जा रहा है कि अब बिना उसके बदले, कुछ प्रगट किये काम नहीं चल सकता। पर वह यह नहीं निश्चय कर सका कि क्या करना चाहिये। यही सोचता-सोचता वह निद्रा देवी की गोद में सो गया।

दूसरे दिन जब सोकर उठा तो ग्यारह बज चुके थे। जल्दी-जल्दी हाथ मुंह धोकर उसने कपड़े बदले और स्टेशन के लिये रवाना हो गया। स्टेशन पर अब्लास्की से मुलाकात हो गई, उसने पूछा कहिये, स्टेशन आने का कष्ट क्यों उठाया गया।

रंस्की-(मुस्कराकर) इसी गाड़ीसे मां आनेवाली हैं। वे पीटर्सबर्ग से आ रही हैं।

अब्लास्की-(चलते चलते) कल दावत के बाद आप कहां गायब हो गये। मैं दो बजे रात तक आपकी प्रतीक्षा कर रहा था।

रंस्की-सच बात तो यह है कि कल चेरबास्की के घर मुझे इतना आनन्द आया कि फिर कहीं जाने की इच्छा न रही। इससे मैं सीधा घर चला आया। तुम किस लिये आये हो ?

अव्लास्की–मैं एक सुन्दरी रमणी को लेने आया हूँ। मेरी बहन अन्ना भी इसी गाड़ी से आरही है।

रंस्की–कौन अन्ना? करनाइन की पत्नी क्या?

अव्लास्की–आप उसे अवश्य जानते होंगे।

रंस्की–मैं ठीक नहीं कह सकता।

अव्लास्की–न सही, पर मेरे बहनोई को तो आप अवश्य जानते होंगे। अलक्ले अलक्जएड्रोविच का नाम तो आपने अवश्य सुना होगा।

रंस्की—मैं उन्हें खूब मजे में जानता हूँ। उनके गुणों से भी परिचित हूँ। वे जितने विद्वान् और बुद्धिमान् हैं, उतने ही धार्मिक भी हैं।

अव्लास्की–अनुदार होकर भी वे बड़े सज्जन आदमी हैं।

यों तो अव्लास्की से सभी प्रसन्न रहा करते थे; पर रंस्की के अनुराग का एक विशेष कारण था। किटी के घर से उसका घना संबंध था।

रंस्की–रविवार की दावत की क्या ठहरी?

अव्लास्की–मैं चन्दा इकट्ठा कर रहा हूँ। कल तो मेरे मित्र लेविन से भी मुलाकात हुई होगी।

रंस्की–हां; पर वे बहुत जल्दी चले गये।

अव्लास्की–वे भी एक विचित्र जीव हैं।

रंस्की–मेरी समझ में नहीं आता कि क्या कारण है कि मास्को के प्रायः सभी लोग अपनी धाक जमाना चाहते हैं और यदि कोई कुछ कहता है, तो वे बिगड़ जाते हैं।

अव्लास्की–हां, बात कुछ ऐसी ही है।

गाड़ी का समय ज्यों-ज्यों नजदीक आने लगा, त्यों-त्यों यात्रियों की

भीड़ बढ़ने लगी। पुलिस के सिपाही भी पटरी पर चक्कर मारने लगे। कुली तैयार होकर गाड़ी की प्रतीक्षा में आ डटे।

अव्लास्की—पर लेविन के विषय में यह बात चरितार्थ नहीं होती, लेविन रूखा होने पर भी बड़ा मिलनसार है। उसमें दोष यही है कि वह घबरा बहुत जल्दी जाता है। उसका हृदय साफ है। कल की उदासीनता का एक विशेष कारण था।

रंस्की—क्या बात थी! क्या कल उसने किटी के साथ विवाह की चर्चा की थी?

अव्लास्की—हो सकता है। ऐसा अनुमान होता है। वह जल्दी चला गया और उदासीन था। यह बातें तो यही प्रगट करती हैं कि किटी पर उसका बड़ा अनुराग था। मुझे उसके लिये बड़ा खेद है।

रंस्की—खेद की बात ही है। हर एक रमणी सब से उत्तम वर पाने का यत्न करती है; पर जिस पर बीतती है, उसकी अवस्थ ईश्वर ही जानें। यही कारण है कि कितने घृणा के मारे इस प्रपञ्च से दूर जा हटते हैं। यदि उस स्त्री ने स्वीकार नहीं किया तो लोग यही समझते हैं कि इसके पास रुपया नहीं है; पर यहां इज्जत में बट्टा लग जाता है।

इतने में गाड़ी स्टेशन पर आ पहुँची। लोग उतरने चढ़ने लगे अभी जो स्टेशन सूनसान था, खासा बाजार हो गया। स्टेशन के कर्मचारी गाड़ी के इधर-उधर घूमने लगे।

रंस्की अभी तक अव्लास्की के पास खड़ा था। किटी के प्रसंग ने उसका मन इस प्रकार हर लिया था कि उसे मां का ख्याल ही नहीं रहा इस विजय पर उसका ललाट चमक उठा।

इतने में गार्ड ने आकर उससे कहा—"काउण्टेस रंस्की ! सामनेवाले डब्बे में हैं।"

रंस्की चौंक उठा। गार्ड के साथ-साथ वह डब्बे तक गया। डब्बे में से एक दूसरी महिला उतर रही थी। वह किसी बड़े घर की लड़की मालूम होती थी। उसके अंग-अंग से यौवन चू रहा था, उसकी मुखश्री की समता नहीं की जा सकती थी। रंस्की ने उसकी तरफ घूर कर देखा। दोनों की चार आंखें हुई । एक बार रंस्की की ओर गौर से देख कर उसने आंखें दूसरी ओर फेर लीं। मानों वह किसी और को खोज रही हो।

रंस्की गाड़ी के भीतर घुस गया। उसकी वृद्धा माता कोच पर बैठी थी। उसने रंस्की को हृदय से लगा कर प्यार किया। बोली—"तुम्हें तार ठीक समय पर मिल गया था ?"

रंस्की अपनी मां के पास बैठ गया और उससे बातें करने लगा। उसने देखा कि वही रमणी किसीसे कह रही है कि हमारे भाई यदि मिलें तो भेज देना।

इतने में वही रमणी फिर डब्बे में आ गई।

रंस्की की माँ ने पूछा—"क्या तुम्हारे भाई आये हैं ?"

रंस्की समझ गया कि यह रमणी अब्लास्की की बहिन अन्ना है।

रंस्की—क्षमा कीजिये, मैं आपको पहचान न सका। आपके भाई अभी मेरे साथ थे। मैं उन्हें ला देता हूँ।

अन्ना—रास्ते भर आप की ही चर्चा होती चली आई है।

रंस्की पटरी पर खड़ा होकर अब्लास्की को बुलाने लगा।

अब्लास्की का सामना होते ही अन्ना गाड़ी से बाहर निकल आ

रंस्की—उस मृत गार्ड की विधवा पत्नी की। इसके पूछने की तो कोई आवश्यकता नहीं थी।

अव्लास्की-तुम इसी लिये गये थे क्या ? बड़ा अच्छा काम किया।

रंस्की विना कुछ उत्तर दिये विदा हो गया। अव्लास्की भी अपनी वहन को लेकर घर चला। अन्ना का हृदय विषादपूर्ण था। उसकी आँखों से आँसू आने लगे।

अव्लास्की-(देख कर) यह क्या अन्ना !

अन्ना-अशुभ सूचना।

अव्लास्की-ऐसी बात मत कहो। हमारी आशायें तुम पर अवलम्बित हैं।

अन्ना-आपकी रंस्की के साथ अधिक दिन से परिचय है ?

अव्लास्की-हां, किटी का विवाह इसी के साथ होनेवाला है।

अन्ना-ऐसा ! ठीक है। तुम्हारा क्या हाल है ?

इतना कह कर अन्ना ने अपना सिर इस प्रकार हिलाया मानों उसके सिर पर कोई बोझ पड़ा हो और वह उसे दूर करना चाहती हो।

उसने कहा-तुम्हारा पत्र पाते ही मैं रवाना हो गई।

अव्लास्की—मैं भी तुम्हारे ही भरोसे बैठा हूँ। तुमसे हमें बहुत कुछ उम्मीद है।

अन्ना-क्या झगड़ा है, हमें आद्यन्त सुना जाओ।

अव्लास्की ने अपनी विपत्ति का लम्बा दास्तान छेड़ा। इतने में गाड़ी दरवाज़े के सामने जा खड़ी हुई।

६

गाड़ी से उतर कर अन्ना सीधे अपनी भावज के कमरे की ओर चली। डाली उस समय अपने छोटे बच्चे को पढ़ा रही थी।

पहले दिन अब्लास्की ने अन्ना का तार डाली के पास भेजा था, तो उसने तार लौटा दिया था और कहला भेजा था कि मुझसे कोई मतलब नहीं; पर उसने सभी तैयारी कर रखी थी और अन्ना के आगमन की प्रतिक्षा कर रही थी।

डाली के सिर पर विपत्तियों का पहाड़ घहरा पड़ा था। उसका सारा सुख लुप्त हो गया था, फिर भी वह अन्ना को नहीं भूल सकी थी। अन्ना का सद्व्यवहार और उसकी सारी बातें अक्षरशः उसे याद थीं।

इन दिनों डाली अपना सारा दिन घर में बच्चों के साथ ही बिताती। अपने दुःख की बात वह किसी पर प्रगट नहीं करना चाहती थी। विषाद-पूर्ण हृदय लेकर वह किसी से मिल भी नहीं सकती थी। वह जानती थी कि किसी न किसी तरह वह अन्ना से अपने दुःख की कहानी अवश्य कहेगी। इससे उसे कुछ सन्तोष भी था। पर उसे इस बात का दुःख भी था कि उसे अपनी दुःख-गाथा दूसरों पर प्रगट करनी पड़ेगी। यह उसकी दृष्टि में हीन बात थी। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता था, डाली घड़ी की ओर देखती। कभी-कभी वह चौंक उठती कि कहीं से घंटी की आवाज तो नहीं आई।

इतने में किसी के पैर की हलकी आवाज सुनाई दी। डाली ने उठ कर देखा और विस्मय के साथ आगन्तुक के गले से लिपट गई। बोली—"इतनी प्रतीक्षा के बाद आपके दर्शन तो हुए।"

अन्ना-भाभी, आज मेरा परम सौभाग्य है ।

डाली-आपके दर्शन से कितनी सुखी हूँ, नहीं कह सकती।

इतना कह कर उसने अन्ना के चेहरे पर एक कड़ी निगाह डाली कि वह हम लोगों का वृत्तान्त जानती है या नहीं।

अन्ना-(लड़के को देख कर) ईशा ! यह तो बहुत बढ़ गया है। इतना कहकर उसने उसे प्यार किया।

इसके बाद दोनों बैठ गईं और बातें होने लगी।

डाली- शरीर से तो आप अच्छी रहीं ?

अन्ना-हां बड़े मजे में। भाभी ! लड़कों को इकट्ठा करो, मैं सबों को एक कर देख लेना चाहती हूँ।

लड़कों को देख-भाल कर उनको प्यार कर दोनों फिर बैठ कर बातें करने लगीं।

अन्ना-भाभी, भैया ने मुझसे सभी बातें कह दी हैं।

डाली चुप थी।

अन्ना-भाभी, मैं भैया की शिफारिस नहीं करना चाहती; पर मुझे तुम्हारे लिये बड़ा खेद है। मेरा हृदय अतिशय पीड़ित है।

इतना कहते कहते अन्ना की आंखों से आंसू बहने लगा। वह खिसक कर डाली के निकट चली गई और उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया।

डाली-मेरा सत्यानाश हो गया। अब मुझे क्या सान्त्वना दोगी ?

इतना कहते-कहते उसका चेहरा सुस्त पड़ गया।

अन्ना-(डाली के हाथों को चूम कर) पर इस तरह तो काम चल नहीं सकता। जो विपत्ति आ पड़ी है, उसका निस्तार तो करना ही होगा।

डाली-सब काण्ड समाप्त हो गया। अब तो कुछ भी शेष नहीं रहा।

सब से बुरी बात तो यह है कि मैं उन्हें छोड़ भी नहीं सकती और उनके साथ रह भी नहीं सकती।

अन्ना—भाभी, मैं उनसे सब बातें सुन चुकी हूँ; पर तुम से भी सुनना चाहती हूँ।

डाली ने अन्ना की ओर सभेद दृष्टि से देखा। अन्ना के चेहरे पर प्रेम और दया का भाव व्यक्त था।

डाली—तुम हम लोगों की शादी का वृत्तान्त तो जानती ही हो। मां की शिक्षा ने मुझे उल्लू बना दिया। मैं कुछ नहीं जानती थी। मैं सुना करती थी कि पति अपने जीवन का सारा वृत्तान्त अपनी पत्नी को सुना जाते हैं; पर उन्होंने मुझसे कुछ नहीं कहा। जहां तक मुझे मालूम है, उस समय तक उनका किसी अन्य रमणी से ताल्लुक नहीं था। आठ वर्ष तक अमन-चैन से बीता। मैं स्वप्न में भी इस तरह की दुश्चरित्रता की कल्पना नहीं कर सकती थी। पर एकाएक इस बात को जान कर स्तब्ध हो गई। उनके हाथका लिखा पत्र मैंने पकड़ा। उन्होंने दाई को लिखा था।

इतना कहते-कहते डाली का चेहरा शर्म से लाल हो गया। वह आगे और कुछ नहीं कह सकी। रुमाल निकाल कर उसने आंसू पोछे और फिर बोली—"क्या यह किसी भी अवस्था में सह्य था कि मेरे पति दाई के साथ···"

अन्ना—प्यारी भाभी, मैं सब समझती हूँ। तुम्हारा घोर अपमान और निरादर किया गया है।

डाली—साथ ही उन्हें इस बात पर जरा भी खेद या पश्चाताप है। उलटे वे सुखी और प्रसन्न हैं।

अन्ना—नहीं, उनकी हालत इसी तरह शोचनीय है। पश्चात्ताप मारे वे दबे जा रहे हैं।

ढाली—क्या उन्हें पश्चात्ताप है?

अन्ना—मैं उनका हृदय जानती हूँ। उनको देख कर मुझे अतिशय खेद हुआ। उनका हृदय साफ है। पर वे हठीले हैं। इस समय दो बातें उन्हें अतिशय कष्ट दे रही हैं। एक तो बच्चों का ख्याल और दूसरे यह कि जिस-तुम पर उनका अतिशय अनुराग था, उसे ही वे इस तरह सता रहे हैं।

ढाली—मैं भी सब बातें समझती हूँ। खास कर ऐसी अवस्था में जब कि वही सारी विपत्ति के कारण हैं। पर तुम ही बतलाओ, मैं उनके साथ किस तरह रह सकती हूँ। क्या मैं उन्हें कभी भी क्षमा कर सकती हूँ। उनके साथ रहना मेरे लिये अतिशय दुःखदायी होगा। ओह! हम दोनों का कितना घना प्रेम था।

इससे आगे वह और कुछ न बोल सकी! उसकी घिग्घियाँ बँध गईं। अपने को किसी तरह सम्हाल कर फिर बोली—"वह नवयुवती है, इसकी उमर अभी बहुत कम है। वह सुन्दर भी है। पर मेरे में आज वह एक बात भी नहीं रही। मेरा यौवन, मेरा सौन्दर्य सब चला गया; पर कहाँ, उन्हीं ने इसको गँवाया। मैं निरन्तर उनकी सेवा में लगी थी, उनकी थी। हाँ, आज डाइन भी उन्हें मोह सकती है।"

ढाली की आंखों से घृणा की चिनगारियाँ निकलने लगीं। वह फिर बोली—"इतने पर भी वे मुझे तसल्ली देना चाहते हैं। भला मैं उनकी बातों पर कैसे विश्वास कर सकती हूँ। उन्होंने मेरे परिश्रम अच्छा पुरस्कार दिया...... अन्ना! एक समय वह था, जब

लड़कों की देख-भाल करना मेरे लिये आनन्द की बात थी। वही आज भार स्वरूप हो रहा है। मैं यह सब क्यों करूँ। लड़कों से मुझे क्या? मेरे हृदय में स्नेह नहीं रह गया। मेरे रग-रग में घृणा के भाव भर गये हैं। यदि मेरा वश चलता तो मैं उनकी हत्या कर डालती।"

अन्ना—भाभी, ईश्वर ने मुझे भी हृदय दिया है। इस किस्से को और कह कर अपना जी न दुखाओ। तुम इस तरह सताई गई हो कि तुम्हारी बुद्धि ठिकाने नहीं रही।

दो मिनट तक दोनों चुप रहीं।

डाली—अब क्या करना चाहिये। अन्ना, मैं तो सोच-विचार चुकी; मुझे कुछ सुझाई नहीं देता।

अन्ना—मेरी बात मानोगी! मैं उनकी बहिन हूँ। मैं उनको अच्छी तरह जानती हूँ। उनमें एक गुण है। वे पुरानी बातों की स्मृति चिर-काल तक नहीं रखते। उन्हें इस बात पर जरूर खेद होगा कि उन्होंने यह क्या कर डाला। जो कुछ उन्होंने किया, नासमझी से किया।

डाली—नहीं, वे सब बातें समझते हैं। पर इससे क्या? मुझे तो इससे शान्ति नहीं मिल सकती।

अन्ना—जब मैंने उनसे बात की तो उन्होंने मुझसे कहा कि मैं अपना अपराध स्वीकार करने को तैयार हूँ। उस समय तक मैं तुमसे नहीं मिली थी। तुमसे बात करने पर मेरा विचार बदल गया। मुझे तुम्हारी अवस्था पर हृदय से खेद है; पर मैं यह जानना चाहती हूँ कि तुम्हारे हृदय में उनके लिये अब भी कितना अनुराग शेष है। यदि अबभी कुछ शेष है, तो मेरे कहने से उन्हें क्षमा कर दो।

डाली "नहीं" कहने ही जा रही थी कि अन्ना ने उसे रोक

कहा—"मैंने इस संसार को तुमसे अधिक देखा है। मैं जानती हूँ कि भैया के प्रकृति के लोग इस संसार को किस दृष्टि से देखते हैं। तुम कहती हो कि उन्होंने उससे (अपनी प्रेयसीसे) तुम्हारी चर्चा की नहीं यह वात नहीं है। ऐसे आदमी अविश्वासी भले ही हों; पर स्त्री और कुटुम्ब को वे बड़ा ही पवित्र मानते हैं। इस तरह की स्त्रियों से वे सम्बन्ध भले ही करलें; पर उनको वे घृणा ही करते हैं। गृहसंबंधी बातें वे उनसे कभी नहीं कहते।

डाली—मैं तुम्हारा कहना मानती हूँ; पर उन्होंने...

अन्ना—मुझे वह समय भलीभाँति याद है। भैया तुम्हारे प्रेम में पागल होकर इधर-उधर नाचते फिरते थे। मैं यह भी जानती हूँ कि उनकी दृष्टि में तुम्हारा स्थान बहुत ऊँचा है। तुम्हें स्मरण होगा कि तुम्हारी प्रशंसा का वे पुल बाँध देते थे; बल्कि हम लोग इस पर उनकी हँसी उड़ाया करते थे। आज भी तुम्हारा वही स्थान है, इसमें कमी नहीं हुई है।

डाली—पर यदि वे उस मार्ग पर फिर जायँ।

अन्ना—यह नहीं होगा।

डाली-क्या तुम क्षमा कर सकती हो।

अन्ना-(क्षण भर सोच कर) अवश्य! अवश्य!!

डाली ने आगे कुछ नहीं कहा। वह अन्ना को लेकर उसके ठहरने के कमरे की ओर चली। रास्ते में उसे एक बार फिर गले लगाकर उसने कहा—"अन्ना, तुम्हारा आना हम लोगों के लिते मंगलमय हो।"

———

१०

अन्ना ने वह दिन डाली के साथ बिताया। न तो वह किसी से मिलने गई न किसी को अपने आगमन की सूचना ही दी। केवल उसने अपने भाई को लिख भेजा कि आज आपको घर पर ही भोजन करना होगा।

बहिन का कहना मान कर अब्लास्की आज घर भोजन करने आया था। डाली का व्यवहार यद्यपि उदासीन था, फिर भी उसमें वह रुखाई नहीं थी। अब्लास्की को सुलह की आशा हो गई।

लोग भोजन कर ही रहे थे कि किटी का आगमन हुआ। किटी ने अन्ना के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। बहिन से मिलने के बहाने उसने अन्ना को देखने का अवसर पाया। अन्ना को देख कर किटी के विस्मय का ठिकाना नहीं रहा। न तो उसमें अमीरी ठाट-बाट थी; न शान-शौकत। एक लड़के की मां होने पर भी अन्ना के सौंदर्य तथा यौवन में कुछ भी विकार नहीं उत्पन्न हुआ था। अन्ना मिलनसार इतनी अधिक थी कि क्षण भर में किटी से घना प्रेम हो गया। अन्ना की सादगी ने किटी का मन मोह लिया। अन्ना की चञ्चलता देखकर कोई भी उसे २० वर्ष से अधिक उम्रवाली नहीं कह सकता था। केवल उसके चेहरे की गम्भीरता और कभी-कभी शोकातुर चेहरा उसकी अवस्था की वास्तविकता प्रगट कर देता था।

भोजन के बाद डाली अपने कमरे में चली गई। अन्ना ने अब्लास्की को भी जाने का इशारा किया।

डाली और अब्लास्की से इस प्रकार जुदा होकर अन्ना अपने कमरे में आई और लड़कों के बीच में पलंग पर बैठ गई। ७६

कर वैठ गये। जब से अन्ना ने घर में प्रवेश किया है, लड़के उसके पीछे पीछे इस तरह नाच रहे हैं कि अपने मां तक को नहीं याद करते हैं।

चारपाई पर आराम से वैठ जाने पर अन्ना ने किटी से पूछा—"तु लोगों का बॉलडैन्स (नाच) कब होगा ?"

किटी—अगले सप्ताह में होगा। भीषण समारोह हो रहा है आप आवेंगी तो ?

अन्ना—बॉलडैन्स में मुझे कोई विशेष आनन्द तो नहीं मिलत पर आना ही पड़ेगा।

अन्ना इसी तरह किटी से बातें कर रही थी कि डाली अपने क से बाहर आई, बोली—"ऊपर कुछ सर्दी है, आपको यहां तकलीफ होगी नीचे के कमरे में चलिये।"

अन्ना-(डाली के चेहरे की ओर गौर से देख कर) मेरे लिये चिंति होने की आवश्यकता नहीं। मुझे सब जगह समान है। यहां भी आराम से ही सो सकूँगी।

इतने में अब्लास्की भी वहीं आ पहुँचा, पूछा—"क्या बात है ?"

उसके चेहरे से किटी और अन्ना दोनों ने समझ लिया कि प पत्नी में पुनः मेल हो गया।

डाली-यहां सर्दी है, इससे मैं अन्ना को नीचेवाले कमरे में चल के लिये कह रही हूँ।

डाली की बोली में फिर भी कुछ रूखापन था। इससे अन्ना सन्देह होने लगा कि दोनों में सुलह होगी या नहीं।

अब्लास्की—डाली को सदा उतावलापन आता है। तुम लोग च ठीक कर देता हूँ।

अन्ना की आशंका दूर हो गई। उसने अपने मनमें कहा—"अवश्य ही सुलह हो गई।"

डाली—(कुटिल हँसी हँस कर) मैं जानती हूँ कि आप सब काम किस तरह कर देते हैं। एक तरफ तो हामी भर लेंगे, दूसरी तरफ मैटपे को सहेज देंगे और वह सब कुछ चौपट कर देगा।

पति-पत्नी की बातों से अन्ना का रहा सहा सन्देह भी जाता रहा। अपनी इस विजय से उसका चेहरा खिल उठा। वह अपने को नहीं रोक सकी, उठी और डाली का मुँह चूम लिया।

आब्लास्की-(हँसकर) तुम गलत कह रही हो। न जाने क्यों तुम हमारे और मैटपे के पीछे हाथ धोकर पड़ी रहती हो।

उस दिन डाली की सभी बातें व्यंगपूर्ण थी। वह बात-बात में अब्लास्की पर कटाक्ष करती थी। अब्लास्की का चित्त प्रसन्न था; पर उदासीनता की हलकी रेखा उसके चेहरे पर वर्तमान थी, मानों उसे अपनी पाप-कथा अब भी याद है।

इसी तरह हँसी-मजाक में दस बज गया और सब लोग सोने जाने की तैयारी करने लगे कि घन्टी की आवाज सुनाई दी।

अन्ना—इतनी रात को कौन आ सकता है?

किटी—शायद मुझे लेने के लिये कोई आया हो।

अब्लास्की—कोई जरूरी कागज होगा और दफ्तर से चपरासी उसे लेकर आया होगा, नहीं तो इतनी रात को और कौन आ सकता है।

इधर यह बातें हो रही थीं, उधर नौकर आगन्तुक को लेकर सीढ़ियां नाप रहा था। सबों ने विस्मय के साथ रंस्की को देखा।

अन्ना का हृदय पुलकित हो उठा; पर किसी अनिर्दिष्ट आशंका से दूसरे ही क्षण कांप उठा।

रंस्की चुप-चाप खड़ा अपनी जेब से कुछ निकाल रहा था। उसकी निगाह अन्ना पर पड़ी, वह घबरा गया। इतने में अब्लास्की कमरे से बाहर निकल आया और रंस्की को ऊपर आने के लिये आग्रह करने लगा; पर रंस्की इन्कार करता गया।

रंस्की ऊपर नहीं गया। अब्लास्की से कुछ पूछ कर वह उलटे-पांव लौट गया।

किटी शर्म के मारे गड़ी जा रही थी। वह जानती थी कि रंस्की इस समय यहां क्यों आया था। वह मेरे घर पर अवश्य गया था। वहां से मेरा पता पाकर यहां आया और अन्ना की वजह से ऊपर नहीं आया।

सब एक दूसरे का चेहरा देख रहे थे। कोई किसी से कुछ नहीं कह रहा था। इतनी रात को रंस्की का आना कोई बड़ी बात नहीं थी, फिर भी लोग विस्मय से भरे थे। अन्ना को यह बड़ा ही अनुचित मालूम हुआ।

११

लेविन चेरबास्की के महल से निकला और आपने भाई के डेरे की ओर चला। वह आप ही आप कहने लगा—"मेरे में कोइ दोप अवश्य है कि लोग मुझ से घृणा करते हैं। मुझसे किसी से पटती ही नहीं। लोग कहते हैं, यह अभिमान है; पर मुझे अभिमान छू तक नहीं गया है। यह अभिमान होता तो क्या मैं इतने नीचे जाता। रंस्की में सभी

गुण हैं। तभी तो उसने उसे पसन्द किया। इसमें शिकायत की कोई बात नहीं। मेरे ही भाग्य का दोष है। मुझे क्या अधिकार था कि मैं उसे अपनी पत्नी बनने के लिये कहता। वह ऐसा क्यों करने लगी। मेरी गिनती ही क्या है। मैं तुच्छ हूँ, किसी के मतलब का नहीं हूँ और न कोई मेरी परवा ही करता है। भाई निकोले ठीक कहते हैं–'यह संसार नीच है, पामर है।' प्रोकोकी भाई की निन्दा करता है; पर क्या यह न्याय है। मैं उन्हें खूब समझता हूँ। हम लोगों की ठीक वही दशा है। मैं कैसा नीच हूँ। उनकी परवा न करके मैं दावत में चला गया।"

वह सड़क पर रोशनी के पास गया और जेब में से उसका पता निकाल कर पढ़ा और गाड़ी पर सवार होकर उसी तरफ चल दिया।

रास्ते में वह भाई निकोले की बातें सोचता जाता था। शिक्षालय से निकलने के बाद उनकी धार्मिकता किस प्रकार बढ़ी-चढ़ी थी। दिन-रात वे जप-तप में लगे रहे। संगी-साथी उनकी खिल्ली उड़ाते; पर वे उसकी परवा नहीं करते थे। एकाएक उनका जप-तप सभी टूट गया। उसी समय से उनका पतन आरम्भ हुआ। बदमाशों और आवारों की सोहबत में पड़कर उन्होंने अपना सर्वनाश किस तरह किया। इन सब के कारण उन्हें किस तरह की विपत्तियां झेलनी पड़ीं। हर तरह की बदनामी उठानी पड़ी। मुकदमेबाजी करना पड़ा, हवालात में रहना पड़ा। एक एक करके सभी बातें लेविन की स्मृति में उठने और विलीन होने लगीं। उसे बड़ी घृणा आई; पर वह निकोले की प्रकृति जानता था। इससे उसकी घृणा सीमा के बाहर नहीं जा सकी।

जिस समय निकोले का झुकाव धर्म की ओर था, उसके साथियों में किसी ने उसको उत्साह नहीं दिया था। सभी उसका मजाक ही उड़ाते

लेविन—मैं आपसे कुछ मांगने नहीं आया हूँ, केवल मिलने आया हूँ।

निकोले—(नर्म होकर) अच्छी बात है, चलो भीतर चलो। भोजन तो करोगे न (स्त्री से) प्रिये, इनके लिये भी भोजन का प्रबन्ध करना। (बगल में बैठे व्यक्तिको लक्ष्यकर) ये हमारे बड़े घनिष्ट मित्र हैं। कीव में रहते हैं। इनका नाम क्रिस्की है। ये पुलिस की आंखों में गड़ते हैं। क्योंकि इनकी चाल-चलन नेक है। पुलिस ने इसीलिये इनपर मामला भी चलाया है। ये विद्यालय में पढ़ते थे। वहां गरीबों की सहायता के लिये इन्होंने सहायक सभा खोली। इसलिये ये विद्यालय से निकाल दिये गये। इसके बाद देहात में इन्होंने एक पाठशाला खोली। दुश्मनों ने वहां से भी इन्हें मार भगाया।

लेविन—(क्रिस्की से) तो आपने कीव विद्यालय में शिक्षा पाई है।

क्रिस्की को यह प्रश्न रुचिकर नहीं प्रतीत हुआ। उसने मुंह बनाकर कहा—"हां, मैं कीवविद्यालय में ही था।"

निकोले—(स्त्री की ओर लक्ष्यकर) यही मेरे जीवन की संगिनी है। यह बदमाशों के अड्डे में जा फंसी थी। मैंने इसे वहां से निकाला। मेरा इसपर सहज अनुराग है। मैं इसका आदर करता हूँ। जो मुझे चाहते हैं, वे इसे अवश्य चाहेंगे। यदि इसके साथ सम्पर्क रखने में तुम्हे आपत्ति हो तो तुम अपना रास्ता ले सकते हो, मुझे इसमें न तो दुःख है, न आपत्ति है।

लेविन—इसमें हीनता की क्या बात है।

निकोले—ठीक है। तो हम तीनों साथ ही भोजन करेंगे।

मेरिया भोजन का प्रबन्ध करने चली गई और निकोले लेविन के बैठकर बातें करने लगा।

निकोले—(पास पड़े लोहे के छड़ के बोझ की ओर दिखाकर) हम लोग नये काम की योजना कर रहे हैं । इससे असीम लाभ की संभावना है ।

लेविन ने उसकी बातें न सुनीं । वह अपने भाई की दशा पर विचार कर रहा था । उसका हृदय विषाद से भरा था । उसके लिये इस समय संसार शून्य मालूम होता था । लेविन से यह भी छिपा न रहा कि यह संस्था क्या है । अपमान, निन्दा से बचाने के लिये ही निकोले यह सब कर रहा है ।

निकोले बोलता ही गया तुम जानते ही हो कि आज-कल पूंजी वाले मजूरों को किस तरह सताते हैं । बेचारे मजूरे दिन भर मजूरी कर के भी पेट भर अन्न नहीं पाते । पसीने की सारी कमाई बेईमान पूंजी वालों के हाथ लग जाती है और ये बेचारे न तो आराम कर सकते हैं और न अपनी सन्तानों की पढ़ाई-लिखाई का प्रबन्ध कर सकते हैं । इसी लिये यह संस्था कायम की गई है । इसमें जो लाभ होगा, सब बराबर-बराबर मजूरों में बांट दिया जायगा । सौदागरों और पूंजीवालों का इस में हाथ नहीं । समाज की वर्तमान असमान अवस्था का अन्त करना नितान्त आवश्यक है ।

लेविन—इसकी अत्यन्त आवश्यकता है । इसे कौन स्वीकार नहीं करेगा ।

निकोले—इसी उद्देश्य से हम लोग यह बढ़ईखाना खोल रहे हैं । इसका नफा सब बराबर काम करनेवालों में बांटा जायगा ।

लेविन—यह कारखाना कहां खोला जायगा ?

निकोले—कोजन प्रान्त के वाइन गांव में ।

लेविन—गांव में क्यों ? बढ़ई का कारखाना गांव में नहं चल सकता।

निकोले को लेविन का यह सवाल अच्छा नहीं मालूम हुआ। बोला—"क्योंकि किसानों की दासता पहलेकी भांति ज्योंकी त्यों बनी है। तुम लोग उसी अनुदार विचार के हो। इसीलिये तुम लोग किसानों का उद्धार नहीं चाहते। तुम दोनों भाई इस दासता की अवस्था में सुधार नहीं चाहते।"

लेविन—आप भ्रम में हैं। और फिर कोनिशे का नाम आप क्यों लेते हैं।

कोनिशे के नाम पर निकोले का चेहरा विकृत हो गया, बोला—"मैं अभी बतलाता हूँ। पर क्या फायदा ······।"

अच्छा बतलाओ, तुम क्यों यहां आये। तुमको इन सब बातों से घृणा है तो यहां से चले जाओ।

लेविन—यह मैंने कब कहा कि मैं इस सब से घृणा करता हूँ। मैंने तो इस के विपक्ष में एक शब्द भी नहीं कहा।

इतने में मेरिया ने कमरे में प्रवेश किया और निकोले के कान में कुछ कह कर भीतर चली गई। निकोले का चेहरा क्रोध से तम-तमा रहा था।

निकोले—(शान्त होकर खेद के साथ) मेरी अवस्था ठीक नहीं है। मेरा मिजाज चिड़चिड़ा हो गया है। तुम मुझसे कोनिशे और उसके लेखों की चर्चा करते हो। सरासर धोखा और दगाबाज़ी। दुनिया की आँखों में वह भले ही धूल झोंक ले; पर मुझे वह नहीं ठग सकता। ··न न्याय की दोहाई देता फिरता है; पर आप न्याय का नाम तक

नहीं जानता। (क्रिस्की से) क्या तुमने उसका वह लेख पढ़ा था?

क्रिस्की-(उदासीन भाव से) नहीं, मैंने नहीं पढ़ा।

निकोले-क्यों?

क्रिस्की-मेरा समय इतना फालतू नहीं है।

निकोले-तुम क्या कह रहे हो, उसे पढ़ना समय नष्ट करना है। साधारण लेख नहीं है। कितने ही लोग उसके विचारों को पढ़कर चक्कर में आजायंगे। हां, मेरी दृष्टि में उसका कोई मूल्य नहीं है। क्यों कि मैं उसकी कमजोरियों को जानता हूँ।

सब चुप थे। क्रिस्की उठ खड़ा हुआ और चलने की तैयारी करने लगा।

निकोले—क्या बिना भोजन किये ही चले जाओगे, कोई हर्ज नहीं। कल ताला बनानेवाले को लेते आना।

क्रिस्की की पीठ घूमते ही निकोले ने विकट हंसी हंस कर कहा—"यह भी काठ का उल्लू ही है। लेकिन······"

इतने में क्रिस्की ने लौट कर निकोले को बुलाया। निकोले उठ कर चला गया। कमरे में लेविन और मेरिया रह गये।

लेविन-(मेरिया से) आप भाई साहब के साथ कब से हैं?

मेरिया-एक वर्ष से अधिक हो गया। इनकी शराबखोरी दिन-दिन बढ़ती जा रही है। यही कारण है कि इनकी दशा दिन-दिन बिगड़ती ही चली जा रही है।

इतने में निकोले आ गया, पूछा-"तुम दोनों क्या बातें कर रहे थे?"

लेविन—(घबरा कर) कुछ तो नहीं।

निकोले—यदि तुम नहीं बताना चाहते तो कोई हर्ज नहीं; पर

तुम्हें इसके साथ अकेले में बातें करना उचित नहीं। (मेरिया से) भोजन तैयार है?

भोजन परसा गया। निकोले ने शराब का प्याला उठाया और चढ़ा गया, बोला–"कोनिशे की चर्चा से क्या काम। तुम यहां तक आये अच्छा किया। क्या काम-काज करते हो।" इतने में वह दूसरा प्याला भी चढ़ा गया।

लेविन–देहातों में अकेला जीवन बिता रहा हूँ। खेती का काम काज चला रहा हूँ।

लेविन को निकोले की शराबखोरी पर तर्स आ रहा था; पर वह आंख बचाता जाता था।

निकोले–शादी क्यों नहीं कर लेते?

लेविन–अभी संयोग नहीं आया है। कहते-कहते लेविन का चेहरा लाल हो गया।

निकोले–मेरी तो सब साध पूरी हो गई। मैंने अपने जीवन को विषम बना लिया है। पर मैं इतना दावे के साथ कह सकता हूँ कि उस समय यदि मेरा हक दे दिया गया होता तो मेरी यह दशा अभी भी न हुई होती।

लेविन ने तुरत ही प्रसंग बदल कर कहा–"आपको सुन कर प्रसन्नता होगी कि वन्या आज कल मेरे ही पास है।" वन्या प्रोडोस्की के बौंकिंग हाउस में एक क्लर्क थी।

निकोले क्षण भर के लिये विचार सागर में डूब गया। बोला–"प्रोडोस्की का क्या हाल है। वह मकान अभी तक खड़ा है कि ढह ? स्कूल का कमरा त्यों का त्यों होगा। वह जगह मुझे कभी

नहीं भूल सकती। हम लोगों का माली फिलिप जीवित है कि नहीं। उस मकान को ज्यों का त्यों रहने दो। जहाँ तक हो सके जल्दी विवाह कर डालो। उस समय अगर तुम्हारी पत्नी ने बुलाया तो मैं तुम्हारे घर आऊँगा।

लेविन—आप अभी क्यों नहीं चलते। हम दोनों मिल कर सब ठीक कर लेंगे।

निकोले—मैं आकर रह सकता हूँ, यदि वहाँ मुझे कोनिशे का मुंह देखने को न मिले।

लेविन—मैं वहां अकेला रहता हूँ। कोनिशे वहाँ नहीं आता।

निकोले—साफ बात यह है कि तुम दोनों से संबंध नहीं रख सकते। दो में से एक को छोड़ना ही पड़ेगा, या तो मुझे छोड़ो या उसे।

लेविन—यदि आप मेरा सच्चा मत सुनना चाहते हैं, तो मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि भाई-भाई के इस झगड़े में मैं किसी का भी पक्ष नहीं ग्रहण करना चाहता। आप दोनों के दोनों गलती पर हैं।

निकोले-(प्रसन्नता से) तुम यह बात स्वीकार करते हो कि हम दोनों गलती पर हैं?

लेविन-पर मैं तुम्हारे साथ रहना अधिक पसन्द करता हूँ क्यों कि······

निकोले-(बीच में ही) क्यों?

लेविन यह नहीं कहना चाहता था कि आप संकट में हैं और सहायक की आपको आवश्यकता है। पर निकोले उसका अभिप्राय समझ गया। मुंह बनाते हुए उसने एक प्याला शराब और चढ़ाया।

मेरिया-बस करो, कितना पीयोगे।

निकोले—(झिझक कर) फजूल छेड़-छाड़ मत करो; नहीं तो मैं भं'र बैठूंगा।

मेरिया ने उत्तर में केवल मुस्करा दिया। एक बार उसने निकोले को चढ़र देखा और शराब की बोतल अपने हाथ में ले ली।

निकोले—(लेविन से) इसे कौन नीच कह सकता है। कितनी भंार और कितनी प्रेमी है।

लेविन—(मेरिया से) आपने मास्को नगर देखा है?

निकोले—(लेविन से) जोर से न बोलना, नहीं तो यह डर जायगी। सिवा जजके इससे किसी ने आज तक बात नहीं की है। जानते हो इसपर मुकदमा चलाया गया था। क्योंकि इसने बदमाशों के उस अड्डेको छोड़ दिया है। यही आज कल का न्याय है। ईश्वर इन न्यायालयों से बचावे। इनका नाम लेने से ही पाप लगता है।

लेविन ने अपने भाई की बातें सुनीं। इन कौंसिलों और न्याया लयों पर उसे भी विश्वास नहीं था, फिर भी निकोले का यह रिमार्क उसे रुचिकर नहीं प्रतीत हुआ, बोला—"ईश्वर के सामने तो इन्हें जवाब देना ही पड़ेगा।"

निकोले—दूसरे जन्म में! दूसरा जन्म क्या बला है। मैं उस संसार से कोसों दूर भागता हूँ। मैं उसे नहीं देखना चाहता।

इतना कहते-कहते निकोले की जबान लड़खड़ाने लगी। नशे ने अपना पूरा प्रभाव जमा लिया था। मेरिया और लेविन दोनों ने मिलकर उसे उठाया और पलंग पर लिटा दिया।

लेविन—(मेरिया से) आवश्यकता के समय मेरे पास पत्र लिखना

किसी तरह का संकोच नहीं करना । भाई साहबको समझाना कि वे तुम्हें लेकर चले आवें और मेरे साथ रहें ।

मेरिया—मैं भरसक यत्न करूँगी ।

१२

दूसरे ही दिन लेविन ने अपने गाँवके लिये प्रस्थान किया। गाड़ी में वह लोगों से राजनीति की चर्चा करता रहा । रेलवे की व्यवस्था पर विवाद करता रहा, पर उसका दिमाग ठिकाने नहीं था, उसकी इन्द्रियां शिथिल थीं। रह-रह कर उसकी स्मृतिपथ में कोई बात आजाती थी और शर्मसे उसका सिर झुक जाता था। पर जिस समय वह अपने स्टेशन पर गाड़ी से उतरा और उसके काले कोचवान इगनट ने सलाम कर गांव का सारा समाचार सुनाया तो उसका जी बहुत कुछ ठिकाने होगया, शर्म भी धीरे-धीरे गायब होगई ।

रेल से उतर कर वह गाड़ी पर सवार हुआ । उसका नया घोड़ा कान खड़ा किये आगे बढ़ा। अब वह अपने जीवन पर नये प्रकार से विचार करने लगा। उसने तै किया कि अब मैं अपने जीवन का संगठन नये प्रकार से करूंगा। आजसे मैं विवाह आदि संबन्ध से होनेवाले असाधारण सुखकी कभी भी चर्चा नहीं करूंगा। हा ! इसके लिये मुझे कितना नीचा देखना पड़ा, कितनी यातना भोगनी पड़ी । भाई निकोले की अवस्था ऐसी नहीं है कि उन्हें आखों से ओट किया जाय। उनकी देख-रेख करना मेरा धर्म है। भाई साहब साम्यवाद की हामी भर रहे थे: पर क्या यह कभी भी संभव है। लेकिन यह कितना भारी अन्याय है

कि हम लोग तो मौज उड़ावें और बिचारे किसान भूखों मरें। क्या हम लोगों का यह धर्म नहीं है कि विलासिता का त्याग करें, स्वयं मिहनत करके पैदा करें और अपनी कमाई पर जीवन वितावें।

इसी तरह के विचार तरंगों में गोता खाता लेविन नौ बजते-बजते घर पहुँचा।

घर की देख-रेख इसकी दाई अगाफिया करती थी। घरमें चिराग जल रहा था। उसकी तेज रोशनी खिड़कियों से छनकर आस-पास के बरफ के ढोंको पर पड़ती थी।

जिस समय लेविन ने घरमें प्रवेश किया, अगाफिया जग रही थी उसने सामने आकर पूछा—"आप जल्दी लौट आये।"

लेविन—मेरा जी नहीं लगा। दोस्तों के साथ आनन्द अवश्य मिलता है; पर घर का आनन्द स्वप्न हो जाता है। इतना कहकर वह अपने वाचनालय में चला गया।

वाचनालय की सब चीजें जहां की तहां पड़ी थीं। सोमबत्ती के प्रकाश में उसने एक-एक करके सबों को देखा। उसका विचार पलटने लगा। अभी एक क्षण पूर्व उसने नजाने क्या-क्या मंसूबा बांध लिया था। पर इन वस्तुओं को देखते ही उसका धैर्य जाता रहा। प्रत्येक वस्तु मानों उससे कह रही थीं—"यह नहीं हो सकता। आप हमें छोड़कर कहाँ जायँगे। आपका वियोग हम लोगों के लिये असह्य हो जायगा। आपको हम लोगों के साथ इसी तरह प्रेम के साथ रहना होगा। व्यर्थ की बातों में आप न पड़ें। जिस मार्ग से आपने अटल शान्ति की आशा की है, उस मार्ग में आपको सफलता नहीं मिल सकती।"

दूसरी ओर उसके हृदय में न जाने कौन कह रहा था—"इस प्रपञ्च से

दूर हटने में ही कल्याण है। इनके फन्दे में अब न पड़ो। इससे मुक्ति लाभ करने में ही कल्याण है।" उसकी दृष्टि आलमारी में रखे डम्बलों पर पड़ी। उसने उन्हें उठाकर दबाया। इतने में किसी के पैर की आहट सुनाई दी। उसने झटपट डम्बल रख दिया।

आगन्तुक लेविन का गुमाश्ता था। उसने आकर समाचार दिया-"और सब बातें तो ठीक है, गेहूँ जरा दगीला होगया था। सुखाने की नई कलका प्रयोग किया गया था। उसमें वह जरा झुलस गया।

इस समाचार से लेविन चिढ़ गया। नई मशीन लेविन ने अपनी बुद्धि से बनाई थी। गुमाश्ता उसके विरुद्ध था। इस नुकसानी से उसे बड़ा सन्तोष था। उसने हँसकर गेंहू के झुलस जाने का समाचार लेविन से कहा।

लेविन का कहना था कि सचेत होकर काम नहीं किया गया है, इसी से यह नौबत आई है। उसने गुमाश्ते को बुरी तरह डाँटा-फटकारा; पर अपनी सबसे प्यारी गौ के बच्चा जनने के समाचार से उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। गुमाश्ता से बोला—"रोशनी लेकर मेरे साथ चलो। मैं इसी समय उसे देखना चाहता हूँ।"

१३

लेविन का मकान पुरानी चाल का था। उसकी लम्बाई-चौड़ाई किले को मात करती थी। इतने भारी मकान में लेविन अकेला रहता था। सम्पूर्ण मकान वह परिष्कृत रखता, सबको धो-धाकर साफ रखता। सब में आग जलवाता और गरम रखता। वह जानता था कि वह

फ़जूलखर्ची है। इस तरह की फ़ज़ूल खर्ची उस के लिये उचित नहीं। पर यह घर लेविन को बहुत ही प्यारा था। उसके पूर्वजो की यह प्यारी भूमि उसे प्राणों से प्यारी थी। वह जानता था कि उसके पूज्य पिता और स्नेहमयी माता ने इसी में अपना जीवन बिताया था और वह भी उन्हीं के समान सुखमय और शान्त जीवन का स्वप्न देख रहा था।

लेविन को अपनी मां का ख्याल कम आता था। वह इतना ही जानता था कि वह परमपूज्य रमणी थी। उसकी अभिलाषा थी कि उसे उसी तरह की धर्मपत्नी मिले।

धर्मपत्नी के अतिरिक्त भी मनुष्य किसी रमणी से प्रेम कर सकता है, यह लेविन के विचार में नहीं आता था। स्त्री की आवश्यकता वह गृहस्थी बसाने के लिये ही समझता था। विवाह का महत्व उसकी दृष्टि में सर्व साधारण से भिन्न था। लोग विवाह को सामाजिक आवश्यकता समझते थे। लेविन विवाह को जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना समझता था। उसका कहना था कि मनुष्य का सारा सुख इसी पर अवलम्बित है और आज उसे उसी जीवन से हाथ धोना पड़ रहा है।

लेविन बैठकखाने में जाकर बैठा। अगाफिया ने चाय लाकर सामने रखा और कुर्सी खींच कर एक तरफ बैठ गई। लेविन ने देखा कि जो स्वप्न आज के पहले वह देख रहा था, उससे उसका पिण्ड नहीं छूट सकता। चाहे किटी हो या अन्य, बिना विवाह के वह नहीं चल सकता।

अगाफिया आप ही आप बड़बड़ा रही थी—"प्रोहर ने क्या गजब किया है। उसे ईश्वर का भी डर नहीं था। घोड़े के रुपये से उसने

खूब शराब पी है और अपनी स्त्री को पीटते-पीटते अधमरा कर दिया है।"

लेविन चुप-चाप सुनता जाता था और किताब पढ़ता जाता था। एकाएक उसके ध्यान में आया, दो वर्ष में मेरे गायों की संख्या कितनी अधिक हो जायगी।

उसने फिर अपनी किताब उठाई। वह सोचने लगा-"बिजली और ताप (गरमी) दोनों एक ही बातें हैं, पर एक के स्थान पर दूसरे का प्रयोग करने से कोई काम नहीं चल सकता। पर इससे क्या? प्रकृति की सारी शक्तियों का परस्पर संबंध तो अव्यक्त रूप से दृष्टि-गोचर होता ही है।

यदि मेरी इस गायका बछड़ा चितकबरा हो तो क्या ही अच्छा हो। इससे हमारे बछड़ों की नस्ल बदल जायगी। मैं अपनी पत्नी और मुलाकातियों को लेकर गोशाला दिखाने के लिये जाऊँगा।······ मेरी पत्नी कहेगी-"प्रियतम, इस बछड़े पर मेरा पुत्रवत् अनुराग है।" कोई मुलाकाती पूछेगा-"आप इन बातों में इतना दिलचस्पी क्यों लेती हैं।" वह कहेगी-जिसमें उन्हें आनन्द मिलता है, मुझे भी आनन्द मिलता है।···पर ईश्वर जाने वह कौन होगी? सहसा मास्को की घटना का उसे स्मरण हो आया।···अब उस संबंध में कुछ नहीं कहना है। इसमें मेरा दोष नहीं है। पर मुझे सब बातें नई तरह से शुरू करनी होंगी। बीती पर विचार करना फजूल की बातें हैं। मनुष्य को सदा उन्नतिशील होना चाहिये।······"उसने एकबार अपना सिर उठाया और फिर विचार तरंगों में डूब गया। इतने में उसका कुत्ता बाहर से भूकता आया और उसका पैर चाटने लगा।

अगाफिया–यह बेचारा भी समझ गया है कि हमारे मालिक बाहर से आये हैं और अनमने हैं।

लेविन—अनमने क्यों ?

अगाफिया–आप समझते होंगे कि मैं कुछ नहीं समझती ईश्वर ने मुझे भी समझ दी है। इतनी उमर मैंने यों ही नहं गुजारी है।

लेविन विस्मय के साथ अगाफिया को देखता रहा।

अगाफिया–एक प्याला चाय और लाऊँ। इतना कह कर उस प्याला उठाया और कमरे से बाहर हो गई।

लेविन अपने कुत्ते के साथ खेलने लगा।

१४

बॉलडैंस हुआ। अन्ना सज-धज कर बॉलडैंस देखने गई थी। रंस्क की लोलुप दृष्टि उसी दिन स्टेशन पर ही अन्ना पर पड़ी थी। आज उसक चमक-दमक ने उसे और भी मोहित कर लिया। किटी से यह बात छिप न रही। किटी का दिल फट गया। उसका सारा मजा किरकिरा ह गया। अन्ना को इस बात का बड़ा दुःख था; पर वह विवश थी।

डैंस समाप्त होते ही अन्ना घर लौट आई और अपने पति को उस तार दे दिया कि मैं कल ही रवाना होऊंगी।

डाली ने उसे बहुत रोकना चाहा; पर अन्ना ने एक न सुना। जा के लिये उसने इतना आग्रह किया मानों न जाने से उसका बड़ नुकसान होगा।

उस दिन भोजन के समय अब्लास्की नहीं था। किटी भी नहीं आई। उसने लिख भेजा कि मेरे सिर में दर्द है। मैं नहीं आ सकूंगी।

अन्ना का चेहरा उदास था। उसका चित्त चञ्चल था। किसी काम में उस की तबीयत नहीं लगती थी। किसी से मिलना-जुलना उसे नहीं भाता था। लड़कों के साथ खेलना भी आज उसे पसन्द नहीं था। वह दिन भर अपने यात्रा की तैयारी कर रही थी। डाली ने यह परिवर्तन देखा। वह समझ गई कि यह अनमनापन अकारण नहीं है। पूछा—"अन्ना आज तुम्हें क्या हो गया है?"

अन्ना—भाभी, मैं कुछ नहीं कह सकती। कभी-कभी मेरी यही दशा हो जाती है। जी चाहता है कि पेट भर रोऊं। कुछ समय के बाद यह अवस्था आपही आप गायब हो जाती है।

इतना कह कर वह अपने चीजों को सम्हालने लगी। उसका चेहरा लाल था, आंखों में आंसू भरे थे। फिर बोली—"उस दिन पीटर्सबर्ग छोड़ते समय भी मेरी यही दशा थी और आज पीटर्सबर्ग के लिये प्रस्थान करते समय भी मेरी वही दशा है। मुझसे मास्को छोड़ा नहीं जाता है।

डाली—मैं तुम्हारी बड़ी एहसानमन्द हूँ। इस उपकारका क्या बदला दे सकती हूँ।

अन्ना की आंखों में आंसू आ गये। बोली—"भाभी, इस तरह की बातों से मुझे शर्मिन्दा मत करो। मैंने किया ही क्या है। ...... मेरी समझमें नहीं आता कि लोग मेरे सर्वनाश के मंसूबे क्यों बांधा करते हैं। यह सब तुम्हारे हृदय की उदारता का फल है। तुमने उन्हें क्षमा कर दिया, मामला सुधर गया।"

डाली—सब कुछ होते हुए भी यदि तुम न आयी होतीं तो आज क्या होता, ईश्वर ही जानता है। तुम्हारे अनुग्रह से सब ठीक हो गया।

अन्ना—भाभी, मैं तुम से एक बात कह देना चाहती हूँ। तुम जानती हो मैं आज ही क्यों चली जारही हूँ ? इस में कारण है।

इतना कहकर अन्ना डाली को लेकर एक कुर्सी पर बैठ गई। डाली ने देखा कि उसकी आंखें मारे शर्म के गड़ी जा रही हैं।

अन्ना—तुम जानती हो किटी भोजन के समय क्यों नहीं आई ? उसे मुझ से डाह हो गई है। मैंने उसका सर्वनाश......मेरे कारण उस दिन के बाल डैंस में किटी का सारा मजा किरकिरा हो गया; पर मैं इस दोष की भागी नहीं हूँ।

डाली—(हंस कर) आप भी अपने भाई की तरह निकलीं।

अन्ना का हृदय फट गया। यह कटाक्ष उसके हृदय में चुभ गया बोली—"तुम मेरे साथ अन्याय कर रही हो। मैं शपथ देकर कह सकती हूँ कि इस में मेरी ओर से जरा भी चेष्टा नहीं हुई।"

अन्ना जल्दी में ये बातें कह तो गई; पर उसने देखा कि उसका कहना सच नहीं है। रंस्की के नाम से ही उसके दिल में एक तरह का तूफान उठने लगता है और उसका सामना न करने के लिये वह मास्को से भाग रही है।

डाली—तुम्हारे भाई साहब कह रहे थे कि तुम ने रंस्की के साथ नाचा था और वह......

अन्ना—(बीच में ही रोक कर) तुम नहीं समझ सकतीं कि यह घटना किस बेवकूफी के साथ घटी। मैं केवल जोड़ा मिला रही थी अभाग्यवश मेरे सिर पर भी क्या बीती। मैं अन्त समय तक उसके लिये तैयार नहीं थी।

डाली–पुरुष जाति अज्ञेय है।

अन्ना–यदि रंस्की के हृदय में कोई और विचार होगा तो इसका मुझे अत्यन्त खेद होगा। मुझे आशा है कि उस दिन की घटना को लोग जल्दी भूल जायंगे और किटी का क्रोध उतर जायगा।

डाली–अन्ना, चाहे जो हो; पर असल बात तो यह है कि मैं इस शादी के पक्ष में नहीं हूँ। यदि रंस्की का दिल इसी प्रकार मनचला है, तो किटी के साथ उसका संबंध न होना ही अच्छा है।

डाली के चेहरे पर मुस्कराहट की हलकी रेखा फैल गई। अन्ना पर उसका विशेष अनुराग था तो भी इस समय वह यह जान कर प्रसन्न थी की अन्ना में भी कमजोरियां है।

अन्ना–भाभी, मुझे भुला न देना। मैं अभागिनी हूँ। मैं नहीं जानती कि मेरे भाग्य में क्या बदा है। आज तुमसे विदा होती हूँ, दया बनाये रखना।

इतना कह कर अन्ना ने आंख के आंसू पोछे और कपड़ा पहनने लगी। उसी समय अब्लास्कीं भी आ पहुंचा।

विदाई के समय डाली ने अन्ना को गले से लगाकर कहा–"अन्ना, तुमने हमारा जो उपकार किया है, उसे मैं आजन्म नहीं भूल सकूंगी। तुमने मुझे जिस प्रेम डोर में बाँध लिया है, उसे मैं सदा मजबूत करती रहूँगी।"

आंखों में आंसू भर कर अन्ना ने अपनी भाभी से विदाई ली।

१५

रेले गाड़ी ने अन्तिम सूचना दी और भक-भक करके चल पड़ी। अन्ना के हृदय में तूफान उठ रहा था। वह बेंचपर बैठकर कुछ सोचने लगी। पर उसे शान्ति न मिली। निदान उसने बैग से एक पुस्तक निकाली और पढ़ने लगी। पर उस अवस्था में पढ़ना भी संभव नहीं था। एक तो भीतर का तूफान उसे यों ही चञ्चल बना रहा था, दूसरे बरफ के गिरने का शब्द, हवा की सन-सनाहट से और भी गड़बड़ी मची हुई थी। साथ की दाई ऊंघने लगी; पर अन्ना की आंखों में नींद कहां। बाहर का शोर गुल, भीतर की चञ्चलता के साथ-साथ काम कर रहा था। अन्ना ने पढ़ने में मन लगाया। उसकी तबीयत फिर उचट गई, बोली— "मैं दूसरे के जीवन की घटनायें क्यों पढ़ूं। मैं स्वयं इस तरह की घटनाओं का लीलाक्षेत्र क्यों न बनूं। क्या नायिका की भांति मैं दीन-दुखियों की सेवा नहीं कर सकती? क्या मैं पार्लिमेंट में उत्तम से उत्तम भाषण नहीं कर सकती। वह नायिका की वीर कहानी पढ़कर कहने लगती क्या मैं भी उसी तरह की वीरता नहीं दिखला सकती, क्या मैं अपने कामों से संसार को चकित नहीं कर सकती।" फिर वह पढ़ने में लग जाती।

नायक उन्नति के शिखपर चढ़ रहा था। देशमें उसकी ख्याति जोरों में फैल रही थी। वह बैरन की पदवी पाकर अपनी रियासत को जा रहा था। अन्ना ने सोचा—"यदि मैं उसकी पत्नी होती तो आज मैं भी उसके साथ अभिमान से सिर ऊंचा किये रियासत के लिये प्रस्थान कर रही होती। पर दूसरे ही क्षण शर्मने उसे आ घेरा। छि: कितना नीच ...र है।......"फिर सोचने लगी—"इसमें शर्मकी कौनसी बात है।"

उसने पुस्तक जमीन पर रख दिया और दोनों पंजा कसकर बांधकर कुर्सी पर लेटगई।······मास्को ! मास्को में बड़ा आनन्द था। बॉलडैंस में बड़ा मजा आया। रंस्की कैसा सुन्दर जवान है, उसके चेहरे की बनावट कैसी सुन्दर है। उसके होंठ कितने मधुर हैं। उसका व्यवहार कितना सुशील है। इसमें शर्म की क्या बात है। ··· पर उसी समय उसके दिल में कोई कह रहा था······वह आग है, आग है, उससे सदा सावधान रहना। वह चौंक उठी। इधर-उधर ताक कर वह कुर्सी से उठी और बेंच पर बैठकर कहने लगी—'यह क्या मामला है। क्या उससे मिलने में मैं डरती हूँ। क्यों, क्या हमारा इसका संबंध अनुचित होगा। क्या इससे परिचय हमारा सर्वनाश करेगा? यह सब फजूल की बातें हैं।"

इतना कह कर वह विकट हँसी-हँसी और फिर पुस्तक पढ़ने लगी; पर उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या पढ़ रही है। उसने पुस्तक बन्द कर दिया और अकारण हँसने लगी।

उस समय उसकी विचित्र अवस्था थी। उसे मालूम हो रहा था मानों कोई उसकी नसोंको दुह रहा है, उसकी आंखें अधिकाधिक खुलती जारही हैं। उसका गला घुंट रहा है। उसकी स्मरण शक्ति लुप्त होने लगी। उसे यह समझ में नहीं आता था कि गाड़ी आगे जारही है या पीछे, अथवा एक दम खड़ी है। उसके पास उसकी दाई अनुस्का है या कोई अजनबी। उसे एक तरह का आनन्द मिल रहा था और वह उसी तरफ अपनी इच्छा के अनुसार खिंची जाती थी। वह एकाएक उठ खड़ी हुई और अपना कपड़ा उतारने लगी। अब उसे सब बातें समझमें आने लगीं; पर क्षण भरमें ही उसकी स्मृति पुनः गायब होगई। उसे मालूम होने लगा मानों कोई डब्बे में घुस आया है और उसे काट रहा

है। जो बुढ़िया रमणी सामनेवाले बेंच पर सोरही थी, उसने अपना पैर फैलाना शुरू किया और सारा डब्बा छेक लिया, डब्बे में काला धुंआ भर गया है और कुछ दिखाई नहीं देता। क्षण भरके बाद ही उसे किसी के रोने और चिल्लाने की आवाज सुनाई दी मानों किसी के प्राण लिये जा रहे हों। उसकी आँखों के सामने आगकी लाल लपटें उठने लगीं और अपने कठोर उदर में सबको भरने लगीं। ...... उसे मालूम हुआ मानों वह धंसी जा रही है। इसमें उसे दुःख नहीं था, आनन्द था। उसी समय बरफ से ढका, चेहरे पर शिकन पड़ा एक आदमी आया और अन्ना के कानों में कुछ कह कर चला गया। वह उठ खडी हुई और अपने को सम्हालने लगी। अब उसकी समझ में आया कि वह व्यक्ति गार्ड था और कहने आया था कि अगले स्टेशनपर गाड़ी ठहरेगी। अन्ना दरवाजे की ओर लपकी।

अनुस्का इस समय तक उठ गई थी, पूछा—"क्या आप बाहर जाना चाहती हैं?"

अन्ना-बड़ी गर्मी मालूम होरही है, जरा बाहर जाऊंगी। इतना कहकर उसने दरवाजा खोल दिया। बाहर से हवा का झोंका आ-आ कर उससे टोकर लेने लगा, पर वह खड़ी रही।

वह नीचे प्लेटफार्म पर उतर गई। और टहलने लगी। तूफान उसी तरह उठ रहा था। हवाका वेग मानों उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। शिकार पाकर वह उसे लपेट कर ले उड़ना चाहता था, पर वह डंडा पकड़ कर खड़ी रही और बरफ के कणों से भरी हवा का मजा लेने लगी। स्टेशन में बत्तियाँ जल रही थीं। अपूर्व रमणीयता छाई थी। अनिमेष दृष्टि से वह उसी को देख रही थी। इसी समय उसने देखा कि सैनिक पोशाक

पहने एक आदमी उसकी तरफ लपका चला आ रहा है। अन्ना की की आँखें उसे तुरत पहचान गईं। रंस्की······

अन्ना के ध्यान में इतना ही आया था कि रंस्की उसके सामने आकर खड़ा हो गया, बोला–"आपको कोई तकलीफ तो नहीं है?"

अन्ना डण्डा पकड़े चुप-चाप खड़ी थी। उसने एक वार रंस्की के चेहरे की ओर देखा। चेहरे का भाव स्पष्ट था। वही प्यासी आँखें, वही भिक्षार्थी चेहरा!

वॉलडैंसवाली घटना के वाद उसने अपने दिल में दृढ़ कर लिया था कि रंस्की के साथ मेरा वही संबंध रहेगा, जो अन्य हजारों साधारण आदमियों के साथ है। पर इस समय उसे सामने देखकर उसका धीरज जाता रहा। उमंग और उल्लास से उसका कलेजा उछलने लगा। अन्ना पूछना चाहती थी कि आप क्यों आये हैं। पर वह तो उसकी आँखें और अन्ना का हृदय ही वतला रहा था। फिर भी वोली–"मुझे नहीं मालूम था कि आप भी इसी गाड़ी से यात्रा कर रहे हैं। क्या पीटसवर्ग में कोई जरूरी काम आ गया है क्या?"

रंस्की–(तृषित नेत्रों से उसकी ओर देख कर) मैं इसका क्या उत्तर दूं। आप अपने हृदय से पूछें। आपने मुझे पंगुल वना लिया। अब आपके सिवा मुझे कहीं शरण नहीं।

तूफान भयंकर रूप धारण करता जा रहा था। हवा की घड़-घड़ाहट प्रतिक्षण वढ़ती जा रही थी। कभी-कभी तो ऐसा मालूम होता था मानों गाड़ी के छत को उलट देगी; पर इसमें भी उसे आनन्द मिल रहा था। रंस्की के मुंह से अन्ना ने वह वात सुनली जिसके लिये उसका हृदय उत्कण्ठित था। पर उसकी आत्मा उसे नहीं कबूल कर

रही थी। वह निरुत्तर रही। उसके चेहरे से साफ झलकता था कि उसके हृदय में भीषण संग्राम छिड़ गया है।

रंस्की (गर्मी से) यदि मेरी बातों से आप को कष्ट पहुंचा हो तो मैं क्षमा चाहता हूँ।

रंस्की के शब्द आदर पूर्ण थे फिर भी उनमें इतनी दृढ़ता थी कि वह कुछ उत्तर न दे सकी।

अन्त में उसने कहा—"आपके शब्द भले आदमी के योग्य नहीं प्रतीत होते। आपको वह सब बातें भूल जानी चाहिये, जिस तरह मैं इस अपमान को भूल जाऊँगी।"

रंस्की—असंभव! आपके एक-एक शब्द पत्थर की लकीर हो गये हैं। इस जीवन में वे नहीं मिटाये जा सकते।

चेहरे पर बनावटी रुखाई लाकर उसने कहा—"बस, होगया। इस तरह की बातें मैं नहीं सुनना चाहती।"

इतना कहते-कहते वह दरवाजे के भीतर हो गई। रंस्की ने उससे क्या कहा, उसने रंस्की से क्या कहा, उसे याद नहीं था; पर इतना वह समझ रही थी कि उसका दिल रंस्की की ओर खिंचा जा रहा है और इस आकर्षण से वह एक विचित्र तरह का आनन्द पा रही थी। क्षण भर योंही खड़ी रह कर वह गाड़ी में जा बैठी। उसकी यातना और भी बढ़ गई। उसे रात भर नींद नहीं आई। सवेरा होते-होते उसे झपकी लग गई। जिस समय उसकी नींद खुली सवेरा हो गया था। थोड़ी देर में गाड़ी पीटर्सबर्ग पहुंच जायगी। पति, पुत्र और घर की याद उसे रह-रह कर आने लगी।

ज्यों-त्यों कर के गाड़ी पीटर्सबर्ग पहुँची। अन्ना के पति उसे लेने

के लिये स्टेशन पर पहले से ही मौजूद थे। उन्हें देख कर उसे विस्मय हुआ। जो व्यवहार, जो वर्ताव वह सदा से पा रही थी; वही भाव और व्यवहार आज उसे विपरीत दिखाई देने लगे। पति की जिस कठोरता और उदासीनता को वहा सदा से सहती आ रही थी, वही आज उसे खलने लगा मानों वह रास्ते भर दूसरा ही स्वप्न देखती आ रही थी। गाड़ी से उतरते ही उसने पूछा, 'शिरोजा खुश है न ?"

यही अन्ना के लड़के का नाम था।

अलक्से–(हंसकर) यही मेरे इस मिहनत का उपहार है ? हां, सब राजी खुशी हैं।

१६

रंस्की को उस रात नींद नहीं आई। उसने बैठे-बैठे रात काटी। वह टकटकी लगाये लोगों को देखता रहा। उसकी आंखें कह रही थीं कि वह संसार में किसी को कुछ नहीं समझता। जिसकी ओर वह दृष्टि फेरता, वही उसे मिट्टी का पुतला मालूम पड़ता। उसी डब्बे में एक दूसरा व्यक्ति भी था। रंस्की के भाव उसे पसन्द नहीं थे। वह उसे समझा देना चाहता था कि हम निर्जीव पदार्थ नहीं हैं; बल्कि तुम्हारे ही समान हाड़मांसवाले जीते-जागते जीव हैं। पर रंस्की को इसको सुध-बुध नहीं रही। वह उसी तरह आंखें फाड़ फाड़कर उसकी तरफ देखता।

रंस्की के आनन्द की सीमा नहीं थी। आनन्द की तरंगों में वह इस तरह डूबा था कि उसे संसार में और कुछ नहीं दिखाई देता था। उसे इस बात की खुशी नहीं थी कि अन्ना का हृदय वह अपनी ओर खींच

सका है क्योंकि अभी तक अन्ना के भाव स्पष्ट नहीं थे; बल्कि अन्ना की जो सौम्य मूर्ति उसके हृदय में विराज रही थी, उसीको सोच-सोच कर वह आकाश-पाताल एक कर रहा था।

उसने एक क्षण के लिये भी नहीं सोचा कि इसका क्या परिणाम होगा। उसने देखा कि उसकी सारी बिखरी हुई शक्ति आज एक केन्द्र की ओर दौड़ रही है और वह उसी में मस्त था। रंस्की अभी तक इतना ही जानता था कि मैंने अपने हृदय की बातें उससे कह दी हैं कि—"मैं तुम्हारे विना नहीं जी सकता, तुम्हीं मेरे जीवन की ज्योति हो, तुम्हें देख कर मैं सुखी हूँगा, तुम से मिल कर मैं प्राण धारण करूंगा।" स्टेशन पर उस से मिलकर वह अपने डब्बे में लौट कर आया और बैठ कर उसीकी बातें सोचने लगा—"वह किस अदा से खड़ी थी, उस के सुडौल बाजू फैले हुए थे, उसकी नर्म नर्म हथेलियां डंडे से बंधी थीं, उसके पतले होठ कितनी सादगी से उठते थे। उसकी बोली में क्याही मधुरता भरी थी। उसने क्या क्या बाते कहीं......"इसी तरह अन्ना की प्रत्येक बात सोचता और अपने भविष्य की कल्पना करता जाता था।

पीटर्सबर्ग स्टेशन पर वह भी उतर पड़ा। रात की थकावट का कहीं पता नहीं था। उसका चेहरा ताजा और चमकता था। उसे देख कर कोई नहीं कह सकता था कि उसने रात जाग कर काटी है। अपने डब्बे के सामने खड़ा होकर वह अन्ना के उतरने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने अपने मन में कहा—"एक बार फिर मैं उसे देख सकूंगा। वह उसी तरह मस्तानी चाल से जायगी, एक बार फिर मेरी ओर अवश्य देखेगी और देख कर अवश्य मुस्करा देगी।" पर स्टेशन पर उतरते ही उस ने अन्ना के पति को देखा। स्टेशनमास्टर अदब के साथ उन्हें लेकर डब्बे की

ओर जा रहे थे। उस समय क्षण भर के लिये रंस्की का स्वप्न टूटा। रंस्की जानता था कि अन्ना का पति जीवित है; पर आजके पहले उसने उसकी कल्पना नहीं की थी। आज उसे अन्ना के बांह में हाथ डालकर लेजाते देखकर उसकी मोहनिद्रा टूटी और उसकी समझ में आया कि अन्ना पतियुक्ता है।

अलक्ले अन्ना को लेकर आगे बढ़ा। रंस्की का चेहरा सूख गया। इसके दुःखों की कल्पना वही कर सकता है, जो इस तरह की विपत्ति में पड़ा हो। एक आदमी प्यास से तड़प रहा है, कुछ दूर पर उसे तालाव दिखलाई दिया। प्यास बुझाने की आशा से वह दम-दिलासा भरता हुआ वहां पहुँचा, देखता है कि लोमड़ी और सुअर ने धींगा-धींगी से पानी चौपट कर दिया है। उसका चेहरा गुस्से से लाल होगया। ······ क्या मेरे सिवा दूसरे को भी उसे प्रेम करने का अधिकार है। नहीं कदापि नहीं। उसपर एकमात्र मेरा ही अधिकार है, मैं ही उसे प्रेम कर सकता हूँ। अलक्ले, उसका पति है, पर वह उसे भी नहीं चाहती।

इतने में उसका नौकर उसके पास आकर खड़ा होगया। उसे असवाव ले चलने का इशारा करके अन्ना से मिलने के लिये उसने कदम बढ़ाया। उसने देखा कि अन्ना उसकी प्रतीक्षा कर रही है और इधर उधर ताकती जाती है। उसका हृदय पुलकित हो उठा।

सामने जाकर उसने दोनों को अभिवादन किया और अन्ना से पूछा-"गाड़ी में आपको कोई विशेष कष्ट तो नहीं हुआ।"

अन्ना—नहीं, मुझे बड़ा आराम था।

उसका चेहरा उदास था, चञ्चलता का नाम निशान नहीं था, होंठों पर मुस्कराहट नहीं थी, आंखों में प्रकाश नहीं था। रंस्की ने चार आंखें

होते ही उसके चेहरे पर एक ज्योति पड़ गई; पर क्षणभर में वह गायब होगई। उसने अपने पति की ओर इस अभिप्राय से देखा कि वह रंस्की को जानता है या नहीं। रंस्की को देखकर अलक्ले खुश नहीं हुआ।

रंस्की का परिचय कराते हुए अन्ना ने अपनेपति से कहा—"काउण्ट रंस्की।"

अलक्ले—हम लोगों का परिचय है। (इतना कहकर उसने रंस्की से हाथ मिलाया) (अन्ना से) तुम मांके साथ गई थी, और बेटे के साथ लौटीं। (रंस्की से) आप छुटी पर आये होंगे। (उत्तर की प्रतीक्षा न करके अपनी पत्नी से) विदाई के समय तो खूब आंसू गिराये गये होंगे

इस प्रसंग का अभिप्राय रंस्की समझ गया। अलक्ले उससे पिण्ड छुड़ाना चाहते हैं। अन्ना की ओर मुंह फेरकर उसने पूछा—"क्या मैं आपके घरपर आसकता हूँ?

अलक्ले—(उदास भाव से) मुझे आपसे मिल कर बड़ी खुशी होगी। सोमवार के दिन हमलोग प्रीति भोज देते हैं। उसदिन आप अवश्य पधारियेगा। (अन्ना से) मैं तुम्हारे साथ प्रायः एक घंटे और रह सकूंगा। इतने समय में मैं अपना प्रेम मजे में प्रगट कर सकूंगा।

अन्ना—(उसी तरह हंसकर) आपको अपनी वफादारी की बड़ी चिन्ता रहती है। (मनमें) अब मुझे वफादारी से क्या करना है (प्रगट) मेरे बिना शिरोजा कैसे रह सका।

अलक्ले—क्यों? मरीटा कहती थी कि वह बड़े मजे में था। शायद तुम्हें इससे दुःख हो......पर उसने अपनी मांको खो नहीं दिया है। जैसे उसके पिता ने अपनी पत्नी से हाथ धो डाला है। कौण्टेस लीडिया बराबर याद करती थीं। उनसे आजही मिल लेना। यदि नहीं

जाओगी तो वह नाराज होजायंगी, उनकी प्रकृति से तुम परिचित ही हो। यदि अल्लास्की भी साथ आये होते तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता होती। उन्हें देखने की उनके मनमें बड़ी लालसा थी।

कौण्टेस लीडिया पीटर्सवर्ग की गण्य-मान्य महिलाओं में थी। अलक्ले से उनका अधिक परिचय था।

अन्ना—मैंने उन्हें मास्को से पत्र लिखकर सारा समाचार दे दिया था।

अलक्ले—फिर भी वे सब बातें तुम्हारी जबानी सुनने के लिये आतुर हैं। यदि कोई आपत्ति न हो तो इसी समय उनसे जाकर मिल आओ। मुझे भी इसी समय दफ्तर जाना है। अन्तरंग सभा की बैठक है। घर आकर साथ ही भोजन करेंगे। इतने दिनों तक जिस तरह कटा ईश्वर ही जानते हैं।

इतना कहकर उसने प्रेम से पत्नी का हाथ दबाया और उसे गाड़ी में बैठाकर आप दफ्तर के लिये रवाना हुआ।

१७

अलक्ले कमेटी की बैठक समाप्त कर ठीक चार बजे लौटा। घर पर का काम अभी बाकी था। सैकड़ों फ़रयादी अपनी-अपनी अर्जियां लेकर उसकी बाट जोह रहे थे। उसका सेक्रेटरी भी दस्तख़त कराने के लिये कागज़-पत्र लेकर बैठा था। अलक्ले सीधे अपने खास कमरे में गया और बैठकर काम करने लगा।

भोजन का समय नजदीक आ रहा था। दो मेहमान भी आपहुँचे।

अन्ना ने उन्हें आदर से भीतर बैठाया। अलक्ले ठीक भोजन के समय अपनी कुर्सी से उठा और इस तरह तैयार होकर भोजन करने आया मानों उसे तुरत ही बाहर जाना है। अलक्ले के सिर पर काम का भार इतना अधिक था कि उसे दम मारने की फुरसत नहीं थी। रोज का काम खतम करने के लिये उसे समय का पालन करना पड़ता था।

भोजनालय में सब लोग बैठ चुके थे। अलक्ले ने सब को अभिवादन किया। मुस्करा कर अपनी पत्नी से बोला—"तुम नहीं समझ सकती हो कि तुम्हारी अनुपस्थिति में मेरी क्या दशा हो रही थी। अकेले खाने-पीने में तबीयत ही नहीं लगती थी।" अन्तिम वाक्य उसने जोर देकर कहा।

भोजन के समय साधारण बातचीत होती रही। भोजन के बाद अलक्ले कुछ समय तक आये हुए मेहमानों से बातचीत करता रहा। आधे घंटे के बाद वह अपनी पत्नी से विदा लेकर कौंसिलभवन को प्रस्थान किया। रात को बैठक थी। अन्ना उस दिन न किसी से मिलने गई और न कहीं खेल-तमाशा देखने। अपने लड़के को लेकर खेलती रही। इसमें उसने विचित्र आनन्द अनुभव किया। रेल की सभी घटनायें उसे साधारण बात सी मालूम होने लगीं। उसने अपने मन में कहा—"इसमें शर्माने की कौन बात है। उसने एक उपन्यास उठाया और आँच के सामने बैठ कर पढ़ने लगी।"

ठीक साढ़े नौ बजे अलक्ले घर लौटा।

अन्ना—(उसका हाथ पकड़कर) भला, आपको फुरसत तो मिली।

अलक्ले—(उसका हाथ चूम कर) तुम्हारी मास्को यात्रा तो एक से सफल हुई।

अन्ना—हां हुई तो। इसके बाद उसने आद्योपान्त सारी राम-
कहानी कह सुनाई।

अलक्ले—अब्लास्की तुम्हारे भाई हैं सही, पर उन्हें कोई निर्दोष
नहीं कह सकता।

अन्ना ने इस कटाक्ष का अभिप्राय समझ लिया। हँस कर चुप हो रही।

अलक्ले—कौंसिल में हमने जो नया कानून पास कराया है, उस के
विषय में तुम ने वहां कुछ सुना है। यहां तो बड़ी सनसनी फैल रही है।

अन्ना को इस कानून के संबंध में कुछ नहीं मालूम था। उसने देखा
कि अलक्ले अपनी कीर्ति गाने के लिये अधीर हो रहे हैं। एक एक करके
पूछना आरम्भ किया। अलक्ले ने अपनी बहादुरी की कहानी बड़े
उत्साह से कही।

अन्ना—मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि अब धीरे धीरे लोगों के विचार
परिष्कृत होते जा रहे हैं।

अलक्ले पुस्तकालय की ओर जा रहा था, रुक कर पूछा—"तुम आज
घर से नहीं निकलीं, तबीयत तो जरूर घबराती रही होगी।

अन्ना—नहीं, आज का दिन बड़े मजे में कटा।

अन्ना जानती थी कि अलक्ले को पढ़ने

घंटा दो घंटा पढ़े बिना उसे नींद ही न

उसे बहुत ही कम अवसर मिलता

परिचित रहना चाहता है। रा

ने उसे विशेष अनुराग रहता

अनुराग नहीं था, फिर भी व

कवियों की वह बड़े आदर

दूसरा खण्ड

१

जाड़े का महीना खतम भी नहीं होने पाया था कि किटी के माता-पिता को किटी के स्वास्थ्य की चिन्ता पड़ गई। किटी की अवस्था दिन पर दिन खराब होती जा रही थी। घरके डाक्टर ने अनेक तरह की दवायें दीं, उपचार किये; पर सब व्यर्थ था। अन्त में उन्होंने जलवायु के परिवर्तन की राय दी। इस लिये एक नामी डाक्टर बुलाये गये। उन्होंने किटी के शरीर की परीक्षा करनी चाही।

डाक्टर ने परीक्षा समाप्त की। बड़े कमरे में आकर वह किटी के पिता से बातें करने लगा। किटी के पिता को डाक्टर की बातें नहीं भाती थीं। इतने दिनों के अनुभव से एक तो उन्हें दवाओं पर विश्वास नहीं रह गया था, दूसरे वह किटी की बीमारी का कारण भी भली-भाँति जानता था। वह बेमन से उसकी बातें सुनता रहा। डाक्टर ने भी यह बात

छिपी न रही। उसने इनसे बातें करनी फजूल समझी। निदान उसने किटी की मां के पास जाना स्थिर किया। इतने में किटी की मां वहीं आ पहुँची पूछा—"कहिये, रोगी की क्या हालत है? क्या बचने की कोई आशा हैं या नहीं?"

डाक्टर—(घरके डाक्टर की ओर इशारा करके) हम लोग आपस में सलाह करके राय देंगे।

किटी की मां वहाँ से चली गई। दोनों डाक्टरों ने न जाने क्या-क्या सलाह की। अन्त में बड़े डाक्टर ने किटी की एक बार पुनः परीक्षा करनी चाही।

किटी की मां घबरा गई और किटी को लाकर सामने बैठा दिया। शर्म के मारे बेचारी किटी गड़ी जा रही थी। इससे तो मर जाना वह सौगुना अच्छा समझती थी। आह! ये सब कैसे दुष्ट हैं। रोग का निदान किये बिना ही दवा करना चाहते हैं। मां ने न जाने क्या तूफान खड़ा कर दिया।

डाक्टर ने इधर-उधर देखा और किटी से सवाल करना आरम्भ कर दिया। किटी चिढ़ गई। बोली—"यह क्या, बार-बार वही सवाल। आपका क्या मतलब है?" इतना कह कर वह कमरे से बाहर चली गई।

उसके चले जाने के बाद किटी की मां से डाक्टर ने कहा—"दिमाग में कुछ खलल आ गया है। जलवायु के परिवर्तन का विचार बुरा नहीं है। पर जरा सचेत रहने की जरूरत है।"

किटी की माँ को बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने समझा कि किटी द्वितीय जीवन लाभ किया। वह विह्वल थी। मां की प्रसन्नता और

सन्तोष के लिये किटी को भी अपना भीतरी भाव छिपा कर खुश रहना पड़ता था। बोली—"मां! मेरी तबीयत एक दम अच्छी है। जलवायु के परिवर्तन से और भी सुधर जायगी।"

डाक्टर घर से बाहर हुआ ही था कि किटी का हाल-चाल लेने के लिये डाली वहां आई।

डाली डाक्टर की राय सुनना चाहती थी। उसकी मां ने कहना भी चाहा; पर उसकी समझ में नहीं आया कि क्या कहे। जो कुछ वह कह सकी, वह यही था कि डाक्टर की राय जलवायु-परिवर्तन के पक्ष में है।

डाली को इस यात्रा से अतिशय दुख था। एक तो उसकी तबीयत यों ही उदास रहती थी, दूसरे उसकी एक मात्र साथी उसकी बहन भी उससे दूर चली जा रही थी। अन्ना ने अब्लास्की से सुलह अवश्य करा दी थी; पर उसका परिणाम बहुत सुखद नहीं था। तब से कोई ऐसी दुर्घटना नहीं हुई थी; पर अब्लास्की का घरसे गायब रहना उसी तरह जारी था और रुपये की तंगी उसी तरह बनी रही। डाली के हृदय में अनेक तरह की आशंकायें उठतीं; पर वह उन्हें मनमें न लाती। क्यों कि वह जानती थी कि इसका क्या फल होगा। ठीक ही था, दूध का जला मट्ठा भी फूंक-फूंक कर पीता है।

किटी की माँ—(डाली से) क्या हाल-चाल है, कैसी हो?

डाली—क्या कहूँ। विपत्तियों का वारापार नहीं है। किटी बीमार है और उसके बचने की आशा नहीं है। तुम लोगों का एक सहारा था, सो भी न जाने कहां चली जा रही हो।

माता-पुत्री बातें कर रही थीं। इतने में किटी के पिता आ गये।

डाली को प्यार करते हुए अपनी पत्नी से पूछा—"तुम लोग तो चलीं
हमारे लिये क्या किया ?"

किटी की माँ—अच्छा होगा यदि आप यहीं ठहरें।

किटी के पिता—जैसी तुम लोगों की मर्जी।

किटी की मां ! बाबा को भी साथ चलने दो न—हम लोग भी सुर
रहेंगे और उन्हें भी आराम मिलेगा।

पुत्री के मुँह से उपरोक्त बातें सुनकर किटी का पिता उठा और प्रे
के साथ उसके केशों को संवारते हुए उसका चेहरा देखने लगा। सब
छोटी कन्या किटी पर उसका विशेष अनुराग था। इसी से व
उस पर विशेष ध्यान रखता था और उसकी असली अवस्था को समझ
था। किटी से भी यह छिपा न था। वह जानती थी कि उसकी बीमा
का कारण वे समझते हैं। इससे उसका चेहरा लाल हो रहा था। व
पिता की गोद में चली गई।

किटी के पिता की आंखें डबडबा आईं। उसने करुणा भरे स्व
से कहा—"ईश्वर ! मनुष्य को सन्तान क्या—देता है—झंझटों
खजाना देता है। (मन बहलाने के लिये डाली को लक्ष्य करके
बेटी ! तुम्हारे यहां किस तरह चल रहा है ?"

डाली पिता के प्रश्न का अभिप्राय समझ कर बोली—"कं
परिवर्तन नहीं। जब देखिये तब घर से बाहर हैं। दर्शन त
दुर्लभ है।"

पिता—जंगल बेचने की चर्चा चल रही थी न ? अभी त
गये या नहीं।

डाली—तैयारी कर रहे हैं, देखें किस दिन तैयार हो जाते हैं।

पिता—ठीक है। हमें भी यात्रा की तैयारी करना है। (किटी से) बेटी! क्या ही अच्छा होता यदि तू किसी दिन सुबह अपना प्रसन्न मुँह दिखा कर कहती—"बाबा! अब मैं बिलकुल अच्छी हूँ, चलिये टहल आऊँ।"

बात साधारण थी। किटी के पिता ने यह बात किसी के उद्देश्य से नहीं कही थी; पर किटी ने इसे दूसरे अर्थ में समझा। बाबा कह रहे हैं कि शर्म छोड़ दो। वह क्या उत्तर दे, नहीं समझ सकी। बड़ी कठिनाई से उसने उत्तर देने का प्रयास किया; पर उसका गला भर आया, आंखें डबडबा आयीं। वह कमरे से बाहर चली गई।

किटी की मां—(बिगड़ कर) आपको हर वक्त हँसी सूझी रहती है। जब जो मनमें आया बोल दिया, न सोचा, न विचारा।

किटी का पिता चुप रहा। उसके मुंह से प्रतिवाद के एक शब्द भी नहीं निकला।

किटी की मां बोलती गई—"जरा भी ख्याल नहीं कि उसकी क्या हालत है, हृदय में जरा भी दया नहीं आयी, जरा भी नहीं समझ सके कि इस प्रसंग की चर्चा से ही उसका दिल फट जाता है। ओह! कितना नीच और कृतघ्न यह संसार है। पामर को जरा भी ख्याल न हुआ, क्या इस तरह के नीचों को दंड देने के लिये कानून में कोई भी विधान नहीं है।"

डाली और किटी के पिता दोनों ही समझ गये कि किस पर लक्ष्य है। उसके बन्द होते ही बोले—"मैं इतना बरदाश्त नहीं कर सकता।" इतना कह कर वे उठे और दरवाजे के पास जाकर खड़े हो गये, फिर बोले—"क्यों नहीं विधान है; पर इसमें दोष किसका है। सारी आग तुम्हारी लगाई हुई है......"

किटी के पिता न जाने क्या क्या बक गये होते; पर उनका मुँह खुलते ही किटी की मां ठण्ढी पड़ गई। उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बह चली। किटी के पिता ने देखा, वह रो रही है। उसे शांत कर, बोला—"मैं सब बात समझता हूँ, पर रो धोकर क्या करना है। उसी ईश्वर का स्मरण करो। वही सब कुछ करेगा।"

इतना कहते-कहते किटी के पिता कमरे से बाहर चले गये।

बेचारी डाली एक बार अपनी मां को, तो दूसरी बार अपने पिता को समझाती और ठण्ढा करती रही। अभी तक किटी की सुध-बुध भी उसे न रही। पिता के चले जाने पर उसने माता को ठण्ढा किया और तसल्ली देने के लिये फौरन किटी के पास दौड़ी। न जाने क्या सोचकर वह लौट पड़ी और बोली—"मां, बहुत दिनों से मेरे चित्त में एक बात आ रही थी, पर मैं संकोच वश आज तक नहीं कह सकी। पिछली बार जब लेविन आये थे तो उन्होंने किटी के पाणिग्रहण की चर्चा छेड़ी थी।

किटी की मां—तब इससे क्या! मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझ सकी।

डाली—किटी ने शायद अस्वीकार किया, उसने आपसे तो कहा ही होगा?

किटी की मां—उसने मुझसे किसी के बारे में कुछ नहीं कहा। मैं समझती हूँ कि दूसरे (रंस्की) की आशा से उसने एक (लेविन) को अस्वीकार किया।

डाली—यदि दूसरे की आशा न रहती तो शायद वह लेविन को वैसा नहीं देती। उसने तो विश्वासघात ही किया।

किटी की मां न जाने क्यों शर्मा गई। उसे स्मरण हो आया कि इन सब अनर्थों का कारण मैं ही हूँ। उसने झुंझलाकर कहा—"आजकल की लड़कियां अपने मन की हैं। कौन किसकी सुनता है।"

डाली—इस सम्बन्ध में मैं किटी से बातचीत करूँगी।

किटी की मां—जो तुम्हारी इच्छा।

इसके बाद डाली किटी के पास गई। देखा किटी एक कुर्सी पर मन मारे बैठी है। उसे मार्मिक वेदना हुई, बोली—"मैं जा रही हूँ, फिर न आ सकूंगी, तुम्हें भी इतना समय नहीं कि जाने के पहले मिल सको। तुमसे दो-चार बातें कर लेना चाहती हूँ।"

किटी—किस संबन्ध में ?

डाली—तुम्हारी बीमारी के संबन्ध में।

किटी—बहन ! मुझे हुआ ही क्या है ?

डाली—मुझसे पागलपनकी बातें मत करो। क्या दाई से भी कहीं पेट छिपा रहता है। तुम अभी बच्ची हो। इतनी साधारण बात के लिये इतना व्याकुल हो गई हो। यह किसपर नहीं बीती है।

किटी चुप रही। उसका चेहरा सुस्त था।

डाली—जिस व्यक्ति ने ऐसी नीचता की, उसके लिये शोक करना कभी भी उचित नहीं।

किटी—उसने मेरा अपमान किया। उसकी चर्चा मत करो। बहन ! उसका नाम मत लो। कहते-कहते किटी का गला भर आया।

डाली—यह तुमसे किसने कहा ? वह तुम्हें चाहता था और आज भी तुझे प्रेम करता यदि...............

किटी—बहन ! इस तरह की सहानुभूति मेरे लिये असह्य है।

इतना कहकर किटी अपना हाथ मलने लगी। डाली उसके स्वभाव से परिचित थी। आवेश के समय किटी अपने को भूल जाती थी और न जाने क्या-क्या बक जाती थी।

किटी बोलती गई—"आप मुझे क्या समझाना चाहती हैं। यही कि मैं जिसपर मरती थी, उसे मेरी रत्ती भर भी परवा नहीं और इतने पर भी मैं उसके लिये मर रही हूँ। क्या इस तरह की बातों से मुझे सन्तोष होगा ?

डाली—किटी ! तुम ज्यादती कर रही हो।

किटी—बहन ! तुम मुझे क्यों जलारही हो।

डाली—मैं......तुम उलटा समझ रही हो। तुम्हारा यह दुख मैं नहीं देख सकती।

किटी क्रोध से लाल थी। उसने डाली की यह अन्तिम बात न सुनी, बोली—"मेरे लिये दुखी होने या तसल्ली देने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं इतना नीचे नहीं गिर सकती कि उस व्यक्ति के लिये प्राण दूं, जो मेरी रत्ती भर भी परवा नहीं करता।"

डाली—मैं तो खुद यह नहीं कहती। मैं केवल एक बात कहने आयी हूँ। मैं तुमसे यह जानना चाहती हूँ कि लेविन से कुछ बातें हुई थीं या नहीं।

लेविन का नाम सुनकर किटी का रहा-सहा संयम भी जाता रहा। वह मुंझलाकर खड़ी होगई, बोली—"लेविन की चर्चा क्यों? मेरी समझ में नहीं आता कि इस तरह जलाने में तुम्हें क्या मजा आरहाहै। बहन ! मैं तुमसे सौ बार कह चुकी कि मैं उस आदमी के पास नहीं जा सकती,

मेरा इस तरह अपमान किया। तुम भले ही यह करो।

डाली दो मिनिट तक चुप रही। वह नहीं समझती थी कि उसकी सगी बहन उसपर इस तरह आक्रमण करेगी। डाली को क्रोध हो आया। वह कुछ कहना ही चाहती थी कि उसने देखा, किटी उसके बाँह पर मुँह रख कर रो रही है! बोली—"बहन! मुझसी अभागिन कोई न होगी।"

डाली का सारा क्रोध पानी-पानी होगया। किटी की दीन-हीन दशा पर उसे बड़ी करुणा आई, उसका सारा विषाद जाता रहा। किटी की दशा देखकर वह समझ गई कि लेविन को अस्वीकार करने की विषम वेदना उसके अंग-प्रत्यंग को जला रही है और वह लेविन को प्यार करती है।

किटी रोते-रोते बोली—"बहन! मेरी दशा कोई खराब नहीं है; पर मैं जबर्दस्ती पागल बना दी जाती हूँ।"

डाली—किस तरह?

किटी—तुम्हीं सोचो। अभी थोड़ी देर पहले बाबा क्या कह रहे थे। उनकी समझ में मैं शादी के लिये मरी जारही हूँ। मां मुझे सभी जलसों में प्रायः इसीलिये घसीट लेजाती है कि मेरे योग्य कोई वर तैयार हो जाय। जिन जलसों में जाना मुझे एक समय अतिशय आनन्द देता था, उन्हीं जलसों में जाना अब मुझे रोगसा मालूम होता है। सभी बातें हमारे विपरीत होती जा रही हैं। यही हमारी बीमारी का कारण है।

डाली—तुम्हें इन बातों की चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

किटी—मैं लाचार हूँ। जब कहीं मैं बैठती हूँ, वही बातें चील की भांति हमारे सिरपर मड़राया करती हैं। जब तक तुम्हारे यहां रहती हूँ, बच्चों में मनको भुलाये रखती हूँ।

डाली—पर यहां भी तो अब तुम नहीं रह सकतीं।

किटी--जब तक यहां हूँ तब तक तो वहीं रहूँगी। मांसे पूछकर तुम्हारे साथ ही चलती हूँ।

किटी अपने बहन के घर जाकर रहने लगी, पर उसकी दशा न सुधरी। अन्त में जाड़ा बीतते-बीतते उसे जलवायु बदलने के लिये बाहर जाना पड़ा।

२

पीटर्सबर्ग के रईसों का तीन दल था। एक दल तो सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों का था। इस दल में अन्ना के पति अलक्से प्रधान थे। इस दल की रहन-सहन, इसके आचार-विचार इतने विचित्र थे कि अन्ना को इस दल में मिलना-जुलना नहीं सुहाता था। दूसरा दल उन लोगों का था, जो सादगीका जीवन बिताते थे इस दल की प्रधान नायिका कौण्टेस लीडिया थी। अन्ना का अधिकांश समय इसी दल में बीतता था। पर एक तीसरा दल शौकीनों का था इस मंडली की प्रधान अन्ना के चचेरे भाई की पत्नी बेत्सी थी बेत्सी सदा इस बात की चेष्टा करती थी कि अन्ना भी इसी मंडली में रहने लगे। इस बार मास्को से लौटने के बाद अन्ना की रुचि इस दल को ओर फिर भी गई थी। इसका प्रधान कारण यही था कि रंस्की इसी मंडली में अधिक बैठता-उठता था और अन्ना को रंस्की से मिलने का अवसर मिल जाता था।

रंस्की का बेत्सी के साथ घना संबंध था। एक तरह से दोनों भाई-बहिन थे। रंस्की भी सदा इसी ताक में लगा रहता कि अन्ना

मिलने का अधिकाधिक अवसर किस तरह मिले। अन्ना इस तरह का कोई व्यवहार नहीं करती थी, जिससे रंस्की का दिल बढ़े; पर प्रत्येक मुलाक़ात में उसके हृदय की गति एक विचित्र प्रकार की हो जाती थी। उसके हृदय में वही धड़कन होने लगती, जो पहले-पहल रंस्की को रेलवे स्टेशन पर देखकर उसने अनुभव किया था। इससे उसे एक तरह का आनन्द भी मिलता था। जिसकी झलक उसके प्रत्येक मुस्कराहट में दिखाई देती थी और वह उसे छिपाना भी नहीं चाहती थी।

रंस्की की हरकतों से अन्ना कभी-कभी नाराज हो जाया करती थी। उस समय वह यही समझती थी कि मेरा दिल रंस्की के इस व्यवहार को अनुचित समझता है और नहीं चाहता है। पर मास्को से लौटने के बाद उसे समझ में आया कि मैं धोखे में थी। पीटर्सबर्ग में एक पार्टी थी। वहां रंस्की से मिलने की बात थी। रंस्की नहीं आ सका। अन्ना के चित्त में बड़ी वेदना हुई। उस दिन अन्ना को मालूम हुआ कि मेरा हृदय किस ओर बढ़ा चला जा रहा है।

बेत्सी ने अन्ना को परीशान देखा था। थियेटर में रंस्की से मुलाकात हुई। उसने पूछा—"तुम दावत में क्यों नहीं आये? लोग तुम्हारी इन्तजारी में थे। (रुक कर) कहो कैसे पतेकी कही। हम से छिपाकर चलना चाहते थे?"

रंस्की-इसमें छिपाने की कौन बात थी। फिर तुम तो मेरी आदतों को जानती ही हो। हाँ, आज तो मैं एक मजेदार झमेले में फँस गया था।

बेत्सी-क्या, क्या?

रंस्की—एक मुंशी ने एक रमणी का अपमान कर दिया था और मैं उसके पति को राजी कर रहा था।

वेत्सी—क्या मामला है। साफ बातें कहो।

रंस्की—इस तरह किसी का पर्दा खोलना तो ठीक नहीं; पर किस्सा इतना मजेदार है कि कहने के लिये मेरे मुँह में पानी भर आया। सुनो, दो मनचले युवक घोड़े पर चढ़े चले जा रहे थे।

वेत्सी—कदाचित् दोनों किसी फौज के अफसर थे।

रंस्की—मैं तो यह नहीं कह रहा हूँ।

वेत्सी—अच्छा, तब ?

रंस्की—उन्होंने एक सुन्दरी युवती को पालकी में जाते देखा। उन्हें देखकर उसने मुस्करा दिया। दोनों उसके पीछे हो लिये। भाग्य वश वह रमणी भी उसी मकान में गई, जिसमें ये लोग जा रहे थे। वह उतरी और ऊपर चली गई।

वेत्सी—तुम इस तरह कह रहे हो कि मुझे आशंका हो रही है कि कहीं तुम भी तो उनमें शामिल नहीं थे।

रंस्की—दोनों युवक अपने एक मित्र के यहां दावत खाने गये थे। भोजन समाप्त कर उन्होंने पता लगाना चाहा कि उस मकान में और कौन रहता है। मालूम हुआ कि ऊपर के तल्ले पर बहुत सी औरतें रहती हैं। कुर्सी पर बैठकर दोनों ने उस अज्ञातनामा रमणी के नाम एक पत्र लिखा। प्रेम-पत्र प्रेम से लबलबा रहा था। भाषा बड़ी ही सरस थी। पत्र लेकर दोनों ऊपर गये।

वेत्सी—तुमने भी क्या पचड़ा उठाया।

रंस्की—ऊपर जाकर घंटी बजाई, मजूरनी ने द्वार खोला, उन्होंने खत देते हुए कहा—"उसके प्रेम से हम लोग पागल हो रहे हैं दाई! समय दर्शन न मिला तो हम लोगों का अन्त समझना।" मजूरनी

अचम्भे में आ गई, खत लेकर चली गई। दूसरे ही क्षण एक भला आदमी आकर उपस्थित हुआ। उसकी लंबी दाढ़ी में अजब बहार था, क्रोध से उसका चेहरा लाल हो रहा था। उसने कहा—"इस तल्ले पर मेरे और मेरी पत्नी के सिवा और कोई नहीं रहता।"

बेत्सी—फिर क्या हुआ?

रंस्की—जरा धीर धरो। अभी तो सबसे मजेदार बातें बाकी ही रह गई हैं। दाढ़ीवाला आदमी किसी सरकारी महकमे में मुहर्रिर था। उसने अपमान का दावा ठोंक दिया। अन्त में मुझे बीच-बिचौता करना पड़ा और मुश्किल से पिंड छूटा।

बेत्सी—क्यों, इसमें कठिनाई किस बात की थी?

रंस्की—हम लोगों ने माफी मांगते हुए कहा—"नासमझी के कारण ऐसा होगया, क्षमा करो।" वह भी पिघल जाता है। पर वह अपने दिल का गुबार निकाल देने के लिये कुछ कहता है, उसे क्रोध चढ़ जाता है और वह अंडबंड बकने लगता है। मैं फिर उसे समझाता हूँ कि इन लोगों ने काम खोटा किया है; पर उनकी अवस्था का ख्याल कर क्षमा करना चाहिये। इन्हें इसका सख्त अफसोस है। फिर उसका दिल पिघल गया, बोला—"मैं तो मान जाता; पर मेरी स्त्री... उसका बड़ा अपमान हुआ है।..."इतना कहकर वह फिर बैठ जाता है। मुझे फिर चाल चलनी पड़ती है और समझा-बुझाकर उसे ठंडा करता हूँ।

इतने में एक दूसरी रमणी बेत्सी के पास आकर खड़ी होगई। बेत्सी ने उससे कहा—"अभी मैं एक बड़ाही मजेदार किस्सा सुनरही थी, तुम्हें भी सुनाऊँगी।"

रंस्की अपने रेजिमेण्ट के कर्नल के पास यह सब समाचार सुनाने गया। कर्नल इसके इन्तजार में था। इस मामले में रंस्की के दो मित्र पेट्रिस्की और केट्रो फंसे थे। साथ ही रेजिमेंट की इज्जत पर भी बट्टा लग सकता था।

कर्नल—मामला तो ठीक मालूम होता है। पेट्रिस्की की शिकायत अधिक सुनने में आ रही है। एक न एक शिकायत बनी ही रहती है। अबकी सरकारी क्लर्क से काम पड़ गया है। वह तो चुप रहनेवाला नहीं। बात जरूर फैलेगी। अगर तुमने कोशिश कर इसे दबा न दिया होता तो और भी न जाने क्या-क्या हो जाता।" फिर रंस्की से किस्सा सुन कर वह अपनी हँसी न रोक सका। क्लर्क के रह-रह कर फिसल पड़ने की बात पर वह लोट-पोट हो गया।

३

बेत्सी अधिक देर तक थियेटर में नहीं ठहर सकी। उसने कुछ मित्रों को निमन्त्रण दे रखा था। इसलिये बीचमें ही थियेटर से उठ गई। घर पहुँच कर उसने दावत का प्रबन्ध किया। धीरे-धीरे मेहमान भी आने लगे और बड़े हालमें बैठने लगे।

बेकारी की गपोड़बाजी का हाल कौन नहीं जानता। जहां दस स्त्रियां एकत्र होगईं, दस तरह की बातें उठने लगीं। बात के सिर-पैर का कोई ठिकाना नहीं, कौन बात कहां से आरम्भ हुई और कहां टूटी, इसकी किसी को भी परवा नहीं, बस कुछ बोलते रहना चाहिये। इसी

तरह एक विषय से दूसरे विषय पर बातें करते हुए कर्नाइन वंशकी चर्चा छिड़ गई।

एकने कहा—मास्को से लौटने के बादसे ही अन्ना में विचित्रपरिवर्तन होगया है। हमें तो दाल में कुछ काला मालूम होता है।

दूसरी—सबसे बड़ी बात तो यही है कि इस बार उसने एक इल्लत पाल ली है। रंस्की का हाल.........

तीसरी—इसमें हर्ज ही क्या है। तफरीह के लिये तो कुछ जरूर चाहिये।

पहली—पर इस तरह की तफरीह का परिणाम बड़ा ही भयानक होता है।

चौथी—क्या फजूल की बातें कर रही हो। अन्ना ऐसी रमणी कदाचित् ही देखने में आती है। अलक्ले से मैं घृणा करती हूँ, पर अन्ना पर मेरा विशेष अनुराग है।

दूसरी—अलक्ले में क्या दोष है? हमारे पति का तो कहना है कि यूरोप में अलक्ले के समान चतुर राजनीतिज्ञ विरले ही होंगे।

चौथी—मेरे पति का भी यही कहना है। पर मैं इसे सच नहीं मानती। मुझे तो वह भोंदू सा मालूम होता है।

दूसरी—आज तुम्हारी अक्ल ठिकाने नहीं है।

चौथी—मुझे क्या हुआ है। दो में से एक को तो कुछ समझना ही होगा। चाहे जिसे मान लो।

पांचवीं—धन से ही सब को सन्तोष नहीं होता। दिल की प्रसन्नताको भी कुछ लोग प्रधान मानते हैं।

चौथी—जो हो; पर अन्ना के सम्बन्ध में इस तरह की बातें मुझे

पसन्द नहीं। आज अगर सारा गांव मेरे ऊपर मरने लगे तो इस में मेरा क्या दोष।

पहली—मैं तो इसके लिये अन्ना को दोषी नहीं ठहरा रही हूँ।

पांचवीं–ऐसा न हो तो भी उसे कौन दोष दे सकता है।

यह बात यहीं समाप्त हो गई। अब प्रसा के राजा की चर्चा छिड़ गई। सबने अपना-अपना मत प्रगट किया। इतने में रंस्की का प्रवेश हुआ।

बेत्सी–(हँसकर) भला! आपको फुरसत तो मिली।

रंस्की से बातचीत समाप्त भी नहीं होने पाई थी कि अन्ना के आगमन की सूचना मिली। बेत्सी ने कुतूहलभरे नेत्र से रंस्की की ओर देखा। रंस्की सतृष्ण नेत्रों से दरवाजे की ओर देख रहा था। अन्ना ने बेत्सी से हाथ मिलाया और बैठ गई। रंस्की अभिवादन कर कुर्सी खींच कर उसके पास बैठ गया।

अन्ना–(बेत्सी से) मेरा जल्दी आने का विचार था; पर मैं कौण्टे लीडियाके पास चली गई। सरजान वहां आये थे। उनसे बात-ची[illegible] होने लगी।

बेत्सी–सरजान तो पादरी हैं।

अन्ना–हां, अभी वे भारतवर्ष से लौटे हैं। वहां का वर्णन सु[illegible] रहे थे। बड़ा आनन्द आया।

इतने में एक दूसरी रमणी बीच में ही बोल उठी–"सरजान! मैं[illegible] उन्हें जानती हूँ। उनकी बातों में जादूभरा रहता है। व्लेसिम की लड़[illegible] से उनकी शादी होनेवाली है।"

दूसरी–इस लड़की के माता-पिता भी कैसी बेजोड़ शादी के वि[illegible]

उतारू हुए हैं। कोई पूछता है तो कहते हैं–"दोनों में सच्चा अनुराग है।"

तीसरी–यह युग और सच्चा प्रेम! दोनों असम्भव बातें हैं।

रंस्की–हम लोग तो आज भी उसी पुरानी लकीर के फकीर बने हैं

इस प्रसंग पर देर तक बातें होती रही। रंस्की टकटकी लगाये अन्ना की ओर देखता रहा। एकाएक अन्ना बोल उठी–"कल मास्को से पत्र आया है। किटी की तबीयत–बहुत खराब है।"

रंस्की–(भौंहे सिकोड़कर) सचमुच?

अन्ना का चेहरा लाल होगया, बोली–"पर इससे तुम्हें क्या?"

रंस्की–मुझे मतलब है। क्या तुम ठीक-ठीक बतला सकती हो कि क्या लिखा है।

बिना कोई उत्तर दिये अन्ना बेत्सी के पास चली गई और चाय मांगने लगी।

बेत्सी चाय दे ही रही थी कि रंस्की भी वहीं पहुंच गया, पूछा–"सच बता दो क्या लिखा है।"

अन्ना–(आपही आप) ईश्वर ने पुरुषों को भी विचित्र बनाया है। मान और मर्यादा की डींग मारते हैं; पर मर्यादा किस चिड़िया का नाम है, जानते तक नहीं। (रंस्की को लक्ष्यकर) मैं कई रोजसे सोच रही हूँ कि तुमसे कह दूं कि तुम्हारा व्यवहार अनुचित हुआ है और हो रहा है।

रंस्की–क्या तुम्हारा यही विश्वास है? मैं नहीं जानता कि मैंने कुछ अनुचित किया है; पर यह बतलाओ कि इसमें दोष किसका है?

अन्ना–(दृष्टि कड़ीकर) क्या इसका दोष तुम मेरे सिर मढ़ना चाहते हो?

रंस्की—(प्रफुल्लित होकर) तुम जानती ही हो कि यह सब मैं
किस लिये किया।

अन्ना—इसी से मालूम होता है कि तुम हृदयहीन हो ।

कहने को तो अन्ना यह बात कह गई; पर वह जानती थी कि
गलत कह रही हूँ। रंस्की सहृदय है और इसीसे मैं उससे घबरा रही हूँ

ऐंस्की—तुम मुझसे क्या चाहती हो?

अन्ना—तुम मास्को जाकर किटी से माफी मांगो और उसे राजी करो

ऐंस्की—अपने कलेजे पर हाथ धर कर कहो, क्या तुम यह हृद
से चाहती हो? कभी नहीं।

अन्ना—यदि मुझपर तुम्हारा अनुराग है तो ऐसा करो, जिससे मे
हृदय को शान्ति मिले।

इतना कहते-कहते उसका चेहरा लाल हो गया।

रंस्की—प्यारी अन्ना! तुम नहीं समझ रही हो कि तुम्हीं मे
सब कुछ हो। पर यहां शान्ति कहां। शान्ति की आशा मुझसे न
करना। मेरे हृदय में प्रेम का निर्मल स्रोत बह रहा है और मैं तु
उसी में सराबोर कर देना चाहता हूँ। तुमसे भिन्न मेरा जीवन व्यर्थ है
मैं अपना भविष्य देख रहा हूँ। या तो दुःख के अथाह सागर में ड
मरना है, या आनन्द के अमृत-सरोवर का मधुर पान करना है। दो
तुम्हारे हाथ में है, जो चाहो सो करो।

रंस्की ने अन्तिम बातें बड़े धीमे स्वर से कहीं थीं; पर अन्ना
उसे सुन लिया। उसने हृदय को कड़ाकर उत्तर देना चाहा था; पर ऐ
वह नहीं कर सकी। उसकी आँखों से प्रेम की धारा बह रही थी। व
निमेष दृष्टि से रंस्की को देखने लगी।

रंस्की का हृदय उच्छ्वास से भर गया। उसने अपने मन में कहा—
:दय ! धीरज धरो। निराशा ! अब तू मुझ से अलग हो। भाग्य
भी विचित्र गति है। जिस समय मनुष्य निराशा के अथाह सागर
डूबने लगता है, उसी समय भाग्य मुस्कराता हुआ सामने आता है
र उसका हाथ पकड़ कर उबार लेता है। अन्ना मुझे चाहती है,
श्य चाहती है।"

अन्ना—तब एक काम करो। इस तरह की बातें न करके मित्रों की
ह मुझ से मिला करो।

अन्ना के मुंह से तो यह निकल रहा था; पर उसकी आँखें कुछ
र ही कह रही थीं।

रंस्की—मित्र ! मित्र की तरह हमलोग नहीं रह सकते। तुम स्वयं
बात को जानती हो। हमारा-तुम्हारा यही सम्बन्ध रहेगा, चाहे
में सुख हो या दुःख।

अन्ना उत्तर देना चाहती थी; पर रंस्की ने रोककर कहा—"मैं तुम
कुछ नहीं चाहता। केवल आशा के ही सहारे सारी यातना सहने
लिये तैयार हूँ। पर यदि तुम्हें इतना भी स्वीकार नहीं है, तो कह
मैं यहाँ से चला जाऊँगा और यह अपना अभागा मुंह तुम्हें कभी
नहीं दिखलाऊँगा।"

अन्ना—मैं यह नहीं चाहती।

रंस्की की आवाज भर्राई हुई थी। उसने लड़खड़ाती जबान से
ा—"बस, इस सम्बन्ध को ज्यों का त्यों रहने दो। मैं तुम से यही
क्षा चाहता हूँ। देखो, तुम्हारे पति आते हैं।

इसी समय करनिन ने कमरे में प्रवेश किया। देखा कि अन्ना

रंस्की के साथ बातें कर रही है । बिना लक्ष्य किये ही वह बेत्सी के पास गया और बातें करने लगा, बोला—"आज तो आप के घर बड़ी भीड़ लगी है।"

बेत्सी को उसका यह रिमार्क पसन्द नहीं आया। विषयान्तर करने के लिये उसने दूसरा प्रसंग छेड़ दिया।

रंस्की और अन्ना उसी तरह बातें कर रही थीं। कमरे में उपस्थित अन्य स्त्रियों को यह अच्छा नहीं लगा। कानाफूसी होने लगी। बेत्सी ताड़ गई। एक मिनिट के लिये अलक्ले को छोड़कर वह अन्ना के पास गई, बोली—"आपके पति की बेढंगी बातें सुनकर मुझे तो विस्मय हो जाता है।"

अन्ना ने हंसकर सिर हिलाया और वहां से उठ गई।

लोगों से कुछ इधर उधर की बातें कर अलक्ले अन्ना के पास गया, बोला—"अब घर चलना चाहिये।"

अन्ना—मुझे भोजन भी यहीं करना है।

बिना कुछ कहे अलक्ले ने अपनी टोपी उठाई और घर का रास्ता लिया।

४

रंस्की के साथ एकान्त में बैठ कर अन्ना का बातें करना अलक्ले की दृष्टि में अनुचित नहीं था। पर जो लोग वहाँ मौजूद थे, उन्हें अच्छा नहीं जचा। इसी से अलक्ले भी खिन्न था। वह अन्ना से ... य में कह देना चाहता था।

घर पहुँच कर अलक्ले अपने पाठनालय में गया और एक धार्मिक पुस्तक उठा कर पढ़ने लगा। रह-रह कर उसके ध्यान में कोई बात आ जाती थी और उसे चित्त से उतारने के लिये वह अपना सिर हिलाने लगता था। प्राय: एक बजे वह उठा और सोने की तैयारी करने लगा। अन्ना अब तक नहीं आयी थी। एक किताब लेकर वह दूसरी मञ्जिल पर गया। आज अलक्ले का ध्यान आफिस के काम की ओर उतना नहीं जाता था, जितना अन्ना की ओर जाता था। न जाने क्यों रह-रह कर बुरी भावनायें उसके दिलमें उठती थीं। वह सोने नहीं गया, कमरे में टहलने लगा। जो घटना उपस्थित हुई थी, उस पर विचार कर लेना उसने आवश्यक समझा।

समस्या विकट थी। अलक्ले ने आरम्भ में इसे इस तरह नहीं समझा था।

अलक्ले को डाह छू तक नहीं गया था। अपनी पत्नी पर उसका पूरा भरोसा था। किसी तरह की आशंका चित्त में लाना ही वह पाप समझता था। वह जानता था कि उसका, उसकी पत्नी पर पूरा अनुराग है और उसकी ओर से भी उसे यही आशा थी। इस समय भी उसका विश्वास अटल था, उसमें तिल भर भी फर्क नहीं आया था—तो भी न जाने क्या उसके दिल में रह-रह कर उठता और वह उसका प्रतीकार नहीं जानता था। अलक्ले अपनी पत्नी पर पूरा भरोसा रखता था। [illegible]र की उसने एक बार भी चिन्ता नहीं की। सरकारी काम में वह जी तोड़ कर परिश्रम करता था। आज उसके जीवन में [illegible] दिखाई दिया। इस समय उसकी दशा ठीक उस मनुष्य की भाँति थी, जो खाई पार करने के लिये पुलपर चढ़ जाने पर देखता है कि पुल [illegible]

से टूटा है और नीचे जलका सोता वह रहा है। आज पहली बार उसके चित्त में यह ध्यान आया कि उसकी पत्नी दूसरे से प्रेम कर रही है। उसकी आत्मा कांप उठी।

सोने जाने की उसे इच्छा नहीं रही। कई बार वह पलंग तक गया और लौट आया। हर एक कदम पर उसके ध्यान में यही बात आती:—"इस समस्या को हल करना ही होगा। इस तरह नहीं चल सकता। पर क्या तैं करूँगा। हुआ ही क्या है? वह रस्की से देर तक एकान्त में बातें करती रही। इसमें क्या हर्ज है। सभ्य-समाज में यह हुआ ही करता है। इस तरह की बातों पर व्यर्थ की आशंका कर अपने को नीचे गिराना है और उसकी मर्यादा घटानी है······" आज इस तरह की बातोंका अलक्से के हृदय में कोई मूल्य नहीं रहा। उसके चित्त में पुनः विचार पैदा हुआ—"यदि कोई बात न होती तो औरों को बुरा क्यों लगता, वह कानाफूसी क्यों होती। ······इस तरह इसे टाल नहीं दिया जा सकता······पर यह होगा किस तरह?······नहीं—नहीं, मैं भूल कर रहा हूँ। इस तरह व्यर्थकी कल्पना कर अन्ना का जी दुखाना उचित नहीं······" दूसरे ही क्षण उसके विचार पुनः बदल गये। वह अपना हाथ मलने लगा। उसके ललाट पर पसीना आ गया। वह बैठ गया।

"आह! मैं भी कैसा हतभाग्य हूँ। विपत्ति भी मेरे सिर पर इसी समय घहरानेवाली थी। कहां तो मैं अपनी सारी शक्ति को संग्रह कर रहा था कि मैं दत्तचित्त होकर उस कानून के लिये लड़ूँ और गरीबों की सहायता करूँ, कहां इस चिन्ता ने भी मुझे आ घेरा। अब इसके लिये क्या करना चाहिये। इसे इसी तरह छोड़ देना तो ठीक नहीं। किसी [illegible] पर पहुंचना ही होगा। उस पर क्या बीतेगी, मैं क्यों सोचूं।

मेरा कर्तव्य साफ है । उसे ठीक रास्ते पर ले चलना मेरा धर्म है। मैं देख रहा हूँ कि वह गड्ढे में जा रही है, उसे सचेत कर देना मेरा कर्तव्य है । मैं सब बातें साफ-साफ कह दूँगा ।" इसके बाद उसने निश्चय किया कि अन्ना के आने पर, वह उससे किस तरह बातें करेगा ।

इतने में बाहर से घोड़ों के टाप की आवाज सुनाई दी । गाड़ी अलक्ले के घर के सामने आकर ठहरी । शान के साथ अन्ना गाड़ी से उतरी और सीढ़ियां चढ़ने लगी ।

अलक्ले अपनी सारी शक्ति इकट्ठी करने लगा । सामना होते ही अन्ना ने हँस कर पूछा-"इतनी रात तक जाग ही रहे हो । क्या आज सोना नहीं है क्या ?"

अलक्ले-तुमसे कुछ बातें करनी आवश्यक थीं ।

अन्ना-(विस्मय से) मुझसे ? कहो क्या है ? पर इस वक्त रात बहुत हो गई है । क्या कल नहीं ठीक होगा ।

अलक्ले-अन्ना, मैं तुम्हें सचेत कर देना चाहता हूँ ।

अन्ना-मुझे······सचेत······किस लिये ?

इतना कह कर वह आँखें फाड़कर अलक्ले को देखने लगी । आज यदि कोई आगन्तुक वहां होता तो वह अन्ना को सर्वथा निर्दोष समझता । पर अलक्ले अन्ना को अच्छी तरह समझता था । यदि कभी सोने में पांच मिनिट की देर हो जाती तो अन्ना चिन्तित होकर नीचे-ऊपर दौड़ने लगती, बार-बार पूछती, कैसी तबियत है, क्यों अभी तक नहीं सोये । ,पर आज वह एक शब्द भी बोलना नहीं चाहती । मेरी परछाईं उसे भार हो रही है । क्या यह अकारण हो सकता है । आज अन्ना के हृदय का कपाट सदा की भांति अलक्ले के लिये खुला नहीं

है। उसकी बात-चीत से अलक्ले ने यह भी देखा कि इस घटना की उसे जरा भी चिन्ता नहीं है। इस समय अलक्ले की वही दशा थी, जो उस मनुष्य की होती है, जो अपने घर आता है और बाहर से किवाड़ बन्द पाता है। फिर भी कुंजी पा जाने की आशा से वह इधर-उधर टटोलने लगता है। अलक्ले बोला—"मैं इस लिये तुम्हें सचेत कर देना चाहता हूँ कि कहीं समाज में तुम्हारी निन्दा न होने लगे। रंस्की के साथ तुम जिस तरह बातें कर रही थी, लोगों को उचित नहीं प्रतीत हुआ।"

अन्ना—(इस लापरवाही से मानों कुछ हुआ ही नहीं है) मैं तो तुमसे हैरान हूँ। तुम कभी भी एक पथ पर नहीं रहते। जब मैं लोगों से मिलती-जुलती नहीं तब भी शिकायत और जब लोगों से मिलती-जुलती हूँ तब भी शिकायत। किसी तरह से भी छुटकारा नहीं।

अलक्ले चुप रहा। नीचा सिर करके हाथ की अँगुलियाँ तोड़ने लगा।

अन्ना—फिर वही बात। तुम जानते हो कि यह मुझे बुरा मालूम होता है।

अलक्ले—अन्ना !······इसके बाद वह और कुछ नहीं कह सका।

अन्ना—(बातें बना कर) आखिर मामला क्या है। इतना तूफान किस लिये उठ रहा है।

अलक्ले चुप हो गया। अपना सिर खुजलाने लगा और आँखें मलने लगा। उसने देखा कि अन्ना को सचेत करना तो दूर रहा, वह स्वयं चक्कर में पड़ गया है और उसके हृदय में दूसरा ही युद्ध छिड़ गया है।

अलक्ले—अन्ना ! तुम जानती ही हो कि डाह को मैं हृदय से घृणा करता हूँ। पर मर्यादा की एक सीमा है, उसके नीचे नहीं जाया जा सकता। तुम्हारा आज का आचरण जितने लोग वहाँ उपस्थित थे, सबको अनुचित जँचा

अन्ना-तुम क्या कह रहे हो, मेरी समझ में कुछ नहीं आया। मालूम होता है तुम्हारी तबीयत अच्छी नहीं है। चलो सोने चलें।

इतना कह कर वह उठी और चली भी गई होती; पर अलक्ले दरवाजा रोक कर खड़ा हो गया।

इस समय अलक्ले का चेहरा विकृत हो रहा था। वह खड़ी हो गई, बोली—"जिस विपत्ति की आप चर्चा कर रहे हैं, उसका मुझे भी ध्यान है।"

अलक्ले—मैं इससे अधिक कुछ नहीं कहना चाहता और न मुझे कहने का अधिकार है। सिर्फ इतना और कह देना चाहता हूं। ईश्वर ने हमें तुम्हें एक डोरी में बांधा है। जब तक दोनों में से एक के भी हृदय में किसी तरह की पाप वासना नहीं समायगी, विच्छेद नहीं हो सकता।

अन्ना—मैं आप का अभिप्राय नहीं समझ सकी। मुझे नींद आ रही है। मुझ हतभागिनीपर दया करो।

अलक्ले—अन्ना! प्यारी अन्ना! इस तरह की बातें मुँहपर न लाओ। कदाचित् मैं भूलता हूं। पर मैं जो कुछ कह रहा हूं, दोनों के कल्याण के लिये कह रहा हूं। तुम मेरी हो और मैं तुम्हारा हूं।

अन्ना का चेहरा उतर गया। उसकी चाह भरी चितवन दूर हो गयी। वह अपने मनमें कहने लगी—"प्रेम! क्या वह भी प्रेम कर सकता है। प्रेम का नाम उसने कहीं सुन लिया है, नहीं तो वह यह शब्द भी मुँह पर नहीं लाता। इससे प्रेम से क्या मतलब।" (प्रगट) "प्रियतम! सचमुच मैं आपका अभिप्राय नहीं समझ सकी। जो कुछ कहना है, साफ-साफ कहो।"

था। आह! मास्को जाने के पहले मैंने निकोले से किस सरल हृदय से कहा था। निकोले! अब मैं शादी कर लेना चाहता हूँ। उसने भी किन सरल शब्दों में उत्तर दिया था, आप अभी तक अविवाहित रहे यही क्या कम है! पर आज मेरी क्या दशा है। द: कदम और दूर चला गया हूँ। किटी की उस दिन की बातें उसे रहकर जलाती थीं। उसने अपने जीवन में अनेक कुत्सित कर्म किये हैं, जिनके स्मरण से कलेजा कांप उठना चाहिये था; पर उनका उसे जरा भी पश्चात्ताप नहीं था—लेकिन यह साधारण सी बात जिसके लिये वह बिल्कुल जिम्मेदार नहीं था, न जाने क्यों रह-रहकर उसे सताती, जलाती और तंग करती। हृदय की यह चोट अच्छा नहीं हुई। गांव के प्रश्न, जमींदारी के प्रश्न, खेत के प्रश्न उसका ध्यान खींचते थे, वह उन बातों में लिप्त हो जाता और किटी का ख्याल जाता रहता, पर फुरसत पाते ही फिर वही धुन उसे समाती। वह सोचता किसी तरह किटी का विवाह हो जाता, उसके विवाह का संवाद पाकर अवश्य उसे शान्ति मिलेगी, क्योंकि फिर आशा का एकदम लोप हो जायगा।

वसन्त का महीना आया। पेड़ तथा पल्लवों ने नया जीवन ग्रहण किया। जिधर देखिये उधर ही हरियाली छाई। वनस्पतियों की उमड़ती जवानी को देखकर लेविन की उत्तेजना और भी बढ़ गई; पर इससे उसने एक प्रकार की दृढ़ता ग्रहण की। मास्को से लौटकर उसने कई मंसूबे बांध रखे थे; पर अभी तक सिवा एक सदाचार के उसने किसी को चरितार्थ नहीं किया था। आज उसने उन्हें चरितार्थ करने का फिर संकल्प किया। सदाचारिक जीवन से उसे विशेष सन्तोष था और उसकी आत्मा को पूरी ... मिल रही थी।

फरवरी में उसे मेरिया का पत्र मिला। निकोले की बीमारी दिन-दिन बिगड़ती जा रही है और वे किसी की नहीं सुनते, डाक्टरों के नाम से चिढ़ जाते हैं। लेविन निकोले के पास गया। उसे समझा-बुझा कर डाक्टर को दिखा कर, रोग का निदान करने के लिये राजी किया और रुपया भी खर्च के लिये दे आया। इससे उसे सन्तोष था।

घर लौट कर उसने नये तरीके से खेती आरम्भ की। अब तक तो लेविन केवल भूमि की पैदावार और जलवायु के भरोसे ही फसल का अनुमान करता था; पर आयन्दा से वह मजूरों का भी शुमार करने लगा। उसका कहना था कि मजूरों की योग्यता और अयोग्यता पर फसल बहुत कुछ निर्भर है। इस तरह वह परिश्रम में अपना दिन बिताने लगा। अगाफिया से अपने सिद्धान्तों पर वह प्रायः विवाद करता था; पर कभी-कभी उसकी इच्छा होती थी कि और लोगों तक यह सन्देश पहुंचाऊं।

एक दिन प्रातःकाल लेविन कपड़ा पहन कर घर से निकला और खेत के पास जाकर खड़ा हो गया। हरे-भरे खेत लहलहा रहे थे। लेविन का हृदय उमंग से भर आया। वह सोचने लगा—"यही समय है। नये तरीकों और उपकरणों को काम में लाने का यही अवसर है।" किसानी को वह सब से उत्तम समझता था और नये-नये उपायों तथा युक्तियों द्वारा वह उसे पूर्ण उन्नत बनाना चाहता था। एक बार वह चौपायों के पास गया, गायें चरनी में बंधी घास खा रही थीं। सूर्य की किरणें उनके सफेद बालों पर पड़ कर सजीव शोभा दे रही थीं। लेविन का चित्त उल्लास से भर गया उसने ग्वालों से कहा—"बछड़ों को तो यहीं रहने दो; पर गायों को चारागाह में ले चलो।" ग्वालों के बच्चे लम्बी-लम्बी लाठियां लेकर उछलते-कूदते चारागाह की ओर चले।

इतना करने के बाद, वह बाड़े को इधर उधर से देखने लगा। बाड़ा कई जगह टूट गया था। मरम्मत कराने के लिये उसने तुरत बढ़ई बुला भेजा। बढई को वह दौंरी करने वाली (पेड़ से अन्ना अलग करने वाली) मशीन की मरम्मत करने के लिये कह गया था; पर इस समय से मालूम हुआ कि वह हलों की मरम्मत कर रहा है। लेविन को बड़ा गुस्सा आया। उसने कहा—"मैं कहां तो जान देकर एक एक बात सम्हालने की फिक्र में पड़ा हूँ, कहां ये सब मनमानी करके हमारे सारे मंसूबे व्यर्थ करते-फिरते हैं। इस समय हलों की मरम्मत करके क्या होगा; पर दौंरी वाली मशीन विना तो काम रुक जायगा, उसने गुमाश्ते को बुलाया।" घबराये हुए गुमाश्ता साहब रस्सी बटते आ उपस्थित हुए। लेविन ने डांट कर पूछा—"दौंरी वाली मशीन की मरम्मत क्यों नहीं हो रही है?"

गुमाश्ता—मैं आपसे कहना भूल गया कि हलों की अभी ज़रूरत पड़ेगी और विना मरम्मत के वे काम नहीं दे सकते।

लेविन—जाड़े में बढ़ई लोग क्या करते थे?

गुमाश्ता—आपने बढईयों को क्यों बुलाया है?

लेविन—बछड़ों के लिये टट्टी कहां है?

गुमाश्ता—मैंने तो तैयार करने का हुक्म दे दिया था........इन किसानों से कुछ नहीं होता है। ये सब किसी मर्ज की दवा नहीं है।

लेविन—(क्रोध से) यह गुमाश्ता और ये किसान किसी मर्ज की दवा नहीं है। मैंने तुम्हें किस दिन के लिये रखा है।

जोश में लेविन कह तो गया; पर उसने देखा कि इससे मामला बिगड़ जायगा—चुप हो गया एक क्षण के बाद बोला—'क्या बोआई शुरू होनी चाहिये!'

गुमाश्ता–वेसिली और मिक्षा बोआई का कुछ काम तो अभी कर रहे हैं और कुछ कल और परसों आरम्भ किया जायगा।

लेविन–वेसिली और मिक्षा के जिम्मे कितनी एकड़ भूमि है?

गुमाश्ता–प्राय: पन्द्रह एकड़।

लेविन–और ज्यादा क्यों नहीं दे दी गई।

गुमाश्ता–क्या किया जाय। ये किसान एक दम वाहियात हैं। तीन तो आये ही नहीं और सेमन.........

लेविन—सोहाई और दौंरी बन्द करके कुछ आदमी ले लिये होते।

गुमाश्ता–आखिर में यही किया है।

लेविन–किसान कहां गये?

गुमाश्ता–पांच तो बांध बना रहे हैं और चार बीज की देख भाल कर रहे हैं। क्यों कि उनमें सर्दी लग जाने का भय था।

लेविन ने सर्दी से पहले ही सचेत कर दिया था; पर उसकी बातें किसी ने न सुनं थीं। आज सर्दी का नाम सुनकर उसके कान खड़े हो गये। बीज अवश्य नष्ट हो जायंगे।

गुस्से में बड़बड़ाता लेविन बखार की ओर गया। उसने देखा-सभी बीज अभी खराब नहीं हुए हैं। उसका क्रोध कुछ शान्त हुआ। उस सुहावने दिन क्रोध करना ही अप्रासंगिक और अस्वाभाविक था।

सईस से घोड़ा कसने के लिये कह कर, लेविन ने गुमाश्ते को बुलाया और अपने नये तरीकों को उसे समझाने लगा–"खेतों में खाद अभी से डलवानी चाहिये, जोताई के काम में भी ढिलाई न हो। एक भुर भी ज़मीन अधिया पर न दी जाय। मजूरी पर हरवाहे रख लिये जायँ।"

गुमाश्ता लेविन की बातें बड़े गौर से सुनता जाता था और 'हां'

में 'हां' मिलाता जाता था। पर उसकी आंखें उसी तरह निराशापूर्ण थ
और कहती थीं कि इस तरह काम नहीं चल सकता।

लेविन इस बात से बेतरह जलता था; पर जितने गुमाश्ते उसने र
थे, सबों की यही हालत थी। सबों ने उसके तरीकों को नापसन्द कि
था। इससे लेविन ने इस गुमाश्ते पर इतना क्रोध नहीं किया। बल्कि
इसकी निराशा से उसने दृढ़ता ग्रहण की और निश्चय किया कि '
अन्त तक लड़ूंगा।'

लेविन के चुप हो जाने पर गुमाश्ते ने कहा—"जहां तक हो सके
यत्न किया जायगा आगे ईश्वर मालिक है।"

लेविन—ईश्वर के भरोसे क्यों छोड़ते हो। तुम क्यों नह
कर सकोगे?

गुमाश्ता—इतने काम के लिये कम से कम पन्द्रह मजूरे और हो
चाहिये। मजूरे मिलते नहीं। मिलते भी हैं तो मजूरी बहुत मांगते हैं

लेविन चुप हो गया। एक और कठिनाई आ उपस्थित हुई। व
जानता था कि लाख प्रयत्न करने पर भी ४० से अधिक मजूरे नह
मिलते। इतने पर भी वह अपने मंसूबे से नहीं हटा। (कुछ मजूरों क
नाम बता कर) उन्हें बुलालो, अगर वे नहीं आवेंगे तो हम देख लेंगे

गुमाश्ता—उन्हें तो बुलवा लेंगे; पर घोड़े भी थक गये हैं।

लेविन—नये घोड़े मंगा लेंगे। (हंसकर) मैं तुम्हारी आदत जानत
हूँ। लस्टम पस्टम-काम चलाते रहना ही तुम्हें अधिक पसन्द है; पर इ
साल इस तरह नहीं चलेगा। मैं स्वयं सब काम की देख-रेख रखूंगा।

गुमाश्ता—पर आप सुस्त ही कब बैठे रहते हैं। मालिक की नजर
के सामने काम करना मुझे अधिक पसन्द है।

इतने में सईस घोड़ा कस कर लाया।

लेविन-(सवार होकर) मैं जरा खेत की ओर जाता हूँ। देखें बोआई का काम किस तरह चल रहा है।

घोड़े पर चढ़कर लेविन आगे बढ़ा। खुले मैदान की ठंढी हवा उसके रोम रोम में समाने लगी, उसका शरीर पुलकित हो गया। यह आनन्द! यह रमणीयता! कहां मिल सकती है। लेविन अभूतपूर्व आनन्दका-अनुभव करने लगा। घोड़ा जंगल से होकर आगे बढ़ा। जंगल के हरे-भरे पेड़, पक्षियों का कलरव, फूलों की सुरभि से सने वायु के झोंके उसके मन को मुग्ध करने लगे। धीरे-धीरे वह जंगल से बाहर हुआ और एक बार फिर खुले मैदान में आया। प्रकृतिदेवी ने उसके स्वागत के लिये हरा चादर बिछा दिया था, जगह-जगह बर्फ के सफेद टुकड़े सूचीकारी का मजा देते थे। मखमली घासपर वह धीरे-धीरे जा रहा था। इस सुहावने समय में उसका दिल इतना रम गया था कि किसी की कड़ी बातें भी उसे बुरी नहीं लगती थी। किसी किसान की गाय उसके घासको कुचल रही थी। दूसरे अवसर पर लेविन न जाने क्या कर डालता; पर इस समय उसने गाय को हांका तक नहीं। वह जितना ही आगे बढ़ता जाता था, उसे अधिकाधिक आनन्द मिलता था और कृषि को उन्नत करने के नये-नये तरीके उसे सूझते थे।

इस तरह आनन्द में मग्न और युक्तियां सोचता, कल्पनाओं का पुल बांधता वह खेत पर पहुँचा। बीच खेत में बोझसे लदी गाड़ी खड़ी थी। गाड़ी के पहिये तथा घोड़ों के खुर से फसल अनेक जगह रौंद गई थी। दोनों मजूरे बैठ कर सिगरेट पी रहे थे। बोझने के

में 'मट्टी मिलाई गई थी, वह भी काफी महीन नहीं थी। लेविन को क्रो
औं देख दोनों उठे। एक तो गाड़ी की ओर गया और दूसरा बोने लगा।

लेविन यह देख नहीं सकता था; पर मजूरों पर वह कम ही बिगड़ता था।

लेविन—(वेसिली से) घोड़े की राश पकड कर मेंढ़ तक ले चलो

वेसिली—कोई नुकसान नहीं, सब पौधे फिर उठ जायँगे।

लेविन—बहस मत करो। जो कहते हैं, करो।

वेसिली घोड़े को पकड़ कर ले चला। बोला—"देखिये, कैसी बोआ
हमलोग कर रहे हैं।"

लेविन—बीजमें मिलाई हुई मिट्टी काफी महीन क्यों नहीं की गई

वेसिली—हमलोगों ने महीन तो कर डाला है।

इतना कह कर उसने एक मुट्ठी बीज उठाया और उसमें से
अलग कर दिखाने लगा।

इसमें वेसिली का कुछ भी दोष नहीं था; पर लेविन को क्रोध
आया। वह मोक्षाकी बोआई देखने लगा। घोड़े पर से उतर प
और वेसिली के हाथ से कुदाल लेकर स्वयं बोने लगा। वेसिल
पूछा—"तुमने कहां तक बोया है?"

वेसिली के बतलाये हुए चिन्ह के अनुसार लेविन ने बो
आरम्भ किया और वह पेंड़ा समाप्त किया। धँसान इतना अधिक
कि लेविन उतने में ही थक गया। कुदाल वेसिली के सामने फेंक दिय

वेसिली—अगर पौधे न उगे तो इसके लिये हमें दोष न दीजिये

लेविन (हँस कर) जब पौधे उगेंगे तो देखना कि जितना ह
बोया है, उसका क्या रंग रहता है। उस खेत में हमने जहां बोया
वहां की फसल कैसी है?

वेसिली—मैं जीजान से यत्न करता हूँ। मुझे ढीला काम स्वच्छ-
न्द नहीं। मालिक का काम मैं अपना समझ कर करता हूँ।

लेविन—इस साल का वसन्त बड़ा ही सुहावना मालूम होता है।

वेसिली—बूढ़ों का कहना है कि ऐसा वसन्त कभी नहीं आया, बुड्ढों
। भी जोश आ रहा है।

लेविन ने घोड़े पर सवार होते हुए कहा—"देखो, यदि फसल अच्छी
ई तो तुम लोगों को मजूरी के साथ-साथ बखशीश भी देंगे।"

दोनों कृतज्ञतापूर्ण नेत्रों से लेविन की ओर देखने लगे।

६

लेविन घोड़ेसे उतरा भी न था कि सदर फाटक से घंटी की
आवाज आई। मास्को से गाड़ी आने का समय है। कौन आया है!
क्या भाई निकोले हो सकते हैं? उन्होंने कहा भी था। एक बार तो
उसके दिल में ख्याल आया, इस रमणीय वसन्त के समय पर वे कहां
से आ पहुंचे। इनसे तो सारा मजा किरकिरा हो जायगा। पर
दूसरे ही क्षण उसने कहा—"मैं भी कैसा नीच हूं। भाई आये हैं, मुझे
उनका हृदय से स्वागत करना चाहिये।" इतने में गाड़ी दिखाई पड़ी।
एक भला आदमी उसमें बैठा था; पर उसका भाई नहीं था। ज्यों ही
उस व्यक्ति ने गाड़ी से सिर बाहर निकाला, लेविन मारे खुशी के
उछल पड़ा।

अब्लास्की को देखते ही उसे किटी का स्मरण हो आया; पर आज

उसके हृदय में यातना नहीं थी। उसने अपने मनमें कहा—"आज कि
का सच्चा हाल मालूम होगा।"

अब्लास्की-(गाड़ी से उतर कर) अबकी मैंने तुम्हें सूचना त
नहीं दी। एकाएक आने का ते किया।

दोनों मित्र गले से मिले।

लेविन—इस साल का बसन्त कितना रमणीय है। आज तो स्टेश
से आने में बड़ा मजा मिला होगा।

अब्लास्की—कुछ न पूछो। बस, देख लो क्या हालत है। सार
बदन कीचड़ से लथ-पथ है।

अब्लास्की कपड़ा बदलने लगा। इतने में लेविन ने जाकर के
का सारा दास्तान गुमाश्ता को कह सुनाया। लौटले समय अगाफि
मिली, उसने भोजन के लिये पूछा।

लेविन—जो तुम्हें जँचे, बनवाओ। खाना जल्दी तैयार होना चाहिये

अब्लास्की स्नान करके तैयार हो चुका था। दोनों मित्र बैठ ग
और बात-चीत करने लगे।

अब्लास्की—आज मेरी समझ में आया कि तुम देहात को क्यों
इतना पसन्द करते हो। तुम्हारी रहन-सहन देख कर हमें डाह ह
रही है। कैसा सुन्दर और साफ सुथरा घर है, कैसा सुहावना दृश्य है
कितना सादा जीवन है, तुम्हारी मजदूरिन की सादगी देखकर तबीय
प्रसन्न हो जाती है।

इसके बाद अब्लास्की ने इधर-उधर की बातें सुनाईं। गरमी के
दिनों में कोनिशे के आनेका समाचार दिया; पर किटी के बारे मे
नहीं कहा।

अब्लास्की के आने से लेविन को विशेष आनन्द था। यहां पर उसका कोई ऐसा दिली दोस्त नहीं था, जिसके सामने वह अपना दिल खोल कर रख दे। आज अब्लास्की से सब बातें कह कर उसने हृदय का भार हलका कर लेना चाहा। वह एक-एक करके सब बातें कहने लगा—"खेती के लिये वह क्या-क्या नया तरीका निकाल रहा है, उसके मार्ग में कैसी-कैसी बाधायें आ रही हैं, अर्थशास्त्र के विद्वान् कृषि पर कितनी फजूल की बातें लिख गये हैं, वह स्वयं एक पुस्तक लिखने की तैयारी कर रहा है। उसमें वह किन-किन बातों का समावेश करना चाहता है इत्यादि।"

इतने में भोजन आया और दोनों मित्रों ने भोजन किया।

अब्लास्की—यहां मुझे इतनी शान्ति मिल रही है, मानों मैं जहाज के शोरगुल से हटाकर किसी एकान्त टापू में उतार दिया गया हूं।......हां, तुम अभी क्या कह रहे थे, कृषि की व्यवस्था में मजूरों की भी गणना करनी चाहिये। मैं कृषि का ज्ञान तो नहीं रखता; पर साधारण बुद्धि से अनुमान करने पर भी तुम्हारी बात जँचती है।...... दरबान से कह दो कि यदि रोबिनिन आवे तो ठहराना।

लेविन—क्या रोबिनिन के हाथ जंगल बेच रहे हो?

अब्लास्की—हां, क्या तुम उसे जानते हो।

लेविन—खूब अच्छी तरह। मुझे उनसे वास्ता भी पड़ चुका है।

इतने में लेविन का कुत्ता दुम हिलाता आया और लेविन की गोद में बैठ गया।

अब्लास्की—लेविन! तुम बड़े भाग्यवान् हो। तुमने अपने आमोद के सभी साधन एकत्रित कर लिये हैं।

लेविन—नहीं मित्र, तुम भ्रम में हो। ईश्वर ने मुझे आमोद के लिये बनाया ही नहीं है। नहीं तो क्या वह मुझे उस बड़े साधन से वञ्चित रखता।

लेविन का चेहरा उदास हो गया।

अब्लास्की इस कथन का अभिप्राय समझ गया। मित्र की अवस्था पर उसे कष्ट अवश्य हुआ; पर किटी की बात वह मुँह पर नहीं ला सका। क्यों कि वह जानता था कि इससे लेविन की वेदना और बढ़ जायगी।

लेविन—तुम्हारा क्या हाल-चाल है। कैसी कट रही है।

अब्लास्की—तुम्हें मेरी बातें अच्छी नहीं लगतीं; पर मेरी समझ में ही नहीं आता कि नई-नई रमणियों से प्रेम किये बिना लोग कैसे रह सकते हैं। मैं तो रह ही नहीं सकता। इसमें हर्ज ही क्या है। किसी को विशेष कष्ट तो दिया नहीं जाता; पर अपने को अतिशय आनन्द मिलता है।

लेविन—कोई चिड़िया फांसा है क्या?

अब्लास्की—मेरा तो यही काम ही है। इसमें जितना घुसते जाओ नित नया आनन्द आता है।

इसके बाद दोनों मित्र शिकार खेलने गये। शिकार में अब्लास्की ने एक प्रसंग में लेविन से किटी की बीमारी का हाल कह सुनाया।

७

शिकार खेल कर दोनों मित्र घरकी ओर लौटे। रास्ते में लेविन ने किटी की बीमारी के संबंध में अनेक प्रश्न किये। सुन-सुन कर उसे

प्रसन्नता होती थी और आशा उदय होती थी कि फिर भी कुछ आशा शेष है। उसने मन में कहा—"अह! जिस ने मुझे सताया है, आज वह अपने किये पर पछता रही है।"

किटी के प्रसंग में अब्लास्की ने रंस्की की चर्चा छेड़ दी।

लेविन—उन बातों से मुझे क्या करना है। किसी के भेद की बातें मैं नहीं सुनना चाहता।

अब्लास्की ने देखा, लेविन का चेहरा—जो अभी एक मनिट पहले दमक रहा था—सूख कर उदास हो गया।

लेविन—क्या रेबिनिन के साथ जंगल की बात-चीत पक्की हो गई है?

अब्लास्की—करीब-करीब। दाम काफी मिल रहा है। अड़तीस हजार पर मामला तै हुआ है। आठ हजार रजिस्ट्री के समय और बाकी ६ किश्त में। मैं कई वर्ष से परीशान था। इतना कोई नहीं दे रहा था।

लेविन—(उदास होकर) तो तुम ने इस जंगल को पानी के भाव बेच दिया।

अब्लास्की—कैसे?

लेविन—क्योंकि इस जंगल की हैसियत इतनी चढ़ी-बढ़ी है कि ३५०) रु० एकड़ पर इसकी जमीन उठेगी।

अब्लास्की—यह सब जबानी जमा-खर्च है। मैंने खूब समझ लिया है। जहां तक दम था, हमने खूब चेष्टा की है। तुम जानते हो कि इसमें लकड़ियां नहीं हैं।

अब्लास्की को आशा थी कि इस बात से लेविन मान जायगा कि जंगल की बिक्री ठीक मूल्य पर हुई है।

लेविन—(ताना देकर मन में) मैं शहर के लोगों की हाल जानता

हूँ। दो चार शब्द सीख लिया और बिना समझे-बूझे उसीके सहारे उछलने लगे और समझ-बैठे कि हम सब कुछ जानते हैं। (प्रगट) यह सरकारी दफ्तर नहीं है कि तुम हमें कागजों में चराते फिरोगे। जंगल और खेत के मामलों को तुम क्या समझ सकते हो। क्या तुमने पेड़ गिन डाले हैं?

अब्लास्की—(हंसकर) यह ठीक रही! भला पेड़ कैसे गिना जायगा।

लेविन—तुम नहीं कर सकते। रेबिनिन ने किया होगा। एक भी ऐसा व्यापारी नहीं होगा, जो बिना पेड़ों को गिने जंगल खरीदेगा। हां, यदि उन्हें मुफ्त में मिल जाय तो दूसरी बात है। मैंने तुम्हारा जंगल देखा है! तुम्हारा जंगल १५०) रु० एकड़पर नगद दाम में आसानी से बिक सकता है और तुम उसे ६०) एकड़पर बेच रहे हो। सो भी नगद दाम पर नहीं। इस तरह तुम उसे २० हजार तो जान बूझ कर दे रहे हो।

अब्लास्की—यदि उसमें इतना लाभ है, तो इतने मूल्य पर भी कोई खरीदार क्यों नहीं मिलता था।

लेविन—तुम क्या समझते हैं कि इसने अपने लिये खरीदा है। मैं इन सबों की रग-रग से वाकिफ हूँ। ये पक्के दलाल हैं। किसी व्यापारी को फांस रखा होगा और उसी के लिए खरीद रहा होगा।

अब्लास्की—खैर, जाने दो। तुम्हें गुस्सा आ रहा है।

लेविन—इसमें गुस्सा होने की तो कोई बात नहीं है।

इतने में दोनों मित्र घर पहुँच गये। रेबिनिन घंटों से इनकी प्रतीक्षा कर रहा था। बातें होने लगीं।

अब्लांस्की—तुम आ ही गये।

रेविनिन—रास्ता तो बड़ा ही खराब था; पर हुजूर की आज्ञा कैसे टालता।

लेविन—(अब्लास्की से) अच्छा होगा कि बड़े कमरे में बैठ कर बातचीत करो।

निदान अब्लास्की रेविनिन को लिये हुए बड़े कमरे में गया।

अब्लास्की—क्या तुम रुपया लाये हो ?

रेविनिन—रुपये की चिन्ता मत कीजिये। अभी तो मैं आपसे बातें करने आया हूँ।

अब्लास्की—अब तै क्या करना है ?

रेविनिन—दाम बहुत ज्यादा है। इतना देकर तो हमारा गला फँस जायगा। कुछ रिआयत कीजिये।

लेविन—जंगल तो तुम मुफ्त में पा गये। ये हमारे पास पहले नहीं आये, नहीं तो मैं कीमत ठीक कर देता।

रेविनिन—हुजूर कीमत कुछ अधिक मांग रहे है। मैं थोड़ी रिआयत चाहता हूँ।

लेविन—अगर बात पक्की हो गई है तो अब आनाकानी क्या। अगर पक्की नहीं हुई है तो मैं इसे खरीद लेता हूँ।

रेविनिन एक क्षण भी नहीं रुक सका। उसने जेब से तुरन्त रुपया निकाला और अब्लास्की के सामने फेंक कर कहा—"जंगल मैंने लिया। मैं दो सौ रुपये के लिये कौन माथा पिच्ची करने जाय।"

लेविन—यदि तुम्हारे स्थान पर मैं होता तो इतनी जल्दी रुपया नहीं पकड़ लेता।

अब्लास्की—मैंने वचन दे दिया था, अब क्या ?

८

किटी के समाचार से लेविन को हार्दिक पीड़ा हो रही थी। वह अपने चेहरे के भाव को छिपाना चाहता था; पर लाख यत्न करने पर भी वह प्रसन्न नहीं रह सका। किटी का विवाह अभी तक नहीं हो सका था, इस समाचार से लेविन के हृदय में अनेक तरह की भावनायें उत्पन्न होने लगीं। किटी का विवाह नहीं हुआ! किटी बीमार है। क्यों ? जिसे वह चाहती थी, उसने उसकी अवज्ञा की। क्या ही दुनिया का खेल है! संसार की यह विचित्र लीला है।

अब्लास्की के चेहरे पर आज विशेष उत्साह था। जंगल के झंझट से छुट्टी पाने से उसे एक विचित्र तरह का सन्तोष था। वह रुपये खड़खड़ाता लेविन के पास आया। लेविन उदास था। वह लेविन की उदासी दूर करने की हर तरह से चेष्टा करने लगा। बोला—"क्या आज खाना न खिलाओगे। यहां तो हम जो कुछ खाते हैं, दूसरे ही क्षण पच जाता है। भूख बनी ही रहती है। भला यह तो बतलाओ। रेबिनिन के साथ इतनी सफाई से क्यों पेश आये ?"

लेविन—हमें उसकी शकल से नफरत है। इस तरह के नीचों से हाथ मिलाना भी मैं अपमान अपना समझता हूँ।

अब्लास्की—तुम तो उदार दल वाले बनते हो और सबको एक में ... देने की व्यवस्था करते हो। क्या यही तुम्हारे विचार हैं ?

लेविन–जो लोग सबको एक में कर देना चाहते हैं, वे भले ही करें; पर मैं तो इसका नाम सुनकर ही जल जाता हूँ।

अब्लास्की–यही तुम्हारे सुधार की योजना है?

लेविन–चाहे जो हो; पर बात जो स्पष्ट थी वह कह दिया।

अब्लास्की–देखते हैं, तुम आपेसे बाहर होते चले जा रहे हो।

लेविन–होते नहीं चले जा रहे हैं, बल्कि मेरा मिजाज बिगड़ गया है। पर जानते हो क्यों? तुम्हारी बेवकूफी पर।

अब्लास्की–अब उसके लिये क्या चिन्ता करते हो? जो होना था, हो गया। मैं तो यही कहूँगा कि मुझे आशा से अधिक रकम मिली। मालूम होता है, तुम रेत्रिनिन से चिढ़े हो।

लेविन–हो सकता है। अगर मैं कुछ कहूँगा तो तुम मुझे बनाने लगोगे, पर असल बात यह है कि कुलीनवर्ग का धीरे धीरे इस प्रकार निर्धन होते जाना मुझे असह्य हो रहा है। उनकी दरिद्रता का कारण उनकी फजूलखर्ची भी नहीं है। केवल अपनी बेवकूफी में खो रहे हैं। दलालों के चक्कर में पड़कर अपना सर्वस्व गँवाते जा रहे हैं। तुम ने भी अभी वही किया है।

अब्लास्की–आखिर मैं करता क्या। जंगल में जाकर पेड़ गिनता?

लेविन–क्यों नहीं, न गिनने का ही फल है कि तुम ने अपनी सन्तति का भविष्य अन्धकारमें डाल दिया है।

अब्लास्की–फिर ऐसा काम तो मुझ से नहीं हो सकता था। यदि उसे लाभ ही नहीं होगा तो क्या उसका सिर दुख रहा है कि इस तरह का झंझट सिर पर उठावेगा। खैर हाँ जो कुछ होना था, हो गया।

लाख यत्न करने पर भी लेविन प्रसन्न नहीं हो सका, उसकी उदासीनता बढ़ती ही गई। वह अब्लास्की से कुछ पूछना चाहता था; पर न तो उसे उपयुक्तशब्द ही मिला और न बात ही उसके मुंह पर आ सकी। अब्लास्की भोजन आदि से निवृत्त होकर सोने की तैयारी कर रहा था, पर लेविन का दिमाग चक्कर ही खाता रहा।

सामने साबुन की एक बट्टी रखी थी। लेविन ने उसे उठा लिया, बोला—"कैसा सुन्दर बना है। कारीगरी कितनी सुन्दर है।"

अब्लास्की—(जँभाई लेते हुए) आज कल कारीगरी की अच्छी उन्नति हो रही है। अच्छी-अच्छी चीजें तैयार हो रही हैं।

लेविन—(साबुन रख कर एकाएक) आज कल रंस्की कहां है?

अब्लास्की—पीटर्सबर्ग में। तुम्हारे बाद ही उसने भी मास्को छोड़ा और तब से एक बार भी नहीं आया। और.........और मैं एक बात कहूँ तुमने उस समय भूल की। प्रतिवादी से डर कर भाग गये। पूरी चेष्टा नहीं की। मैंने तो तुम से पहले ही कह दिया था कि अभी मामला संदिग्ध रहेगा।

लेविन—उसे मेरे संबंध में मालूम है, या नहीं।

अब्लास्की—उस समय की बातें दूसरी थीं। रंस्की का प्रस्ताव किटी की माँ पर विचित्र पड़ा था और यही सब बखेड़े का कारण था।

लेविन का चेहरा लाल हो गया। वह अपमान फिर ताजा होकर उसे पीड़ा देने लगा।

लेविन—रंस्की मुझसे किस बात में बढ़ कर था। वंश-मर्यादा तो उसकी किसी से छिपी नहीं है। उसकी माँ ने क्या, क्या नहीं किया पिता की बेईमानी मुल्क भर में सरनाम है। उसकी हैसियत क्या

है ? क्या खेतों में काम करने से, मालगुजारी न वसूल कर उसमें से गेहूँ पैदा करने से ही हम नीच हो गये और वह कुलीन होगया ।

अब्लास्की—यह सब बातें मुझसे क्यों कह रहे हो ? मैं तो सब कुछ समझता हूँ । मैं तो अब भी यह कह सकता हूँ कि यदि मैं तुम्हारे स्थान में होता तो मैं सीधा मास्को नगर जाता और·········

लेविन—तुम जो चाहो सो समझो और करो; पर मैं ऐसा नहीं कर सकता । आह ! जिसने मुझे साफ इनकार किया उसीके पास फिर···

अब्लास्की—तुम पागल हो और पागलों की सी बातें करते हो ।

लेविन—उसकी चर्चा अब छोड़ दो । मैं उसके संबंध में अधिक नहीं कहना चाहता ।

इतनी बातचीत से लेविन का हृदय हलका हो गया । बोला—"मित्र अब्लास्की, मेरी बातों से नाराज न होना । जले-भुने हृदय की ये बातें हैं ।" इतना कहकर उस ने अब्लास्की का हाथ चूम लिया ।

९

रंस्की के जीवन के दो पहलू थे । एक पहलू से देखने से तो कुमार्गी और परस्त्रीगामी में ही उसकी गणना हो सकती थी; पर दूसरे पहलू से देखने में उसके जैसा उदार दूसरा कोई देखने में नहीं आता था । रेजिमेंट की मर्यादा का उसे बड़ा ख्याल था । रेजिमेंट के प्रत्येक अफसर और सिपाही रंस्की का बड़ा आदर करते; पर वह भी इन लोगों के लिये प्राण देता था ।

रंस्की ने धनी, सुन्दर और शिक्षित होकर भी रेजिमेंट की नौकरी

स्वीकार कर ली थी। यह कोई साधारण बात नहीं थी। यदि वह चाहता तो ऊंचे-ऊंचे ओहदे उसे मिल सकते थे; पर उसने सब पर लात मारा था, यह सब समझते थे।

अपने जीवन के पहले पहलू को रंस्की अपने साथियों से छिपा कर रखता। अपनी शराबखोरी तथा ऐयाशी का भेद वह किसी पर भी प्रगट नहीं करता था। यदि उसका कोई साथी अविचार से उसकी इन कमजोरियों की ओर अंगुली उठाता, तो वह उसे वहीं ठंढा कर देता था। इतने पर भी अन्ना की बात बहुत से लोग जान गये थे। कितने नव-जवान इसके लिये इससे जलते भी थे।

पीटर्सबर्ग की जिन महिलाओं को अन्ना के इस पतन का समाचार मिला, बड़ी प्रसन्न हुईं। अन्ना की शान-शौकत, अन्ना का घमंड उन्हें खटकता था और वे किसी न किसी भांति उसे नीचा दिखाना चाहती थीं। वह समय निकट था, जब उनकी इच्छा पूर्ण होगी। इससे बढ कर प्रसन्नता की क्या बात होगी। कुछ लोग ऐसे भी थे, जिन्हें इसका दुःख था और अफसोस करते थे।

जिस समय पहले पहल रंस्की की माँ को इस संबंध का समाचार मिला, उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। आह! मेरा लड़का इतना भाग्यवान निकला। अन्ना उस पर फिदा हो गई और अपनी मर्यादा का ख्याल न कर उसे अपना लिया। पर जिस समय उसे यह मालूम हुआ कि अन्ना के लिये उसने अपनी तरक्की छोड़ दी, उसके दुःख का ठिकाना न रहा। उसे यह भी मालूम हुआ कि बड़े बड़े सरकारी कर्मचारी उससे सख्त नाराज हैं। उसकी प्रसन्नता जाती रही। ओ हो! यह नादानी किस काम की। इसे प्रेम नहीं कह सकते। यह तो उन्माद है। इतनी बेसमझ

कोई नहीं कर सकता। रंस्की उसे मास्को छोड़ कर एकाएक चला गया था, वह अब उसे खलने लगा। उसने अपने बड़े लड़के को भेजा कि जाकर रंस्की को बुला लो।

रंस्की का बड़ा भाई रंस्की से जलता था। रंस्की की नालायकी पर उसे क्रोध था। जिन अफसरों को उसे खुश करना चाहिये था, उन्हीं को वह अपनी इस बेहूदगी से नाराज कर रहा था। यह प्रेम किस काम का। रंस्की का यह तरीका उसे जरा भी पसन्द नहीं था।

रंस्की को घोड़सवारी से बड़ा शौक था। उसने अनेक अच्छे-अच्छे घोड़े पाल रखे थे। उस साल ढालवा पहाड़ी पर घोड़दौड़ होनेवाली थी। रंस्की ने भी नाम लिखाया था और जोरों से तैयारी कर रहा था।

१०

इधर कई दिन से रंस्की को अन्ना का दर्शन नहीं मिला था। आज एकाएक वह व्याकुल हो उठा। कपड़ा पहन कर चल पड़ा। बूँदें पड़ रही थीं; पर रंस्की रुका नहीं। घर से थोड़ी दूर पर ही गाड़ी से उतरकर वह पैदल गया और उसने दरबान से पूछा—"तुम्हारे मालिक घर में हैं?"

दरबान—नहीं हुज़ूर, पर मालकिन हैं। सदर दरवाजा खुला है, इधर से ही जाइये न।

रंस्की—नहीं, मैं इधर से ही जाऊँगा।

उसने मन में सोचा—"अन्ना घर में अकेली है, एकाएक पहुँच कर उसे चकित कर दूंगा। उसे क्या मालूम कि मैं आज आऊँगा।" इस तरह

स्वीकार कर ली थी। यह कोई साधारण बात नहीं थी। यदि वह चाहता तो ऊंचे-ऊंचे ओहदे उसे मिल सकते थे; पर उसने सब पर लात मारा था, यह सब समझते थे।

अपने जीवन के पहले पहलू को रंस्की अपने साथियों से छिपा कर रखता। अपनी शराबखोरी तथा ऐयाशी का भेद वह किसी पर भी प्रगट नहीं करता था। यदि उसका कोई साथी अविचार से उसकी इन कमजोरियों की ओर अंगुली उठाता, तो वह उसे वहीं ठंढा कर देता था। इतने पर भी अन्ना की बात बहुत से लोग जान गये थे। कितने नव-जवान इसके लिये इससे जलते भी थे।

पीटर्सवर्ग की जिन महिलाओं को अन्ना के इस पतन का समाचार मिला, बड़ी प्रसन्न हुईं। अन्ना की शान-शौकत, अन्ना का घमंड, उन्हें खटकता था और वे किसी न किसी भांति उसे नीचा दिखाना चाहती थीं। वह समय निकट था, जब उनकी इच्छा पूर्ण होगी। इससे बढ कर प्रसन्नता की क्या बात होगी। कुछ लोग ऐसे भी थे, जिन्हें इसका दुःख था और अफसोस करते थे।

जिस समय पहले पहल रंस्की की माँ को इस संबंध का समाचार मिला, उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। आह! मेरा लड़का इतना भाग्यवान निकला। अन्ना उस पर फिदा हो गई और अपनी मर्यादा का ख्याल न कर उसे अपना लिया। पर जिस समय उसे यह मालूम हुआ कि अन्ना के लिये उसने अपनी तरक्की छोड़ दी, उसके दुःख का ठिकाना न रहा। उसे यह भी मालूम हुआ कि बड़े बड़े सरकारी कर्मचारी उससे सख्त नाराज हैं। उसकी प्रसन्नता जाती रही। ओ हो! यह नादानी किस काम की। इसे प्रेम नहीं कह सकते। यह तो उन्माद है। इतनी बेसमझी

कोई नहीं कर सकता। रंस्की उसे मास्को छोड़ कर एकाएक चला गया था, वह अब उसे खलने लगा। उसने अपने बड़े लड़के को भेजा कि जाकर रंस्की को बुला लो।

रंस्की का बड़ा भाई रंस्की से जलता था। रंस्की की नालायकी पर उसे क्रोध था। जिन अफसरों को उसे खुश करना चाहिये था, उन्हीं को वह अपनी इस बेहूदगी से नाराज कर रहा था। यह प्रेम किस काम का। रंस्की का यह तरीका उसे जरा भी पसन्द नहीं था।

रंस्की को घोड़सवारी से बड़ा शौक था। उसने अनेक अच्छे-अच्छे घोड़े पाल रखे थे। उस साल ढालवा पहाड़ी पर घोड़ दौड़ होनेवाली थी। रंस्की ने भी नाम लिखाया था और जोरों से तैयारी कर रहा था।

१०

इधर कई दिन से रंस्की को अन्ना का दर्शन नहीं मिला था। आज एकाएक वह व्याकुल हो उठा। कपड़ा पहन कर चल पड़ा। बूंदें पड़ रहीं थी; पर रंस्की रुका नहीं। घर से थोड़ी दूर पर ही गाड़ी से उतरकर वह पैदल गया और उसने दरवान से पूछा—"तुम्हारे मालिक घर में हैं?"

दरवान—नहीं हुजूर, पर मालकिन हैं। सदर दरवाजा खुला है, उधर से ही जाइये न।

रंस्की—नहीं, मैं इधर से ही जाऊँगा।

उसने मन में सोचा—"अन्ना घर में अकेली है, एकाएक पहुंच कर उसे चकित कर दूंगा। उसे क्या मालूम कि मैं आज आऊँगा।" इस तरह

आनन्द की तरंगों में डूबता-उतराता रंस्की आगे बढ़ा। एकाएक उसे अन्ना के लड़के का ख्याल आया।

शिरोजा इन दोनों प्रेमियों के मार्ग का कंटकथा। वह बहुधा आकर अपनी मां के पास बैठ जाता। उस समय दोनों की परीशानी का ठिकाना न रहता। उनकी मनमानी बात-चीत भी रुक जाती। साधारण जान-पहचानवालों की तरह ये बातें करने लगते। लड़के की आंखों से ज्ञात होता था कि वे लोग कोई गुप्त संबंध की बातें करते हैं और उससे छिपाते हैं।

शिरोजा की उमर केवल आठ वर्ष की थी। फिर भी रंस्की को देख-कर वह परीशान रहता। यह कौन है, मेरी मां के पास इतना क्यों आता है। मैं इसके साथ किस तरह पेश आऊं। मैं इससे बोलूं या न बोलूं।

शिरोजा को देख कर रंस्की और अन्ना की ठीक वही दशा हो जाती, जो उस नाविक की होती, जिसका जहाज रास्ते से भटक गया हो और न जाने कहां बेठिकाने जा रहा हो।

शिरोजा क़ुतुबनुमा था, जो उन्हें ठीक मार्ग बतला रहा था; पर दोनों में से एक भी उस पर ध्यान नहीं दे रहे थे।

इस समय शिरोजा घूमने गया था। वर्षा आ जाने से अन्ना ने नौकर को उसे लाने के लिये भेजा था और आप सफेद साड़ी पहने बरामदे में बैठी थी। इस समय उसका सौन्दर्य दूना हो रहा था। रंस्की पीछे खड़ा यह बहार देख रहा था। एकाएक अन्ना घूम पड़ी और रंस्की को देख कर चकित हो गई।

रंस्की—क्यों, तुम्हारी तबीयत खराब है क्या?

अन्ना—नहीं तो। मैं अच्छी तरह हूँ। इस समय तुम यहां कैसे?

रंस्की—(अन्ना का हाथ अपने हाथ में लेकर) क्षमा करना, मुझ से रहा न गया।

अन्ना—क्षमा ! इस दया के लिये क्षमा !

रंस्की—तुम्हारा चेहरा इतना सुस्त क्यों है। तुम इस वक्त अकेली बैठी क्या सोच रही थीं ?

अन्ना—(मुस्करा कर) सदा बस वही एक ही बात।

अन्ना के मुँह से सच्ची बात निकली थी। अन्ना सदा इसी चिन्ता में रहती कि इस नये पथ पर हमारा चलना कल्याणकर होगा या नाशकारी। इस समय भी वह यही सोच रही थी।

अन्ना ने घुड़दौड़ के बारे में पूछा। घुड़ दौड़ के समाचार से उस की चिन्ता बढ़ गई थी। रंस्की ने बड़ी सादगी के साथ उसे समझा दिया कि कोई डर की बात नहीं है। अन्ना की चिन्ता नहीं मिटी। उसने अपने मन में कहा—"इन्हें कुछ फिकर नहीं है और मैं इसी चिन्ता में मरी जा रही हूँ।"

रंस्की—पर तुमने यह तो नहीं बतलाया कि इस समय तुम किस चिन्ता में निमग्न थीं।

अन्ना चुप रही।

रंस्की—मालूम होता है, कुछ घटना घटी है। देखो, मुझ से न छिपाओ। तुम जानती हो कि मुझे इससे कितनी वेदना होगी।

अन्ना—क्या बतलाऊं। मुझे गर्भ रह गया है।

रंस्की का चेहरा सूख गया। उसका सिर लटक गया। वह कुछ न बोल सका।

अन्ना—(आपही आप) इसे भी चिन्ता हो गई।

पर अन्ना भूल रही थी। रंस्की की चिन्ता दूसरे प्रकार की थी। उसने देखा कि यह गुप्त संबंध अब छिपाये नहीं छिप सकता। पाप का भण्डा जल्द फूटेगा। इससे अलग हो जाने में ही कल्याण है। बोला"—अब हम लोगों को यह धोखे की टट्टी तोड़ देनी चाहिये।"

अन्ना—किस तरह?

रंस्की—अलक्ले से अलग हो जाओ और मुझ से विवाह कर लो। मैं जानता हूँ, तुम कितनी बात सह रही हो। रह-रह कर तुम्हें संसार, पति और पुत्र का ख्याल आता है।

अन्ना—पति······मैं पति को जानती ही नहीं। मेरे लिये तो वह कभी का मर गया।

रंस्की—तुम सच नहीं बोल रही हो। तुम्हारी यह बात बनावटी है।

अन्ना—वे जानते तक नहीं।

इतना कहते-कहते उसका चेहरा लाल हो गया। उसकी आंखों में शर्म के आंसू भर आये। बोली—"इनकी चर्चा से क्या लाभ।"

रंस्की—यह तो ठीक है। पर तुम इस तरह कब तक रह सकती हो।

अन्ना—तुम्हीं बतलाओ मैं क्या करूं।

रंस्की—उन से सब बातें साफ-साफ कह दो और तलाक दे दो।

अन्ना—पर इसका परिणाम क्या होगा। अलक्ले साधारण आदमी नहीं है। वह क्रोध में राक्षस हो जाता है। वह मुझे सहज में नहीं छोड़ेगा। हर तरह से बदनामी से बचने का प्रयत्न करेगा।

रंस्की—पर बिना कहे भी काम नहीं चलता। देखो; वे ही क्या कार्रवाई करते हैं।

अन्ना–तब क्या मैं निकल भागूं ?

रंस्की–यह भी बुरा नहीं है। अन्ना, मैं अपने लिये कुछ नहीं कह रहा हूँ। तुम्हारी यातना मुझ से नहीं देखी जाती।

अन्ना–ठीक है! निकल भागूं, तुम्हारी बन कर रहूँ और अपना सर्वनाश कर डालूं ?

रंस्की की समझ में नहीं आया कि अन्ना इस तरह छिपा कर क्यों रहना चाहती है। रंस्की वह यह नहीं जानता था कि शिरोजा अन्ना को प्राणों से प्यारा था और उसी के लिये अन्ना यह सब यातना सहने को तैयार थी। जिस समय अन्ना यह बात सोचती कि पति को छोड़ कर मैं शिरोजा को क्या मुंह दिखलाऊंगी, उसका हृदय पिघल जाता था। उसकी ओर देखती हुई वह बोली–"रंस्की, फिर कभी यह बात मन पर न लाना। मैं सारी यातना सह कर भी इस अवस्था में पड़ी हूँ। इसीसे समझ लो कि इस बात को जितना सहज तुम समझते हो, मैं नहीं समझती ।

रंस्की–पर निस्तार का भी तो कोई उपाय सोचना चाहिये। क्या यह बात सुनकर और तुम्हारी अवस्था देखकर मुझे शान्ति मिल सकती है।

अन्ना कुछ कहना चाहती थी। इतने में शिरोजा और दाई के आने की आहट मिली। वह उसे लेने के लिये आगे बढ़ी। रंस्की भी अवसर पाकर घर से बाहर हो गया।

११

अलक्जे और अन्ना के व्यवहार में दिखौआ कोई अन्तर नहीं आया था। अलक्जे अब आफिस के काम में ज्यादा समय देता था।

वसन्त के आरम्भ में वह जलवायु बदलने के लिये अन्यत्र चला जाया करता था। सदा की भांति इस साल भी वह आराम करने के लिये बाहर गया और जुलाई में लौट कर आया तो काम में लग गया। सदा की भांति अन्ना गर्मी में देहात चली गई; पर अलक्ले पीटर्सबर्ग में ही रहा। उस दिन के बाद उसने रंस्की के संबंध में अन्ना से कुछ नहीं कहा। पर उसी दिन से वह उदास रहा करता। उसकी दशा ठीक उस मनुष्य की तरह थी, जो आग बुझाने की चेष्टा में असफल होकर झुंझला पड़ता है और सब कुछ भस्म हो जाने के लिये छोड़ कर चला जाता है। उस ने अपने हृदय पर पत्थर रख लिया। शिरोजा से भी वह उसी रुखाई से पेश आता।

उस वर्ष आफिस का काम उसे बोझ जान पड़ने लगा, ठीक भी था। क्योंकि समय काटने के लिए अलक्ले ने अधिक भार उठा लिया था। अगर कोई अलक्ले से उसकी पत्नी का समाचार पूछता तो उसे आग सी लग जाती। वह अन्ना को अपनी स्मृति से सदा के लिये निकाल देना चाहता था।

गर्मी के दिनों में प्राय: कौंएटेस लिडिया अन्ना के नजदीक ही किसी दूसरे गांव में रहती और बराबर उससे मिला जुला करती थी। इस साल उसने अन्ना का साथ देना अस्वीकार किया और बातों-बातों में कई बार रंस्की तथा बेत्सी के संबंध की तरफ इशारा किया। इससे अलक्ले ने लिडिया से मिलना-जुलना भी कम कर दिया। उसके दिल में सदा यह बात उठा करती कि मैं धोखे में पड़ा हूँ। इससे उसकी मानसिक पीड़ा दिन पर दिन बढ़ती जाती।

इस घटना के आठ वर्ष पहले जिस सुख और शान्ति के साथ

अलक्ले ने अपना जीवन बिताया था, वह धीरे-धीरे उसे स्मरण होने लगा—"आह! एक दिन वह था, जब मैं लोगों पर हँसता हुआ कहा करता था—"किस तरह लोग अपनी पत्नी के रहते दूसरी रमणी का शरीर स्पर्श करते हैं। किसी की पत्नी अपने पति के रहते कैसे दूसरे पुरुष की ओर देखती है। इस भयानक जीवन का लोग अन्त क्यों नहीं कर देते। पर आज वही बात मेरे सिर पर घहराती है। मैं ही उसका अन्त क्यों नहीं कर देता। सब देखकर भी मैं विश्वास नहीं कर रहा हूँ। सुनकर भी अनसुनी कर देता हूँ।

बाहर से लौटकर वह केवल दो बार अपनी पत्नी से मिलने गया। पर एक बार भी रात को नहीं ठहरा।

आज घुड़दौड़ का दिन था। अकक्ले के सिरपर काम का अधिक भार था। फिर भी उसने घुड़दौड़ में जाने का निश्चय किया। सवेरे उसने अपनी पत्नी के पास जाने का निश्चय किया। उससे मिलना था और खर्च के लिये भी देना था। उसके बाद वहीं से उसने घुड़दौड़ में जाना तै किया था।

उसी समय कौण्टेस लिडिया का एक पत्र आया। चीन के कोई यात्री पीटर्सवर्ग में उतरे थे। लिडिया ने उनसे मिलने के लिये अकक्ले से प्रार्थना की थी। इसके अलावे लोग अर्जियां ले लेकर सवेरे से ही दरवाजे पर डटे थे। आफिस का कागज-पत्र देखना था। कागजों पर हस्ताक्षर करना था। रिपोट सुनना था। जमींदार के मैनेजर आकर डटे थे। उनसे भी बातचीत करनी थी, सलाह देनी थी। इतने में उसके एक पुराने परिचित मित्र डाक्टर भी आ पहुँचे। अकक्ले को विस्मय हुआ, डाक्टर ने बतलाया—"आपकी अवस्था देखकर कौण्टेश

लिडिया ने मुझे भेजा और रूस के कल्याण के लिये मैंने आपको देखना अपना कर्तव्य समझा। आपकी हालत बड़ी खराब है। आपकी यकृत बहुत बढ़ गयी है, पाचनशक्ति में फर्क आ गया है। कुछ दिन तक आपको शारीरिक श्रम अधिक और मानसिक श्रम कम करना चाहिये। सभी तरह की चिन्ता छोड़ देनी चाहिये।

लेकिन इस समय चिन्ता छोड़ देना अक्क्ले के अधिकार के बाहर उसी तरह था, जिस तरह सांस का लेना बन्द करना था।

नुस्खा लिखकर डाक्टर नीचे उतर ही रहे थे कि सीढ़ियों पर अलक्ले का मन्त्री मिला। यह डाक्टर का परम हितैषी मित्र था, दोनों साथ पढ़े थे। साहब-सलामत के बाद उसने डाक्टर से कहा—"इनकी हालत अच्छी नहीं मालूम होती। आप की क्या राय है।"

डाक्टर—सितार को ले लो और खूँटी ऐंठ कर तार को कस दो। जरा सा अँगुली से ठेस दे दो। तार दो टुकड़ा हो जायगा। पर ढीले तार पर कड़ी चोट भी कोई असर नहीं पहुंचा सकती। एक तो दफ्तर का काम ये प्राण देकर करते हैं, दूसरे किसी तरह की मानसिक चिन्ता ने इन्हें घेर लिया है। यदि सावधानी से काम न लिया जायगा तो परिणाम दुःखद होगा।

डाक्टर के बाद ही चीनी यात्री आये। उनसे बातचीत कर अलक्ले ने विदा ही किया था कि किसी प्रान्त के एक रईस के आने की सूचना मिली। अक्क्ले भी इनसे मिलना चाहता था। आवश्यक बात चीत के बाद इन्हें भी विदा किया। इसके बाद दैनिक कार्यसे छुट्टी पाकर उसने देखा कि दफ्तर के काम से नगर के कुछ लोगों से मिलकर मशविरा करना जरूरी है।

इन सब कामों से छुट्टी पाकर अलक्ले अपनी स्त्री से मिलने गया। अन्ना घुड़दौड़ में जाने के लिये शृंगार कर रही थी। गाड़ी देखते ही उसका प्राण सूख गया—"इस समय क्यों? क्या आज रात यहीं रहेंगे। तब तो अनर्थ होगा।" यही सोचती-विचारती वह नीचे उतरी।

इस घटना के बाद से अलक्ले अपनी स्त्री के पास कभी अकेला न जाता। किसी न किसी को साथ रखता। आज भी वह अपने एक दोस्त को साथ लाया था।

अन्ना–(प्रेम से हाथ में हाथ लेकर) आज यहीं रहियेगा··न! घुड़दौड़ में साथ ही चलेंगे। दुःख इतना ही है कि मैंने वेत्सी को भी बुला रखा है।

वेत्सी के नाम पर ही अलक्ले के शरीर में बिजली दौड़ गई। ताना देकर बोला–"वेत्सी से तुम्हें जुदा करनेका पाप कौन लेगा। मैं मिहल के साथ जाऊँगा।"

यही अलक्ले के साथी दोस्त का नाम था।

अन्ना–अभी तो काफी समय है, चाय पी लीजिये।

अन्ना ने नौकर को चाय तैयार करने के लिये कहकर शिरोजा को बुलाया।

अन्ना–आपकी तबीयत ठीक नहीं मालूम होती।

अलक्ले–आज किसी ने डाक्टर को मेरे पास भेज दिया था, उन्होंने मेरा एक घंटा समय खराब किया।

इतने में शिरोजा आया और पिता के पास खड़ा हो गया, शिरोजा का मुख मलीन था, आँखें शर्माई हुई थीं। अन्ना ने उसे गोद में ले लिया और प्यार किया।

इसी समय बेत्सी की गाड़ी आकर नीचे खड़ी हुई। अन्ना उस
साथ घुड़दौड़ में जाने के लिये प्रस्तुत हो गयी।

१२

घुड़दौड़ समाप्त हो गया। अन्ना अलक्ले के साथ ही घर लौटी
रास्ते में अलक्ले ने अन्ना से कहा—"मुझे विवश होकर कहना पड़ता
कि आज घुड़दौड़ में तुम्हारी चेष्टायें अनुचित थीं।"

अन्ना—किस तरह ?

इतना कह कर अन्ना ने अपना मुँह फेरा और घूर कर अलक्ले
ओर देखने लगी। उसकी आंखों में दृढ़ता थी; पर वेदना की कालि
भी स्पष्ट प्रगट थी।

अलक्ले—घुड़दौड़ में जिस समय रंस्की घोड़े से गिरा और च
तरफ से शोर-गुल उठा कि "वह मर गया-मर गया" तुम्हारी क्या अवस
हो गई। तुम रोने लगीं। तुमने इस तरह की निराशा दिखलाई, मा
तुम्हारा कोई निजी गिर कर मर गया है।

अन्ना चुप थी। उसके मुँह से एक भी शब्द नहीं निकले।

अलक्ले—मैंने तुमसे कई बार कहा कि कम से कम सब के सा
तो इस तरह का आचरण न किया करो, जिससे किसी को अँगुली उठ
का अवसर मिले। किसी समय में तुम्हारे हृदय की गति-विधि
आलोचना करता था; पर अब मुझे उस सम्बन्ध में कुछ नहीं कह
है। मैंने तुमसे कहा था कि तुम अपने हृदय को काबू में रखो,

की चंचलता को रोको। अब उसका समय नहीं रहा। आज मैं केवल तुम्हें बाहरी आचरण सम्हालने के लिये कह रहा हूँ। तुम्हारा आज का व्यवहार सर्वथा अनुचित था। इसकी नौबत फिर दोबारा नहीं आनी चाहिये।

अलक्ले की बातें अन्ना के कानों तक पहुँचीं या नहीं, इसमें सन्देह है। अन्ना सम्भावित विपत्ति पर टीका कर रही थी। रंस्की की क्या दशा हुई होगी। कुछ लोग आपस में बातें करते जा रहे थे कि–'घोड़े की पीठ टूट गई, पर सवार बेदाग बच गया।" क्या रंस्की के संबंध में ही यह बात थी। अलक्ले ने जब अपनी लम्बी-चौड़ी वक्तृता समाप्त की तो अन्ना ने बदले में केवल मुस्करा दिया। वह क्या उत्तर देती। रंस्की के ध्यान में वह इस तरह निमग्न थी कि उसने एक शब्द भी नहीं सुन या समझ पाया था। यह हँसी अलक्ले को विषवत् लगी। वह अपने मनमें कहने लगा–"यह मेरी हँसी उड़ा रही है। पहले की भांति इस बार भी मेरा भ्रम बतलाकर बात टालना चाहेगी; पर जो कुछ उसने अपनी आँखों देखा था, उसकी स्मृति से उसका हृदय फट रहा था। अन्ना के चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं, आकृति पीली पड़ गई थी। उसका चेहरा ही बताये देता था कि अब भ्रम का कोई कारण नहीं रहा। मामला स्पष्ट है।

अलक्ले–तुम मेरी हँसी उड़ा रही हो कि मैं भ्रम में हूँ। हो सकता है, इसके लिये मैं तुम से क्षमा मागता हूँ।

अन्ना–(दृढ़ता के साथ) नहीं, तुम भूल नहीं कर रहे हो। तुम्हारा अनुमान ठीक है और मैं विवश हूँ। मैं तुमसे बातें कर रही हूँ; पर मेरा ध्यान उसीमें लगा है। मैं उसकी प्रेयसी हूँ। मैं

तुमसे कोई संबंध नहीं रखना चाहती। मैं तुमसे घृणा करती हूँ।" तुम्हें जो रुचे मेरे साथ करना।

इतना कहकर वह मुँह पर हाथ देकर जोर से रोने लगी। अलक्से तस्वीर की तरह टकटकी लगाकर उसकी ओर देखता रहा। इसके बाद कोई बात न हुई। घर पहुँच कर अलक्से ने कहा—"जो कुछ तुमने किया, अच्छा किया। पर जब तक मैं अपनी मर्यादा की रक्षा का कोई उपाय न करूँ और उसकी सूचना न दे दूँ तुम्हें अपना बाहरी आचरण सम्हाल कर रखना होगा।"

उसे गाड़ी से उतार कर वह पीटर्सबर्ग चला गया। अन्ना घरपर पहुँची ही थी कि बेटली का नौकर पत्र लेकर आया। पत्र में लिखा था—"रंस्की ने लिखा है, मेरे लिये कोई चिन्ता नहीं करना। मुझे जरा सी चोट नहीं आई है। हाँ, मेरी सारी आशा पर पानी फिर गया।"

अन्ना को शान्ति मिली। उसने अपने मन में कहा—"चलो अच्छा ही हुआ कि इधर का मामला भी साफ कर दिया।"

१२

किटी के पिता-माता किटी को लेकर जलवायु परिवर्तन के लिये विदेश चले गये। जिस स्थानपर ये लोग जाकर रहे, वहाँ देश-विदेश के लोग जलवायु परिवर्तन के लिये आया करते थे। रूस, जर्मनी, इंगलैंड, फ्रांस, सभी जगह के लोग वहां आ आकर रहते थे। अनेक तरह के लोगों से मिलने का किटी को अवसर मिला; पर किटी के मन की कोई न मिली।

एक दिन रूस की एक लड़की स्टाल नाम की एक महिला के साथ आई। यह लड़की श्रीमती स्टाल की सेवा-सुश्रूषा करती थी। रोगियों से उसकी बड़ी सहानुभूति रहती थी। उसका नाम वरंका था। किटी इसे बहुत पसन्द करती और उसका भी दिल किटी की ओर खिंचता जा रहा था।

वरंका को देख कर यह कोई नहीं कह सकता था कि इस महिला की क्या अवस्था होगी। उसका चेहरा रोगी का सा था; फिर भी सौन्दर्य से खाली नहीं था। पतले शरीर पर विशाल खोपड़ी बेडौल हो गई थी। वरंका जंगल की फूल थी, जो वायु के साथ अपनी सुगंधि चारों ओर फैलाकर अब केवल टहनियों में झांक रही है।

वरंका दिन-रात रोगियों की सेवा-सुश्रूषा में लगी रहती। इसके अतिरिक्त उसे संसार में कोई काम नहीं दिखाई देता था। किटी अपने जीवन से उसकी तुलना करती तो उसे अतिशय शर्म और लज्जा आती। एक हम लोग हैं कि दिन भर इस तरह शृंगार-पटार में लगी रहती है कि कोई पुरुष की नजर हमपर पड़ जाय और एक यह है, जिसे संसार से कोई मतलब नहीं। किटी वरंका के कामों की जितनी अधिक आलोचना करती, उसका हृदय उसकी ओर उतना ही अधिक खिंचता और वह उतना ही अधिक उससे मेल करने के लिये व्याकुल हो उठती।

दिन में कई बार दोनों की मुलाकात होती। हर बार किटी के मनमें यह प्रश्न उठता—"तुम कौन हो? तुम क्या हो? तुम्हारी जो मूर्ति हमने अपने हृदय में अंकित की है, क्या तुम उसके प्रतिरूप ही हो? पर यह मत समझना कि मैं जबर्दस्ती तुम्हारा परिचय पाने की चेष्टा करूँगी। मैं हृदय से तुम्हारी उपासना करती हूँ। तुम्हें

देखकर मेरा हृदय अतिशय प्रसन्न होता है। वरंका की आंखें उत्तर में कहतीं—"यदि मुझे समय होता तो मैं तुम्हें दिखा देती कि मेरे हृदय में तुम्हारे लिये कितना प्रेम है। वरंका सदा काम में फँसी रहती। किसी न किसी बीमार की सेवा में वह सदा लगी रहती।"

किटी के पहुँचने के थोड़े ही दिन बाद वहां एक रोगी पुरुष को लिये एक रमणी आई। पुरुष का पहनावा इतना भद्दा था कि उसकी ओर कोई आँखें उठाकर नहीं देखता था; पर चाल-ढाल से वह रूस का निवासी मालूम होता था। इससे किटी का ख्याल कभी-कभी उसपर चला जाता। एक दिन किटी की मां ने उसे बतलाया कि—"यह व्यक्ति लेविन का भाई निकोले है। लेविन जितना ही अच्छा है, यह उतना ही बदमाश है। इसकी परछाईं से भी बचना चाहिये।" उसी दिन से किटी इस व्यक्ति से घृणा करने लगी और इससे सदा दूर रहती थी।

एक दिन सवेरे से ही पानी बरसाने लगा। सभी बीमार बरामदे में लाकर लिटाये गये। वरंका उनकी सेवा में लगी थी। किटी बरामदे में टहल रही थी। उसने वरंका को बार-बार आते-जाते देखा। अपनी मां से बोली—"मां! मैं इनसे बातें कर सकती हूँ?"

किटी की मां—यदि तुम्हारी इच्छा है तो मैं पहले इससे परिचय कर लूं तो तुम्हारा परिचय करा दूँगी। इसमें क्या विशेषता तुम्हें दिखलाई पड़ी। यदि तुम्हें उत्कण्ठा है तो मैं श्रीमती स्टाल से परिचय कर लेती हूँ, फिर इससे परिचय सहज ही में हो जायगा।

किटी ने देखा कि उसकी मां को इस बात का खेद था कि श्रीमती स्टाल उससे परिचय नहीं कर रही थीं। इससे उसने जोर नहीं दिया। किटी वरंका को जब कभी देखती, उसके मनमें यही भाव उठते—"इसकी

सूरत कितनी प्यारी है, इसमें क्या ही सादगी और भोलापन है ।"

इतने में उन्होंने देखा कि निकोले किसी जर्मन डाक्टर से जोर-जोर से बातें करता उधर ही चला आ रहा है। नजर बचाकर मां-बेटी वहां से जाने लगीं। उसी समय उन्हें शोर-गुल सुनाई दिया। पीछे फिरकर देखा तो निकोले और डाक्टर झगड़ रहे थे। पता लगाया तो मालूम हुआ कि निकोले डाक्टर को गालियां दे रहा था और कह रहा था—"तुम मेरी दवा ठीक तरह से नहीं कर रहे हो। तुम मुझे मार डालना चाहते हो।" उसने डाक्टर को मारने के लिये छड़ी भी तानी थी। कैसा दुष्ट है। उसी समय एक महिला ने आकर बीच-बिचौता कर झगड़ा खतम किया।

किटी—वरंका अगर न आ गई होती तो गजब हो गया होता।

आगन्तुक—उसीने तो निकोले को पकड़कर अलग किया।

किटी— मां! इसीलिये वरका से मिलने के लिये मेरा जी बहुत चाहता है।

दूसरे दिन किटी ने देखा कि वरंका निकोले की भी उसी तरह सेवा कर रही है जिस तरह वह अन्य रोगियों की करती थी।

किटी ने वरंका से परिचय पाने की फिर चर्चा चलाई। किटी की मां श्रीमती स्टाल से मिलना नहीं चाहती थी। क्योंकि उनका गर्व उन्हें सह्य नहीं था। इसलिये उसने वरंका का पता लगाया और उससे ही जाकर मिली। उसने उससे कहा—"मैं तुम्हारा परिचय पाने के लिये आई हूँ। मेरी कन्या तुमपर मुग्ध हो रही है। तुम तो मुझे जानती न होगी।" इतना कहकर किटी की मां अपना परिचय देना चाहती थी; पर वरंका ने उसे बीच में ही रोककर कहा—"मैं आपको भलीभांति

जानती हूँ। आपकी कन्या मुझे जितना चाहती है, मैं उससे अधिक उन्हें चाहती हूँ।"

किटी की मां–कल आपने जो कुछ किया, उसे देखकर मैं दंग रह गई। तुम पर बड़ी श्रद्धा हुई।

वरंका शर्मा गई। आंखें नीची करके बोली–"मुझे तो नहीं याद है कि मैंने कोई बड़ाई का काम किया था।"

किटी की मां–तुमने निकोले को भारी संकट से बचाया।

वरंका–उनके साथी ने मुझे पुकारा और मैं चली आई। उनकी बीमारी खराब है और डाक्टर से वे सन्तुष्ट नहीं हैं। मैं इस तरह के रोगियों की भी सेवा करती हूँ।

किटी की मां–बड़े उपकार का काम है। तुम तो अपनी चाची के साथ मैंटोन में रहती हो। मैं श्रीमती स्टाल को बहुत दिनों से जानती हूँ।

वरंका–श्रीमती स्टाल मेरी चाची नहीं हैं। मेरा उनसे कोई संबंध नहीं है। केवल उन्होंने मुझे पाला-पोसा है।

उपरोक्त बातें वरंका ने इतनी सरलता के साथ कहा कि किटी की मां का मन मुग्ध हो गया। उन्होंने अपने मन में कहा–"किटी यदि इस महिला से मिलने के लिये आतुर है तो आश्चर्य ही क्या?"

किटी की मां–लेविन का क्या विचार है।

वरंका–वे यहां नहीं ठहरेंगे। कल ही चले जायंगे।

इसी समय किटी भी वहां आ पहुंची। मां को वरंका से बातें करते देख उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। किटी की मां ने उसका परिचय कराया। दोनों बड़े प्रेम से मिलीं।

किटी—मैं आप से मिलने के लिये आतुर हो रही थी।

वरंका—मैं भी व्याकुल थी।

किटी—पर आपको किसी से मिलने के लिये समय कहां है। आप इस तरह काम में फंसी रहती हैं।

वरंका नहीं-नहीं, मैं इतना फंसी नहीं रहती कि लोगों से मिल-जुल न सकूं। इसी समय रूस के दो बीमार बच्चे दौड़ते हुए वरंका के पास आये और दामन पकड़ कर बोले—"आपको मां बुला रही हैं।"

वरंका अपने नवपरिचिता संगिनी को वहीं छोड़कर उन बच्चों के साथ चली गई।

१४

श्रीमती स्टाल के सम्बन्ध में अनेक तरह की किंवदन्तियाँ प्रचलित थीं। कुछ लोगों का कहना था कि इन्होंने अपने दुर्व्यवहार से अपने पति का जीवन विषम बना दिया। कुछ लोगों का कहना था कि इनका पति बड़ा ही कुचाली था। उसके आचरण से श्रीमती स्टाल तंग हो गई थीं और वही इनकी बीमारी का कारण था। निदान पति-पत्नी ने नाता तोड़ा और दोनों अलग होकर रहने लगे। थोड़े ही दिनों बाद श्रीमती स्टाल को एक लड़का हुआ। पैदा होते ही वह मर गया। लोगों ने देखा कि यदि श्रीमती स्टाल को यह मालूम हो जायगा तो वे भी पुत्रशोक में प्राण त्याग देंगी।

उसी दिन उस घर में एक दाई को लड़की भी पैदा हुई थी। निदान वही लड़की उसके लड़के के स्थान पर रख दी गई। यही लड़की वरंका

जानती हूँ। आपकी कन्या मुझे जितना चाहती हैं, मैं उससे अधिक उन्हें चाहती हूँ।"

किटी की मां-कल आपने जो कुछ किया, उसे देखकर मैं दंग रह गई। तुम पर बड़ी श्रद्धा हुई।

वरंका शर्मा गई। आंखें नीची करके बोली-"मुझे तो नहीं याद है कि मैंने कोई बड़ाई का काम किया था।"

किटी की मां-तुमने निकोले को भारी संकट से बचाया।

वरंका-उनके साथी ने मुझे पुकारा और मैं चली आई। उनकी बीमारी खराब है और डाक्टर से वे सन्तुष्ट नहीं हैं। मैं इस तरह के रोगियों की भी सेवा करती हूँ।

किटी की मां-बड़े उपकार का काम है। तुम तो अपनी चाची के साथ मेंटोन में रहती हो। मैं श्रीमती स्टाल को बहुत दिनों से जानती हूँ।

वरंका-श्रीमती स्टाल मेरी चाची नहीं हैं। मेरा उनसे कोई संबंध नहीं है। केवल उन्होंने मुझे पाला-पोसा है।

उपरोक्त बातें वरंका ने इतनी सरलता के साथ कहा कि किटी की मां का मन मुग्ध हो गया। उन्होंने अपने मन में कहा-"किटी यदि इस महिला से मिलने के लिये आतुर है तो आश्चर्य ही क्या?"

किटी की मां-लेविन का क्या विचार है।

वरंका-वे यहां नहीं ठहरेंगे। कल ही चले जायंगे।

इसी समय किटी भी वहां आ पहुंची। मां को वरंका से बातें करते देख उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। किटी की मां ने उसका परिचय कराया। दोनों बड़े प्रेम से मिलीं।

किटी—मैं आप से मिलने के लिये आतुर हो रही थी।

बरंका—मैं भी व्याकुल थी।

किटी—पर आपको किसी से मिलने के लिये समय कहां है। आप इस तरह काम में फंसी रहती हैं।

बरंका नहीं-नहीं, मैं इतना फंसी नहीं रहती कि लोगों से मिल-जुल न सकूं। इसी समय रूस के दो बीमार बच्चे दौड़ते हुए बरंका के पास आये और दामन पकड़ कर बोले—"आपको मां बुला रही हैं।"

बरंका अपने नवपरिचिता संगिनी को वहीं छोड़कर उन बच्चों के साथ चली गई।

१४

श्रीमती स्टाल के सम्बन्ध में अनेक तरह की किंवदन्तियाँ प्रचलित थीं। कुछ लोगों का कहना था कि इन्होंने अपने दुर्व्यहार से अपने पति का जीवन विषम बना दिया। कुछ लोगों का कहना था कि इनका पति बड़ा ही कुचाली था। उसके आचरण से श्रीमती स्टाल तंग हो गई थीं और वही इनकी बीमारी का कारण था। निदान पति-पत्नी ने नाता तोड़ा और दोनों अलग होकर रहने लगे। थोड़े ही दिनों बाद श्रीमती स्टाल को एक लड़का हुआ। पैदा होते ही वह मर गया। लोगों ने देखा कि यदि श्रीमती स्टाल को यह मालूम हो जायगा तो वे भी पुत्रशोक में प्राण त्याग देंगी।

उसी दिन उस घर में एक दाई को लड़की भी पैदा हुई थी। निदान वही लड़की उसके लड़के के स्थान पर रख दी गई। यही लड़की वरंका

थी। बाद को श्रीमती स्टाल को भी यह बात मालूम हो गई। पर उन्होंने वरंका का पालन-पोषण उसी तरह किया। उस समय वरंका का कोई निजी सम्बन्धी नहीं रह गया था। इधर दस वर्ष से वे लगातार बीमार रहती हैं। इसलिये अपने नगर को छोड़ कर वे बाहर घूमा करती हैं। सुनने में आया है कि उनकी दानशीलता बढ़ गई है और धर्म में भी उन्हें विशेष रुचि हो गई है; पर कुछ लोगों का कहना था कि श्रीमती स्टाल अपने सामने किसी को कुछ नहीं समझतीं और 'आपन कुशल कुशल जगमाहीं। राउर कुशल ढंग से नाहीं' का सदा जप किया करती हैं। वे किस धार्मिक सम्प्रदाय को मानती हैं, यह कोई नहीं बतला सकता था। पर इतना अवश्य था कि वे सभी सम्प्रदायों के गण्य-मान्य लोगों से परिचय रखती थीं।

वरंका सदा श्रीमती स्टाल के साथ रहती थी। जो श्रीमती स्टाल को जानते थे, वरका से स्नेह रखते थे।

किटी की मां ने वरंका के सम्बन्ध में इतना जानने के बाद उससे किटी का परिचय कराना अनुचित नहीं समझा। वह समझती थी कि यदि इस परिचय से किटी का कुछ उपकार नहीं होगा तो अपकार भी नहीं हो सकता। वरंका शिक्षिता महिला थी। अङ्गरेजी और फ्रेन्च भाषा में उसकी अच्छी गति थी।

किटी के परिचय के कई दिन बाद ही श्रीमती स्टाल ने कहला भेजा कि बीमारी के कारण मुझे अत्यन्त खेद है कि मैं आप लोगों से मिल नहीं सकी।

यह सन्देश किटी की मां के नाम था।

किटी का संबंध वरंका के साथ दिन-दिन बढ़ता गया। किटी

वरंका के नये-नये गुणों से परिचित होती गई और उस पर विशेष प्रकार से मुग्ध भी होती गई।

वरंका को गाने का अच्छा अभ्यास था। एक दिन किटी की माँ ने उसे निमंत्रण दिया। कहा-"किटी को पियानो बजाना अच्छा आता है। तुम दोनों मिलकर अच्छा गाना-बजाना करोगी।"

वरंका शाम को आई। किटी की माँ ने एक दो मित्रों को और भी निमन्त्रण दे रखा था।

कमरे में कई अपरचित व्यक्ति बैठे थे। वरंका बिना किसी संकोच के पियानो के पास गई और बजा कर गाने लगी।

गाना खूब जमा। खिड़की के सामने मैदान में काफी भीड़ इकट्ठी हो गई थी। किटी का हृदय अभिमान से भर गया। वरंका में इतना गुण भरा है! वह इतनी निपुण है!!

दूसरा गाना शुरू हुआ।

वरंका-(किटी से) यह गाना मत गाओ। कोई दूसरा सोचो।

वरंका का चेहरा परीशान था। आंखें भराई हुई थीं। किटी ने चट से पन्ना उलट दिया। पर वरंका ने तुरत सम्हल कर कहा-"नहीं नहीं वह गाना बहुत बढ़िया है वही चलने दो।"

गाना समाप्त हुआ। सब लोग चाय पीने लगे। किटी वरंका को लेकर बाग में गई और उसने पूछा-"क्या उस गाने से तुम्हें कोई पुरानी बात याद आ गई?"

वरंका ने कहा-"बैठो, मैं सब कथा सुनाती हूं-"मेरा एक व्यक्ति पर अनुराग था। मैं उसे यही गाना सुनाया करती थी। उसे भी मुझसे स्नेह था; पर उसकी माँ को यह संबंध पसन्द नहीं था। निदान उसने

दूसरी रमणी से विवाह कर लिया। वह यहीं नजदीक ही रहता है। मैं उसे कभी-कभी देखती भी हूँ। तुम समझती होगी कि मैं इस मर्ज से दूर हूँ।"

इतना कहते-कहते उसका चेहरा लाल हो गया, जिस तरह किसी दिन किटी का हुआ था।

किटी—मैं स्वप्न में भी अनुमान नहीं कर सकती थी। अगर मैं पुरुष होती तो तुम सरीखी रमणी पाकर संसार की अन्य किसी रमणी की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखती। उसे हृदय नहीं था। नहीं तो केवल अपनी मां को खुश करने के लिये वह तुम्हें कभी न छोड़ता और दुखी बनता।

वरंका—नहीं वह बड़े अच्छे आदमी हैं। उन्होंने मुझे दुःख में नहीं; बल्कि सुख में छोड़ा।

किटी—(वरंका को चूमकर) तुम्हारा हृदय कितना उदार है, कितना सरल है। यदि तुम्हारे गुण मुझमें छू भी गये होते···।

वरंका—तुम किससे कम हो?

किटी—मुझ में कौनसा गुण है। अच्छा तुमही बताओ, जिस व्यक्ति ने तुम्हारा तिरस्कार किया, उसका स्मरण कर वेदना नहीं होगी?

वरंका—उसने मेरी अवज्ञा नहीं की। वह मुझे हृदय से चाहता था पर वह मां की आज्ञा नहीं टाल सकता था।

किटी—मान लो उसकी माता की प्रेरणा न हुई होती और उसने ऐसा किया होता तब......

वरंका—तब, वह दोषी कहलाता। उस अवस्था में मैं उसका नाम तक न लेती।

किटी—पर इस अवज्ञा को कौन भूल सकता है?

वरंका—तुमने किया ही क्या है कि अवज्ञा की बात लाती हो।

किटी–अति निन्दित ।

वरंका ने अपनी गर्दन हिलाई और किटी का हाथ पकड़ कर बोली–"जिस पर तुम्हारा अनुराग नहीं था, या जो तुम्हें नहीं चाहता था, उससे तो तुमने कभी नहीं कहा होगा कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूँ।"

किटी–मैंने उससे एक शब्द भी इस सम्बन्ध में नहीं कहा था; पर वह सब बात जानता था। उसकी आंखें स्वयं कह रही थीं। क्या मैं उस चितवन को भूल सकती हूँ।

वरंका–उसमें क्या है। अब केवल प्रश्न यह है कि इस समय उसे तुम प्रेम करती हो, या नहीं?

किटी–मैं उसे घृणा करती हूँ। मैं उसे कभी भी क्षमा नहीं कर सकती।

वरंका–किस रमणी को यह विपत्ति नहीं उठानी पड़ती। यह साधारण बात है। यदि सब औरतें तुम सी हो जायं तो संसार का काम रुक जाय।

इतने में ऊपर से किटी की मां ने पुकार कर कहा–"सर्दी अधिक है। देर तक हवा में मत ठहरो।"

वरंका–जाने का समय भी हो रहा है! मुझे अभी श्रीमती वर्था के यहां जाना है। उन्होंने बुला भेजा है।

वरंका चलने के लिये तैयार हुई। किटी की मां ने कहा–"तुम अकेली कैसे जावोगी। साथ आदमी कर देती हूँ।"

वरंका–नहीं, मैं सदा इसी तरह आती-जाती रहती हूँ।

इतना कहकर उसने सबको अभिवादन किया और किटी से मिलकर चली गई।

धीरे धीरे किटी का परिचय श्रीमती स्टाल से हुआ। इस परिचय का और मैत्री का उसपर बहुत प्रभाव पड़ा। उसकी मानसिक वेदना बहुत कुछ कम हो गई। इनके संसर्ग में आकर किटी ने एक नये संसार में प्रवेश किया। यह संसार एक दम निराला था। ऐसे संसार की उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी। उसे प्रतीत होने लगा कि यहां शान्ति की सम्भावना है। किटी को आज विदित हुआ कि इन्द्रियों का सुख ही इस संसार में सब कुछ नहीं है। अध्यात्मिक जीवन भी कोई वस्तु है। इस जीवन से धर्म का घना सम्बन्ध है। पर यह धर्म भी एक निराला धर्म है। गिरजों में जाकर प्रार्थना पढ़ने से इस धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह धर्म विश्वास का धर्म नहीं है, यह धर्म चिन्तन और मनन का धर्म है। सद्विचारों को हृदय में लाना, उनका मनन करना, यही इस धर्म का गुप्त रहस्य है।

किटी को इन सबों का किसी ने कभी उपदेश नहीं किया। एक बार श्रीमती स्टाल ने किटी से केवल इतना ही कहा था—"संसार के सभी विषादों के उन्मूलन का एकमात्र कारण महाप्रभु में विश्वास और प्रेम है।" इतना ही कहकर उन्होंने अन्य प्रसंग छेड़ दिया। पर श्रीमती स्टाल की प्रत्येक गतिविधि, आचरण तथा जीवनी से किटी को कई बातें मालूम हुईं, जिनका उसे आजतक परिचय नहीं था।

श्रीमती स्टाल के सम्बन्ध में बड़ी-बड़ी कथायें प्रचलित थीं। उनका आचरण बड़ा ही उज्ज्वल है, उनके कर्तव्य बड़े ही उदार हैं। [illegible] जीवन-कथा इसी तरह की घटनाओं से भरी पड़ी है। फिर भी

उनके चरित्र से एक रहस्य की बू आरही थी। जिससे किटी परीशान थी। उसने देखा कि अपने वंश की चर्चा करते समय श्रीमती स्टाल विकट हँसी हँसा करती थीं। यह उसे ईसाईधर्म के प्रतिकूल प्रतीत होता था। एक बार एक कैथोलिक पुरोहित इनसे मिलने आया तो वह लैम्प के आड़ से उसके ऊपर हँस रही थीं। दोनों बातें साधारण थीं; पर किटी परीशान थी कि यह महिला बिना किसी रहस्य के नहीं है।

पर वरंका के प्रति किटी के हृदय में असीम श्रद्धा थी। यह अनाथ महिला बिना किसी मित्र अथवा सगे-सम्बन्धियों के, इतनी विषम यातना को ढोकर भी, इस तरह जीवन बिता रही है। इसका मुकाबला कौन कर सकता है? वरंका प्रेम की सजीव प्रतिमा थी। अपने दुःख को भूलकर दूसरों की सेवा किस तरह करनी चाहिये, वरंका जानती थी। उसीमें उसने अपना सारा दुःख भुला दिया था और सुखी थी। किटी भी यही चाहती थी।

इस नये संसार ने किटी पर अपना प्रभाव डाला। किटी उसकी तरंगों में मिलकर वह चली। वह तन-मन से उसी में निमग्न होगई। वरंका की जवानी श्रीमती स्टाल तथा उस सम्प्रदाय की अन्य महिलाओं की दिनचर्या का वृत्तान्त सुनकर किटी ने अपना कर्तव्य निर्दिष्ट कर लिया था। उसने स्थिर किया कि श्रीमती स्टाल की भतीजी की भांति वह भी दीन-दुःखियों की सेवा अंगीकार करेगी, उन्हें धर्मोपदेश देगी, उनके पास बैठकर धर्म-पुस्तकों का पाठ करेगी। वरंका को इस तरह धर्म-पुस्तक का पाठ करते किटी ने देखा था। किटी को इस पर बड़ा अनुराग हुआ। पर इसका भेद न तो किटी ने अपनी मां पर प्रगट किया और न वरंका से ही इसके सम्बन्ध में कुछ कहा।

अवसर पाकर किटी ने धीरे-धीरे अपना काम आरम्भ किया। हर काम में वह वरंका की नकल करती और उसी की तरह काम करती थी।

किटी की मां ने पहले तो यही समझा कि श्रीमती स्टाल और वरंका के आचरण का किटी पर अधिक प्रभाव पड़ा है और इसी से वह झुक सी गई है। पर धीरे-धीरे उन पर सारा भेद खुलने लगा। उन्होंने देखा कि किटी हर काम में वरंका की अनुगामिनी हो रही है। यहाँ तक कि उसका चलना-फिरना और आँख भौंह तरेरना भी उसकी तरह हो रहा है। उन्होंने यह भी देखा कि शनैः-शनैः किटी का धार्मिक विचार भी आगे बढ़ता जा रहा है।

किटी शाम को धर्म-पुस्तक लेकर बैठ जाती और पाठ करने लगती। यह किटी के लिये एकदम नई बात थी। लोगों से मिलना-जुलना उसे अरुचिकर प्रतीत होने लगा। वरंका के साथ रोगियों की सेवा-सुश्रूषा करने में ही उसे अधिक आनन्द मिलता। उन्हीं में वह दिन-रात लगी रहती। चित्रकार पेट्रोव के घरवालों से उसकी विशेष सहानुभूति थी। इन सब बातों से किटी की मां को विरोध नहीं था; पर किटी जिस तेजी के साथ उस सम्प्रदाय में घुसो जा रही थी, वह किटी की मां को पसन्द नहीं था।

एक दिन उसने किटी से कहा—बेटी, धर्म के पीछे पागल नहीं हो जाना चाहिये। लोगों के बहकावे में न आकर कुछ अपनी आंखों भी देखना चाहिये कि इसमें क्या सार है, लोगों के कथन में कितनी सचाई है।

किटी चुप रही। उसने कुछ उत्तर नहीं दिया; पर अपने मनमें कहने लगी "धर्म के विषय में क्या बहकाना हो सकता है। ईसाई धर्म

कहता है कि यदि कोई बायें गाल पर थप्पड़ मारे तो उसके सामने दाहिना गाल भी फेर दो। फिर उसमें गपोड़पना क्या हो सकता है।" पर किटी की मां इन बातों को गपोड़प नहीं समझती थी और उसे इस बात का दु:ख था कि किटी अपने हृदय की बात साफ-साफ नहीं कहती। अपने नये विचार और नये सम्प्रदाय के साथ सम्बन्ध, अपनी मां से वह छिपाती थी। यदि उसकी मां के अतिरिक्त और उसका अन्य आत्मीय होता तो वह सब बातें साफ-साफ कह दिये होती। माता की श्रद्धा और भक्ति के कारण ही उसने सारी बातें उससे छिपाई।

एक दिन बातों ही बातों में किटी की मां ने पूछा—इधर बहुत दिनों से पेट्रोव की स्त्री पलोना यहां नहीं आ रही हैं। मैंने उसे बुलाया भी। मालूम होता है कि किसी कारण वह नाराज है।

किटी–(कुछ तेज होकर) मैं कुछ नहीं कह सकती।

किटी की मां–इधर बहुत दिनों से तुम उसके यहां नहीं गईं?

किटी–कल ही हम लोग पहाड़ की यात्रा की तैयारी कर रहे हैं।

किटी की मां ने पुत्री की परीशानी देखी और उसका कारण समझने का यत्न करने लगी, उसने कहा–"अच्छी बात है, घूम फिर आओ।

उस दिन शाम को वरंका ने किटी के घर पर भोजन किया। उससे किटी को मालूम हुआ कि पट्रोव की पत्नी ने यात्रा करना स्थगित कर दी है। इस समाचार से किटी का चेहरा लाल होगया। उसकी मां से यह बात छिपी न रही।

वरंका के चले जाने पर किटी की मां ने पूछा–"किटी का पेट्रोव की पत्नी से कुछ अनबन हो गई है, न तो वह स्वयं आती है और न लड़कों को ही भेजती है?"

भर उन्हें नींद नहीं आई। डाक्टर ने उन्हें बाहर ले जाने को कहा है।

इतना कह कर वह आगे बढ़ी।

किटी के पिता—भला आज तुम्हारे सब मित्रों से मिलने का अवसर मिल गया। श्रीमती स्टाल से यदि मुलाकात होती तो देखते कि वे मुझे पहचानती हैं या नहीं।

किटी—क्या आप उन्हें जानते हैं ?

किटी के पिता—इनके पति से मेरा खूब परिचय था। इन्हें भी थोड़ा-थोड़ा जानता था।

इतने में उधर से एक रोगी आ निकला। उसकी दीन दशा देख कर किटी के पिता को बड़ी दया आई, पूछा—"यह कौन है ?"

किटी—उनका नाम पेट्रोव है। ये प्रसिद्ध चित्रकार हैं। साथ उनकी पत्नी है। उसका नाम पलोना है।

इतने में दोनों पास आ गये। किटी ने पूछा—"आप की तबीयत कैसी है ?"

पेट्रोव चकित नेत्रों से किटी के पिता की ओर देखने लगे।

किटी के पिता—मैं अपना परिचय देता हूँ। यह मेरी पुत्री है और मैं इसका पिता हूँ।

पेट्रोव ने झुक कर अभिवादन किया।

पेट्रोव—(किटी से) हम लोग कल आप की बाट जोह रहे थे।

किटी—मैं आने की तैयारी कर रही थी उसी समय वरंका ने समाचार-भेजा कि आप की पत्नी ने कहला भेजा है कि "आज आप नहीं जायँगे।"

पेट्रोव—नहीं जायँगे !—इतना कहकर उसने अपनी पत्नी को बुलाया। सामने आकर खड़ी हो गई। उसने किटी को अभिवादन किया।

पेट्रोव—क्या कल तुमने कहला भेजा था कि हम लोग आज नहीं जा रहे हैं ?

पलोना—मैंने यही समझा था।

किटी के पिता को उसकी दशा पर बड़ी दया आई। वह उस करुण दृश्य को नहीं देख सका। आगे बढ़ गया।

किटी—इनकी अवस्था बड़ी शोचनीय है। तीन-तीन लड़के हैं; पर देखभाल के लिये एक भी नौकर नहीं है।

इतने में सामने से एक पालकी आती दिखलाई दी। किटीने कहा—"उसी सवारी में श्रीमती स्टाल आ रही हैं।" किटी के पिता पालकी के पास गये और बोले—"आप तो मुझे नहीं पहचानती होंगी। मैं आप का अतिशय कृतज्ञ हूँ कि आपका मेरी पुत्री पर इतना अनुराग है।"

किटी ने देखा कि पिता को देखते ही श्रीमती स्टाल घबरा सी गई, सम्हलकर बोलीं—आपको मैं नहीं पहचानूंगी, प्रिंस अलेक्ज़ेण्डर चेरवात्स्कीको मैं भूल जाऊँगी !

किटी के पिता—आप का स्वास्थ्य अभी तक नहीं सुधरा ?

श्रीमती स्टाल—अब यह सुधर चुका। मुझे इस अवस्था में ही आनन्द मिलता है।

किटी के पिता—दस वर्ष के बाद आज आप से मुलाकात हुई है। तबसे आप में रत्ती भर भी परिवर्तन नहीं हुआ है।

श्रीमती स्टाल—ईश्वर किसी न किसी तरह दिन काटता जा रहा है। न जाने इस जीवन का क्या उद्देश्य है ?

किटी के पिता—(पुतली भांज कर) लोगों का उपकार करना।

श्रीमती स्टाल—हम लोग इस सम्बन्ध में क्या कह सकते हैं ?

कमरे में गई। वरंका ने पहले ही देखा था कि किटी के चेहरे पर आज हवाइयां उड़ रही हैं। उसने कहा—"आज तो हँसते-हँसते दम फूल गया। आप के पिता को भी खूब मजाक आता है।"

किटी चुप चाप खड़ी थी।

वरंका—अब तुमसे कब मुलाकात होगी?

किटी—मां पेट्रोव के घर मिलने जायँगी। क्या तुम वहां नहीं रहोगी?

वरंका—वे लोग जाने की तैयारियां कर रहे हैं। इस लिये मुझे उनके यहाँ जाना है।

किटी—तब तो मैं भी आऊँगी।

वरंका—तुम क्यों आओगी?

किटी—क्यों नहीं?

वरंका—कुछ नहीं, एक तो तुम्हारे पिताजी आगये हैं और दूसरे उन्हें शर्म मालूम होगी कि तुम उनका असबाब बांध रही हो।

किटी—नहीं यह बात नहीं है। तुम्हें सच सच बताना होगा कि तुम मेरा वहाँ जाना क्यों रोकती हो।

वरंका—मैंने तो यह नहीं कहा।

किटी—तुम्हें बताना ही होगा।

वरंका—(मुस्करा कर) कोई बात हो तब तो कहूं। पेट्रोव जाना चाहते थे; पर नहीं जायँगे। इसपर पलोना ने कहा कि "किटी जब तक यहाँ रहेगी, तुम्हारा पैर कैसे उठेगा।" बात भद्दी थी। पति-पत्नी में झगड़ा हो गया। इसीलिये मैं कहती हूँ कि तुम न आना।

किटी—(उत्तेजित होकर) ह

किटी के लड़कपन पर बरंका को हँसी आई; पर उसने अपने को रोक लिया। क्यों कि वह किटी का स्वभाव जानती थी।

बरंका—तुमने क्यों कहा, यह ठीक है।

किटी—मैंने दूसरों के साथ व्यर्थ मेल-जोल बढ़ाया। परिणाम यह हुआ कि मैं पति-पत्नी के कलह का कारण हुई। मैंने जो विडम्बना की उसका यह फल मिला।

बरंका—विडम्बना किस बात की।

किटी—मैं तुच्छ होकर भी लोगों की दृष्टि में अच्छी बनना चाहती थी, ईश्वर की कृपा प्राप्त करना चाहती थी। लोगों को ठगना चाहती थी। आज मुझे उसका फल मिल गया। अब मैं फिर वैसा साहस नहीं करूँगी।

बरंका कौन धोखेबाज है। तुम्हारी बातें एक दम निराली होती है, मानों......

किटी क्रोध से अन्धी हो रही थी। उसने बरंका को बीच में ही रोक कर कहा—"मैं तुम्हें कुछ नहीं कह रही हूँ। तुम पूर्णता की मूर्ति हो। पर मैं तो बुरी हूँ। यदि मुझमें अवगुण न होता तो इस तरह की बातें कभी भी पैदा न होतीं। इसलिये मैं अब किसी को धोखे में नहीं डालना चाहती। पलोना से मुझे क्या करना है। मैं अपने रास्ते पर और वे अपने रास्ते पर। मैं जो हूँ, वही रहूँगी।......फिर भी वह बात नहीं है।"

बरंका—क्या नहीं है।

किटी—सब कुछ। जो कुछ मैं करती थी, हृदय से करती थी; पर तुम लोग सिद्धान्ततः करती थीं। मैं तुमसे प्रेम करती थी। वह प्रेम अकारण था; पर तुम लोग मुझे सुधारना चाहती थीं।

तीसरा खण्ड

१

कोनिशे मानसिक शान्ति पाने के लिये मई के अन्त में लेविन के गांव में आया। ग्राम्य-जीवन उसे बहुत पसन्द था। कोनिशे के आने से लेविन को बड़ी प्रसन्नता हुई, पर कोनिशे ग्राम्य-जीवन को जिस दृष्टि से देखने लगा था, जिस तरह वह उसकी आलोचना करता था, वह लेविन को कष्टमय प्रतीत होने लगी। दोनों भाई ग्राम्य-जीवन को दो दृष्टि से देखते थे। लेविन का मत था कि ग्राम्य-जीवन ही मनुष्य जीवन का सबसे उत्तम प्रदर्शक है। बिना इसके मनुष्य का कहीं ठिकाना नहीं। कोनिशे कहता था कि शहरों के दुष्टाचार से बचने तथा कठिन परिश्रम के बाद आराम करने का ग्राम्य-जीवन सबसे उत्तम साधन है। लेविन का मत था, सबसे पहले तो गावों में काम करने का सबसे उत्तम क्षेत्र है। यह जीवन की सबसे बड़ी उपयोगिता है। कोनिशे कहता कि गांवों में

अधिक काम नहीं करना पड़ता, इसलिये ग्राम्य-जीवन सब से उत्तम है। यह सब तो था ही कोनिशे किसानों को जिस निगाह से देखता था, वह भी लेविन नहीं सह सकता था। कोनिशे किसानों से बेखटके मिलता, उनसे बातें करता और उनके प्रति सद्भाव रखता, इस तरह किसानों से मिल कर उसे बड़ा आनन्द आता और उनके सद्भाव की वह सदा प्रशंसा किया करता, पर लेविन को यह व्यवहार पसन्द नहीं था। लेविन का मत था कि खेती के काम में तो किसान हमारा बराबर का साझीदार है और इस नाते हम उसके प्रति कितना ही सद्भाव क्यों न दिखलायें, कितनी ही सहानुभूति क्यों न रखें, कितना ही प्रेम क्यों न करें, वह उनकी लापरवाही, बेकायदगी, शराबखोरी और आलस्य से तंग आ जाता और हर तरह से वाहियात समझने लगता।

अगर कोई लेविन से पूछ बैठता कि 'किसानों को तुम चाहते हो या नहीं' तो लेविन के पास कोई साफ उत्तर नहीं था। जिस तरह आज एक मनुष्य से प्रेम है और कल ही अवस्था भेद के कारण वह उससे रूठ सकता है और घृणा करने लग सकता है। ठीक उसी तरह वह किसानों को भी देखता था। हां, लेविन का हृदय उदार था, चित्त सरल था, इससे वह किसानों से प्रेम ही रखता था। इतने दिन इनके साथ रहने पर भी वह इन्हें पहचान नहीं सका था, यदि उनके संबंध में कोई पूछ बैठता तो सिवा अवाक् रह जाने के लेविन के पास कोई उत्तर नहीं था। जितना ज्ञान उसे साधारण मानव-समाज का था, उतना ही उसे किसानों का भी था और जिस प्रकार साधारण जन-समाज के संबंध में उसका मत बदला करता था, उसी तरह इन किसानों के संबंध में भी उसका मत रता था। पर कोनिशे में यह बात नहीं थी। जिस तरह

नागरिक जीवन से ग्राम्य-जीवन को वह अच्छा समझता था और पसन्द करता था, उसी तरह नगर के रहनेवालों से वह किसानों को अधिक चाहता था और प्रेम करता था। यही कारण था कि वह किसानों को इतर मनुष्यों से श्रेष्ठ समझता था। उसने कल्पना कर रखी थी कि किसान किसी अन्य सृष्टि के ही जीव हैं और जन साधारण से इनकी कोई तुलना नहीं है। इसी कारण वह उनके साथ अतिशय सहानुभूति रखता था।

कभी-कभी दोनों भाई किसानों के संबंध में बात-चीत करने लगते, उस समय कोनिशे की बात सदा बीस रहती। क्योंकि उसके भाव स्पष्ट थे और उसका मत स्थिर था। पर लेविन का मत स्थिर नहीं था। इसलिये वह कभी-कभी अपनी ही बातों को काट देता था।

कोनिशे कहा करता—"लेविन का हृदय उदार है; पर वह इतना अस्तव्यस्त रहता है कि साधारण सी साधारण बातें भी उसका मन फेर देती हैं। यही कारण है कि इसके जीवन में इतना विरोधाभास है। बड़े भाई के नाते वह कभी-कभी उसे समझाता कि सच्ची बातों का ज्ञान किस तरह पाना चाहिये; पर विवाद करने में उसे सन्तोष न होता क्योंकि उसके सामने लेविन अधिक समय तक नहीं ठहर सकता था।"

लेविन कहता था, भाई कोनिशे की बुद्धि, विदग्धता का मुकाबला करना कठिन है। ईश्वर ने उन्हें जितनी विद्या-बुद्धि दी है, उतनाही उसका हृदय भी उदार बनाया है। सार्वजनिक लाभ के कामों के करने की जितनी तत्परता उसमें मैंने देखी और कहीं विरले ही देखने में आई। पर एक दोष है। सार्वजनिक कामों को ये हृदयंगम नहीं करते, वे इस दृष्टि से नहीं देखते कि यह काम उचित है अथवा अनुचित बल्कि

मानसिक कल्पना के आधार पर ही वे प्रत्येक काम को उठाते हैं और उसे लेकर आगे बढ़ते हैं।

लेविन के असन्तोष का एक दूसरा भी कारण था। गर्मी का महीना खेतों में काम करने के लिये सबसे उत्तम होता है। लेविन सारे दिन कड़ी परिश्रम करके भी सन्तोष नहीं पाता था। यदि दिन में कुछ घण्टे और बढ़ जाया करते तो उसे परम सन्तोष होता। इधर कोनिशे आया था, आराम करने और सुस्ताने। इससे वह लिखने का काम करता नहीं था; पर पढ़ता खूब था और नये-नये सिद्धान्त खोज निकालता था। उसे एक आदमी ऐसा चाहिये था, जिसे वह अपनी बातें सुनाता और समझाता। इसलिये लेविन को काम-काज छोड़ कर उसके पास बैठे रहना पड़ता था। यदि ये बातें न होतीं तो भी लेविन अपने भाई को अकेला छोड़ कर नहीं जा सकता था। कोनिशे मैदान में घास पर लेट जाता और लेविन से बातें करता।

लेविन को इस तरह हाथ पैर मोड़कर बेकार बैठना पसन्द नहीं था। साथ ही उसे खेतों की चिन्ता लगी रहती थी कि मजूरे अपने मन का अण्ड-बण्ड काम करते होंगे। नये-नये औजार उसने बनवाया था। वह जानता था कि हलवाहे उसका ठीक तरह से प्रयोग नहीं करेंगे और खेत से लौट कर शिकायत करेंगे कि यह फजूल है, पहले के हल ही अच्छे थे।

एक दिन अगाफिया जूठा लेकर बैलों की नांद में डालने जा रही थी, संयोगवश उसका पैर फिसल पड़ा और वह गिर गई। उसे देखने के लिये एक डाक्टर आये। उसे देखने के बाद डाक्टर कोनिशे से [illegible]न करने लगा। बातों ही बातों में उसने जिला कौंसिल की

शिकायत की कि यहां सभी काम अस्त-व्यस्त हो रहे हैं और बड़ी शोचनीय दशा हो रही है। उस संबंध में कोनिशे ने डाक्टर से अनेक सवाल किये और बहुत देर तक बात-चीत होती रही।

डाक्टर के चले जाने पर कोनिशे ने लेविन से कहा—"यह डाक्टर बड़ा तेज मालूम पड़ता है। इससे बातें करने में मुझे बड़ा आनन्द आया। इसकी बातों से मालूम होता है कि जिला कौन्सिल की दशा बड़ी खराब है। मैंने तुमसे पहले भी इस सम्बन्ध में कहा है और आज भी कहता हूँ कि सभा की बैठकों में न जाना, इस तरह भागे-भागे फिरना उचित नहीं है। यदि कौन्सिल में अच्छे लोग जाना छोड़ देंगे तो उसकी दशा अवश्य खराब होगी। उसके द्वारा अवश्य ही खराब काम होंगे। सबसे कर वसूल किया जाता है और सारी रकम केवल सरकारी कर्मचारियों के वेतन में समाप्त हो जाती है। न तो एक स्कूल है, न अस्पताल है, न डाक्टर हैं और न दाइयां हैं।"

लेविन—(धीरेसे) आपसे मैंने कहा भी था कि मैंने कम चेष्टा नहीं की, पर जब देखा कि मेरा कोई वश नहीं चलता तो लाचार होकर मैंने छोड़ दिया।

कोनिशे—तुम लाचार कैसे हुए, यह मेरी समझ में नहीं आया। क्या तुम्हारा मन नहीं लगता, या तुममें योग्यता नहीं है, अथवा तुम आलसी हो। हमें तो इन तीनों में से एक बात भी नहीं दिखाई देती। फिर क्या कारण है ?

लेविन—आपका अनुमान ठीक है, न मैं आलसी हूँ, न निकम्मा हूँ और न उदासीन ही हूँ, पर प्रयत्न कर के जब देखा कि मेरा किया कुछ नहीं हो सकता, तब मैंने अलग हो जाना ही उचित समझा।

लेविन अपने भाई से बातें तो करता जाता था; पर उसका ध्यान खेत की ओर था। एकाएक उसने देखा कि कोई काली चीज सामने चली आ रही है। फासला इतना अधिक था कि वह यह नहीं निश्चय कर सका कि वह घोड़ा है अथवा घोड़े पर चढ़ा उसका गुमाश्ता।

कोनिशे-तुम कुछ नहीं कर सकते, यह क्यों ? तुमने एक बार यत्न किया, सफल नहीं हो सके और अलग हो गये। क्या तुममें आत्म-सम्मान का इतना संकीर्ण विचार है ?

लेविन—आत्म-सम्मान ! मैंने आपका अभिप्राय नहीं समझा। अगर कालेज का कोई विद्यार्थी मुझसे कभी यह कहता कि अमुक तरह का हिसाब तुम्हारी समझ में नहीं आया और अन्य लड़के समझ गये तो उस समय मेरे हृदय में आत्म-सम्मान का प्रश्न अवश्य उठता; पर यहां तो दूसरी ही बात है, जो मनुष्य इस तरह के सार्वजनिक कामों में हाथ डालना चाहता है, उसे पहले अपनी योग्यता समझ लेनी चाहिये कि वह उस काम को पूरा कर सकता है ? दूसरे यह कि यह सब काम बड़ा ही उपयोगी है।

कोनिशे—तुम्हारा विचार क्या है। क्या तुम इन्हें उपयोगी नहीं समझते ?

लेविन—सचमुच मैं इसे उपयोगी नहीं समझता। यह मेरे हृदय में धँसता ही नहीं। मैं विवश हूँ।

लेविन बातें तो करता जाता था; पर उसकी दृष्टि उसी काली वस्तु पर थी। उसने देखा कि गुमाश्ता साहब जुते हुए खेत में से किसानों को जाने के लिये कह रहे हैं। क्या मामला है ? किसान हल खोल रहे क्या सारा खेत जोत गया।

कोनिशे—तुम्हारी बातें विचित्र ढंग की हैं। या तो तुम भ्रम में हो या यों ही बक रहे हो। जिन किसानों पर तुम इतनी दया रखते हो, जिनसे तुम्हें इतनी सहानुभूति है, वे किसान किस तरह रहते हैं, उनकी रक्षा की समुचित व्यवस्था हो रही है, या नहीं? इत्यादि बातों को तुम अनुपयोगी किस तरह कह सकते हो? एक तरफ बेचारे किसान के कचूमर निकल रहे हैं, उनका हाथ बटाने वाला कोई नहीं है, दूसरी ओर उनके लड़कों की अवस्था नितान्त शोचनीय होती जारही है। इन्हें पेट भर अन्न नहीं मिलता, गन्दी कोठरियों में इन्हें रहना पड़ता है, गांव के पटवारी इनका खून चूस लेते हैं, कारिन्दा इन पर मनमाना अत्याचार करता है। तुम इनकी सहायता कर सकते हो, तुम्हारे हाथ में उपाय है, साधन है, युक्ति है; पर तुम उनके लिये कुछ नहीं कर रहे हो। क्यों? क्योंकि तुम्हारे विचार से यह सब वाहियात काम है। मेरी समझ में दो ही बातें हैं या तो तुमने इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार नहीं किया है और इसकी वास्तविकता पर सोचा नहीं हैं, अथवा तुम अपनी मान-मर्यादा, आराम और स्वार्थ का त्याग नहीं कर सकते कि इन कौंसिलों में जाकर बेचारे किसानों का कुछ उपकार कर सको।

लेविन–बंध गया। उस के बचाव का कोई उपाय न रहा। या तो वह अपने भाई की बातें सही स्वीकार कर ले या कबूल करे कि सार्व-जनिक हित के कामों में मुझे उत्साह नहीं। इससे उसे आंतरिक वेदना हुई। कड़क कर बोला–"दोनों बातें सही हैं मैं समझता हूँ कि यह सम्भव नहीं है।"

कोनिशे–क्या तुम्हारा यह कहना है कि यदि कौंसिलों द्वारा रकम की मंजूरी दे दी जाय तो अस्पताल नहीं खुल सकते।

लेविन-मैं तो इसे असम्भव ही समझता हूँ। यह जिला तीन हजार वर्ग मील में बसा है। सब के सब किसान ही हैं। सब लोगों तक दवा कहां से पहुंचाई जा सकती है और मुझे तो दवाओं में विश्वास भी नहीं है

कोनिशे-यह तुम्हारा अन्याय है। मैं हजारों उदाहरण दे सकता हूँ, जहां इसी अवस्था में प्रबन्ध हुआ है। खैर, यह बात जाने दो...... पढ़ाई की क्या अवस्था है। क्या स्कूल भी नहीं खोले जा सकते ?

लेविन-स्कूलों की आवश्यकता ही क्या है ?

कोनिशे-क्यों ? क्या शिक्षा की उपयोगिता में भी मतभेद है। यदि शिक्षा को तुम उपयोगी समझते हो तो दूसरों के लिये भी वह उतनी ही उपयोगी हो सकती है।

लेविन बुरी तरह फंस गया। बचने का उपाय न देख वह चिढ़-चिढ़ा कर बोला-"हो सकता है कि अस्पतालों और स्कूलों से लोगों को लाभ हो; पर जब मैं जानता हूँ कि न तो उन अस्पतालों में मुझे कभी जाना है और न उन स्कूलों में कभी अपने लड़कों को भेजना है तो मैं क्यों परीशानी उठाऊं। जहां तक मैं जानता हूँ, किसान भी उन स्कूलों में अपने लड़कों को नहीं भेजेंगे और न मेरी ही सम्मति होगी।"

कोनिशे को यह आशा नहीं थी कि लेविन के विचार इतने संकीर्ण होंगे। वह सन्नाटे में आ गया। थोड़ी देर ठहर कर बोला-"तुम कहते हो कि अस्पतालों की तुम्हें जरूरत नहीं; पर क्या बिना डाक्टर के अगाफिया का इलाज हो सकता था ?"

लेविन-पर डाक्टर से लाभ ही क्या हुआ। मेरी समझ में तो उसकी कलाई कभी भी दुरुस्त नहीं होगी।

कोनिशे-इस संबंध में अभी कुछ नहीं कहा जा सकता। पर शिक्षा

की उपयोगिता तो प्रत्यक्ष है। किसान जितना पढ़ा लिखा होगा, उतनाही समझदार और बुद्धिमान् होगा।

लेविन—यहां भी आप भूल कर रहे हैं। चाहे किसी से पूछिये, यही उत्तर मिलेगा कि जो किसान जितना पढ़ा लिखा होगा, वह काम करने में उतना ही वाहियात होगा।

कोनिशे को धीरे-धीरे क्रोध आ रहा था। उसे यह बात पसन्द नहीं थी कि कोई उसकी बात काटे। दूसरे एक बात हल ही नहीं कर पाता था कि दूसरी बात पैदा हो जाती थी. इससे वह और भी खिजला गया, बोला—"पर पहले तुम मानते हो न कि शिक्षा सब के लिये उपयोगी है।"

लेविन—(जल्दी से) हां, मैं यह मानता हूँ; पर दूसरे ही क्षण उसने विचार कर देखा कि जो कुछ उसने कहा है, सच नहीं है। उसने देखा कि यदि मैं स्वीकार कर लेता हूँ तो यही साबित होगा कि मैं वाहियात बहस कर रहा था, पर वह यह नहीं समझ सका कि यह किस तरह साबित होगा।

कोनिशे—यदि तुम यह स्वीकार करते हो तो क्या तुम्हारा यह धर्म नहीं है कि तुम इस आन्दोलन के साथ सहानुभूति दिखलाओ और काम करो।

लेविन-(कुछ शर्मा कर) असल बात तो यह है कि मैं इस आन्दोलन को उचित और मान्य नहीं समझता।

कोनिशे-अभी एक क्षण पहले तुम ने क्या कहा था ?

लेविन— मैं यह मानने के लिये तैयार नहीं हूँ कि इस तरह की शिक्षा से लाभ हो सकता है और इसका प्रचार सम्भव है।

कोनिशे—अर्थात् तुम जांच करना चाहते हो।

लेविन—यदि आपकी बात हम स्वीकार भी करलें तो हम व्यर्थ परी-शान होने की जरूरत नहीं समझते।

कोनिशे—किस तरह ?

लेविन—जब आपने यह प्रसंग छोड़ दिया है तो आप मुझे दार्शनिक रूप से इसे समझाइये।

कोनिशे—मेरी समझ में नहीं आता कि मनो-विज्ञान की आवश्यकता कहां पड़ती है।

कोनिशे ने यह बात इस तरह से कही मानो लेविन को मनो-विज्ञान अथवा दर्शन शास्त्र के विषय में बात करने का कोई अधिकार नहीं। लेविन को यह बात बुरी मालूम हुई।

लेविन—तब मेरी बात सुनिये। मेरे मत से हम लोग स्वार्थ से प्रेरित होकर ही कोई काम करते हैं। इन जिला कौन्सिलों में कोई भी ऐसी बात नहीं है, जिससे मेरा किसी तरह का उपकार हो। सड़कों की अवस्था जो है, आप देखते ही हैं। इससे अच्छी सड़कें हो ही नहीं सकती हमारे घोड़े खराब से खराब सड़कों पर भी आसानी से चल लेते हैं डाक्टरों और अस्पतालों से मुझे कोई लाभ नहीं हो सकता। पंचायत से भी मुझे काम नहीं। न मैं अब उसके पास जाता हूँ और तभी जाऊँगा। स्कूलों से तो लाभ के बदले मुझे हानि ही है। मैंने तो इन जिला कौन्सिलों का यही उपयोग समझा है कि प्रति एकड़ चार आना कर दो, कभी-कभी शहरों में जाकर रहो। जब सभा की बैठक होती हो, रात भर मच्छरों और खटमलों का शिकार बनो और सदस्यों की व्यर्थ की गपोड़बाजी सुनते रहो। मेरा स्वार्थ तो नहीं कि मैं इन सब फजूल कामों में अपना अमूल्य समय नष्ट करूँ।

कोनिशे- यदि यह बात है तो कृषक दासों के उद्धार के लिये यत्न किया गया, वहां भी तो स्वार्थ पर धक्का पहुँचता था ?

लेविन-वह एकदम अलग बात थी। उसमें अपना भी स्वार्थ था। कृषक दासता के जूए का बोझ हम लोगों पर भी था और हम लोग उसे तोड़ फेंकना चाहते थे। पर इन कौंसिलों में जाकर क्या करना होगा। उन नगरों की सफाई की व्यवस्था करनी होगी, जिसमें मुझे कभी नहीं रहना है। जूरी बनकर किसी निरपराध किसान पर मुकदमा चलाना होगा और इसी तरह सारा समय नष्ट करना होगा।

कोनिशे ने हाथ फटकार कर कहा-"तब तुम क्या करना चाहते हो?"

लेविन-मेरा तो केवल इतना ही कहना है कि जिन हकों से मेरे स्वार्थ का सम्बन्ध है, उनके लिये तो मैं जी-जान से यत्न कर सकता हूँ। जहां हमारे हक में धक्का पहुंचता है, मैं उसकी रक्षा के के लिये हर-तरह तैयार हूँ; पर कौंसिलों में बैठकर रुपया खर्च करने पर विचार करना अथवा किसी गरीब किसान पर अभियोग चलाना मुझे अभिप्रेत नहीं है।

कोनिशे-मान लो कि कल तुम्हारे ऊपर मुकदमा चलाया जाय तो क्या तुम फौजदारी अदालत को ही ज्यादा पसन्द करोगे ?

लेविन-मेरा विचार ही क्यों होने लगा। न मैंने किसी की हत्या की है और न करने का विचार है। असल बात यह है कि ये जिला-कौंसिलें केवल तमाशा हैं और मैं इस तमाशे में शामिल होना नहीं चाहता।

कोनिशे-इस तरह की बातों से विवाद नहीं हो सकता।

पर लेविन से इससे कोई मतलब नहीं था। वह तो किसी न किसी

तरह अपना पाया मजबूत बनाये रखना चाहता था, नहीं तो उस पर उदासीनता का कलंक लगता था। बोला—"जहां अपना स्वार्थ नहीं होगा, वहां कैसा भी उदार काम क्यों न हो, कोई व्यक्ति अधिक काल तक नहीं ठहर सकता। यह सिद्धान्त अटल है। इसमें तनिक भी हेर-फेर नहीं हो सकता।"

कोनिशे—मैं समझ गया, सिवा आलस्य के और कोई बात नहीं है। तुम्हारी ये सब बातें केवल अपने आलस्य को छिपाने के लिये हैं। पर यह भ्रम अधिक काल तक नहीं रहेगा। यह शीघ्र ही दूर होगा।

लेविन चुप था। उसने देखा कि उसे हर तरफ से हार खानी पड़ी। पर एक बात उसके दिल में जमी थी कि उसके कहने का जो अभिप्राय था, उसके भाई की समझ ही में नहीं आया। उसने बात बढ़ानी भी नहीं चाही। इससे और कुछ न कह कर वह अन्य काम में लग गया।

२

लेविन अपने भाई कोनिशे से बात तो करता जाता था, पर उसका ध्यान दूसरी ही ओर आकृष्ट था। गत वर्ष की बात है। फसल की कटाई (लवन) हो रही थी लेविन घोड़े पर चढ़ कर खेत में गया और मजूरों का काम देखने लगा। गुमाश्ता की बातों पर उसे क्रोध आ गया। क्रोध शान्त करने के लिये उसने हँसुआ उठाया और खुद भी काटने लगा।

...में उसे बड़ा आनन्द आया था। जब से कई बार उसने कटाई की।

मकान के सामने जो कुछ घास-पात उगे थे, सबको काट-पीटकर उसने साफ कर डाला था। उसने सोचा था कि इस साल खेत में मजूरों के साथ दिन-दिन भर कटाई करेंगे, बीच ही में कोनिशे साहब का आगमन हुआ। इससे लेविन सोच में पड़ गया कि मैं कटाई में शामिल होऊँ या नहीं। एक तो अपने भाई को वह तमाम दिन अकेला नहीं छोड़ देना चाहता था और दूसरे डरता था कि कहीं भाई साहब मेरी हँसी न उड़ाने लगें। पर जब वह खेत पर गया तो उसके हाथ फड़कने लने और उसने हँसुआ लेना ही तै किया। उसने अपने मन में कहा—"बिना शारीरिक श्रम के शरीर चौपट हो जायगा। शरीर बनाये रखने के लिये कटाई में शामिल होना जरूरी है। बहुत होगा भाई साहब बनावेंगे और किसान हँसेंगे।"

शाम को वह कोठी में गया और गुमाश्ते से बोला कि कल अमुक खेत में कटाई होगी। जहाँ तक मजूरे मिल सकें, लाने का यत्न करो। मेरा हँसुआ भी शान धरा कर लेते चलना। इच्छा हुई तो मैं भी कुछ काम करूँगा।

गुमाश्ता हँस कर, बोला—जैसी आज्ञा।

शाम को जलपान के समय लेविन ने कोनिशे से कहा—"यह सुहावना समय अभी कई दिन तक रहेगा। मेरा इरादा कल से कटाई आरम्भ करने का है।"

कोनिशे—खेतों में कटाई करने में मुझे बड़ा आनन्द आता है।

लेविन—मुझे भी बड़ा आनन्द आता है। कभी-कभी तो मैं भी कटाई में शामिल हो जाता हूँ और किसानों के साथ काम करता हूँ। कल भी मेरा इरादा दिन भर-कटाई करने का है।

कोनिशे का चेहरा खुश था। लेविन ने समझा कि–"यह भी इस काम को अच्छा समझते हैं।"

कोनिशे–क्या तुम दिन भर किसानों की तरह कटाई करोगे ?

लेविन–हाँ, विचार तो ऐसा ही है। क्यों कि इसमें बड़ा आनन्द आता है।

कोनिशे–इसमें तो कोई शक नहीं कि यह काम बड़े मजे का है; पर मुझे डर है कि तुम दिन भर काम कर नहीं सकोगे। थक जाओगे।

लेविन–मैंने आजमाया है। पहले कठिन मालूम होता है, पर मँज जाने पर फिर नहीं खलता।

कोनिशे–किसान लोग इसे कैसा समझते हैं ? तुम्हें देख कर ये मन ही मन हँसते होंगे कि विचित्र तरह का जमींदार मिला है।

लेविन–इस काम में मुझे इतना आनन्द मिलता है और इतना शारीरिक श्रम करना पड़ता है कि मैंने इस पर कभी विचार ही नहीं किया।

कोनिशे–पर तुम उन लोगों से साथ खाना-पीना कैसे करोगे ? वहाँ भोजन भेजना तो ठीक नहीं होगा।

लेविन–भेजने की कोई जरूरत नहीं है। भोजन के समय मैं आ जाऊँगा। दुपहरिया में जिस समय वे सुस्ताते हैं, मैं घर चला आऊँगा।

दूसरे दिन लेविन प्रातःकाल उठा। खेत में हलवाहों को समझा कर कटाई में गया तो उसने देखा कि किसानों ने कटाई आरम्भ कर दी है। वे एक पाँती काट गये हैं और दूसरी में चल रहे हैं। प्रायः चालीस किसान सभी अपनी-अपनी औकात के अनुसार काट रहे थे। कोई बैठकर

काट रहा था, कोई झुक कर काट रहा था, कोई खड़े-खड़े काट रहा था।

लेविन अपनी घोड़ी से उतरा और खेत में गया।

एक किसान—सरकार खेत तो एक दम तैयार है। घास खूब पक गई है।

लेविन ने हँसुआ उठाया और उन लोगों के साथ काटने लगा। लेविन किसानों के बराबरी में रहने के लिये जल्दी-जल्दी हँसुआ चलाता रहा। पर थोड़ी ही देर में उसे थकावट मालूम होने लगी। वह कटाई बन्द कर सुस्ताने के लिये कहना ही चाहता था कि मजूरे आप से आप रुक गये और हँसुआ तेज करने लगे। कितने ही किसान लेविन से पीछे पड़ गये थे। हँसुआ तेज कर वे लोग भी काटने लगे। लेविन बराबर किसानों से आगे रहने का यत्न करता और ध्यान से कटाई करता जाता। जब-जब उसे थकावट मालूम होती और वह रुक जाना चाहता, उसका साथी किसान आप ही आप रुक जाता। इससे लेविन की इज्जत बची जाती थी।

इस तरह एक पैंडा और काटा गया। लेविन पसीने से तर था। उसके चेहरे पर पसीने की बूंदें मोतियों की लड़ी बाँध रही थीं। पर वह खुश था। इतना काम करने के बाद उसने देख लिया कि अब वह दिन भर इनके साथ काम कर सकता है, इससे उसे विशेष आनन्द था। हाँ, उसकी पैंड में इधर-उधर घास जमी थी। इस बार उसने बड़ी सावधानी से काटने का निश्चय किया।

यह पैंड़ी लम्बी चौड़ी थी। फिर भी किसानों ने इसे जल्दी ही तै किया था, कदाचित् वे लेविन की आजमाइश करना चाहते थे। दूसरी पैंड़ी उतनी कठिन न थी, फिर भी लेविन को कठिन परिश्रम करना पड़ा। किसी न किसी तरह वह पीछे नहीं रहा।

लेविन की सारी चेष्टा इसी में थी कि वह किसी भी अवस्था में पीछे न रह जाय। इसलिये वह एकाग्र चित्तसे कटाई करता था। उसका सारा ध्यान उस समय बस हँसुये की चाल और घास पर था। वह इधर-उधर देखता तक नहीं था। रह-रह कर केवल किसानों की ओर सिर उठा कर देख लेता था।

इसी समय न जाने कहां से आसमान में बादल घेर आया और बूंदें गिरने लगीं। मन्द-मन्द समीर चल रहा था। लेविन ने विचित्र आनन्द अनुभव किया।

कटाई का काम तेजी के साथ चलता रहा। पैंड़ी के बाद पैंड़ी समाप्त होती थी और घास की ढेर खेतों में इकट्ठी दिखाई देती थी। लेविन कटाई के काम में इस तरह मग्न हो गया था कि उसे समय का भी कुछ ज्ञान नहीं रहा। आगे चल कर उसका काम और सहज हो गया। उसके हाथ आपसे आप उठने लगे और घास को जड़ से काट कर जमीन पर सुलाने लगा।

एक पैंड़ी और समाप्त हुई और लेविन आगे की पैंड़ी पर जाकर खड़ा हो गया। उसने देखा कि किसान लोग सूर्य की ओर देखकर आपस में कुछ बातें कर रहे हैं। लेविन उनका अभिप्राय नहीं समझ सका। इतने में नौकर ने कहा—"सरकार जलपान का समय हो गया है।"

लेविन ने देखा कि वास्तव में समय हो गया है, बोला—"अच्छी बात है, चलो जलपान कर लिया जाय।"

लेविन ने हँसुआ अपने नौकर को थमा दिया और घर की ओर चला। उसने देखा कि पानी जोर से बरस गया है और घास के स... का डर है। बोला—"पानी से घास सड़ जायगी।"

'एक बुड्ढा किसान—नहीं सरकार इसकी जरा भी चिन्ता न करें।
लेविन बिना कुछ कहे घोड़े पर सवार हुआ और घर गया। जलपान
र वह तुरत ही लौट आया।

कटाई आरम्भ हुई। इस बार लेविन के साथ दूसरे आदमी थे।
क बुड्ढा था और एक जवान। बुड्ढा इतनी आसानी से हँसुआ
ला रहा था, मानों उसे कुछ श्रम नहीं पड़ रहा है। लेविन पूर्ववत्
स काटता जा रहा था। उसके बगल में दूसरी तरफ युवक था।
वक का नाम मिक्षा था, जब कोई उसकी ओर ताकता, वह मुस्करा
ता। वह इतनी सफाई और परिश्रम से काट रहा था कि वह मर
ना अच्छा समझता है, बनिस्बत इसके कि कोई उसे कह दे कि तुम
क गये हो।

सूर्य अपनी प्रखर किरणों से पृथ्वी को जला रहे थे। फिर भी
टाई में लेविन को अतिशय आनन्द मिल रहा था। पसीने से उसका
ारा शरीर तर था। धूप से उसका सारा अंग जल रहा था; पर इसमें भी
से एक तरह का आनन्द ही मिलता था, उस समय ऐसा जान पड़ता
ा मानों किरणें उसकी सारी शक्ति एकत्रित कर हाथ में जमा कर रही हैं।

यह पैंड़ी भी समाप्त हुई। यहीं पर एक सोता बहता था। सबों
ं जल पीया। सोते का पानी इतना मीठा था कि लेविन चकित हो
या। जरा दम लेकर और हँसुये को तेजकर फिर काम जारी हुआ।

यह पैंडी कुछ खराब थी। जमीन सम नहीं थी। कहीं तो ऊंची थी
ौर कहीं नीची, कहीं ढूहा था और कहीं गड्ढा। लेविन को कुछ कष्ट
ुआ पर बुड्ढा उसी तरह काटता गया।

लेविन कटाई में इतना व्यस्त था कि उसे समय का कुछ भी ज्ञान

न रहा। यदि कोई उससे पूछता कि कितनी देर से काम कर रहे हो तो शायद वह यही कहता कि अभी तो आधा घंटा से अधिक नहीं हुआ होगा। पर धीरे-धीरे भोजन का समय हो रहा था। दो पैंडी औ काटी गई। इतने में भोजन का समय हो गया।

सब खाने बैठे। लेविन भी उन्हीं के साथ बैठ गया। घर जाने व उसकी इच्छा न रही।

बुड्ढा किसान—सरकार आज हम लोगों का भोजन ज़रा चखिये

लेविन ने वहीं भोजन किया। बुड्ढे से उसने उसकी गृहस्थी व हाल-चाल पूछकर; अपना बताया और उसी तरह की बातें करता रहा, जि बुड्ढा भली भांति समझ सकता हो। भोजन के बाद प्रार्थना कर सब के सब आराम करने लगे। घास की तकिया लगा कर सब लेट रहे लेविन भी उन्हीं के बीच में लेट रहा। मक्खियां चारों ओर भनभ रही थीं, सूर्य की किरणें चेहरे को झुलस रही थीं, फिर भी लेविन गया और बहुत देर तक सोता रहा। किसान सोकर उठ गये थे अ अपना-अपना हंसुआ तेज कर रहे थे।

लेविन उठ कर खेत के चारों ओर टहलने लगा। सारा दृश्य दम बदल गया। सबेरे जहां हरी-हरी घास लहलहा रही थी, वहां समय साफ मैदान के सिवा और कुछ नहीं था। घासों के बवण्डर जिस सोते का कहीं पता नहीं था, उसका शुभ्र स्वच्छ जल सूर्य किरणों के समान चमक रहा था, मानों हंस-हंस कर वह अपना बत्तीसी दिखा रहा है। लेविन का चित्त अतिशय प्रसन्न था। जिस खेत काटने के लिये साठ आदमी लगते थे, उसे आज केवल चालीस अ ों ने काट गिराया। केवल कोने का खेत रह गया है। लेविन चा

था कि यदि आज वह भी समाप्त हो जाता तो अच्छा होता। सूर्य की ओर देखा, सूर्य का तेज मन्द पड़ गया था, वे धीरे-धीरे अस्ताचल की राह ले रहे थे। लेविन ने कहा–"क्या हम लोग वह कोना भी काट लेंगे।"

बुड्ढा—देखिये सरकार, क्या होता है। कसर तो करेंगे नहीं, हां समय कम है। शाम हो रही है।

इतना कह कर उसने किसानों को उत्साहित किया और कटाई होने लगी। काम तेजी से होने लगा, मानों सब के सब बाजी लगा कर काटने बैठे हैं।

एक कोना काटकर साफ कर दिया गया। केवल थोड़ी जमीन काटने को शेष रह गई थी। किसान काटने बैठ गये थे। सूर्य की अन्तिम किरणों ने विदा ली। ओस पड़ने लगी। किसान बल भर हंसुआ चला रहे थे। बोली-आवाजी से एक दूसरे को जोश दिलाते और उत्साहित करते जाते थे।

लेविन भी उन्हीं के साथ काम कर रहा था। वह एक दम थक गया था। रात होते-होते कटाई समाप्त हुई। किसान खुशी-खुशी खेत से घर लौटे। लेविन भी उनसे विदा होकर घोड़ी पर चढ़ा और उसने घर का रास्ता लिया।

कोनिशे भोजन करके आराम कुर्सी पर लेटा अखबार और मासिक पत्र देख रहा था। इतने में पसीने से लथ-पथ लेविन ने कमरे में प्रवेश किया। उसने कहा–"आज बड़ा काम हुआ। सात खेत एक दिन में साफ किया गया।"

कोनिशे–पहले दरवाजा तो बन्द करो। सकड़ों मक्खियां आकर भनभनाने लगीं।

कोनिशे को मक्खियों से बड़ी चिढ़ थी। वह सदा अपने कमरे का दरवाजा बन्द रखता। सोने के समय मुश्किल से खिड़कियाँ खोल देता।

लेविन—कहाँ मक्खियाँ हैं! मुझे तो एक भी नहीं दिखाई देतीं। यदि दिखायेंगी तो मैं पकड़ कर मार दूँगा। आह! आज का दिन कितने आनन्द से कटा, क्या कहूँ।

कोनिशे—(आश्चर्य से) क्या तुम दिन भर काटते रहे। दिन भर के भूखे हो। भोजन भी तैयार है।

लेविन—इतनी तेज भूख तो नहीं लगी है। मुझे खाना मिल गया था। पहले नहाना चाहता हूँ।

कोनिशे—अच्छी बात है। चलो, मैं भी आता हूँ।

इतना कह कर कोनिशे ने किताब बन्द कर एक तरफ रख दिया और जाने के लिये प्रस्तुत हुआ। बोला—"जिस समय पानी बरस रहा था तुम लोग कहाँ थे?"

लेविन—पानी! केवल बूंदा-बूंदी हुई। हम लोग बराबर काटते थे।

इतना कह कर लेविन स्नान करने चला गया।

स्नान करके लेविन भोजन करने बैठ गया। भोजन की उसे जरा भी रुचि नहीं थी, फिर भी अन्न बड़ा स्वादिष्ट लगा। कोनिशे पास ही बैठ गया। बोला—"तुम्हारे नाम एक पत्र आया है! (मजदूरिन से) कोमा पत्र लेती आना और दरवाजा बन्द करती जाना।"

अब्लास्की ने लिखा था कि डाली आज कल इर्गस्को में है। वहाँ की व्यवस्था ठीक नहीं है, तुम एक दिन के लिये चले जाना और देख भालकर सब काम ठीक कर आना। तुमसे मिल कर उसे बड़ी प्रसन्नता [illegible]। वहाँ वह अकेली है, किटी वगैरह अभी यात्रा से नहीं लौटी हैं।

लेविन (पत्र पढ़ कर) मैं जरूर जाऊँगा। भाई साहब ! आप भी चलेंगे ? डाली सी समझदार और अच्छे स्वभाववाली रमणी बहुत कम देखने में आती हैं।

कोनिशे–वह स्थान भी तो यहां से नजदीक ही होगा।

लेविन–केवल पचीस मील। पर पक्की सड़क गई है। हम लोग घोड़े पर जा सकते हैं।

कोनिशे–मैं भी चलूंगा।.........मैं भी खेत पर आकर कटाई देखना चाहता था; पर गर्मी इतनी अधिक थी, धूप इतनी तेज थी कि कमरे से बाहर निकलना कठिन था। फिर भी मैं साहस कर निकला; पर जंगल से आगे न बढ़ सका। घबड़ाकर पेड़ के नीचे बैठ गया। सुस्ता कर लौट पड़ा। रास्ते में तुम्हारी मजदूरिन मिली। उससे बात-चीत को मालूम होता है किसान पसन्द नहीं करते कि तुम उनके साथ काम करो। वे कहते हैं कि यह कुलीगिरी है, भले आदमी के लिये यह काम नहीं है। भले आदमी को अपनी मर्यादा के नीचे नहीं आना चाहिये।

लेविन—हो सकता है; पर आज मुझे जो आनन्द मिला; जीवन में कभी मयस्सर नहीं था। मैं इसमें कोई आपत्ति नहीं देखता। आप का क्या मत है, मैं समझता हूँ कि यह काम ठीक है। फिर किसी को न पसन्द आये तो मुझे कोई परवा नहीं।

कोनिशे—मेरा भी यही विचार है। तुम्हें अपने काम से सन्तोष है न ?

लेविन–पूरा सन्तोष ! आज दिन भर में हम लोगों ने कितना काम किया ! जिस काम में साठ आदमी लगते थे उसे केवल चालीस

आदमियों ने कर डाला । बुड्ढा किसान बड़ा ही भला आदमी था।

कोनिशे—मैंने आज दो समस्या हल की। इसके बाद कल की बात-चीत पर गौर किया। तुम्हारा कहना किसी अंश में ठीक है। तुम्हारा कहना है कि मनुष्य को अपना स्वार्थ सब से आगे रखना चाहिये। यह ठीक है। क्यों कि इससे आदमी अधिक दिल लगा कर काम करेगा।

लेविन की समझ में कुछ न आया। वह चुप-चाप सुनता रहा। वह डरता था कि कहीं कोनिशे सवाल न कर बैठे। इससे वह उठा और कोठी की ओर चला।

कोनिशे—मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा।

लेविन ने ठंढी सांस ली।

कोनिशे—क्या बात है?

लेविन—न जाने अगाफिया के हाथ की क्या हालत है।

कोनिशे—बहुत अच्छा है।

लेविन—आप कपड़ा पहनिये। मैं उसे देख कर अभी आता हूँ। इतना कह कर वह नीचे उतर गया।

३

एक ओर तो अब्लास्की पीटर्सबर्ग में मौज उड़ा रहा था, दूसरी ओर बेचारी डाली बच्चों के साथ किफायतसारी के ख्याल से शहर [illegible] कर देहात में रहने लगी। अब्लास्की के लिये बहाना था कि

दफ्तर का काम छोड़कर पीटर्सवर्ग से बाहर कैसे जायँ। इर्गस्को में उसकी जमींदारी थी। वहीं उसने रहना निश्चय किया। लेविन के घर से यह गांव कोई २५ मील के फासले पर था। यहाँ का बँगला बहुत पुराना था, इससे चूना टपकता था। जिस समय अव्लास्की जंगल बेचने आया था, स्वयं टिककर उसने उसकी यथोचित मरम्मत कराई थी। और जहां तक उसकी समझ में आया था, बँगले को सुख से रहने लायक बना दिया था।

अव्लास्की जंगल बेचकर घर लौटा। उसने डाली से कहा कि—"हमने यथोचित मरम्मत कराकर बंगला अच्छी तरह सजा दिया है। तुम्हें वहां पूरा आराम मिलेगा। अव्लास्की लापरवाह सा रहता था। उसे घरकी चिन्ता नहीं थी। डाली को दूर देहात में रखकर उसे पूरी आजादी मिलने की धारणा थी। इसीसे वह पूरा जोर दे रहा था। डाली भी देहात में जाकर रहना चाहती थी। एक तो गरमी में पिटर्सवर्ग की जल-वायु लड़कों के अनुकूल नहीं थी, दूसरे गृहस्थी के लम्बे चौड़े खर्च से वह तंग आ गयी थी, तीसरे किटी यात्रा से लौटकर उसके साथ देहात में रहना चाहती थी।

लड़कपन में वह देहात में रह आई थी। उसका मत था कि किफायतसारी और आराम के अतिरिक्त शहरकी गन्दगी आदि से भी बचने की यहां अच्छी सुविधा रहती है। चीजें सभी सस्ती मिलती हैं, लड़के, खुश रहते हैं; पर इस समय उसे सब बातें प्रतिकूल मालूम होने लगीं।

उसके पहुंचने के दूसरे ही दिन मूसलधार पानी बरसा। बौछार से बरामदा भींग गया। बिछौना हटा कर दूसरे कमरे में ले जाना पड़ा, रसोइयाँ बनानेवाली का पता नहीं था। गायें नौ थीं; पर इतना भी

दूध नहीं होता था कि लड़कों को काफी हो। सवारी का कोई ठिकाना नहीं था। एक घोड़ा चोटइल था और दूसरा तनगता था। नहाने की भी सुविधा नहीं थी। नदी का घाट चौपायों की खुर की मार से खराब हो रहा था। चहारदीवारी टूट गई थी। उसमें से गायें आ जाया करती थीं। इससे बगीचे में घूमना भी कठिन था। धोती सुखाने के लिये डारा तक नहीं बांधा गया था।

डाली घबड़ा गई, उसकी आंखों में आंसू आ गये। बड़ी कठिनाई से उसने अपने को सम्हाला। गुमाश्ता निरा भोंदू था। बोला-"क्या किया जाय। यहां के किसान बड़े दुष्ट हैं।" इतना कह कर वह चुप रहा।

मेरिया किलिमोना डाली की दासी थी। डाली के कुटुम्ब से उसे सहज स्नेह था। उसने डाली को समझा-बुझाकर धीरज दिया। वह सब ठीक-ठाक करने लगी। आस-पास की कई स्त्रियों से उसने दोस्ती कर ली थी। गुमाश्ता की स्त्री भी उसकी संगिनी हो गई थी। इन सब से उसे बड़ी मदद मिली। डाली की बहुत कुछ असुविधा दूर हो गई। सप्ताह भर में सब बातें ठीक हो गईं। जो छतें पानी से टूट फूट गई थीं, उनकी मरम्मत हो गई, रसोई घर तैयार किया गया, दूध का बन्दोबस्त हुआ।

इस तरह डाली का दिन अब देहात में मजे में कटने लगा। उसे किसी बात का कष्ट नहीं रहा। लड़के आनन्द से खेलते-कूदते और धूम मचाते। सबों का चित्त प्रसन्न था। डाली को बड़ा सन्तोष था।

डाली ने सब कैफियत अब्लास्की के पास लिख भेजा था कि तुम्हारी लापरवाही और असावधानी से हमें बड़ी तकलीफ हो रही है। पर [illegible]स्की ने इस पत्र का उत्तर देर में दिया। उसने लिखा था—"मुझे

खेद है कि सब काम मेरे कहने के मुताबिक गुमाश्ता ने नहीं करवाया, इस समय आफिस का भार अधिक है। फुरसत मिलते ही मैं आजाऊँगा।" पर कई महीने तक अव्लास्की वहां नहीं गया। डाली अकेली रही।

डाली के धार्मिक विचार बड़े ही स्वतन्त्र थे। वह अपनी मां तथा बहिन के साथ बड़ी निर्भीकता के साथ अपने विचारों को प्रगट करती थी। उन लोगों को उसकी बातों से कभी-कभी विस्मय भी होता था। प्रचलित ईसाई साम्प्रदायिक विश्वास की परवा न कर, वह जीव के पुनर्जन्म में विश्वास करती थी। पर कुटुम्ब के साथ वह धर्म का पालन करने में कड़ी कट्टर थी। प्रायः सालभर से लड़के प्रभु ईसा मसीह की पुण्यतिथि मनाने नहीं गये थे। इससे वह चिन्तित थी। इसलिये अवसर मिलते ही वह उन्हें लेकर रविवार को गिरजा घर में गई।

लड़कों को लेकर डाली गिरजा घर पहुंची। गिरजे का बड़ा प्रांगण देहात के लोगों से भरा था। डाली अपने बच्चों को लेकर एक ओर खड़ी हो गई। उसका फूल सा चेहरा चमक रहा था। पूजा समाप्त कर डाली बच्चों को लेकर घर लौटी। घोड़ा गाड़ी लेकर आसानी से चली आई। रास्ते में कोई घटना नहीं हुई।

किसान की स्त्रियां उसके पास आतीं थीं। वह उनके सुख-दुःख की कहानी सुनती और सुनाती। इस तरह वह उन लोगों के साथ बैठकर घंटों बातें किया करती थी।

एक दिन डाली अपने लड़कों को स्नान करा के दरिया से लौट रही थी। सामने से एक गाड़ी आती दिखाई दी। कोचवान ने कहा—"कोई शरीफ आदमी आ रहा है।"

डाली ने खिड़की से मुंह निकाला। देखा गाड़ी से उतरकर लेविन

उसकी तरफ आ रहा हैं। डाली को खुशी का ठिकाना न रहा। एक तो वह यों ही लेविन से प्रसन्न रहती, दूसरे इस समय। डाली से चार आंखें होते ही लेविन को वह पुरानी बात याद आ गई। एक बार लेविन ने डाली से शादी करने का सुखस्वप्न देखा था। बोला-"इस समय तो आप ऐसी मालूम हो रही हैं, मानों भेड़ के पीछे मेमने चल रहे हैं।"

डाली-(आगे हाथ बढ़ाकर) आपसे मिलकर मुझे अतिशय खुशी हुई।

लेविन-मुझ से मिल कर खुशी तो हुई-तो हुई; पर मुझे सूचित नहीं किया। आज अब्लास्की का पत्र आया तब मालूम हुआ कि तुम यहां हो। मेरे भाई साहब भी आजकल मेरे ही साथ हैं।

डाली-(विस्मय से) क्या उन्होंने तुम्हें पत्र लिखा ?

लेविन-हां, उसने लिखा है कि "आप आजकल यहीं हैं और मैं वहां जाकर आपकी यथोचित सहायता करूं।" इतना कहते-कहते उसका चेहरा घबड़ा गया। वह टहल-टहलकर नीबू के पेड़ की पत्तियां तोड़ने लगा। कहने को तो वह कह गया; पर उसे तुरत ही यह ख्याल हुआ कि एक बेगानेके मुंह से मदद की बात सुनकर कहीं डाली को दुःख न हो। यही उसकी घबड़ाहट का कारण था।

डाली को यह पसन्द नहीं था कि उसका पति गृहस्थी का भार दूसरों पर लाद दे और अपनी जान बचाता फिरे। लेविन के चेहरे से वह उसके दिलकी बात ताड़गई। डाली का अनुराग और अधिक होगया।

लेविन-यहां आपको कष्ट तो जरूर होता होगा। क्योंकि शहर की सुविधायें यहां देहातों में कहाँ मिल सकती हैं। यदि मेरे लायक कोई ... तो बिना किसी संकोच के कहियेगा।

डाली—यहाँ मुझे बड़ा सुख है। पहले तो कई दिन तक कुछ असु-
विधा रही; पर मेरी दाई इतनी चतुर है कि उसने सहज में सब ठीक
कर लिया।

डाली की दाई वहीं खड़ी उनकी बातें सुन रही थी। अपने
प्रसंग की बातें सुनकर हंस पड़ी और लेविन की ओर लक्ष्य करके बोली-
"आप बैठियेगा नहीं।"

लेविन—नहीं, मुझे टहलने में विशेष आनन्द आता है। (लड़कों
से) हमारे साथ कौन-कौन घुड़-दौड़ खेलेगा।

बच्चे लेविन से अधिक परिचित नहीं थे; पर उसे देखकर उन्हें
संकोच और हिचकिचाहट नहीं आई। लेविन में यह विशेष गुण
था। जैसा समाज वह देखता, उसी तरह का वह हो जाता। लड़कों के
साथ वह एकदम बच्चा और अबोध बन जाता। इसीसे लड़के भी
उससे निःसंकोच हिल-मिल जाते। तीनों लड़के उछल पड़े। छोटी बच्ची
को उसने कन्धे पर बैठा लिया और लड़कों के साथ दौड़ने लगा।

इस तरह लड़कों के साथ कुछ समय खेल-कूद में बिताकर भोजन
की तैयारी हुई। भोजन के बाद डाली एकांत में बैठ कर लेविन के साथ
बातें करने लगी। बोली—"आपको मालूम ही होगा कि किटी भी यहीं
आ रही है, और गर्मी भर यहीं रहेगी।"

किटी का नाम सुनते ही लेविन का चेहरा लाल हो गया। बात
बदलते हुए बोला—"तब तो आपको दो गायों की जरूरत पड़ेगी। यदि
आज्ञा हो तो मैं भेज दूं।"

डाली—हमारे यहां इस समय काफी दूध होता है। कष्ट करने की
कोई जरूरत नहीं है।

लेविन—मैं आपकी गायों को एक बार देखना चाहता हूँ। उन्हें चारा क्या दिया जाता है? दूध का कमबेश होना चारे पर निर्भर है।

इसके बाद लेविनने गो पालन के विषय में डाली से अनेक बातें कहीं। उसने फिर बतलाया कि गाय एक तरह की मशीन है, जिसे चारा खिलाकर मनमाना दूध दुहा जा सकता है।

लेविन डाली से गायों की बातें करता था; पर उसकी बार-बार यही इच्छा होती थी कि डाली किटी का कुछ समाचार कहे। साथ ही उसे भय था, सुनने से भी डरता था, कि कहीं शान्ति का बांध टूट न जाय और वही अशान्ति फिर आ घेरे।

डाली—(उदासीन भाव से) पर मेरे यहां यह सब साध्य नहीं। इतना बखेड़ा कौन उठावे।

४

डाली किटी के सम्बन्ध में बातें करने के लिये अधीर हो रही थी। इसी कारण उसने लेविन को उदासीनता के साथ उत्तर दिया, जिससे लेविन और कुछ न कह सके और उसे अपना प्रसङ्ग छेड़ने का अवसर मिले। हुआ भी वही। डाली को निरुत्साह देखकर लेविन चुप रह गया। अवसर पाकर डाली बोली—"किटी ने मुझे लिखा है, बहन! मुझे अब एकान्त वास और शान्ति सबसे अधिक पसन्द है।"

लेविन—(घबराहट के साथ) अब उनकी तबीयत कैसी है?

डाली—बड़ों की कृपा से वह फिर अच्छी हो गई। मेरी समझ में ... में कुछ नहीं हुआ था।

लेविन—इससे बढ़ कर खुशी की क्या बात हो सकती है।

इतना कह कर लेविन सुस्त हो गया और डाली की ओर देखने लगा।

डाली—मैं आप से एक बात पूछना चाहती हूँ। आशा है आप ठीक २ उत्तर देंगे। आप किटी से नाराज क्यों हैं ?

लेविन—किसने कहा कि मैं नाराज हूँ। नहीं, कदापि नहीं।

डाली—आप जरूर नाराज हैं, नहीं तो क्या कारण था कि जब आप मास्को गये थे तो न उससे मिले और न मुझसे।

लेविन—आपका हृदय अतिशय उदार है, फिर भी मेरे लिये आपके हृदय में दया का लेश नहीं है। क्या आपको सारी घटना विदित नहीं......

कहते-कहते लेविन का गला भर आया। रोयें खड़े हो गये।

डाली—कौनसी बात ?

लेविन—मैंने विवाह के लिये आग्रह किया था और किटी ने उसे स्वीकार नहीं किया।

लेविन के चेहरे का भाव बदल गया। दया का स्थान क्रोध ने लिया और दयनीयता के स्थान पर अभिमान आ बैठा।

डाली—पर आपने यह किस तरह मान लिया कि मुझे यह बात मालूम है।

लेविन—इसे कौन नहीं जानता। चारों ओर शोहरत है।

डाली—मेरा विश्वास मानिये, आप भ्रम में हैं। मुझे इस सम्बन्ध में कुछ नहीं मालूम; पर ढंग से मैं ताड़ गई थी कि कुछ ऐसी ही बात है। मैं उसकी दीन दशा देख कर समझ गई थी कि इस तरह की कोई घटना हुई है, जिसका उसे पछतावा है और वही पछतावा उसके हृदय को जला रहा है। पर जब वह मुझे नहीं बतला रही है तो किसी

को नहीं बतलावेगी। लेविन मैंने इसका अनुमान ही नहीं किया था कि आपके और उसके बीच में ऐसी बातें हुई हैं। यह कब की बात है?

लेविन–पिछली वार जब मैं उनके घर गया था।

डाली–आप मुझे क्षमा करेंगे। केवल अभिमान के कारण आपने यह यातना भोगी।

लेविन–हो सकता है; लेकिन......

डाली–(रोककर) पर वह वेचारी......अबोध लड़की......मुझे उसके लिये हृदय से खेद है।......अब सब बातें समझ में आईं।

लेविन जाने के लिये उठ खड़ा हुआ; पर डाली ने रोककर कहा–"थोड़ी देर और ठहरिये। इतनी जल्दी न कीजिये।"

लेविन बैठ गया, बोला–"कृपा कर इस प्रसंग ! की चर्चा अब न कीजिये।"

लेविन के हृदय में हलचल मच गई। जिस आशा को असम्भव न समझ कर उसने इतने दिनों से दबा रखा था, वह फिर जग उठी।

डाली की आंखों में आंसू भर आये। उसने कहा–"अगर आप मुझे प्रिय न होते, अगर मैं आपको जानती न होती......मैं आपके हृदय को अच्छी तरह पहचानती हूँ।"

इससे आगे वह न बोल सकी। लेविन के हृदय की हलचल बढ़ती गई।

डाली–(सम्हल कर) मैं सब समझ गई। आप नहीं समझ सकते आप पुरुष हैं। आप लोग अपने हृदय के भाव स्पष्ट कर देते हैं। आप का प्रेम छिपा नहीं रह सकता; पर हम स्त्रियों की क्या अवस्था है एक तो स्वभावत: शर्मीली होती हैं, दूसरे पुरुषों को दूर से देखते

हैं और अपने हृदय के भाव को सहज में प्रगट नहीं कर सकतीं।

लेविन–पर हृदय तो अपनी बात आप ही कह देता है।

डाली–मैं आपकी बात मानती हूँ; पर पुरुषों की अवस्था पर एक बार विचार कीजिये और फिर स्त्रियों की अवस्था से उसकी तुलना करके देखिये, सब बात आप ही स्पष्ट हो जायगी।

लेविन को उस दिन की बात याद आ गई। उसने कहा–"अब उन बातों से क्या? जो होना था, हो गया।"

डाली–नहीं, आप अभी तक भ्रम में हैं। देखिये, उस अवस्था और इस अवस्था में घोर अन्तर हो गया है। सब बातें बदल गई हैं। मेरी उसी समय आप पर तबीयत थी और ईश्वर मेरी आशा अवश्य सफल करेगा।

लेविन को किटी का उत्तर स्मरण हो आया'......यह नहीं हो सकता'....'उसने स्पष्टशब्दों में कहा था। उसने डाली से कहा–"आपका मुझ पर बड़ा अनुग्रह है। पर आप भूलकर रही हैं। मुझमें अभिमान है और वही अभिमान आज भी बाधा देकर मेरे रास्ते में खड़ा है।"

डाली–मुझे केवल एक बात कहनी है। आप जानते ही हैं कि किटी मेरी बहन है और उस पर मेरा कितना अनुराग है। इन सब बातों का ख्याल कर मैं दृढ़तापूर्वक आप से कह सकती हूँ कि उस समय की बातों का कोई मतलब नहीं है।

लेविन–मैं कुछ नहीं कह सकता; पर आपकी बातों से मुझे मार्मिक चोट पहुँच रही है। समझ लीजिये कि आपका प्यारा बच्चा मर गया। वह सदा के लिये चला गया। कोई इष्टमित्र आपके पास आते हैं और लड़के का गुन गानकर कहते हैं कि अगर जीता रहता

तो माता-पिता को कितना सुख देता। आपको कितना दुःख उनकी बातों से हो सकता है। ठीक वही हालत मेरी समझ लीजिये।

डाली—आप व्यर्थ की बातें कहते हैं। जितना मैं सोचती हूँ, सब बातें मुझे उतनी ही स्पष्ट होती जा रही है।......तो क्या किटी के यहां आने पर आप हमलोगों से मिलने भी नहीं आवेंगे?

लेविन—नहीं, मैं नहीं आऊंगा। मुझे उससे मिलने में कोई परहेज नहीं; पर अपनी सूरत दिखाकर मैं उसका जी नहीं दुखाना चाहता।

डाली—आपकी बातों का मैं क्या उत्तर दूं। आप सब बातें इस तरह भूल जाइये, मानों इस प्रसंग की चर्चा ही नहीं चली थी।

लेविन बहुत देर तक डाली के साथ रहा; पर उसकी सारी प्रसन्नता न जाने कहां चली गई थी।

चाय-पानी के बाद लेविन ने जाने की इच्छा प्रगट की। डाली ने प्रसन्नचित्त से उसे विदा किया।

५

लेविन के इलाके के नजदीक ही लेविन की बहिन का इलाका था। इस इलाके की आमदनी का प्रधान ज़रिया सूखी घास थी। किसान लोग २०) एकड़ पर घास का ठीका ले लिया करते थे। थोड़े दिन से उस इलाके की देख-भाल और इन्तजाम का भार लेविन पर पड़ा। उसने जाकर देखा तो मालूम हुआ कि किसान सस्ते दर पर खेत ले लेते हैं। ।। उन्होंने २०) से २५) कर दिया। इस पर किसी किसान ने

खेत लेना स्वीकार नहीं किया। लेविन ने ठीके पर कटाई कराना आरम्भ कर दिया।

जुलाई का महीना था। कटाई आरम्भ ही होनेवाली थी। इसी समय गांव का मुखिया लेविन के पास सूचना देने आया और उसने बतलाया कि घास काट ली गई और पटवारी के सामने घास बांट दी गई। मालिक को ग्यारह गांज मिले हैं। लेविन को सन्देह हुआ। इसलिये वह स्वयं इलाके पर गया।

इलाके पर जाकर लेविन ने एक बुड्ढे आदमी से मुलाकात की और उससे सारा दास्तान पूछा। उसने जो कुछ उत्तर दिया उससे लेविन को निश्चय हो गया कि बटवारे में जरूर बेईमानी की गई है। निदान लेविन गांजों के पास गया। देखा कि घास बहुत ही कम है। उसने तौलाना चाहा। घास कम निकली। लेविन बिगड़ खड़ा हुआ—"बिना मेरी आज्ञा के बटवारा हुआ है, इसलिये मैं स्वीकार नहीं कर सकता।" देर तक बहस होती रही। किसी न किसी तरह समझौता हुआ। किसानों ने क्षतिपूर्ति की।

शाम हो गई थी। सूर्य भगवान् अपनी अन्तिम किरणें समेट रहे थे दूसरी ओर आक्रमण करने के लिये उत्सुक निशा देवी बाट जोह रही थीं। इसी समय गांव से नारियों का झुण्ड कंधे पर मटकी लिये नदी की ओर आता दिखाई दिया। उनकी सरल प्रकृति, भोला-भाला चेहरा देख कर लेविन का चित्त अतिशय प्रसन्न हुआ।

लेविन एक तरफ तो यह अनुपम सौन्दर्य की छटा देख कर मनको मुग्ध कर रहा था। दूसरी ओर किसान लोग घास की गांठें बांध-बांध कर गाड़ियों पर लाद रहे थे। रमणियां आईं और चली गईं। लेविन

ने घास की ओर दृष्टि फेरी, देखा प्रायः सभी गट्ठे बंध गये हैं।

लेविन अपनी जगह से उठा और घोड़े पर सवार होकर गांव की ओर चला। न जाने क्या क्या सोचता विचारता, वह सड़कसे चला जा रहा था कि उसे गांव में घोड़ों के टाप की आवाज सुनाई दी। लेविन चौंक पड़ा। फिर कर देखा तो चार घोड़ेकी एक गाड़ी आती दिखाई दी।

एक बार देखकर लेविन आगे बढ़ा; पर न जाने क्यों उसकी आंखें बार-बार गाड़ी की ओर खिंचने लगीं और वह घूम-घूम कर गाड़ी की ओर देखने लगा। धीरे-धीरे गाड़ी उसके नजदीक आ पहुँची। अब गाड़ी के भीतर के लोग साफ दिखाई देने लगे। लेविन ने देखा—"एक वृद्धा रमणी गाड़ी में बैठी ऊँघ रही है और उसीके बगल में एक नवोढ़ा युवती हाथ में टोपी लिये, गाड़ी से सिर निकाले खेतों का दृश्य देखती चली जा रही है। सामने या अगल-बगल में क्या हो रहा है, इसकी उसे चिन्ता नहीं थी।"

इतने में उस युवती की निगाह लेविन पर पड़ी। उसने लेविन को पहचान लिया। मारे खुशी के उसका चेहरा खिल उठा।

लेविन ने अपने मनमें कहा—"मैं भूल नहीं कर सकता। ईश्वर ने अपनी सृष्टि में ऐसी रसीली आँखें और किसी को नहीं दी हैं। संसार में बस वही एक है, जो लेविन को खींच सकती है। किटी! किटी! तुम मेरी आखों को धोखा नहीं दे सकतीं।" उसे डाली की बातें याद आ गईं। यात्रा से लौटकर अपने बहिन के पास जा रही है। इस दर्शन ने लेविन के हृदय को पिघला दिया। उसकी सारी दृढ़ता चली गई, सब मन्सूबे काफूर हो गये। उसने आज किसानों की भोली-भाली लड़कियों को देखकर मन में स्थिर किया था—"इन्हीं में से एक से विवाह [illegible]न। जीवन चैन से काटूंगा। आज ही उस पर तुषार पड़ा। क्य

किसान की लड़की के साथ मुझे सुख मिलेगा। नहीं! कदापि नहीं! मेरे सुख और मेरी आशा का चिराग वहीं उस गाड़ी में है, वही मेरे हृदय की बल्लियों को हरा-भरा करेगी, उन्हें पल्लवित और पुष्पित करेगी। जिसने मुझे इतने दिनों तक जलाया है, वही मुझे ठंठा भी करेगी।

किटी ने अपना सिर बाहर से खींच लिया। लेविन की ओर देखने का उसे साहस ही नहीं हुआ। गाड़ी चली गई। धीरे धीरे घोड़ों के खुरसे उड़ने वाली धूल भी आंख से ओट हो गई। सुदूर गांव से कुत्तों के भूंकने की आवाज आती रही। लेविन ने समझा गाड़ी गांव में पहुँच गई। लेविन ने चारों ओर आंखें दौड़ाईं, देखा, वही जमीन, वही खेत, वही घास, वही सड़क और वही लेविन अकेले घोड़े पर चला जा रहा है। विचित्र दृश्य परिवर्तन था।

उसने आकाश की ओर देखा। अभी वह अनेक तरह की कल्पनायें कर जी बहला रहा था। पर अब वह आकाश भी शून्यवत् प्रतीत होने लगा। आकाश में भी विचित्र परिवर्तन हो गया था। मेघ मण्डली आकर उन स्थानों में विराज रही थी, जहाँ लेविन ने अपना कल्पनाक्षेत्र कायम किया था। दूसरी ओर आसमान साफ था। उसने लम्बी सांस ली और कहा—"चाहे उस सादगी के जीवन में कितना ही आनन्द क्यों न हो, पर मैं उतना नीचे नहीं उतर सकता। ···मेरी प्रियतमा···मेरा अनुराग अभी जरा भी शिथिल नहीं हुआ है।"

६

अलक्से में एक भारी दुर्बलता थी। उसे किसी का रोना बर्दाश्त

नहीं था। चाहे वह कितना भी कड़ा अपने हृदय को क्यों न रखता हो, किसी स्त्री या बालक के दो बूँद आंसू, उसे ढीला कर देने के लिये काफी थे। जो लोग उसे हृदय शून्य और नीतिपरायण कहते थे वे भी उसकी इस कमजोरी को स्वीकार करते थे। अलक्ले के सभी प्रधान कर्मचारी इससे अवगत थे। जब कभी स्त्रियां दरखास्त लेकर आतीं तो निम्न कर्मचारी उन्हें पहले ही से डांट-डपट देते कि उनके सामने रोना मत, नहीं तो खफा होकर वे अर्जी फाड़कर फेंक देंगे।

घुड़दौड़ से लौटते समय अन्ना ने उसके सामने सारी घटना खोल कर रख दी थी और साथ ही मुंह छिपाकर रोने भी लगी थी। अलक्ले उस समय निरुत्तर था। वह जानता था कि मेरा इस समय का कुछ कहना बेकार होगा। उसकी खामोशी में अन्ना ने मृत्यु की भयंकर कठोरता का अनुभव किया था।

घर पहुंच कर उसने अन्ना को गाड़ी से उतारा और बिदा होते समय उसने केवल इतना कहा था—"मैं अपना निर्णय कल लिख भेजूंगा।"

अलक्ले का हृदय पहले ही से शंकित था, आज अन्ना की बात ने फैसला कर दिया। उसके हृदय में कड़ी वेदना उठी। साथ ही अन्ना के आंसू का स्मरण कर दया भी आने लगी। इन दोनों के युगपत संयोग से अलक्ले व्याकुल हो उठा। पर गाड़ी में जिस समय वह अकेला चला, उसका क्रोध और दया दोनों न जाने कहां गायब हो गये और उसे बड़ी शान्ति मिली।

उस समय अलक्ले की अवस्था ठीक उस आदमी की सी थी, जो कई दिन से दांत के दर्द से बुरी तरह तंग था और आज एकाएक उस दांत के निकल जाने से उसकी सारी वेदना जाती रही। उसका शरीर

हलका हो गया और वह सोचने लगा–"चलो अच्छा ही हुआ, एक दांत तो जरूर गया; पर विरक्ति से तो पिण्ड छूटा। हर वक्त दांत को लिये बैठे रहते थे। अब उसकी चिन्ता तो गई।" अलक्शे आजतक चिन्ता और सन्देह की आग से बुरी तरह जल रहा था। आज उस की शंका जाती रही। उसने यह कहकर अपनी चिन्ता को भी दूर किया कि अब संसार में अन्ना की फिकर छूटी।"

ओह! इसे इज्जत, मर्यादा, धर्म और प्रेम का जरा भी ख्याल नहीं था। इतनी बेवफा निकली! मेरा अनुमान ठीक था। मैंने अपने को इतने दिनों तक व्यर्थ ठगा। जीवन की व्यतीत घटनाओं पर, दृष्टिपात करने लगा तो उसे अन्ना के चरित्र में बेवफाई के सिवाय और कुछ नहीं दिखाई दिया। जो होगया होगया। उसकी चिन्ता क्या। मेरा इसमें रत्ती भर दोष नहीं है, इसलिये मुझे पश्चात्ताप भी नहीं है। अब मैं उसकी फिकर क्यों करूं। उससे मुझे क्या संबन्ध।

अलक्शे के सामने इस समय केवल एक प्रश्न रह गया था–"कौन सी युक्ति लगाकर मैं इस कीचड़ से बेदाग निकल जाऊं और अपना जीवन पूर्ववत् बिताऊं। इस कायशा औरत ने पाप किया। इसके लिये मुझे दुःखी होने की क्या जरूरत। हां, मुझे कोई ऐसी युक्ति निकालनी चाहिये, जिससे मेरी मर्यादा पर धब्बा न लगे। (कुछ सोचकर) मैं उपाय ढूंढ़ भी निकालूंगा। इतिहास के पन्ने भरे हैं, जहां इन रमणियों ने अपने पति के साथ दगा किया है। उन लोगों ने जिन उपायों से अपने मान की रक्षा की और इस कीचड़ को धोया, मैं भी उन्हीं में से एक का अवलम्बन करूंगा।"

तो क्या मैं उससे द्वन्द्व युद्ध करूं। किसानों ने इस तरह के अव-

मान का बदला लेने के लिये ऐसा ही किया है; पर इससे क्या लाभ होगा। मान लिया कि "मैंने उसे मार डाला। पर इससे तो हमारी समस्या हल नहीं हो सकती। यह प्रश्न तो ज्यों-का-त्यों पड़ा रह जायगा कि 'अन्ना से किस तरह अलग होना।' यदि मैं ही मारा गया तब? तब तो और अनर्थ हुआ। एक निरपराध की हत्या! इसके अलावा मेरे संगी-साथी कब इस बात को स्वीकार करेंगे। रूस की प्रजा मेरे जीवन का मूल्य जानती है, वह मुझे कभी भी लड़ने न देगी। तो फिर इससे सिवा बदनामी फैलने के और लाभ नहीं। इसलिये द्वंद्व की चर्चा ही व्यर्थ है। इस झगड़े में पड़ने से मुझे लाभ ही क्या है। मैं तो अपनी मर्यादा की रक्षा चाहती हूँ। क्योंकि मेरे सार्वजनिक जीवन के लिये यह यह अत्यन्त आवश्यक है।"

"तब क्या तलाक दे दूं।" तलाक के जितने उदाहरण उसे याद थे वह सोचता गया। उसे एक भी ऐसा उदाहरण न मिला, जिसमें पति ने पत्नी की बेवफाई से हैरान होकर तलाक दिया हो। उसने देखा कि "इस तलाक के लिये उसे अनेक तरह के सबूत पेश करने होंगे। जिससे उसकी मान-मर्यादा पर भीषण धक्का लगेगा। इससे अच्छा तो उसे ज्यों-का-त्यों रहने देना है।"

इससे तो मेरे शत्रुओं को अवसर मिल जायगा और समाज में वे मेरी निन्दा करते फिरेंगे। इसलिये तलाक में भी मेरा अभिप्राय सिद्ध होता नहीं दिखाई देता। और इसका परिणाम क्या होगा। अन्ना रंस्की से जा मिलेगी और उसके साथ चैन करेगी। उसका पतन पूरा हो जायगा; पर मैं यही नहीं चाहता।

[illegible] व्याकुल हो गया। थोड़ी देर के लिये वह शान्त रहा, फिर

सोचने लगा, हां, एक बात हो सकती है। मैं अन्ना से अलग होकर रहूँ; पर इससे कोई फल नहीं निकलेगा। इस हालत में भी वह रंस्की के साथ आनन्द करेगी और अपना बचा-बचाया पतन पूरा कर डालेगी।"

अन्ना के शब्दों ने उसके हृदय की आशंका दूर कर दी थी और साथ ही साथ उसकी वेदना भी मिट गई थी; पर इस समय उसके हृदय में एक दूसरी बात उठ रही थी और उससे वह परीशान था। उसे अपने किये का दण्ड मिलना चाहिये और साथ ही उसके मनोरथ भी नहीं पूर्ण होने चाहिये। अलक्से इस भाव को अपने हृदय से दूर करना चाहता था; पर उसके हृदय की तह में यह भाव जमा था कि उसने मेरी शान्ति का नाश किया है, उसे इसका फल अवश्य चखाना होगा।

एक-एक करके उसने सभी उपायों पर विचार किया; पर किसी से उसके अभीष्ट की सिद्धि होते नहीं दिखाई दी। निदान उसने तै किया कि उसे अपने पास ही रखे और ऐसा कोई भाव न दिखावे, जिससे यह प्रगट हो कि कोई असाधारण घटना घटी है। साथ ही रंस्की के साथ उसका संबंध तोड़ने का यत्न करें और उसे दण्ड दें। ठीक है। मैं उसे यही लिख दूंगा कि मैंने यही निश्चय किया है "कि मेरा और तुम्हारा संबंध ज्यों का त्यों बना रहे, इस घटना का किसी को पता न लगे और तुम रंस्की से संबंध तोड़ दो। इसके अतिरिक्त मुझे कोई उपाय नहीं सूझता, जिससे मेरी और तुम्हारी मर्यादा की रक्षा हो। इससे मेरा धर्म भी निबहता है। इस उपाय से मैं अपनी बेवफा धर्मपत्नी को पश्चात्ताप करने और सुधरने का एक अवसर दे रहा हूँ। काम कठिन है; पर मैं अपना कुछ समय इसके सुधार में लगाने का यत्न करूँगा।"

अलक्से जानता था कि अन्ना के ऊपर धर्म का कोई असर नहीं

पड़ सकता और न उसने अन्ना के सुधार की इस प्रकार की कल्पना ही की थी; पर जिस समय उसने अपना निर्णय किया तो उसे पूर्ण सन्तोष हुआ। उसकी आत्मा को शान्ति मिली। उसने कहा—"वह प्रेम, वह भाव, अब नहीं हो सकता, फिर भी हमारा संबंध उसी तरह क्यों नहीं बना रह सकता। धीरे-धीरे सब बातें ठीक हो जायगी। हां, उसे वह सुख नहीं मिल सकता; पर इसके लिये मैं लाचार हूँ।"

७

इस तरह कल्पनाओं का पुल बांधता अलक्से घर पहुँचा। गाड़ी से उतर कर वह सीधे बैठक में गया और दरवाजा बन्द करके लिखने बैठ गया। उसने दरबान से कह दिया कि—"इस समय हम किसी से मिलना नहीं चाहते।"

कलम हाथ में लेकर अलक्से एक मिनट तक सोचता रहा। इसके बाद उसने अन्ना को निम्नलिखित पत्र लिखा—

"कल की बात के बाद मैंने तुमसे कहा था कि मैं अपना निर्णय कर बतलाऊँगा। मैंने सभी बातों पर विचार किया और मैं इस निर्णय पर पहुँचा। ईश्वर ने हमें-तुम्हें जिस रज्जू में बांधा है, उसे हम इस कारण नहीं तोड़ डालना चाहते। यद्यपि तुम्हारा चरित्र कलंकमय है और दोषी है। इसलिये हमलोग जिस तरह पहले थे, उसी तरह अब भी रहेंगे। एक के दोष के कारण कुटुम्ब का नाश नहीं किया जा सकता। यह अवस्था [illegible] के लिये आवश्यक है। जहां तक हम समझ सके हैं तुम

अपने किये पर पछतावा है। हमें पूरी आशा है कि बीती घटनाओं को भुलाकर तुम इस दोषको दूर करने का यत्न करोगी। यदि तुम इसके अनुसार नहीं चलना चाहती तो तुम समझ सकती हो कि तुम्हारी और तुम्हारे पुत्र की क्या दशा होगी? पत्र में इससे अधिक लिखना मैं उचित नहीं समझता। मिलने पर बातचीत करके मैं सब बातें समझा दूंगा। गर्मी की ऋतु भी खतम हो चली है। इससे जहाँ तक हो सके तुम जल्द पीटर्सबर्ग लौट आओ। यदि मंगल के पहले ही आजावो तो बड़ा उत्तम है। आशा है तुम बिना किसी सोच विचार के तुरंत चली आवोगी।

पुनश्च—राह खर्च के लिये आवश्यक द्रव्य भी इस पत्र के साथ ही भेज रहा हूँ।

—अलक्ले"

अलक्ले ने पत्र को बार-बार पढ़ा। एक भी कड़ा या भावशून्य शब्द उसने नहीं लिखा था। उसने आशाओं का पुल बांध दिया था। एक बार फिर पढ़कर उसने पत्र को मोड़ डाला और लिफाफा बन्द करके नौकर के हवाले किया और कहा "कि कल ही यह पत्र अन्ना के पास पहुंच जाना चाहिये।"

इस काम से छुट्टी पाकर उसने चाय पी और किताब लेकर आराम कुर्सी पर बैठ गया। उसी के ठीक सामने अन्ना की एक सुन्दर तस्वीर टँगी थी। अलक्ले ने तस्वीर की ओर गौर से देखा। उसकी काली-काली पुतलियां टकटकी लगाये उसकी ओर ताक रही थीं। सिर पर का जूड़ा विचित्र शोभा देरहा था। चित्रकार की कलम चातुरी का जितना वर्णन किया जाय, थोड़ा था। किस खुशी के साथ उसके अंग। प्रत्यंग

को बैठाया कि कहते नहीं बनता था। पर इस समय अलक्ले के हृदय में तारीफ की कल्पना कहां। उसका चेहरा विकृत हो गया और वह बुद-बुदाने लगा। उसने फौरन अपनी आंखें तस्वीर से हटा लीं और पुस्तक में ध्यान लगाया। उसने पढ़ने की लाख चेष्टा की; पर उसका ध्यान बराबर उखड़ता ही गया। सामने किताब खुली पड़ी थी; पर मन जाने किस भूमि में विचरण करता था। उसे इस समय अन्ना की फिकर नहीं थी। उसका ध्यान इस समय सरकारी कार्रवाइयों की ओर आकृष्ट था और उसी की कल्पना उसके मनमें उठ रही थी। वह सोचने लगा कि मैंने अपने शत्रुओं को चिन्तित करने के लिये तथा सरकार की सहायता करने के लिये जितना अधिक परिश्रम किय है, वह बहुत ही अधिक है। वह अपनी जगह से उठा और पेंसि निकाल कर उसी सम्बन्ध में नोट करने लगा। समस्या इस प्रकार थी- अलक्ले में एक विशेष गुण यह था कि वह बहुत लिखा-पढ़ी नहीं पसन करता था। सब बातों की स्वयं देख-रेख करता था। मामलों की जांच करना और जबानी पूछ-ताछ कर लेना उसे बहुत पसन्द था।

दूसरी जून को एक सरकारी कमीशन बैठा था। इस कमीशन ऊपर जारस्की प्रान्त के आबपाशी की व्यवस्था की जाँच का भार था यह अलक्ले के विभाग में था। अलक्ले को यह एक अच्छा उदाहर मिल गया, जिसके द्वारा वह दिखला सकता था कि इस तरह के कमी शन की नियुक्ति का फल केवल व्यर्थ का खर्च और जबानी सुधा होता है; इनसे कोई लाभ नहीं होता। अलक्ले को मालूम था कि इ प्रान्त की आबपाशी के लिये उसके पूर्ववर्ती के पहले ही से व्यवस्था है और हजारों रुपये प्रति वर्ष व्यर्थ व्यय किये जा रहे हैं, पर इस

कोई लाभ होते नहीं दिखाई देता। कार्य का भार लेते ही अलक्ले की दृष्टि इस ओर आकृष्ट हुई थी और उसी समय उसने इस काम को अपने हाथ में लेना चाहा था। पर आरम्भ में उसने कठिनाइयों के भय से हाथ न डाला। इसके बाद उसके ऊपर अन्य अनेक काम आ गये और आवपाशी विभाग उसको लक्ष्य से हट गया सा जान पड़ने लगा। अन्त में किसी विरोधी विभाग ने इस प्रश्न को उठाया। अलक्ले को यह अपमानजनक प्रतीत हुआ। क्योंकि ऐसे सैकड़ों विभाग थे, जहां इसी तरह की व्यवस्था थी और फालतू खर्च था। पर कोई इस तरह की खोद-खाद नहीं करता; पर जब उस पर आक्रमण हुआ तो उसने साहस के साथ सामना किया और एक विशेष कमीशन की नियुक्ति की शिफारिस की जो जरस्को प्रान्त की आवपाशी की नये सिर से जांच करती। उसने आदिम निवासियों की अवस्था की जांच के लिये भी एक कमीशन बैठाना चाहा। यह प्रश्न दूसरी जून के कमीशन में न जाने किस प्रकार आ गया था। अलक्ले ने इस पर विशेष जोर दिया था कि "आदिमजातियों की अवस्था इतनी खराब होती जा रही है। इस प्रश्न पर तुरत विचार होना चाहिये। क्षणिक विलम्ब भी इसके हृदय में घातक होगा।" भिन्न भिन्न विभागों का इस प्रश्न पर मतभेद था। जो विभाग अलक्ले का विरोधी था, उसका मत था कि "आदिम निवासियों की दशा सन्तोषजनक है। और जो सुधार किया जा रहा है, उससे उनकी समृद्धि पर अवश्य ही धक्का पहुंचेगा। यदि कोई शिकायत है तो इसका कारण अलक्ले का विभाग है। क्यों कि इनका विभाग कानून के अनुसार नहीं चल रहा है।"

अलक्ले अब इन बातों पर तुला था, "एक ऐसे कमीशन की नियु

हो जो स्थान-स्थान पर जाकर आदिम निवासियों की अवस्था भी जांच करे। दूसरे यदि इस जांच से यह प्रगट हो कि आदिम निवासियों की अवस्था वास्तव में वैसी ही है, जैसा कि कमेटी के कागज-पत्रों से प्रगट होता है तो उनकी इस दुरवस्था की जांच प्रत्येक अवस्थाओं के अनुसार पृथक्-पृथक् होनी चाहिये। तीसरे प्रतियोगी विभाग से दस वर्ष की कैफियत मांगी जानी चाहिये कि उसने जान-बूझ कर आदिम निवासियों की असली अवस्था छिपा क्यों रखी। और चौथे प्रतियोगी विभाग से कैफियत तलब की जाय कि उसने विगत वर्षों की रिपोर्टों को देख कर भी कानून के अनुसार कार्रवाई क्यों नहीं की।" उसने अपने मतलब के अनुसार आवश्यक नोट लिया। इसके बाद अपने विभाग के प्रधान मन्त्री को बुलाया। वह कुर्सी छोड़ कर उठ खड़ा हुआ और इधर-उधर कमरे में घूमने लगा। घूमते-घूमते उसकी निगाह एक बार पुनः उस तस्वीर पर पड़ी। इस बार उसके मुंहपर एक विक[illegible] हँसी दिखाई दी।

इस तरह ग्यारह बजे वह सोने गया। बहुत देर तक उसे नींद नहीं आई। रह-रह कर उसे अन्ना की बातें स्मरण होती रहीं और वह अनेक तरह के विचारों में निमग्न होता रहा।

८

घुड़दौड़ से लौट कर अन्ना अपनी अवस्था पर विचार करने लगी। "ब्रन्स्की से रंस्की के संबंध की बात हम ने कहकर अच्छा नहीं किया"

पर नहीं, मैंने अच्छा ही किया, धोखा-धड़ी और परदे का मामला ठीक नहीं है। मैंने सब बातें साफ साफ कह दीं। अब मुझे किसी बात का डर नहीं। संभव है, मुझे इस अवस्था में कष्ट उठाना पड़े; पर अब किसी तरह का खटका नहीं रहा। शाम को सदा की भांति उसने रंस्की से मुलाकात की; पर उसने इस प्रसंग की चर्चा नहीं की।

दूसरे दिन जब वह सोकर उठी तो सब से पहले उसे वही बात ध्यान में आई, जो उसने अपने पति से कहा था। वह डर के मारे कांप उठी। हाय! मैं किस मुंहसे उस घृणित बात को निकाल सकी। मैं कैसी अंधी हो रही थी कि मैंने इसके भयंकर परिणाम तक की कल्पना नहीं की। पर अब तो तीर कमान से निकल चुका था और अपना काम कर चुका था। मैंने रंस्की से यह बात क्यों नहीं कहा। कल जब उससे मुलाकात हुई, उस समय मुझे सब बातें उससे कह देनी चाहिये थीं। मैं कहना चाहती थी; पर क्यों नहीं कह सकी। इस भाव के आते ही उसका चेहरा विकृत हो गया। मुझे शर्म आ गई। लज्जा ने मेरी जबान खुलने न दी। पहले दिन अन्ना ने अपने मन में जो-जो कल्पनायें की थीं, सब एक-एक कर के गलत प्रतीत होने लगीं। उसने देखा कि उसकी स्थिति उतनी सहज और सरल नहीं है, जितना उसने सोचा या समझा था। अभी तक इतनी भयानक-मूर्ति की उसने कल्पना नहीं की थी; पर इस समय वह प्रत्यक्ष होकर उसके सामने नाचने लगी। अब उसे स्मरण आया कि अलक्से उसे क्या दण्ड दे सकता है। वह व्याकुल हो उठी। वह मुझे घर से निकाल देंगे, चारों ओर मेरी बदनामी होगी, संसार मुझे कुलटा कहेगा। उस समय मेरी [illegible] होगी। मैं कहां शरण लूंगी, किस की होकर रहूँगी। [illegible]

सब प्रश्न उसके हृदय में उठे; पर वह कुछ निश्चय नहीं कर सकी।

अब उसे रंस्की का ख्याल आया। उसने देखा कि रंस्की उससे प्रेम नहीं रखता था। जैसे रंस्की अब उससे पिण्ड छुड़ाना चाहता है। उसकी सूरत से उसे नफरत तथा घबराहट है। उसको क्रोध तो आया। वह पागल सी हो गई। उसको मालूम होने लगा मानों उसने वह बात अपने पति से ही न कह कर सारे संसार से कह दिया है और सब लोग उसकी कलंक-कहानी जान गये हैं। मारे शर्म के उसकी गर्दन ऊपर नहीं उठी। वह किसी को अपने घरवालों को भी अपना मुंह नहं दिखाना चाहती थी। उसमें इतना भी साहस नहीं रहा कि वह दा को बुलाने स्वयं नीचे उतर कर जाय।

उसकी दाई दरवाजे पर देर तक खड़ी उसकी लीला देख रही थी। धीरे से उसने कमरे में प्रवेश किया। अन्ना ने मर्म भरी दृष्टि उसके चेहरे पर डाली और शर्म से झुक गई। दाई ने समझा इस अकारण आने से मालकिन खफा हो गई हैं। बड़ी नम्रता से बोली—"क्षमा कीजियेगा, मुझे भ्रम हुआ कि आपने बुलाया है।"

उसके हाथ में अन्ना के घूमने के कपड़े और एक पत्र था। पत्र देल्सी ने लिखा था।

अन्ना ने पत्र पढ़ा और दाई से कहा—"मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है। तुम नीचे चलो, मैं कपड़े पहन कर अभी आती हूँ।"

दाई नीचे चली गई। पर अन्ना अपनी जगह से नहीं उठी। मन मारे, हाथ-पांव लटकाये वह कुर्सी पर बैठी रही। उसके सिर से पसीना बह रहा था। जिससे उसकी बढ़ती बेचैनी प्रगट होती थी रह-रह कर वह सिहर उठती, मानों वह कुछ कहना चाहती है। लगातार

उसके मुंह से निकलता रहा—"मेरे प्रभु ! मेरे प्रभु !!' पर न तो उसके लिये इस समय 'मेरे' शब्द का कोई अभिप्राय था और न प्रभु शब्द का। कट्टर ईसाई होकर भी संकट के समय धर्म की शरण जाना, वह हीन समझती थी। धर्म की शरण में तभी जा सकती हूँ, यदि मैं अपना पैर उस मार्ग से खींच लूँ जिधर मैंने बढ़ाया है और अपने जीवन की गति को बदल दूँ। इन भावों ने उसे बुरी तरह भयभीत कर दिया। उसका दिमाग चक्कर खाने लगा। वह अपनी वास्तविक अवस्था को भी नहीं समझ सकी।

उसने मन में कहा—"मैं यह क्या कर रही हूँ।" इतना कह कर उसने अपना सिर हिलाया। होश सम्हालते ही उसने देखा कि अपने सिर के बालों को उसने अपने दोनों हाथों से बल भर पकड़ रखा है। वह कुर्सी से कूद कर खड़ी हो गई और कमरे में टहलने लगी।

दाई ने पुनः कमरे में प्रवेश किया, तो देखा अन्ना उसी अवस्था में मन मारे टहल रही है, वह बोली—"चाय तैयार है और शिरोजा तथा मैडम ओसिली आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

शिरोजा के नाम से अन्ना चौंक उठी। उसकी मोह-निद्रा टूटी। जिस निराशा में वह डूब और उतरा रही थी, उसे एक तिनके का सहारा मिल गया। वह सोचने लगी—"यदि मुझे अलक्से और रंस्की दोनों से अलग होकर रहना पड़ेगा तो भी मेरा एक सहारा है, शिरोजा मेरा है। यह तो मुझे नहीं छोड़ सकता। अलक्से मुझे निकाल दें, मेरी बदनामी करें, मुझे कुलटा कहकर बदनाम करें। रंस्की मुझे भले ही छोड़ कर संसार में कहीं और आनन्द करे; पर शिरोजा को तो कोई मुझसे नहीं छीन सकता। अब भी संसार में मैं सर्वथा निराधार नहीं हूँ। वह एक

स्तम्भ है और इसके सहारे मैं जी सकती हूँ। अब मुझे वही काम होगा, जिससे शिरोजा मुझ से जुदा नहीं किया जा सके। बस, मुझे विना कोई आगा-पीछा देखे शिरोजा को लेकर चल देना चाहिये, जिससे उसे कोई छीन न सके।" इस ख्याल से उसे क्षणिक शान्ति मिली।

उसने झट-पट कपड़ा पहना और नीचे बैठक में गई, देखा चाय लिये शिरोजा और मैडम-ओसिलो उसकी प्रतीक्षा कर रही हैं। शिरोजा शीशे के सामने खड़ा होकर फूल तोड़ रहा था।

मां को देख कर शिरोजा ने एक वार चिल्ला कर उसके पास जाना चाहा; पर फिर रुक गया।

मैडम-ओसिली ने शिरोजा की शरारत का चिट्ठा सुनाना आरम्भ किया; पर आज अन्ना के हृदय में यह सब बात सुनने के लिये स्थान नहीं था। इस समय अन्ना सोच रही थी कि मैडम-ओसिली को अपने साथ ले जाना या नहीं। अन्त में उसने यही निश्चय किया कि केवल शिरोजा को लेकर मैं जाऊँगी।

वह बोली—"बड़ी बुरी बात है।" इतना कहकर उसने शिरोजा का हाथ पकड़ लिया; पर उसके चेहरे पर क्रोध नहीं था। केवल दया का भाव टपक रहा था। शिरोजा हँसने लगा। अन्ना ने उसका मुँह चूम लिया और मैडम-ओसिली से कहा—"इसे मेरे हवाले करो। मैं इसे ठीक कर दूंगी।"

इतना कह कर शिरोजा को गोद में लिये हुए वह कुर्सी पर बैठ गई और चाय पीना आरम्भ किया।

शिरोजा—(सफाई देने के लिये) मां! मैंने कुछ नहीं किया। मैंने उन छीमियों को छूआ तक नहीं।

[illegible]डम-ओसिली के चले जाने पर अन्ना ने कहा—"शिरोजा! तुम

गलती अवश्य की है; पर आइन्दा इस तरह की शरारत नहीं करना बेटा!"

शिरोजा—माँ, तुम मुझे प्यार करती हो ?

अन्ना की आंखों से आंसुओं की लड़ी बह चली। उसने उसका मातृ स्नेह से लबलबाता चेहरा देखकर अपने मनमे कहा—"कौन ऐसी अभागिनीमां होगी, जो अपनी सन्तान से प्रेम न रखती होगी। कितना भोला-भाला चेहरा है। क्या यह संभव है कि मुझ पर इसे लेशमात्र भीदया नहीं आवेगी।"

आसुओं के वेग को छिपाने के लिये अन्ना बरामदे में चली आई। इधर कई दिनों से बूंदा-बूंदी हो रही थी। आज कई दिन बाद सूर्य भगवान के दर्शन हुए थे। फिर भी सर्दी ज्यों-की-त्यों रही। अन्ना बरामदे में सर्दी से कांपने लगी। डर से तो उसका हृदय पहले ही से कांप रहा था।

शिरोजा भी दौड़कर मां के पास चला आया।

अन्ना—यहां सर्दी अधिक है। भीतर ही रहो।

इतना कह कर वह बरामदे में टहलने लगी। फिर उसने सोचा—"क्या वे मुझे क्षमा नहीं कर देंगे। अवश्य कर ही देंगे।"

इसी समय सामने के वृक्ष की टहनियों ने हवा के सहारे हिलोरें लेकर कहा—"नहीं, कभी नहीं, वे तुम्हें क्षमा नहीं कर सकते। तुम किसी से भी दया की आशा नहीं करना।"

"ठीक है! ठीक है! मुझे अब तैयार हो जाना चाहिये। पर मैं जाऊं कहां? क्यों? आज शाम की ही गाड़ी से मास्को के लिये प्रस्थान कर देना चाहिये। नितान्त आवश्यक सामान के साथ शिरोजा और दाई को साथ लेकर सब कुछ यहीं छोड़ जाना चाहिये। इसके पहले मुझे

उचित है कि दोनों को पत्र लिख दूं।" उसने पहले अलक्से को लिखा- "इस घटना के बाद अब तुम्हारे साथ मेरा रहना नहीं हो सकता। इस लिये शिरोजा को साथ लेकर जाती हूँ। मैं कानून की बारीकियों से अवगत नहीं इसलिये मैं नहीं जानती कि कानूनन लड़के पर किसका अधिकार होगा; पर शिरोजा के विना मैं क्षणभर भी नहीं जी सकती। इसलिये जाती हूँ और इतनी दया भिक्षा चाहती हूँ कि उसे हमें दे दो......"
इतना तो उसने जल्दी में लिखा। वह जानती थी कि अलक्से नहीं जानता कि दया किसे कहते हैं। इसलिये पत्र समाप्त करते हुए उसने लिखा—"अपने अपराधों के विषय में मैं नहीं जानती कि मैं क्या कहूँ।

पत्र समाप्त होने पर उसने उसे पढ़ा। एक मिनिट तक न जाने क्या सोचती रही, अन्त में उसने कहा—"नहीं इस बात की कोई आवश्यकता नहीं। दया की भिक्षा क्यों मांगूं।" यह कहकर उसने पत्र को फाड़ डाला और सीधा-सादा एक पत्र लिखा और उसे लिफाफे में बन्द कर दिया।

दूसरा पत्र उसने रंस्की को लिखा—"मैंने सब कुछ अपने पति से कह दिया है।" इसके बाद वह कलम थाम कर बैठ गई। उसकी समझ में न आया कि क्या लिखूं। मारे शर्म के उसकी आंखें झुकी पड़ती थीं। वह कुछ न समझ सकी। बोली—कोई जरूरत नहीं।"

इतना कह कर वह अपनी जगह से उठी और जाकर दाइयों से बोली- "मैं आज ही शाम को मास्को जाऊँगी।"

६

अन्ना के नौकर आकर असबाब को धीरे-धीरे लाकर चौक में रखने अन्ना अपने सामान को दुरुस्त करने में इतनी व्यस्त थी कि

उसकी चिन्ता उससे दूर हो गई थी। इतने में उसे घोड़ों के टाप की आवाज सुनाई दी। खिड़की से सिर निकाल उसने देखा तो अलक्ले का दरवान दरवाजे पर खड़ा घन्टी बजा रहा था। अन्ना ने अपनी दाई से कहा—"जाकर देखो, क्या समाचार लाया है?"

इतना कह कर अन्ना चुप-चाप कुर्सी पर बैठ गई। उसने कहा—"मैं तो बुरे-से-बुरे-के लिये तैयार हूँ, फिर चिन्ता किस बात की?"

इतने में नौकर ने एक लम्बा चौड़ा लिफाफा लाकर अन्ना के हाथ में रख दिया। अन्ना के हाथ कांप रहे थे। उसने लिफाफा खोला। सबसे ऊपर नोटों का एक बण्डल था। उसे उसने एक किनारे रख दिया और खत पढ़ने लगी। उसने पत्र को आदि से अन्त तक पढ़ डाला। एक बार, दो बार, तीन बार...... । उसकी दशा बदल गई। वह काठ सी हो गई मानों उसे लकवा मार गया हो। "हा! मैंने इस विपत्तिकी कभी स्वप्न में भी संम्भावना ही नहीं की थी।"

आज ही सवेरे वह अफसोस कर रही थी कि उसने अलक्ले से क्यों परदा खोला। यदि किसी तरह वह अपने शब्दों को वापिस ले लेती तो उसे बड़ा सन्तोष होता। शाम को ही अलक्ले का पत्र मिला जिस के भाव उसी तरह के थे। इससे अन्ना को सन्तोष होना चाहिये था; पर सन्तोष होना दूर रहा, उलटे उसका विपाद और भी बढ़ गया।

उन्होंने ठीक ही लिखा है। वे सच्चे ईसाई हैं और ईसाई धर्म परम उदार है। पर उनके हृदय की मलीनता को सिवा मेरे और कौन समझ सकता है। मैंने ही समझा है और मैं ही समझती हूँ। लोग कहते हैं, अलक्ले बड़ा धार्मिक है, बड़ा सच्चा है, बड़ा नेक है, बड़ा ईमानदार है और बड़ा बुद्धिमान् है; पर मैंने उनमें जो बातें देखी हैं, किसी

ने नहीं देखी हैं। इस बात को लोग कैसे समझ सकते हैं कि इन दस वर्षों में उसने मुझे पीस डाला, मेरे जीवन को नष्ट कर डाला, मुझे मुर्दा बना डाला। अब मुझमें जान तक बाकी नहीं है। उसने एक बार भी नहीं सोचा कि मैं अबला हूँ, ईश्वर ने मुझे हृदय दिया है और इस में लबा-लब प्रेम भरा है। लोग नहीं समझ सकते कि किस तरह पग-पग पर उसने मुझे दबाया है और इस तरह प्रसन्न हुआ है। क्या मैंने अपने जीवन को सार्थक करने के लिये लाखों बार यत्न नहीं किया? क्या मैंने उसे प्यार करने का यत्न नहीं किया? क्या उसके सहज प्रेम से वञ्चित होकर मैंने अपने लड़के को प्यार नहीं किया? जहां तक संभव था, मैंने अपने को सम्हाला; पर सब बातों की हद होती है अन्त में मुझे भी विवश होना पड़ा। मैं भी अपने हृदय को न रोक सकी। मेरा जीवन स्रोत फूट कर बह निकला और मुझे उस के साथ बहना पड़ा। पर अब वह उसका बदला किस तरह लेना चाहता है! अगर वह मुझे हलाल कर के मार डालता तो शायद मैं चूं तक नहीं करती। पर आज भी वह वही नीचता दिखा रहा है। वह अपनी रक्षा करेगा लेकिन मुझे वह धीरे-धीरे घुला कर मारना चाहता है।

उसने लिखा है—"तुम स्वयं समझ सकती हो कि इसके प्रतिकूल चलने में तुम पर और तुम्हारे लड़के पर कैसा संकट आ सकता है..." उसने मुझे धमकी दी है कि शिरोजा को वह मुझसे छीन लेगा। शायद कानूनन वह ऐसा कर भी सकता हो; पर मैं इस धमकी का मतलब समझती हूँ। वह समझता है कि उसी की भांति शिरोजा पर भी मेरा अनुराग नहीं है। पर वह यह भी जानता है कि "शिरोजा बिना मैं एक नहीं जी सकती..." पर क्या मैं इसकी धमकी में आ जाऊँगी और

शिरोजा को उसे सौंप कर भाग जाऊँगी। इससे बढ़कर नीचता में और कुछ नहीं कर सकती। स्त्रियों के नाम पर यह अमिट धब्बा होगा ...वह अच्छी तरह जानता है कि मैं यह भी नहीं कर सकती।"

उसने आगे चल कर लिखा है–"हम लोग उसी तरह रहें; जिस तरह पहले रहते थे......उसी पिशाचमय जीवन की याद कराता है, जिसकी यातना मैं कभी भी नहीं भूल सकती। उस समय तो उसकी क्रूरता और भी भयंकर हो जायगी। वह सब बातें जानता है। मेरे स्वभाव से वह भली भांति परिचित है। वह जानता है कि मैं अपने मार्ग से पीछे कदम नहीं रख सकती, पश्चात्ताप नहीं कर सकती। केवल धोखे-धड़ी से काम चलेगा। फिर भी मुझे जलाने के लिये वह साथ रखना चाहता है। मैं उसके स्वभाव को रत्ती-रत्ती जानती हूँ। वह मुझे जला-कर सुखी होना चाहता है। पर मैं उसके जाल में फसनेवाली नहीं। मैं इस जाल को तोड़ कर बाहर निकलूंगी, चाहे इसका परिणाम कितना भी भयंकर क्यों न हो। इस धोखे-धड़ी से मैं कोई भी जीवन सुख दायक समझती हूँ।

ईश्वर ने क्या संसार में मुझे ही सब से अभागिन बनाया है? नहीं, नहीं, मैं उसके फन्दे में नहीं पड़ सकती। "इतना कह कर वह कुर्सी पर से उठी और अलक्से को दूसरा पत्र लिखने की तैयारी करने लगी। हृदय की दुर्बलता उसके सामने और भी व्यक्त होती चली जा रही थी।

वह टेबुल के पास जाकर बैठ गई। कागज सामने रख लिया; पर लिखने के बजाय वह अपने दोनों हाथों से मुँह ढँक कर रोने लगी–"मेरा सब सुख स्वप्न मिट्टी में मिल गया। मैं क्या-क्या कल्पना कर रही थी। सब पानी का बुलबुला हो गया।" वह पहले से ही जानती थी कि सब

बातें पूर्ववत् चलेंगी; बल्कि उनसे भी बुरी दशा में। अभी सवेरे उसने जिस मर्यादा को तुच्छ समझा था, जिसे ठुकरा कर दूर करने का उसने संकल्प कर लिया था, वही मर्यादा इस समय उसे सबसे प्रिय प्रतीत होने लगी। "हा! मैं संसार में किस तरह मुँह दिखा सकूंगी। लोग कहेंगे कि इस कुलटा ने अपने प्रेमी से मिलने के लिये पति और पुत्र का त्याग किया है।"......उसकी बुद्धि ठिकाने नहीं रही। उसे नहीं समझ पड़ा कि क्या किया जाय। वह बच्चों की तरह रोने लगी।

इतने में दरवान के पैरों की आहट लगी। उसने रोना बन्द किया और आँसू पोछ कर पत्र लिखने लगी।

दरवान–चपरासी उत्तर के लिये बैठा है।

अन्ना–मैं खत लिख रही हूँ। समाप्त करके घंटी बजाऊँगी।......मुझे क्या करना चाहिये? क्या मैं करूँ? उसने देखा कि उसका हृदय फटा जा रहा है। उसने मन बहलाने के लिये चित्त को दूसरी तरफ लगाना चाहा।......एक बार मैं रंस्की से क्यों न मिल लूं। उससे सलाह कर लूं कि क्या करना चाहिये। मुझे अभी बेत्सी के घर जाना चाहिये। शायद वहीं उससे मुलाकात हो जाय।

उस समय उसे स्मरण नहीं रहा कि पहले दिन जब अन्ना ने कहा था कि–"मैं बेत्सी के घर नहीं जाऊँगी" तब रंस्की ने भी कह दिया था कि "मैं भी नहीं जाऊँगा।" उसने जल्दी-जल्दी अलक्से के पत्र का उत्तर दिया।

"आप का पत्र मुझे यथा समय मिल गया।–अन्ना।" लिफाफे में पत्र बन्द कर उसने चपरासी के हवाले किया और ऊपर जाकर दासी से बोली-"असबाब खोल दो, मैं मास्को नहीं जा सकूंगी। इस समय [illegible] ...र जा रही हूँ।"

१०

जिस समय अन्ना वेत्सी के घर पहुँची, बहुत सवेरा था। एक भी मेहमान नहीं आये थे और वेत्सी बाग में सैर कर रही थी।

अन्ना के साथ ही रंस्की के नौकर ने भी प्रवेश किया। उसके हाथ में वेत्सी के नाम एक पत्र था। अब अन्ना को स्मरण हुआ कि रंस्की नहीं आवेगा। उसने लाख चेष्टा की कि इस नौकर से पूछ लूं कि रंस्की कहां है और उसे बुला लूँ; पर वह न कर सकी।

उस संदिग्धावस्था से अन्ना का छुटकारा नहीं हुआ था, बल्कि वह अवस्था और भी बढ़ गई थी। इस समय उसे यह समाज पसन्द नहीं था। मानसिक चिन्ता को दूर करने के लिये यहां सामग्री नहीं थी, फिर भी यहां की शान-शौकत से उसे कुछ तसल्ली मिली।

अन्ना के आने का समाचार पाते ही वेत्सी उससे मिलने आई। सामना होते ही अन्ना ने मुस्करा दिया।

वेत्सी ने देखा कि अन्ना के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही हैं।

अन्ना—मैं आज बहुत सो गई।

वेत्सी—तुम आ गई, अच्छा किया। अभी काफी समय है नौकरों को तैयारी करने के लिये कह कर चलो चाय पिलूं।

अन्ना—मैं भी बहुत देर तक नहीं ठहर सकती। मुझे मैडम वर्टे के यहाँ जाना जरूरी है। मैं सैकड़ों बार वचन दे चुकी; पर आज तक जाने का अवसर नहीं आया।

किसी समय झूठ बोलना अन्ना को एक दम नहीं भाता था, इस अन्ना के लिए झूठ बोलना अब साधारण बात है। मैडम वर्टे के यहां जाने

का उसने कल्पना तक नहीं किया था। यहां आकर उसे मालूम हुआ कि रंस्की नहीं आवेगा, इस लिये किसी न किसी तरह यहां से अपना पिण्ड छुड़ा कर रंस्की से मिलना उसे आवश्यक था और यही उसके झूठ बोलने का कारण था। पर उसने मेडम वर्डे का ही नाम क्यों लिया? उस समय तो उसकी समझ में कुछ नहीं आया; पर बाद को उसने देखा कि उस दिन रंस्की से मिलने की इससे उत्तम युक्ति नहीं थी।

बेत्सी—(अन्ना के चेहरे की ओर गौर से देख कर) भला, यह कब संभव है? अगर तुम से इतना घना संबंध न होता तो तुम्हारी बातों से मैं खफा हो गई होती। यदि कोई अजनबी सुनेगा तो यही कहेगा कि तुम्हें हमारी सोहबत से नफरत है।

इतने में नौकर ने वह खत दिया जो रंस्की ने भेजा था। पत्र पढ़ कर बेत्सी ने कहा—"रंस्की चाल चलना खूब जानता है। लिखता है कि मैं नहीं आऊँगा।"

अन्ना जानती थी कि इस संबंध में बेत्सी से कोई बात छिपी नहीं, फिर भी उसने पत्र पर कोई ध्यान नहीं दिया। चुप चाप मुंह फेर लिया।

इस तरह बात को उड़ा देना अन्ना के लिये साधारण बात थी।

बेत्सी—रंस्की के पत्र का जवाब दे देना ही चाहिये।

इतना कह कर वह बैठ गई और उत्तर लिख टेबुल पर रख कर चली गई। पत्र में लिखा था—"आपको इस दावत में जरूर आना चाहिये। एक विशेष महिला यहां आने वाली है और उनकी अगवानी करने के लिये हमारे पास कोई उपयुक्त आदमी नहीं है।"

पत्र पढ़ कर उसने अन्ना को सुनाया और पूछा—"इससे रंस्की [illegible] गा।" इतना कह कर वह वहां से चली गई।

अन्ना ने उसी पत्र की पीठ पर लिख दिया तुम से मिलना नितान्त आवश्यक है। वर्डेबाग में ६ बजे मुझ से अवश्य मिलना।

११

रंस्की अनवस्थित जीवन से बड़ी घृणा करता था। जमींदारी का इन्तजाम वह साल में एक बार करता। उसके लिये उसने समय निकाल दिया था और उन दिनों वह एकान्त में बैठ कर केवल ज़मींदारी की ही चिन्ता करता।

घुड़ दौड़ से लौट कर रंस्की ने न तो स्नान किया और न कपड़ा बदला। उदास मन वह टेबुल पर बैठ गया और बिल आदि फैला कर खर्च का हिसाब लिखने लगा। पैट्रिस्की उसका मिजाज जानता था। इसलिये बिना कुछ कहे वह कपड़ा पहन कर चला गया।

रंस्की का जीवन इतना रहस्यमय था, उसकी जीवनसमस्यायें इतनी जटिल थीं, उसकी रहन-सहन इतनी निराली थी कि जो लोग उसे अच्छी तरह जानते थे, वे भली भांति समझ सकते थे कि यदि रंस्की के स्थान पर कोई अन्य व्यक्ति होता तो वह न जाने कब ही विपत्ति में फँस गया होता। रंस्की ने देखा कि यह अवस्था अधिक दिन तक नहीं टल सकती। इसलिये मामला साफ कर लेना ही उचित होगा। नहीं तो भविष्य में किसी दिन इसके लिये घोर पश्चाताप करना पड़ेगा।

उसने पहले अपनी आर्थिक दशा की पड़ताल कर टालनी चाही। हिसाब मिलाकर उसने देखा तो उसे प्रायः १८ हजार रुपये देने थे और

बैंक में केवल दो हजार रुपये रह गये थे। साल के अन्त तक कहीं से आमदनी की भी गुञ्जायश नहीं थी। कुछ कर्ज तो उसे उसी समय चुकाने थे। उसके लिये चार हजार रुपयों की जरूरत थी। इसके बाद थोड़े समय बाद उसे आठ हजार रुपये की जरूरत थी। फिर दो हजार की जरूरत थी। यह दो हजार यदि एक वर्ष बाद भी दिया जाय तो कोई चिन्ता नहीं। इसलिये उस समय उसे कम से कम ६ हजार रुपयों की जरूरत थी; पर उसके पास केवल दो हजार थे। रंस्की की सालाना आमदनी एक लाख की थी; पर उसे पूरी रकम कभी न मिलो पैतृक सम्पत्ति की आमदनी प्राय २ लाख सालाना थी। पर रंस्की उसमें से एक पैसा भी नहीं लेता था। कुल की कुल संपत्ति उसने अपने बड़े भाई को दे दी थी। केवल २५ हजार साल खर्च के लिये ले लेता था। उस समय रंस्की ने यही कहा था—"मुझे विवाह शादी तो करना नहीं है। इसलिये यह २५ हजार मेरे खर्च के लिये बहुत काफी होगा।" रंस्की की माता अपनी सम्पत्ति से उसे २० हजार दिया करती थी; पर अन्ना के संबंध से चिढ़ कर उसने रुपया भेजना बन्द कर दिया था। यही कारण था कि इस साल रंस्की की आर्थिक दशा इस तरह विपन्न हो रही थी। वह मां से रुपये माँग नहीं सकता था। उसकी मां ने अभी हाल में ही उसे लिख दिया था कि—"मैं तुम्हारी हर तरह सहायता करने के लिये तैयार हूँ; पर मैं तुम्हें इसलिये एक कौड़ी भी नहीं दे सकती कि तुम अपनी और अपने वंश की बदनामी का कारण बनो।" रंस्की को मां की ओर से कोई भरोसा नहीं था। पर जमींदारी में उसका हिस्सा था, उसने वह आधा ले सकता था, लेकिन रंस्की बात का धनी था। उसने अपने मन में कहा—"जो बात मेरे मुँह से एक बार निक

गई, उसके खिलाफ मैं कोई कार्रवाई किस तरह करूं ? इसलिये यह असम्भव है।" निदान उसने घुड़दौड़ के घोड़ों को वेच कर खर्च घटाना और किसी महाजन से १० हजार रुपये कर्ज लेकर बिल आदि चुका डालना ही निश्चय किया। यह स्थिर कर उसने घोड़ों के एक सौदागर को फौरन बुलवाया; रुपया कर्ज लेकर बिल आदि चुकाया। इस काम से छुट्टी पाकर उसने अपनी मां के पत्र का अति कठोर उत्तर दिया। इसके बाद उसने अन्ना का पत्र निकाला, पढ़कर उसे फाड़ डाला और गाल पर हाथ रख कर सोचने लगा।

रंस्की के कुछ स्थिर सिद्धान्त थे और वह उन्हीं के अनुसार चलता था। रंस्की उन सिद्धान्तों पर विशेष आस्था रखता था। यद्यपि उसके सिद्धान्त किसी नीति के अनुसार नहीं थे, तथापि उनपर चलने से उसे एक प्रकार का सन्तोष था और मन को शान्ति थी। उसका मन्तव्य था— "जुआ में हारा रुपया भले ही दे दो, पर जो दर्जी कपड़ा सीता है उसे मत दो। किसी महिला से झूठ भले ही बोल लो; पर पुरुष के साथ झूठ बातें नहीं करो। किसी को धोखा देना उचित नहीं, पर यदि कोई पत्नी अपने पति को ठगती है तो कोई हर्ज नहीं। क्षमा मांग लेने में कोई हर्ज नहीं; पर किसी को भी क्षमा नहीं करना चाहिये।" जब से अन्ना का उससे सम्बन्ध हुआ है, इन सिद्धान्तों से उसे सन्तोष नहीं रहने लगा है। पर भविष्य की कठिनाई की वह कभी चिन्ता ही नहीं करता था।

अन्ना का अलक्से के साथ जो संबंध था, उसमें रंस्की को कोई विशेषता नहीं दिखलाई देती थी। उसके सिद्धान्त के अनुसार यह साधारण बात थी।

"अन्ना बड़े घर की लड़की है। वह मुझपर आसक्त है। मैं भी उसे

हृदय से चाहता हूँ। उसका स्थान पत्नी से भी ऊँचा है। यदि मुझसे अनजान में भी उसका अपमान हो जाय तो मैं क्षमा के योग्य नहीं।" अन्ना के ऊपर वह अपना पूर्ण अधिकार समझता था। अलक्से को वह फजूल समझता था। अलक्से की अवस्था दयनीय थी; पर रंस्की उसके लिये लाचार था। अलक्से द्वन्द-युद्ध से उसका बदला ले सकता था और रंस्की इसके लिये सदा तैयार था।

जब से अन्ना के गर्भ का समाचार उसे मिला, रंस्की की चिन्ता बढ़ गई। उसकी बुद्धि नहीं काम करती थी कि इस समय वह क्या करे। जिस समय अन्ना ने यह बात रंस्की से कही, उसके दिल में यही भाव उठा कि—"अन्ना से कह दूं कि अब अलक्से से अलग हो जाओ। उसने उस समय यह बात कह भी डाली थी; पर इस समय उसे स्वयं अलग हो जाना ही उचित प्रतीत होता था।

इस समय वह अपने मन में सोचने लगा—"मान लो, उसने अपने पति को त्याग दिया। इससे तो वह मेरे सिर आ जायगी। तो क्या मैं उसका भार सम्हाल लेने के लिये तैयार हूँ। इस समय में आर्थिक कठिनाई में भी हूँ। रुपये का प्रवन्ध तो हो भी सकता है।...पर मैं दूसरे के अधीन हूँ...सेवावृत्ति में बँधा हूँ। इसलिये यदि मैं उससे यह प्रस्ताव करूँ तो मुझे रुपये का बन्दोवस्त करना तथा नौकरी छोडनी होगी।"

वह चिन्ता में पड़ गया। 'वह नौकरी क्यों करता है' इसे सिवा उसके और कोई नहीं जानता था। नौकरी छोड़ने के प्रश्न ने उसपर एक चिन्ता का बोझ और डाल दिया।

...की नाम के लिये प्राण देता था। छोटेपन से ही उसकी यह

अवस्था थी। अपने हृदय की यह बात वह किसी से नहीं कहता था।
इस समय वह लालसा और भी भीषण हो गई थी। दो वर्ष तक तो उसकी
इच्छा पूरी होती गई; पर गतवर्ष उसने भीषण भूल की। उसे एक ऊँचा पद
मिला। यह समझ कर कि इनकार करने से उसकी मर्यादा बढ़ जायगी,
उसने उस पद को अस्वीकार किया। परिणाम यह हुआ कि उच्च अधिका-
रियों ने इसे धृष्टता समझी और उसकी उपेक्षा करने लगे; लेकिन उस
अवस्था को भी उसने बड़ी खूबी से निबाहा। उसने अपने मनकी
अवस्था किसी पर भी प्रगट नहीं की, न कोई समझ ही सका कि—"इससे
उसका अपमान हुआ है। किन्तु उसे शंका होने लगी कि लोगों की
निगाहों से मेरी प्रतिष्ठा उठती जा रही है। लोग अब मुझपर आस्था
नहीं रखते। मुझे साधारण आदमी समझते हैं।" अन्ना के साथ जब से
उसका संबंध हुआ, लोगों की निगाहें उसपर फिर पड़ने लग गई थीं; पर
इसी समय उसके अभाग्य से एक घटना और हो गई। उसका एक मित्र
और साथी मध्य-एशिया से नाम पैदा कर हाल में ही पीटर्सबर्ग लौटा था।

इस समय पीटर्सबर्ग में उसकी बड़ी चर्चा थी। गली-कूँचे में प्रायः
उसकी बात छिड़ जाती थी। सरकारी दफ्तरों में भी उसकी अच्छी इज्जत
थी। उसे प्रतिष्ठित पद मिलने वाला था। रॅस्की को अपने मित्र की बढ़ती
का जरा भी विषाद नहीं था। उसे विषाद अपनी भूलपर हुआ कि—"अव-
सर पाकर भी मैंने उपेक्षा की और फल पाया। तीन वर्ष से मैं लगातार
इसी पद पर पड़ा हूँ। इस समय न तो मैं नौकरी छोड़ ही सकता हूँ,
न छोड़ने से कोई हानि ही है। अन्ना ने स्वयं कहा है कि मैं परि-
स्थिति बदलना नहीं चाहती और जब तक अन्ना मुझसे स्नेह रखती
है, संसार में कोई नहीं, जो मेरा मुकाबला कर सके।"

हूँ। अन्ना ! तुम नहीं जानतीं कि मेरा अनुराग दिन-दिन किस तरह दूना और चौगुना होता जा रहा है।"

इतने में गाड़ी बर्डे-बाग के पास पहुँची। रंस्की चारों ओर देखने लगा। वह कहां होगी। उसने इस जगह मिलना क्यों चाहा। बेत्सी के पत्र पर ही उसने क्यों लिखा? जो हो, अब तो उसे तलाश ही करना चाहिये।

रंस्की गाड़ी से उतरा और सीधे बाग में घुस गया। इधर-उधर ढूंढ़ते-ढूंढ़ते उसने देखा कि सड़क के एक किनारे चेहरे पर नकाब डाले अन्ना टहल रही है। रंस्की फौरन उसके पास गया।

अन्ना—(रंस्की का हाथ जोर से दबाती हुई) आपको इस तरह आने में कष्ट तो नहीं हुआ? काम इतना जरूरी था कि मैं विवश थी।

रंस्की—मैं, नाराज; और फिर तुमसे? तीनों असम्भव बातें हैं।

अन्ना—इन सब बातों को इस समय जाने दीजिये। मुझे कुछ जरूरी बातें कहनी हैं।

रंस्की ने देखा कि कोई असाधारण घटना घटी है और बात गम्भीर है। अन्ना के सामने रंस्की सदा बेफ़्रों की भांति रहता था। रंस्की को अभी तक ज्ञान नहीं था कि अन्ना को किस बात का कष्ट है; पर उसका उदास चेहरा देख कर ही रंस्की का मन मलिन हो गया। उसने अन्नाकी ओर देखा।

अन्ना—कल मैं तुमसे यह कहना भूल गई कि घुड़दौड़ से लौट कर मैंने उन से सारा कच्चा चिट्ठा खोल दिया।

रंस्की गर्दन झुकाये अन्ना की बातें सुन रहा था। अन्तिम शब्द से वह चौंक पड़ा और छाती फुला करके बोला—"अच्छा किया। इस से तुम्हारे हृदय को चोट तो पहुँची होगी; पर......"

यदि विश्वास न होता तो······

इतने में दो औरतें सामने से आती दिखलाई दीं। रंस्की की दृष्टि उन पर पड़ी। उसने इशारे से अन्ना से कहा। दोनों निगाह बचा कर दूसरी तरफ चले गये।

अन्ना के होंठ कांप रहे थे। उसने कहा–"मुझे इन सब बातों की कोई परवा नहीं; पर जरा पत्र तो पढ़ो।"

रंस्की ने पत्र पढ़ा। अब उसकी आंखों में वह दृढ़ता नहीं थी। अन्ना से भी यह बात छिपी न रही। उसने अपने मन में सोचा–"मेरी अन्तिम अभिलाषा भी मिट्टी में मिल गई।" कांपते हुए कंठ से बोली–"देखा कैसा विचित्र आदमी है?"

रंस्की–क्षमा करना। मुझे हंसी आ रही है। एक बार पत्र समाप्त कर लेने दो। मुझे इस बात पर हंसी आ रही है कि उन्हों ने क्या समझ रखा है। क्या उन के लिखे मुताबिक कोई बात हो सकती?

अन्ना–(रोकर) क्यों? यह सर्वथा संभव है?

रंस्की के सिर पर द्वन्द का भूत सवार था। लेकिन अन्ना को इसकी कल्पना तक नहीं थी वह बोला–"यह अवस्था कैसे रहेगी। तुम उन्हें छोड़ दो। हम कल ही सब प्रबन्ध कर डालते हैं।"

अन्ना–(बीच में ही रोक कर) पर मेरा पुत्र! देखते हो, उसने क्या लिखा है? मैं शिरोजा को नहीं छोड़ सकती।

रंस्की–पर अच्छा क्या होगा, पुत्र का त्याग अथवा यह लज्जा जनक स्थिति?

अन्ना–यह किस के लिये लज्जाजनक है।

रंस्की–सब के लिये और तुम्हारे लिये विशेष कर।

अन्ना–दया कर के फिर इस शब्द का प्रयोग नहीं करना। 'हीन

और अपमान जनक' यह बातें मेरी दृष्टि में कोई अर्थ नहीं रखतीं।

अन्ना अब अपने संबंध में झूठी प्रशंसा नहीं सुनना चाहती थी। वह प्रत्यक्ष देख रही थी कि संसार में सिवा रंस्की के स्नेहके उस के पास कुछ नहीं था और वह उसी प्रेम की भिखारिन थी। वह फिर बोली-"क्या तुम नहीं देख रहे हो कि जिस दिन से मैंने तुमसे नाता जोड़ा, मेरे लिये सब बातें बदल गई। बस, अब मेरी दृष्टि में केवल एक बात रह गई है अर्थात् तुम्हारा प्रेम। यदि वह मेरा है-जैसा मेरा विश्वास है-तो मैं संसार में सब से सुखी हूँ, सब से ऊँची हूँ। फिर मुझे किसी बात की चिन्ता या परवाह नहीं रह जाती। मैं इस अवस्था को हीन नहीं समझती हूँ। मुझे पूर्ण अभिमान है कि मैं......' इस के आगे वह कुछ भी न कह सकी। निराशा और लज्जा के आंसुओं ने उसकी घिग्घी बांध दी वह खड़ी-खड़ी रोने लगी।

रंस्की को इस दयनीय दशा पर करुणा उत्पन्न हो आयी। उसका भी गला भर आया। उसको भी रुलाई आने लगी। रंस्की के जीवन में इस तरह की यह पहली घटना थी। रंस्की नहीं समझ सका कि उसके हृदय की इस क्षुब्धता का क्या कारण है? अन्ना के लिये उस के हृदय में वेदना थी, उसे इस बात का भी क्लेश था कि वह अन्ना की रक्षा नहीं कर सकता। उसके हृदय पर इस बात की भी चोट थी कि अन्ना की इस हीन दशा का वही कारण था।

धीमे स्वर से बोला-"क्या तलाकनामा नहीं हो सकता?"

अन्ना ने केवल सिर हिला दिया।

रंस्की-क्या तुम उनसे अलग होकर भी अपने पुत्र को नहीं ~?

अन्ना—यह तो उनकी कृपा पर है। मैं एक बार तो उनके पास जाती ही हूँ।

अन्ना को फिर भी आशा थी कि सब बातें ज्यों की त्यों रह जायंगी।

रंस्की-मंगल को मैं पीटर्सबर्ग आऊंगा, उसी दिन सब बातें तै हो जायंगी।

अन्ना—ठीक है। पर इस संबंध में अधिक कुछ कहना नहीं है।

इसके बाद दोनों एक दूसरे से अलग होकर बाग से निकले और अपने-अपने घर की तरफ चल दिये।

१३

सोमवार को कमीशन की बैठक थी। अलक्से ने इस बैठक के लिये पहले ही से तैयारी कर रखी थी। ठीक समय पर वह सभाभवन में पहुंचा और अध्यक्ष तथा अन्य सदस्यों को अभिवादन कर अपनी जगह पर बैठ गया। कागज-पत्र उसने टेबुल पर रख दिये। आज की बैठक में उसे जो कुछ कहना था, उसका उसने नोट लिख लिया था; पर वह जानता था कि उस नोट के देखने की नौबत ही नहीं आवेगी। शत्रुपक्ष के पराक्रम को देखकर उसकी जबान यों ही धाराप्रवाह से चलने लगेगी। वह आज एक शब्द भी ऐसा नहीं बोलना चाहता था, जो सारगर्भित न हो। जिस समय दूसरी जून के कमीशन की रिपोर्ट पढ़ी जा रही थी, वह चुपचाप बैठा सुन रहा था। उसके हाथ की चंचलता, उसके चेहरे की मलीनता और उदासीनता देखकर कोई भी सदस्य क्षण भर के लिये

भी कल्पना नहीं कर सकता था कि दो ही मिनिट बाद यह व्यक्ति इस तरह की बाणवर्षा करेगा। इतना प्रबल आक्रमण करेगा कि सदस्यों में हलचल मच जायगी, घोर कोलाहल उत्पन्न हो जायगा और लाचार होकर अध्यक्ष को शान्ति के लिये प्रार्थना करनी पड़ेगी।

रिपोर्ट समाप्त हुई। अलक्ले अपनी कुर्सी से उठा और बड़ी नर्मी से बोला—"किसानों के संगठन के लिये जो कमीशन बैठा था, उसके संबन्ध में मुझे कई बातें कहनी हैं।" लोगों का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट हुआ। अलक्ले ने अपना भाषण आरम्भ किया। जब उसने कानूनी बातें उठाईं तो उसके शत्रु उछलने-कूदने और विरोध करने के लिये खड़े हो गये। दूसरी जून के कमीशन में स्ट्रेओ नाम के एक व्यक्ति की उसने सफाई देनी चाही। चारों तरफ से हो-हल्ला मच गया; पर अलक्ले का पक्ष प्रबल रहा और विजय भी उसीकी हुई। उसका प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। तीन नये कमीशन नियुक्त हुए। दूसरे दिन सारे पीटर्सबर्ग में केवल इसी कमीशन की चर्चा रही। अलक्ले को आशा नहीं थी कि उसे इतनी अधिक सफलता मिलेगी।

दूसरे दिन प्रातःकाल अलक्ले अपने बरामदे में टहल रहा था। कल की बैठक की बात याद कर वह मन ही मन मुस्करा रहा था और अपने विजय पर प्रसन्न हो रहा था। इतने में उसका मन्त्री आया और कागज-पत्र खोलकर बैठ गया। अलक्ले काम में लग गया। उसे कुछ सुध-बुध नहीं रही। आज मंगल है। अन्ना के आनेका दिन है। इस बात का उसे ख्याल ही नहीं था। एकाएक नौकर ने आकर सूचना दी कि—"अन्ना की गाड़ी दरवाजे पर खड़ी है।" अलक्ले चौंक ... भौंहें टेढ़ी कर उसने नौकर की ओर देखा और चुप रह गया।

अन्ना ने तार द्वारा रवानगी की सूचना दे दी थी। उसके लिये गाड़ी स्टेशन गयी थी; पर उससे मिलने के लिये अलक्ले नहीं गया।

पूछने पर अन्ना को यह भी मालूम हो गया कि काम-काज का बोझ आज इतना अधिक है कि अभी तक वे कुर्सी से उठे तक नहीं। अपने पहुँच की सूचना भेज कर वह अपने कमरे में गई और सब चीज सम्हालने लगी। उसे आशा थी कि अलक्ले शीघ्र ही उसके पास आवेगा। एक घड़ी बीती, दो घड़ी बीती, फिर भी अलक्ले का कहीं पता न था। अन्ना अपनी जगह से उठी, रसोई घरमें गई और कुछ कहने के बहाने जोर से बोलने लगी। उसे आशा थी कि उसकी आवाज सुन कर अलक्ले वहाँ जरूर आवेगा; पर वहाँ भी अलक्ले नहीं आया। अन्ना ने सुना कि मन्त्री से विदा होकर अलक्ले अपनी बैठक में गया। उसे मालूम था कि- "अलक्ले दफ्तर जल्दी चले जाया करते हैं और जाने के पहले वह उनसे मिल लेना चाहती थी ताकि उन के व्यवहार का पता चल जाय।"

निदान वह अपने कमरे से निकली और दृढ़ता के साथ अलक्ले के पास चली गई। अलक्ले कपड़ा पहन कर दफ्तर जाने के लिये तैयार हो चुका था। कुर्सी पर बैठा वह कुछ सोच रहा था। अन्ना ने उसे देखा। उसने समझा अलक्ले मेरी ही चिन्ता कर रहा है।

अन्ना को देख कर अलक्ले ने पहले कुर्सी छोड़ उठ जाना चाहा। फिर न जाने क्या सोच कर बैठा ही रह गया। उसका चेहरा एकाएक लाल हो गया। यह एक अभूतपूर्व बात थी। अब वह एकाएक कुर्सी से उठा और अन्ना से मिलने के लिये आगे बढ़ा। उसका हाथ पकड़ कर बोला-"तुम आ गईं ? अच्छा हुआ।" इसके बाद उसने कई बार बोलने की चेष्टा की; पर न जाने क्यों उसका शरीर काँप उठा

अन्ना–(भय से) पर यह संबंध तो सदा एकसा नहीं बना रह सकता।

अलक्ले की क्रोध भरी और व्यंगपूर्ण बातें सुन कर अन्ना का हृदय काँप उठा था लेकिन उसने इसी समय सफाई कर डालनी चाही। बोली– "तुम मुझे पत्नी रूप में अब रख नहीं सकते, जब कि मैंने……"

अलक्ले ने विकट हँसी हँस कर कहा–"जिस मार्ग का तुमने सहारा लिया है, उसका परिणाम हम देखते हैं। तुम्हें भी प्रत्यक्ष होने लग गया है। तुम्हारे अतीत जीवन से मुझे अतिशय स्नेह और सहानुभूति है; पर तुम्हारे वर्तमान जीवन से हमें नितान्त घृणा है,……मैंने जो कुछ लिखा था, उसका यह अभिप्राय नहीं था।"

अन्ना ने ठंढी सांस ली। वह चुप हो रही। अलक्ले बोलता गया—"यद्यपि मेरी समझ में अभी तक यह बात नहीं आई है कि जिस रमणी ने इस तरह की स्वच्छंदता अख्त्यार की और अपने पति से अपनी कुलटापन का वृत्तांत कहने में जरा भी न सकुचाई, वह किस भय से उस पति की आज्ञा मानने को तैयार होगी?……

अन्ना–आप मुझसे क्या चाहते हैं?

अलक्ले–यही कि उसे यहां कभी न बुलाना और इस तरह से रहना, जिससे न तो संसार और न नौकर-चाकर, किसी तरह तुम्हारे सम्बंध में की कल्पना कर सकें, जो तुम्हारे और हमारे यश पर कलंक हो।……अर्थात् तुम उससे मिलना छोड़ दो। मेरी समझ में यह बड़ी बात नहीं है। इस तरह से तुम्हें पत्नी के प्रायः सभी अधिकार प्राप्त होंगे और पत्नी का कर्तव्य पालन किये बिना ही तुम सभी सुखों को पा सकोगी। इससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है।

इतना कह कर अलक्ले कुर्सी से उठा और सीढ़ियों से उतरकर नीचे चला गया। उसके जाने के बाद अन्ना भी धीरे-धीरे अपने कमरे में चली गई।

१९

वह रात लेविन ने गांव में ही काटी। इसका उस पर बड़ा प्रभाव पड़ा। जिस तरीके पर वह खेती का प्रबंध कर रहा था, उसे उचित नहीं प्रतीत हुआ और उसकी सारी रुचि घट गई। उस साल फसल सबसे अच्छी थी। ऐसी फसल कभी भी देखने में नहीं आई थी। फिर भी किसानों से कई बार उसे झगड़ना पड़ा और इन सब झगड़ों का कारण वह सूत्र समझता था। किसानों के काम में उसका अनुराग, किसानों के साथ उसकी घनिष्टता, उनके सारे जीवन के लिये तरसना और किसी न किसी दिन उसी तरह के जीवन व्यतीत करने की कल्पना, केवल स्वप्न नहीं था; बल्कि दृढ़ निश्चय था। लेकिन इन्हीं सबों ने उसके विचार में घोर परिवर्तन डाला था। उसने देखा कि किसानों के साथ झगड़े का मूल कारण यही है। गोशाला का सुधार, खेतों का सुधार, उनमें खाद देकर उत्पादन बढ़ाना, मेंड़ बांध कर पानी रोकना आदि काम अवश्य उत्तम था और अगर यह उन लोगों के लाभ के लिये भी किया गया होता जिन्होंने इसकी तैयारी में पूरी मिहनत की है तो उसे अवश्य संतोष होता; पर उसने देखा कि इस उन्नति के प्रयास में उसके और किसान-मजूरों के बीच संग्राम ही संग्राम था। लेविन तो सब काम तरीके से करना चाहता था; पर किसान उसी पुरानी लकीर के

फकीर बने रहना चाहते थे। इस काम में लेविन को अनुमान से अधिक व्यय करना पड़ता था; पर किसान इसकी जरा भी परवाह नहीं करते थे। परिणाम यह होता था कि काम किसी के सन्तोषलायक नहीं होता था और इस धींगा-धींगी में अच्छे-अच्छे पशुओं, औजारों और बीजों का व्यर्थ नाश होता था। इस काम में वह जो शक्ति व्यय करता था, उसे वह केवल नष्ट हुई नहीं समझता था; बल्कि उसे आशंका होने लगी कि मैं उस शक्ति का प्रयोग नितान्त हेय और बुरे काम में कर रहा हूँ। झगड़े का प्रधान कारण क्या है? मैं चाहता हूँ कि मेरे हक में से एक पैसा भी दबाया न जाय और ये किसान मजूरे चाहते हैं कि उन्हें काम में आराम मिले। अर्थात् काम करने का पुराना तरीका वे बदलना नहीं चाहते। मैं अपने स्वार्थ के लिये मजूरों से घोर परिश्रम करवाना चाहता हूँ, साथ ही उसे सतर्क रखना चाहता हूँ, जिससे कल-पुर्जे टूट न जायँ; पर मजूर आराम से काम करना चाहते हैं। बीच-बीच में सुस्ताना चाहते हैं और बिना किसी सोच-बिचार के मौज से काम करना चाहते हैं। उस साल पग-पग लेविन को यह कठिनाई दिखाई पड़ी। किसानों को जो कोई काम वह सौंपता, ठिकाने से न होता, कोई औजार ही तोड़ लाता और कोई अगड़-बगड़ काम करके आता और एक न एक बहाना निकाल देता। रात को खेतों की रखवाली करनेके लिये एक भी किसान तैयार नहीं था। खेतमें पशु-चर जाया करते थे। यदि एकाध मजूरे जाते भी तो खेतों में सो जाते और सबेरे यही कहते-"कसूर हो गया, जो दण्ड चाहिये दीजिये।"

बछड़ों को दलदल में धंसा देते और मार डालते। कुछ कहने पर कह देते—"आप के तो कुछ नहीं मरे। अभी हाल में ही एक किसान

के सौ चौपाये इसी तरह मर गये।" इसका यह कारण नहीं था कि कोई भी लेविन को कष्ट देना चाहता था या उसे नुकसान पहुँचाना चाहता था; पर असल कारण उन सबोंकी लापरवाही थी। उन्हें काम की परवाह नहीं थी और वे जी लगाकर काम नहीं करते थे। इन सब बातों से लेविन का चित्त बड़ा ही खिन्न था। सब बातें अपनी आंखों देख कर भी वह प्रतीकार के लिये कुछ नहीं करता था। लेकिन इस तरह वह और अधिक दिन तक नहीं चलना चाहता था। खेती से उसकी तबीयत में उचट चली थी। उसने तबीयत उस ओर से हटा ली थी।

इधर किटी ने २० ही मील पर डेरा डाला था। प्रबल इच्छा होने पर भी वह उससे नहीं मिल सकता था। किटी के आने के बाद डाली ने उसे कई बार बुलाया भी था। उस निमन्त्रण का अभिप्राय पुनः शादी की बात चीत थी। लेविन के हृदय में भी किटी के लिये उसी तरह अनुराग था, लेश मात्र भी कमी नहीं हुई थी; पर जिस दिन से किटी आई, लेविन डाली के पास एक बार भी नहीं गया। किटी ने उसका प्रणय अस्वीकार कर दिया था; यह बात उसके ध्यान से नहीं उतरती और उसका मार्ग रोक कर खड़ी हो जाती। उसने अपने मन में कहा—"जिसको वह चाहती थी, उसने उससे शादी करना स्वीकार नहीं किया, इस कारण क्या मैं उससे शादी की चर्चा फिर छेड़ूं। मुझे तो यह नहीं जँचता। इस भाव से मेरा हृदय और भी कड़ा हो गया है। बिना घृणा के मेरे मुँह से एक शब्द भी नहीं निकलते। यदि मैंने कुछ कहा भी तो उसकी घृणा मेरी ओर से और भी बढ़ जायगी। और यह स्वाभाविक ही है। इसके अलावा डाली ने मुझसे जो कुछ कहा है ... कर मैं वहां जाऊं ही क्यों? क्या मैं यह बात छिपा सकूं

कि उसने जो कुछ कहा मैं सब जानता था ? क्या मैं ही उसे क्षमा कर सकूंगा और उसकी अवस्था पर खेद प्रगट करूंगा। डाली ने यह सब बातें मुझ से क्यों कहीं, कहीं अचानक मुलाकात हो जाने पर यह सब बात छिड़ती तो मामला आप ही आप तै हो जाता; पर अब तो यह समस्या और भी जटिल हो गई है।

इसी बीच में डाली का एक पत्र आया था। उसमें उसने लिखा था—"आप के पास स्त्रियों की सवारी के लायक जीन है, किटी घोड़े की सवारी करना चाहती है। यदि किसी तरह की असुविधा न हो तो चारजामा भेज दीजियेगा। यदि आप भी आने का कष्ट उठावें तो बड़ी कृपा हो।"

लेविन को यह सह्य नहीं था। डाली ने अपनी बहिन की मर्यादा का जरा भी ख्याल न किया। उसने दस बार पत्र लिखा, फाड़ डाला और केवल चारजामा भेज दिया। उसकी समझ में ही न आया कि क्या लिखे। "मैं नहीं आ सकता, या वहाँ मेरा इस समय आना नहीं हो सकता, अथवा मैं बाहर जा रहा हूँ" इनमें से वह एक भी बात नहीं लिख सकता था।

उसने चारजामा भेज दिया, पर उसे इस बात का पश्चात्ताप था कि उसने डाली के पत्र का कुछ उत्तर नहीं दिया। उसकी आत्मा दुःखी थी, मानों उसने कोई भीषण पाप किया है। काम-धाम से उसकी उदासीनता बढ़ती गई। अन्त में उसने खेती-बारी का सारा काम अपने गुमाश्ते को सौंप दिया और अपने मित्र स्विस्की से मिलने के लिये रवाना हो गया।

वहाँ रह कर वह अपने चित्त को शान्त कर सकता था। क्यों कि

इतने में खेत से काम करके मजूर लोग लौटे। उनके कन्धे पर हल था और आगे-आगे बैलों की टोली चली आ रही थी। मजूरे घर के ही आदमी मालूम होते थे। चार मजूरे थे, उनमें दो कुली मालूम होते थे। बुड्ढा अपनी जगह से उठा और बैलों को बाँधने लगा।

लेविन—क्या बोया जा रहा था ?

बुड्ढा—आलू बोया जा रहा था। हम लोग खेत भी साँज देते हैं।

इतने में युवती जल भरा घड़ा लेकर लौट आई। उसके साथ और भी अनेक स्त्रियाँ थीं। कुछ तो उसी की उम्र की थीं और कुछ वृद्धा तथा कुछ कम उम्र की बालिकायें थीं।

बैलों को बांध कर उन्हें चारा आदि देकर सब लोग भोजन की तैयारी करने लगे। लेविन ने भी गाड़ी में से भोजन का सामान निकाला और बुड्ढे को निमन्त्रित किया।

दोनों आदमी चाय पीने बैठ गये। बुड्ढे ने अपनी खेती का प्रसंग छेड़ दिया—"दस वर्ष पहले हमने यहाँ के जमींदार से ३० एकड़ ज़मीन मालगुजारी पर लिया था। उसीसे हमने कमाया और धीरे-धीरे उसे खरीद लिया। इस साल हमने खेती बढ़ाई और पड़ोस के ज़मींदार से २०० बीघा और जमीन ली है। इसमें से कोई सौ बीघा तो बढ़िया ज़मीन है, जिसे हम लोग स्वयं जोतते हैं। बाकी को साँज देते हैं। खेती की दशा अच्छी नहीं है।"

पर लेविन की दृष्टि में बात एक दम उलटी थी। खेत हरे-भरे थे। पौधे लह-लहा रहे थे। बैल मोटे-ताजे थे। पैदाइश इनकी अच्छी थी। दस वर्ष में ही इनने २०० बीघा जमीन खरीद ली। इन [illegible] बीघे की मालगुजारी, वह तीन रुपये एकड़ देता है। [illegible]

ही उसने दो लड़की और तीन भतीजों की शादी की है। इसी बीच
दो बार अग्नि प्रकोप से उसका घर जल गया था। बिना किसी चिन्
के उसने दोनों बार तुरन्त घर बनवाये और ये पुराने से कहीं अच्छे थे

बुड्ढे ने खेद तो प्रगट किया; पर उसके चेहरे पर सन्तोष था। घ
की अवस्था, खेती की अवस्था, लड़कों और भतीजों की नेक चाल भ
सब बातों से उसे सन्तोष था। सबसे अधिक सन्तोष उसे इस बात
था कि उसकी एक धुर भी जमीन फालतू नहीं थी।

बुड्ढा खेती बराबर नये तरीके से करता था। नये तरीके के अ
सार उसने आलू बोये थे और लेविन ने देखा कि उसके आलू खूब
हैं और बड़े हैं। पक भी चले हैं; पर लेविन के आलू में अभी फूल
रहे थे। पूछने से बुड्ढे ने कहा कि-"पड़ोस में एक आदमी के पास
किस्म का हल है, उसी के सहारे हमने आलू बोये थे। गेहूँ और जौ
खेती को देख कर लेविन को और भी आश्चर्य हुआ। लेविन ने जौ
खेती अनेक तरह से की, विविध युक्तियां लगाई; पर उसे एक बार
सफलता नहीं मिली। लेकिन बुड्ढे का जौ लह-लहा रहा था।"

लेविन-ये लड़कियाँ क्या काम करती हैं?

बुड्ढा-खेत से बोझ ढोकर ये सब गाड़ी पर लादती हैं और ग
से गाँठ यहाँ आती है।

लेविन-हम लोगों का बड़ा कष्ट है। हमारे मजूरे ठीक तरह से क
नहीं करते, बड़ी लापरवाही दिखाते हैं।

बुड्ढा-देख-रेख की भी कमी रहती है। स्विस्की के खेत सभी द
और उपजाऊ हैं; पर पैदावार इतनी कम होती है कि आश्चर्य होता

लेविन-पर आप भी तो मजूर रखते हैं।

बुड्ढा–रखते हैं सही; पर उनके भरोसे नहीं रहते। यदि मजूरे चले जायँ तो हम इसकी चिन्ता नहीं करते। आप ही सब काम कर लेते हैं।

इसके बाद लेविन ने विदा माँगी। रास्ते पर उसे इस किसान की बातें नहीं भूलीं। वह उसकी अवस्था, खेती की दशा और काम करने के उत्तम तरीके पर विचार करता रहा।

१६

लेविन का मित्र स्विस्की अपने जिले का मार्शल था। वह लेविन से पांच वर्ष बड़ा था। उसकी शादी हो चुकी थी। उसकी साली भी उसी के साथ रहती थी। रूपवती होने के साथ ही उसका स्वभाव बड़ा ही नम्र था। लेविन उसे बहुत चाहता था। लेविन जानता था कि यदि मैं इस लड़की से शादी करलूँ तो स्विस्की और उसकी पत्नी दोनों को अतिशय प्रसन्नता होगी। लेकिन यह बात वह किसी से कहता नहीं था। उसका हृदय कहता था कि इस रमणी से शादी कर तुम अपने को धन्य समझोगे, तुम्हारा जीवन सुखमय हो जायगा। फिर भी न जाने क्यों वह उससे शादी करने का साहस नहीं करता था। स्त्री के संबन्ध से इसमें कोई बाधा नहीं थी। इस कारण इस यात्रा में उसे वह आनन्द नहीं था, जो वास्तव में होना चाहिये था।

स्विस्की का पत्र पाकर लेविन समझ गया था कि वह निमन्त्रण किसलिये है। उसने भी एक बार वहां रहकर अपने मन को [illegible] चाहा। स्विस्की का मिजाज बड़ा ही अच्छा था। लेविन की उसमें बड़ी [illegible] थी। इन्हीं सब कारणों से लेविन ने वहां जाना स्थिर किया था।

स्विरकी विचित्र तरह का आदमी था, उसकी कहनी और करनी
ओर अन्तर था। वह कहता कुछ था और करता कुछ था। उसका विच
बड़ा ही उदार था। कुलीन वर्ग को वह हृदय से घृणा करता था
उसका विश्वास था कि वह कुलीन वर्ग भी हृदय से कृषिदासता व
विरोधी है; पर अपना मत प्रकट करने का साहस नहीं करता। उस
मत था कि रूस राज्य भ्रष्टाचार और पतन की अन्तिम अवस्था व
पहुंच गया है। उसकी निन्दा जितने कठोर शब्दों में की जाय थोड़ी है
फिर भी वह उसी सरकार का कर्मचारी था और कुलीन वर्ग का अगुआ था
साथ ही उसे अपने अफसरी लिबास का बड़ा ही घमण्ड था और बिन
उसके वह कभी भी घर से बाहर नहीं निकलता था। उसे जीवन व
सच्चा सुख रूस से बाहर ही मिलता था और अवसर मिलते ही वह घ
छोड़ कर निकल जाता और इधर उधर घूमा करता था। साथ ह
रूस का रत्ती-रत्ती हाल जानने की चेष्टा करता था और खेती भी खू
कर रखी थी।

उसका कहना था कि—"रूस के लोग अभी तक किसी तरह स
मनुष्य नहीं बन गये हैं। अपने पूर्व पुरुष बन्दर जाति से तो वे अवश्य
ही आगे बढ़ गये हैं; पर अभी मनुष्य वर्ग से पीछे हैं। जातीय-सभ
में किसानों के साथ सहानुभूति दिखाने, उसका पक्ष ग्रहण करने तथ
उन्हें अपना अन्नदाता भाई कहकर उन्हें गले से लगाने के लिये सबसे
पहले स्विरकी ही आगे आता था। न तो उसे ईश्वर में विश्वास था
और न वह शैतान का ही उपासक था। फिर भी वह पादरियों का कट्टर
पक्षपाती था और उनके हक के लिये बराबर यत्न करता रहा। अपने
[illegible] के लिये वह तन-मन और धन से तैयार रहता था।"

स्त्रियों की पूर्ण स्वाधीनता का वह पक्षपाती था। उसका कहना था कि कम से कम मजूरी करने के विषय में उन्हें पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिये। उसका गार्हस्थ-संबंध विचित्र था। वह अपनी स्त्री से एक भी काम नहीं लेता था। सारा काम स्वयं करता था। अपना समय काटने के लिये वह खुद इसे सहायता दिया करती थी।

लेविन का हृदय अतिशय उदार था। यही कारण था कि स्विस्की के इस विचित्र व्यवहार से भी उसे आश्चर्य नहीं हुआ। नहीं तो यदि कोई दूसरा व्यक्ति इस अवस्था में होता तो वह दूसरा ही मत स्थिर करता। लेविन स्विस्की को अच्छी तरह जानता था। स्विस्की जितना शिक्षित और बुद्धिमान् था, उतना ही उदार और सरल था। नम्रता तो उसमें कूट-कूट कर भरी थी। इतना पढ़ लिख कर भी उसे अपने पाण्डित्य का अभिमान नहीं था और जब तक कोई अतिशय लाचारी न पड़ जाय, वह अपना अगाध पाण्डित्य नहीं झलकाता था। उसको सभी चाहते थे, सभी उसको प्यार करते थे। आज तक उसने कोई भी ऐसा काम नहीं किया था, जिससे किसी को कष्ट पहुँचा हो।

फिर भी लेविन उसके जीवन को अच्छी तरह नहीं समझ सका था। उसने उसे भी एक तरह की जटिल समस्या समझा।

स्विस्की की लेविन से घनिष्ट मित्रता थी। लेविन स्विस्की से बराबर कहता—"जरा तुम अपने जीवन पर विचार करके चला करो, क्या करते हो और क्या कहते हो, इसका भी कुछ ध्यान रखा करो।" किन्तु वह सब फ़िज़ूल था। जब कभी लेविन ने स्विस्की के अन्तरंग जीवन पर विचार करना चाहा, उसने देखा कि स्विस्की उदासीन है, उसे कुछ परवा नहीं है और वह अधीर हो उठता है। इसने लेविन हंसी-हंसी में उसे कुछ

ऊंचा-नीचा कह कर चुप रह जाता था।

खेती के प्रति इस तरह उदासीन हो जाने के बाद, लेविन को स्विस्की के साथ रहने में विशेष आनन्द आया। एक तो स्विस्की का स्वभाव यों ही सरल था, दूसरे उसकी पत्नी की खातिरदारी सोने में सुहागा थी तीसरे आस पास के मजूरों के साथ खेती के बारे में बात-चीत करने से लेविन का जी और भी अधिक प्रसन्न होता था।

शाम का वक्त था। लेविन अपने मिहमानों के साथ बैठा चाय पी रहा था। स्विस्की की पत्नी और साली से वह बातें कर रहा था लेविन स्विस्की की पत्नी के साथ स्विस्की के संबंध में बात-चीत करना चाहता था और उसे समझना चाहता था कि यह द्वैधी भाव कैसा है पर वह खुल कर बातें नहीं कर सकता था। स्विस्की की साली ने जो कपड़ा पहन रखा था, वह इतना खुला था कि लेविन को उसकी ओर देख कर लज्जा मालूम होती थी। वह स्थिरता से उधर देख भी नहीं सकता था। लेकिन स्विस्की की पत्नी की समझ में यह न आया। उसने कहा "आप कहते हैं कि स्विस्की को रूस संबंधी बातों से सहानुभूति या दिलचस्पी नहीं है। यह बात एक दम उल्टी है। रूस से बाहर मैं उन्हें सदा प्रसन्न पाती हूँ, पर यहां आते ही उनका मुख मलिन हो जाता है वह सदा रूस की चिन्ता में डूबे रहते हैं। वे सदा काम में व्यस्त रहते हैं और अधिक से अधिक काम करते रहने का यत्न करते हैं।......क्या आपने हम लोगों का स्कूल देखा है?"

लेविन—शायद देखा है। वही सामने वाला फूस का झोपड़ा न?

स्विस्की की पत्नी—(अपनी बहन की ओर लक्ष्य करके) नाशिया [illegible] है और वही इसकी निगरानी करती है।

लेविन (उसकी ओर देख कर) आप ही पढ़ाती भी हैं ?

नाशीया-जी हां, मैं पढाया करती थी। अब भी पढ़ाती हूँ अब तो हम लोगों ने एक सुबोध अध्यापिका भी रख ली है और कसरत भी सिखाना आरम्भ किया है।

स्विस्की टेबुल की दूसरी ओर बैठ कर दो जमींदारों से कुछ बात-चीत कर रहा था। उनकी बातें लेविन के कान तक पहुंची। उसने स्विस्की की पत्नी से कहा—"जरा उधर की भी बातें सुननी चाहिये।" यह कहकर वह उठा और स्विस्की से पास जाकर बैठ गया। स्विस्की का साथी किसानों की शिकायत कर रहा था। लेविन जानता था कि इन सब शिकायतों का अन्त स्विस्की एक ही बात में कर सकता है। लेकिन उसने कुछ नहीं कहा और चुप-चाप उन दोनों जमींदारों की बातें सुनता रहा और रह-रह कर हँसता रहा, मानों उसे आनन्द आ रहा है।

जमींदार ने कहा—"यदि मैं यह समझता कि जो कुछ मैं कह रहा हूँ, व्यर्थ जायगा तो मैं भी तुम्हारी ही भाँति उदासीन होकर विदेशों में भ्रमता और आनन्द मनाता।"

स्विस्की—पर तुम लोग हमारी तरह घाटे में तो नहीं रहते होगे।

जमींदार—इतना लाभ तो अवश्य है कि अपने घर में रहते हैं। मकान के लिये भाड़ा नहीं देना पड़ता और आशा लगी है कि किसी दिन इन बेवकूफ किसानों को अक्ल आवेगी। मैं आप से क्या कहूँ। ये कितने बदमाश हैं। घर में भूंजी भांग नहीं, तीन-तीन दिन से कड़ाके हो रहे हैं: पर यदि आप इन्हें काम करने के लिये रख लीजिये तो तुरन्त शरारत आरम्भ कर देते हैं और यदि कड़ाई कीजिये तो अत्याचार का अभियोग चलाते हैं। शराबी तो पहले नम्बर के होते हैं।

स्विस्की—आप लोग भी तो अपनी कारवाई से बाज नहीं आते। आप भी तो उन पर मुकदमे चलाने का यत्न ही किया करते हैं।

जमींदार—हम लोग मुकदमा चलाते है! वाह, वाह, आप ने भी खूब कही। देखिये न, पेशगी रुपया लेकर भाग जाते हैं। यदि वारण्ट में गिरफ्तार भी कराया तो अदालत सुनती नहीं, उन्हें छोड़ देती है। सिवा पंचायत के किसी और उपाय से सीधे नहीं रहते। गांव का मुखियाँ जब उनके चूतड़ों पर तड़ातड़ बेंते लगाता है, तब वे राजी रहते हैं।

जमींदार ने देखा कि स्विस्की इस बात से हँस रहा है। उसे आनन्द मिल रहा है।

स्विस्की—हम लोग भी किसान हैं, लेकिन इस तरह की कारवाइयों से हम लोग सदा दूर रहते हैं। लेविन का भी यही तरीका है और आपके पास तो दूसरे जमींदार महाशय बैठे हैं, वे भी वही करते हैं।

जमींदार—मिहल के यहां भी काम होता है, उनसे पूछिये कि किस तरह होता है? क्या कोई भी उसे आदमियत कह सकता है?

मिहल—मेरा काम करने का तरीका तो बड़ा ही सरल है, किसान सब पड़ोसी हैं। एक दूसरे के दुःख-सुख को समझते हैं। एक दूसरे की सहायता करते हैं। हां, उनमें भी तरह-तरह के आदमी रहते हैं, कुछ बेईमान भी होते हैं। इसे कौन अस्वीकार कर सकता है।

लेविन—तब क्या करना चाहिये? आपही कोई युक्ति बतलाइये।

जमींदार—क्यों? या तो मिहल की भांति आप भी अपना इन्तजाम कीजिये या किसानों को बटाई पर जमीन दे दीजिये। यही करने के लिये सब लोग लाचार हैं और देश का नाश होता जा रहा है। किसानों के [illegible] सब का जो पैदावार होती थी, वह आधी हो गई। कृषक-

दासों के उद्धार का यही सुन्दर फल देखने में आ रहा है।

इस जमींदार की बात पर स्विस्की को हँसी आई। उसने तीखी निगाह से लेविन की ओर देखा। पर लेविन ने इस जमींदार की बात को इतना फजूल नहीं समझा। उसने देखा कि जमींदार जो कुछ कह रहा है, सच कह रहा है। जमींदार ने और भी अनेक तरह की बातें कहीं, जो रूस के नाश के कारण हो रही थीं। लेविन की आंखों के सामने सभी बातें नाचने लगी।

जमींदार कहता गया-"आप पढ़े-लिखे हैं। इतिहास उठा कर देखिये। आप को विदित होगा कि बिना अधिकार के किसी तरह का सुधार सम्भव नहीं।"

स्विस्की—मजूरों को रोजाना पर रख कर भी तो आप इसी तरह काम चला सकते हैं?

जमींदार—उन पर हमारा जोर ही क्या है। मैं किसके जोर पर काम कर सकता हूँ?

लेविन ने अपने मन में सोचा—"खेती के लिये तो सबसे प्रधान बात मजूरे हैं। यदि ये नहीं मिलते तो खेती कैसे हो सकती है?"

स्विस्की—मजूरों के साथ!

जमींदार—पर मजूरे काम करने के लिये तैयार हों तब तो? नये औजारों को वे छूना नहीं चाहते। शराब वे दिन भर पीना चाहते हैं। नशे में चूर आदमी क्या कर सकता है? यह आपसे छिपा नहीं। वह सर्व-नाश के सिवा क्या करेगा। लापरवाह भी वह पक्के होते हैं। कहीं घोड़ों को अधिक पानी पिला दिया, वे बीमार हो गये। कहीं मशीन तोड़ दिया। कहीं हलों को जमीन में रख दिया और मुर्चा लग गया। इनके मन के

मुताबिक जो बात नहीं होती, उससे वह नफरत करता है। यही कारण है कि कृषि की यह दुर्दशा हो रही है। खेत बंजर पड़गये हैं; उन्हें कोई जोतने बोनेवाला नहीं है। खेतों में घास मर गई है। टुकड़े-टुकड़े हो गये हैं, पैदावार मारी गई है। जिन खेतों में सैकड़ों मन अन्न होते थे, उन की दशा इस समय कितनी खराब हो रही है। यदि जरा भी होशियारी और सावधानी से काम किया जाय तो……।

इतना कह कर उसने कृपक दासों के उद्धार की तरकीब वर्णन करनी आरम्भ कर दी; पर लेविन को उसकी चर्चा पसन्द नहीं थी। उसके समाप्त करने पर लेविन की ओर स्विस्की इशारा करके कहना आरम्भ किया-"इसमें कोई शक नहीं कि खेती की अवस्था दिन-दिन खराब होती जा रही है और किसानों के साथ हमारा जिस तरह संबंध हो रहा है, उसमें उद्धार की संभावना नहीं दिखाई देती।"

स्विस्की गंभीर होकर कहने लगा—"मैं तुम से सहमत नहीं हूँ। असल बात यह है कि हम लोग खेती करना नहीं जानते। न तो हम लोगों के पास अच्छी मशीनें हैं, न अच्छा बीज है और न हम लोग अच्छी तरह निगहबानी करते हैं। साथ ही हिसाब-किताब रखने में भी पूरे लापरवाह हैं। क्या कोई भी खेतिहर या जमींदार आपको बतला सकता है कि अमुक फसल से उसे लाभ हुआ और अमुक से उसे हानि हुई।"

जमींदार—आप चाहे कैसा भी साफ हिसाब-किताब क्यो न रखें; वे आपकी हानि के लिये तुले हैं, तब आप कुछ नहीं कर सकते। इस भी आपको नफा नहीं हो सकता।

स्विस्की—ये हमारी हानि पर क्यों तुले हैं? यदि आप सड़ियल मशीन उनके हाथ में दे दें तो भले ही उसे तोड़ सकते हैं; पर भारी मशीन तो

नहीं तोड़ सकते। हमें अपने औजारों को और भी मजबूत बनाना चाहिये।

जमींदार—सब के पास इतनी पूँजी कहा है? आपके पास रुपया है, आप अच्छी से अच्छी मशीन ला सकते हैं। लेकिन मेरे पास तो इतना धन नहीं है। मैं अपने खर्च से ही तबाह रहता हूँ।

स्विस्की—बंक किस वास्ते खोले गये हैं?

जमींदार—जो कुछ बचा है, वह भी किसी न किसी दिन नीलाम पर चढ़ जायगा।

लेविन—मेरी समझ में खेती पर और व्यय करने की आवश्यकता नहीं है। मेरे पास सब कुछ है। मैं-जहां तक हो सकता है-व्यय भी करता हूँ, मुझे कोई लाभ नहीं दिखाई देता। बंकों की बात जो आपने कही है, उसके सम्बन्ध में मैं अभी तक यही नहीं समझ सका हूँ कि क्या वास्तव में बंकों से किसी को लाभ हो सकता है? मैं तो यही कह सकता हूँ कि खेती में मैंने जो कुछ लगाया खो दिया।

जमींदार—आप का कहना बहुत ठीक है। मेरा भी यही मत है।

लेविन—आस-पास के सभी जमींदारों से मैं मिलता रहता हूँ। सब की यही हालत है। (स्विस्की से) आप अपनी ही जमींदारी की बात कहिये। आपको क्या नफा हो रहा है।

उसने देखा कि स्विस्की यह प्रश्न सुनते ही घबड़ा गया। लेविन ने यह दशा अनेक बार देखी थी। यही कारण था कि वह कभी स्विस्की की अन्तरंग बातें नहीं छेड़ता था। इसके अतिरिक्त लेविन का यह प्रश्न उचित भी नहीं था। क्योंकि स्विस्की की पत्नी से उसने अभी सुना था कि चार सौ रुपया देकर उन्होंने जर्मनी के एक दक्ष मुनीम से हिसाब जँचवाया था और उसने कहा था कि खेती में नुकसान हो रहा है। ठीक रकम

तो याद नहीं थी; पर करीव ३ हजार रुपये के उसने वताया था।

लेविन के इस प्रश्न पर वह जमींदार भी हंसा। क्योंकि वह जानता था कि उसके पड़ोसी मार्शल साहव कितना लाभ उठा रहे हैं।

स्विस्की–शायद मुझे कुछ भी लाभ नहीं है। इससे तो यही साबित होता है कि या तो मैं अच्छा इन्तजाम नहीं कर सकता या मैंने मालगुजारी वढ़ाने के लिये रुपया लगाया है।

लेविन–मालगुजारी! यूरोप के अन्य प्रदेशों में मालगुजारी भले ही उठे; पर यहां तो लेने के देने पड़ रहे हैं। खेती का नाश हो रहा है। यहां मालगुजारी कहां?

स्विस्की–क्यों? क्या कानून नहीं है।

लेविन–तव तो हम लोग कानून से वाहर हैं। मालगुजारी का सिद्धान्त आपही स्थिर कीजिये।

इतने में स्विस्की उठ गया, मानों विवाद का अन्त हो गया। लेविन ने देखा कि अभी उसका आरम्भ हुआ है।

स्विस्की के उठ जाने पर लेविन ने उस जमींदार से वात करना आरम्भ किया। उसका मत था कि–"इन कठिनाइयों का प्रधान कारण यह है कि हम लोग मजूरों की मानसिक अवस्था को नहीं समझ सके हैं और जमींदार दूसरों का सम्मति लेना पसन्द नहीं करते। अपनी वात ही ठीक और उचित समझते हैं। विना अधिकार के सुधार नहीं हो सकता।"

जमींदार–आपका कहना ठीक है।

स्विस्की–(लौट कर) मजूरों के साथ कैसा संबंध रहेगा, स्पष्ट कर है। फिर उसमें किस वात की कठिनाई है। नौकर रख

लीजिये तो मजूरी दीजिये या कटाई पर रखिये।

लेविन–पहले के लोगों को इनमें से एक भी तरीका पसन्द नहीं है।

स्विस्की–सन्तोष नहीं है और नया तरीका खोज रहे हैं तो वह भी हो जायगा।

लेविन—मेरा भी यही अभिप्राय था तो हम लोग अपने ही लिये क्यों न ढूंढ निकालें।

स्विस्की—यह तो व्यर्थ का परिश्रम होगा। जो तैयार है, उसके लिये व्यर्थ परिश्रम करना होगा।

लेविन–मगर ये गदहे हैं और ठीक तरह से काम नहीं करते?

स्विस्की का चेहरा फिर उतर गया।

इतने में दोनों जमींदार उठे और चलने के लिये तैयार हो गये। स्विस्की उन्हें द्वार तक पहुँचा आया।

१७

स्विस्की से बात-चीत करने के बाद लेविन को इतना सन्तोष तो अवश्य हुआ कि मेरे ही खेतों की यही दशा नहीं है, बल्कि सब के खेतों की यह अवनति सर्वसाधारण है। उसने यह भी देखा कि खेती में किसानों को किसी तरह का हिस्सा देकर उन्हें उत्साह से काम करने के प्रलोभन देने का मेरा ख्याल अनुचित नहीं था। इस विषय में भी वह हताश हो रहा था; पर स्विस्की से बात करने के बाद उसे आशा की पतली रेखा दिखाई दी।

स्विस्की की पत्नी तथा साली से विदा लेकर लेविन किसानों के

पाठनालय में गया। स्विस्की ने मजूर संगठन पर कुछ पुस्तकें इकट्ठी कर रखी थीं, लेविन उन्हें देखना चाहता था।

लेविन कमरे में गया। टेबुल पर अनेक तरह के समाचारपत्र और पुस्तकें पड़ी थीं। वह उलट-पलट कर उन्हें देखने लगा।

स्विस्की—क्या देख रहे हो ?

लेविन—एक अच्छा सा लेख दिखाई पड़ गया।

स्विस्की—हां, हां, मैंने भी देखा है। अन्त में यह साबित ही हो गया कि पोलैण्ड के बँटवारा में फेडरिक का हाथ नहीं था।"

लेविन का सारा ध्यान कृषि संबंधी प्रश्न में ही लगा था। उसे पोलैण्ड या अन्य बात की सुध-बुध नहीं थी। स्विस्की की बातें सुन कर उसे विस्मय हुआ। उसने अपने मन में कहा—"उससे नहीं रह गया। पूछ ही तो बैठा तब ? उससे क्या फल निकला।"

इससे अधिक कोई बात नहीं थी। स्विस्की की सारी दिलचस्पी केवल इसी बात में थी कि यह बात साबित हो गई। पर स्विस्की यह बात भी नहीं कह सकता था कि—"उसकी दिलचस्पी का क्या कारण था ?"

लेविन—तुम्हारा यह पड़ोसी तो बड़ा चतुर मालूम होता है। मुझे इसकी बातें बड़ी अच्छी लगीं। उसकी बातें भी ठीक थीं।

स्विस्की—उसका नाम मत लो। कृषकदासता का कट्टर पक्षपाती है।

लेविन—पर आप मार्शल (अगुआ) किसके हैं ?

स्विस्की—मैं उन्हें केवल ठीक मार्ग पर ले जाता हूँ।

लेविन—उसकी जो बातें मुझे जँची, कह देना चाहता हूँ। क्या ... पर कहना ठीक नहीं था कि मनुष्यता के नाम पर हम लोगों ने

जो तरीका अख्तियार किया है, उससे हमें लाभ नहीं। हमारा कल्याण या तो कर्ज देकर उन्हें (किसान मजूरों को) फँसा रखने में है या सीधे-सादों को फांस रखने में है। यह किसका दोष है ?

स्विस्की—मैं मानता हूँ कि इसका दोष हम लोगों पर है। लेकिन यह नहीं कह सकते कि इसमें पड़ता नहीं खाता। इसमें विस्मय की कौनसी बात है। यहाँ के लोगों का मानसिक और सदाचारिक विभाग कितना कम हुआ है। यही कारण है कि जो बात उन्हें नहीं भी मालूम होती है, उसका वे विरोध करते हैं। यूरोप के जिन प्रदेशों में शिक्षा आदि के प्रचार से जन साधारण का मानसिक विचार उत्तम हो गया है, यहां काम चलता है। इससे यही तात्पर्य निकलता है कि क्यों लोगों को शिक्षा देकर पढ़ाना-लिखाना चाहिये।

लेविन—पर शिक्षा का क्या क्रम होगा ?

स्विस्की—स्कूल खोले जायँ और लोगों को पढ़ाया जाय।

लेविन—तुमने अभी कहा है कि लोगों की आर्थिक अवस्था निहायत गिरी है। स्कूलों से उसमें क्या लाभ होगा ?

स्विस्की—तुम ने तो ठीक उस रोगी की बात निकाली जो किसी हकीम के पास दवा लेने गया और जो दवा हकीम बतलावे उसी पर सवाल कर बैठे कि यदि इससे भी लाभ न हुआ तब ? अन्त में थककर हकीम ने कह दिया कि—"उस अवस्था में ईश्वर का नाम लेना, वही मदद करेगा।" उसी तरह तुम हर एक बात को खराब बतलाते चले जा रहे हो। हम जो कुछ कहते हैं, सब में एक न एक नुक्स निकाल ही देते हो।

लेविन—मेरे पूछने का अभिप्राय यह है कि तुमने हम लोगों का

अभिप्राय किस प्रकार सिद्ध होता है ?

स्विस्की-शिक्षा से किसानों में नई-नई आवश्यकताओं का उदय होगा।

लेविन-(गर्म होकर) यही बात मेरी समझ में नहीं आती। स्कूलों से लोगों की आर्थिक दशा का सुधार कैसे होगा ? तुम्हारा कहना है कि-'शिक्षा से लोगों की आवश्यकता बढ़ेगी।' पर इस से तो उलटी हानि ही हुई। अर्थाभाव के कारण वे अपनी आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर सकेंगे। मेरी समझ में यह बात नहीं समाती कि जोड़, बाकी और गुणा-भाग से उनके आर्थिक सुधार में क्या सहायता मिलेगी। परसों की बात है, मैं आ रहा था। रास्ते में मुझे एक किसान की स्त्री मिली। उसकी गोद में एक बालक भी था। मैंने उससे पूछा-"कहां जाओगी ?" उसने उत्तर दिया-"मैं दर्शनिया के पास जाती हूँ। यह बच्चा कल से रोता और चिल्लाता है। उसी को झड़वाने जा रही हूँ।" इस पर मैंने पूछा-"भला दर्शनिया इसे किस तरह अच्छा कर सकती है ?" उत्तर में उसने कहा-"वह लड़के को सामने खड़ा कर देती है और मन्त्र से झाड़ती-फूंकती है।"

स्विस्की-(हंस कर) तुम ने तो मेरे ही पक्षका समर्थन किया। मैं भी तो यही कह रहा हूँ कि हम लोगों को ऐसे साधनों की आवश्यकता है, जिस के द्वारा हम लोग इन सब भ्रमात्मक विश्वासों को दूर करें।

लेविन-नहीं-नहीं, मेरा अभिप्राय कुछ दूसरा ही था। मेरे कहने का मतलब तो यह था कि ये स्कूल भी उसी तरह की चीजें हैं। जन साधारण गरीब और मूर्ख हैं। इसे मैं भी स्वीकार करता हूँ और तुम भी

स्वीकार करते हो। पर इस गरीबी और मूर्खता का नाश इन स्कूलों द्वारा उसी तरह असंभव है, जिस तरह दर्शनिया का रोना बन्द करना। सब से पहली बात उनकी गरीबी दूर करनी है।

स्विस्की-यहां पर आप का मन स्पेंसर से एक दम मिलता है। स्पेंसर का भी यही कहना है कि पढ़ने-लिखने से समृद्धि नहीं हो सकती। हां, समृद्धि के कारण शिक्षा का अधिकाधिक प्रचार हो सकता है।

लेविन-इस संबंध में मेरा कहना यही है कि आर्थिक संगठन होना चाहिये। इससे लोगों की समृद्धि बढ़ेगी, उन्हें कम-काम करना पड़ेगा। समय अधिक मिलेगा और वे पढ़ने की ओर ध्यान बढावेंगे।

स्विस्की-इतने पर भी यूरोप के अन्य देशों में नित-नये स्कूल खुलते दिखाई देते हैं।

लेविन-आप का मत क्या है। स्पेंसर के मत से आपका मत कहां तक मिलता है?

स्विस्की का चेहरा एकाएक उदास हो गया। वह बगलें झांकने लगा लेविन ने अपने मन में कहा इस व्यक्ति-"में यह कैसा विरोधाभास है। इसे इस बात की जरा भी परवा नहीं रहती कि वह किस तरफ बढ़ता चला जा रहा है। केवल वह बहस करते रहना चाहता है। वह बंधना भी नहीं चहता। इसी लिये वह बराबर अपने विषय को बदलता रहता है।"

इन सब घटनाओं ने लेविन के हृदय में घोर अन्दोलन मचा दिया। एक तरफ तो अपने मित्र स्विस्की की दशा पर उसे क्षोभ था। वह व्यक्ति केवल लोगों के सामने डींग हांकने के लिये ही लम्बी चौड़ी बातें किया करता, नहीं तो उसका आचरण एकदम विपरीत था, दूसरी ओर कृषि की दशा को जितना वह सुधारना चाहता था, उतना ही वह

बिगड़ती जाती थी, इन दोनों बातों की चिन्ता से वह व्याकुल हो उठा।

सोने की चारपाई पर पड़ा लेकिन अधिक रात तक इसी चिन्ता में पड़ा रहा, उसे नींद नहीं आई। खिस्की के पड़ोसी जमींदार की बातें उसे रह-रह कर याद आतीं और उनमें उसे बहुत कुछ-सपना दिखाई देती।

मुझे उससे कहना चाहिये था—"आपका कहना है कि खेती में लाभ नहीं होता, क्योंकि किसान दिल लगा कर काम नहीं करते और आप उन्हें काम में मजबूरन लगाने का अधिकार चाहते हैं। पर यदि इस उपाय से काम लेने पर किसी तरह की किसानी न चले, तब तो आपके तरीके से चलना चाहिये। पर हम लोग देखते हैं कि जहां किसानों को पुराने तरीके से काम करने को मिलता है, वहां सफलता है, यहां से थोड़ी ही दूर पर एक बुड्ढा किसान रहता है, उसकी खेती बड़ी उत्तम है! हमने तथा आपने जो असन्तोष प्रगट किया है, उसमें या तो हमीं लोगों का दोष है या किसानों का। हम लोगों ने आधुनिक तरीके का प्रचार पूरी तौर से किया; पर हम लोगों ने इस बात पर एक बार भी ध्यान नहीं दिया कि हमारे किसान किस तरह के हैं। इसलिये हमें उचित है कि हम लोग सब से पहले रूस के कृषक मजूरों को समझें और तब उनकी ही अवस्था के अनुसार अपनी खेती का प्रबन्ध करें। आप के सामने वे ही तरीके हैं, जो किसानों के सामने थे। आप अपनी खेती में सफलता पूर्वक काम करना चाहते हैं। आप चाहते हैं कि खेती में हम इस तरह के सुधार करें, जो किसान लोग भी स्वीकार करें और जमीन का नाश किये बिना ही दूनी और तिगुनी पैदावार कर लें। इसके लिये पहले तो पैदावार का बराबर हिस्सा किसान को दीजिये और दूसरे खेती की दशा सुधारने में उतना ही व्यय कीजिये, जितना किसानों

को सख्त हो। इसीसे काम ठीक-ठीक चल सकता है।"

इस भाव के उठते ही लेविन की बेचैनी और भी बढ़ गई। वह इस को कार्य क्रम में लाने की तरकीब सोचने लगा। परिणाम यह हुआ कि रात आधी से अधिक बीत गई और उसे नींद नहीं आई। पहले तो उसने एकाध दिन ठहरने का निश्चय किया था; पर अब उसने सवेरे ही जाना निश्चय किया। इस नये तरीके के अनुसार काम करने की चिन्ता ने उसे इस तरह घेरा कि वह अपने को सम्हाल नहीं सका। उसने कहा-"मैं सारे रूस में इस तरह आग लगा दूँगा।"

१८

काम इतना सहज नहीं था। एक के बाद एक करके विपत्तियों का पहाड़ घहराता गया, पर लेविन दृढ़ता के साथ उनका सामना करता रहा। वह पहाड़ की तरह अटल था। इससे जो फल निकला, वह पूर्णतया सन्तोष जनक नहीं था तो भी इतना सन्तोष तो अवश्य मिलता था कि इससे काम चल सकता है और इसका प्रचार करना चाहिये।

लेविन ने घर पहुँचते ही गुमाश्ते को बुलाया और सब बात समझाई। गुमाश्ते ने हंस कर कहा—"मैं तो पहले से ही आप से कह रहा था कि जिस तरीके से हम लोग चल रहे हैं, ठीक नहीं है। केवल रुपये की बरबादी हो रही है; पर किसानों को हिस्सा देना कहां तक उचित होगा, मैं नहीं कह सकता।" इस के बाद उसने कई आवश्यक विषय छेड़ दिये। लेविन ने भी उस समय बहस न करना ही उचित समझा।

लेविन बहुत चाहता था कि वह इस नये तरीके से काम आरम्भ

कर दे; पर उसके मार्ग में भीषण कठिनाइयां थीं। खेती हो चुकी थी, फसल खेतों में लहलहा रही थी। बीच ही में इस तरह का उलट-फेर कठिन था। उधर किसान भी यही कहते थे—"इस समय काम की तेजी है। हम लोगों को इस समय इतनी फुरसत कहां है कि हम लोग इसके गुण दोष को समझ कर निश्चय करें कि इससे हमें लाभ हो सकता है, या नहीं।"

दूसरी कठिनाई यह थी कि किसानों को सहसा विश्वास नहीं होता था। जमींदारों की सभी बातों को वे सन्देह की दृष्टि से देखते थे। इसमें भी उन्हें चाल ही सूझी। वे समझते थे कि—"हमलोगों के खून चूसने का इसने यह कोई नया तरीका निकाला है। इसका भीतरी माने कुछ और ही है। इस संबंध में उन्होंने भी अनेक तरह की बातें कहीं; पर अपने हृदय के असली भाव को उन्होंने छिपा ही रखा। इसके अतिरिक्त किसानों का सब से पहला शर्त यही था कि उन्हें नये तरीके से काम करने तथा नये औजारों के इस्तेमाल के लिये किसी भी तरह से मजबूर नहीं किया जाय। यद्यपि वे स्वीकार करते थे कि नये औजारों से काम उम्दा और अधिक होता है; पर अनेक ऐसे कारण हैं कि हम लोग इनका प्रयोग नहीं कर सकते। लेविन को बड़ा दुःख हुआ। उसने यह स्थिर कर लिया था कि—"कृषि का जो उच्च आदर्श हम लोगों ने सामने रखा था, उसकी सीमा गिरा देंगे; पर नये औजारों के प्रयोग का लाभ प्रत्यक्ष देख कर भी कैसे नहीं कर सकते हैं।" फिर भी वह हताश नहीं हुआ। उसने किसी किसी तरह इस नये तरीके का प्रचार किया और दूसरे साल उसी के अनुसार उसकी खेती होने लगी।

पहले तो लेविन ने यही सोचा था कि—"सारे के सारे खेत, नफे के

चक किसानों को सौंप दिये जायँ; पर बाद को उसने देखा कि यह काम असम्भव है। इसलिये लाचार होकर उसे छोटे-छोटे टुकड़े बनाने पड़े। लेनिन के ग्वालों ने तो सब से पहले यह शर्त स्वीकार कर ली और गौओं का ठीका ले लिया। इस तरह बटाई पर प्रायः आधी जमीन उठी और बाकी का काम उसी प्रकार चलता रहा।

गोशाले की दशा पहले से सुधरी। पर ग्वाला सदा इस बात का विरोधी था कि गोशाले के चारो ओर आग जला कर गोशाला गर्म किया जाय। उसका कहना था कि सर्दी के कारण चारा कम लगता है और दूध खट्टा हो जाता है। खट्टे दूध से मक्खन अधिक निकलता है। मजूरी भी पहले ही की तरह बराबर लेता जाता है और वह तब तक भी यह बात नहीं समझता था कि यह मजूरी नहीं; बल्कि पेशगी मिल रही है और अन्त में उसे जो हिस्सा मिलेगा, उसमें से काट लिया जायगा।

किसानों ने ठीक तरह से काम नहीं किया। दो चार खेत न जोत कर उन्होंने एक ही जोताई करके बोना आरम्भ कर दिया। पूछने पर कहने लगे—"समय कम था।" नयी शर्तों पर काम करके भी वे हिस्सेदारी की बात को दबा कर कहते कि हमने तो केवल आधे पैदावार की मालगुजारी के रूप में देने को कहा है। एकाध ने तो लेविन से यहां तक कहा—"आप मालगुजारी पर खेत दे देते तो आप की भी चिन्ता मिट जाती और हम लोग भी निश्चिन्त हो जाते।" किसानों से तै था कि खेतों में बाड़ा और बखार तैयार करेंगे; पर जाड़े तक कोई काम न हुआ।

लेविन किसानों से बराबर कहा करता कि यह काम हमने दोनों के लाभ के लिये उठाया है; पर किसानों के कान तक इसकी बातें न जातीं। वे इसकी बातों के समझने का यत्न तक नहीं करते। जिन किसानों को

कर दे; पर उसके मार्ग में भीषण कठिनाइयां थीं। खेती हो चुकी थी, फसल खेतों में लहलहा रही थी। बीच ही में इस तरह का उलट-फेर कठिन था। उधर किसान भी यही कहते थे—"इस समय काम की तेजी है। हम लोगों को इस समय इतनी फुरसत कहां है कि हम लोग इसके गुण दोष को समझ कर निश्चय करें कि इससे हमें लाभ हो सकता है, या नहीं।"

दूसरी कठिनाई यह थी कि किसानों को सहसा विश्वास नहीं होता था। जमींदारों की सभी बातों को वे सन्देह की दृष्टि से देखते थे। इसमें भी उन्हें चाल ही सूझी। वे समझते थे कि—"हमलोगों के खून चूसने का इसने यह कोई नया तरीका निकाला है। इसका भीतरी माने कुछ और ही है। इस संबंध में उन्होंने भी अनेक तरह की बातें कहीं; पर अपने हृदय के असली भाव को उन्होंने छिपा ही रखा। इसके अतिरिक्त किसानों का सब से पहला शर्त यही था कि इन्हें नये तरीके से काम करने तथा नये औजारों के इस्तेमाल के लिये किसी भी तरह से मजबूर नहीं किया जाय। यद्यपि वे स्वीकार करते थे कि नये औजारों से काम उम्दा और अधिक होता है; पर अनेक ऐसे कारण हैं कि हम लोग इनका प्रयोग नहीं कर सकते। लेविन को बड़ा दुःख हुआ। उसने यह स्थिर कर लिया था कि—"कृषि का जो उच्च आदर्श हम लोगों ने सामने रखा था, उसकी सीमा गिरा देंगे; पर नये औजारों के प्रयोग का लाभ प्रत्यक्ष देख कर भी कैसे नहीं कर सकते हैं।" फिर भी वह हताश नहीं हुआ। उसने किसी किसी तरह इस नये तरीके का प्रचार किया और दूसरे साल उसी के [illegible] उसकी खेती होने लगी।

पहले तो लेविन ने यही सोचा था कि—"सारे के सारे खेत, चक के

चक किसानों को सौंप दिये जायँ; पर बाद को उसने देखा कि यह काम असम्भव है। इसलिये लाचार होकर उसे छोटे-छोटे टुकड़े बनाने पड़े। लेविन के ग्वालों ने तो सब से पहले यह शर्त स्वीकार कर ली और गौओं का ठीका ले लिया। इस तरह बटाई पर प्राय: आधी जमीन उठी और बाकी का काम इसी प्रकार चलता रहा।

गोशाले की दशा पहले से सुधरी। पर ग्वाला सदा इस बात का विरोधी था कि गोशाले के चारो ओर आग जला कर गोशाला गर्म किया जाय। उसका कहना था कि सर्दी के कारण चारा कम लगता है और दूध खट्टा हो जाता है। खट्टे दूध से मक्खन अधिक निकलता है। मजूरी भी पहले ही की तरह बराबर लेता जाता है और वह तब तक भी यह बात नहीं समझता था कि यह मजूरी नहीं; बल्कि पेशगी मिल रही है और अन्त में उसे जो हिस्सा मिलेगा, उसमें से काट लिया जायगा।

किसानों ने ठीक तरह से काम नहीं किया। दो बार खेत न जोत कर उन्होंने एक ही जोताई करके बोना आरम्भ कर दिया। पूछने पर कहने लगे—"समय कम था।" नयी शर्तों पर काम करके भी वे हिस्सेदारी की बात को दबा कर कहते कि हमने तो केवल आधे पैदावार को मालगुजारी के रूप में देने को कहा है। एकाध ने तो लेविन से यहां तक कहा—"आप मालगुजारी पर खेत दे देते तो आप की भी चिन्ता मिट जाती और हम लोग भी निश्चिन्त हो जाते।" किसानों से तै था कि खेतों में बाड़ा और बखार तैयार करेंगे; पर जाड़े तक कोई काम न हुआ।

लेविन किसानों से बराबर कहा करता कि यह काम हमने दोनों के लाभ के लिये उठाया है; पर किसानों के कान तक इसकी बातें न जातीं। वे इसकी बातों के समझने का यत्न तक नहीं करते। जिन किसानों को

वह सबसे समझदार समझता था, उनसे भी उसने बात की; पर उनकी आकृति से यही झलकता था कि वे उसके इस काम को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। लेविन इससे भी हताश नहीं हुआ। वह हिसाब-किताब ठीक से रखता गया। उसने अपने मन में कहा—"अन्त में यही सब कहेंगे कि इसी तरीके से काम करना चाहिये और तब सब आप ही दौड़ेंगे और खेत के लिये हाथ पसारेंगे।

इन सब कामों में लेविन का इतना अधिक समय लगता था कि उसे घर से कहीं हिलने तक की फ़ुरसत नहीं थी। जो थोड़ा समय बचता था, वह पुस्तकों के पढ़ने और मनन करने में लगा देता था। परिणाम यह हुआ कि उस साल वह शिकार खेलने तक नहीं जा सका। अगस्त के महीने में डाली ने चारजामा लौटा दिया। लेविन को नौकर से मालूम हुआ कि डाली वगैरह मास्को चली गईं। आज लेविन का चित्त बड़ा दुखी हुआ। उसने अपने मन में कहा—"डाली के पत्र का उत्तर न देकर मैंने बड़ा ही बुरा काम किया। अपने हाथ से मैंने अपने घर में आग लगाई। किस मुँह से डाली से फिर मिलने जाऊँगा। उस दिन स्विस्की से भी बिना मिले ही मैं चला आया। इस तरह उससे भी नाता तोड़ ही दिया।"

पर इसकी चिन्ता उसे अधिक काल तक नहीं रही। खेती के पुनः संगठन का भूत उसके सिर पर सवार था। उसे इस समय कोई दूसरी बात नहीं सूझ रही थी। स्विस्की की पुस्तकों को उसने पढ़ना [illegible] किया; पर उसे अपने मतलब की कोई बात नहीं मिली। [illegible]त्तिशास्त्र पर जितनी पुस्तकें उसने पढ़ीं, सब में यूरोप की कृषि [illegible]ा हवाला था। पर वह देखता था कि इन नियमों और सिद्धान्तों

का प्रयोग रूस में नहीं हो सकता था। इसी लिये वह इन्हें सर्वोपयोगी नहीं स्वीकार करता था। इन पुस्तकों में लिखा था कि—"यूरोप में जिन तरीकों से भौतिक विकास हुआ है, वे सर्वोपयोगी हैं; पर समाज-शास्त्र कहता था कि ये तरीके नाशकारी हैं।" पर दोनों में से एक में भी लेविन के प्रश्न के हल करने का उपाय नहीं था कि रूस के लोग अपने खेतों और मजूरों का प्रयोग किस तरह करें जिसमें सबकी समृद्धि बढ़े।

उस विषय को उठा कर उस पर जितना मसाला मिल सका, लेविन पढ़ता गया, सभी पुस्तकें छान डालीं। उसने तै किया कि जाड़े के बाद मैं भिन्न-भिन्न स्थानों की यात्रा करूँगा और प्रत्येकस्थान की कृषि व्यवस्था का अनुभव प्राप्त करूँगा ताकि मुझे कृषि का पूरा ज्ञान मिल जाय और फिर मेरे रास्ते में किसी बात की कठिनाई न रहे। अभी तक तो जहां वह इस विषय में बात-चीत करने लगा और किसी एक लेखक के पक्ष का समर्थन करना आरम्भ किया कि दस ऐसे लेखकों का नाम निकल आता था, जिन्होंने उसके एक दम विपरीत लिखा है। कोई कह बैठता—"पहले अमुक-अमुक लेखकों की पुस्तकें पढ़िये। उन्होंने इन प्रश्नों पर गवेषणा पूर्ण विचार किया है और अकाट्य बातें लिखी हैं।"

ज्यों-ज्यों वह एकके बाद दूसरे लेखकों की पुस्तकें पढ़ता गया, उसका विश्वास बदलता गया। उसने देखा कि कौफमैन और मिचली ने तो हमारे मतलब की कोई बात नहीं लिखी है। रूस को किस तरह के सिद्धान्त चाहियें, लेविन भली भांति समझता था। रूस की भूमि उर्वरा है। मजूर बुद्धिमान है। उसने यह भी देखा है कि खेती में उपज भी अच्छी होती है और जहां यूरोपीय तरीके पर काम आरम्भ किया गया

कि घाटा आरम्भ हुआ। इसका प्रधान कारण यही है कि मजूरे अपने मन के मुताबिक काम करना चाहते हैं और यही विरोध का घर है। वह अपनी पुस्तक में यह बात दिखलाना चाहता था कि–"रूस के लोग यदि तमाम परती भूमि को खेती के काम में लगाना चाहते हैं तो उन्हें रूस में प्रचलित तरीकों से ही लाभ उठाना होगा।" यही वह अपने खेतों में भी चलाना चाहता था।

-

१६

सितम्बर के अन्त में गोशाले के लिये लकड़ी आई और मक्खन बेचकर हिस्सा बांटा गया। लाभ अच्छा हुआ। लेविन ने इस तरीके का उपयोग प्रत्यक्ष देखा। लेविन ने अपने मन में सोचा कि जिस तरीके से हम चल रहे हैं उसके प्रचार से आन्दोलन मच जायगा और आज तक सम्पत्तिशास्त्र के विद्वानों ने जो मत स्थिर किया है तथा जिसका प्रचार किया है, सब पर पानी फिर जायगा। इससे फौरन भिन्न-भिन्न स्थानों की यात्रा कर व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर पुस्तक समाप्त करना चाहिये। लेविन गेहूँ के फसल की प्रतीक्षा कर रहा था कि गेहूँ बेच कर तब बाहर जाने की तैयारी करूं। इसी समय बरसात शुरू हो गई और सब काम ज्यों का त्यों पड़ा रह गया।

तीस सितम्बर को पानी बन्द हुआ। सूर्य भगवान् के दर्शन के ही लेविन ने यात्रा की ठानी। उसने गुमाश्ते को गेहूँ बेच कर लाने के लिये भेजा और आप खेती के संबंध में कुछ समझाने के किसानों के पास गया।

इन सब कामों से छुट्टी पाकर लेविन शाम को घर लौटा। शाम होते-होते फिर पानी आ गया। ऋतु ने पलटा खाया। रास्ते में उसे बड़ी मुसीबत झेलनी पड़ी; पर उसे जरा भी चिन्ता नहीं थी। उसका चेहरा प्रसन्न था। उसे इस बात से बेहद खुशी थी कि किसान लोग धीरे-धीरे उसके मत को स्वीकार कर रहे हैं और बटाई पर खेत लेने के लिये राजी हैं।

लेविन ने अपने मन में कहा "—मुझे अपना काम करते रहना चाहिये। सफलता निश्चित है। यदि आरम्भ में थोड़ी कठिनाई भी हो तो कोई हर्ज नहीं। क्योंकि इसका अन्तिम फल शुभ है। इसमें स्वार्थ का प्रश्न नहीं है। इससे सब को लाभ होगा। जन साधारण के हृदय की गति पलट जायगी। जो लोग अभी अन्न बिना मर रहे हैं, वे ही धनवान् कहलाने लगेंगे, जो लोग अभी एक दूसरे के विरोधी हो रहे हैं, वे ही मिल कर काम करेंगे। यह आन्दोलन इस प्रकार चलेगा, अपने खेतों की समस्या हल कर मैं अपने जिले में इसका प्रचार करूंगा; जिले से प्रान्त में, प्रान्त से समस्त रूस में और अन्त में सारे यूरोप में। इसमें मुझे अवश्य ही सफलता मिलेगी।"

इसी तरह की कल्पनायें करता, पानी से लथ-पथ लेविन घर पहुँचा। गुमाश्ता साहब सौदागर के यहां से गेहूँ बेच कर कुछ रुपया लाये थे। रास्ते में लेविन को मालूम हो गया कि बहुत सा गेहूँ खेत में ही रह गया है।

भोजन करने के बाद लेविन किताब लेकर आराम कुर्सी पर बैठ गया और इस यात्रा की चिन्ता करने लगा। आज रह-रह कर उसे पुस्तक के लिखने का काम याद आता था। उसकी उत्तेजना प्रबल होती जाती

थी। उसने अपने मन में कहा—"मैं उस पुस्तक को अवश्य लिखूंगा।" वह अपनी कुर्सी से उठा और टेबुल के पास जा रहा था, उसी समय उसका सब से विश्वसनीय किसान आ गया। लेविन ने सब काम छोड़ दिया और उससे बातें करने लगा।

उससे तथा अन्य किसानों से बातचीत करने के बाद लेविन फिर अपने पाठनालय में गया। टेबुल के पास बैठ कर उसने लिखना आरम्भ किया। दो चार लाइन भी न लिखा होगा कि उसे एकाएक किटी का स्मरण हो आया। वह बैठा न रह सका। उठ कर कमरे में इधर-उधर टहलने लगा।

अगाफिया—आप इतने उदासीन क्यों होते चले जा रहे हैं, जब आपने यात्रा करना स्थिर किया है तो अभी से क्यों नहीं प्रस्थान करते। वसन्त ऋतु की चढ़ाई है। इस ऋतु में बाहर घूमने से चित्त प्रसन्न रहेगा।

लेविन—मैं परसों प्रस्थान करने का विचार कर रहा हूँ। मैं इस काम को पूरा ही कर डालूंगा।

अगाफिया—अभी काम का भूत सिर पर सवार ही है। कितना काम कीजियेगा। क्या आपने किसानों के लिये कम काम किया है। सबके सब कह रहे हैं—"मालिक ने हम लोगों का जो उपकार किया है, उससे जार (रूस के राजा) अवश्य प्रसन्न होंगे और उन्हें कोई बड़ी उपाधि देंगे। आप इन किसानों के लिये इतना चिन्ता क्यों करते हैं?"

लेविन—उस में मेरा भी तो लाभ है।

अगाफिया लेविन की सारी व्यवस्था जानती थी। लेविन सारी बातें उसे बतला देता था और कभी-कभी उसकी राय भी लेता था। पर इस समय उसने लेविन की बातें एक दम उलटा समझ लिया था।

बोली—"जहाँ अपना उद्धार हो, वहाँ प्रयास करना उचित ही है। पर···"

लेविन—मेरा वह अभिप्राय नहीं है। मेरा कहना तो यह है कि मैं केवल अपने लाभ के लिये काम कर रहा हूँ। किसान जितनी खूबी से काम करेंगे, उतना ही अधिक लाभ हमें होगा।

अगाफिया—चाहे आप जो करें; पर उनकी अवस्था वही रहेगी। यदि वे ईमानदार हैं तो ठीक-ठीक काम करेंगे नहीं तो सदा हीला-हवाली देते रहेंगे।

लेविन—तुम क्या कहती हो।। गायों की अवस्था पहले से अच्छी है या नहीं, आमदनी भी बढ गई है, या नहीं।

अगाफिया—यह सब बात जाने दीजिये। मेरे कहने का सिर्फ यही अभिप्राय है कि आप अब अपना विवाह कर लीजिये।

लेविन के हृदय में अभी यह बात उठी थी। उसीका समर्थन अगाफिया के मुंह से सुन कर उसे बड़ा खेद हुआ। लेविन की भौंहें चढ़ गई। बिना कुछ कहे वह अपनी जगह पर बैठ गया। उसने फिर लिखना आरम्भ किया।

प्राय: ९ बजे उसे गाड़ी के पहिये की आवाज सुनायी दी और थोड़ी देर में दरवाजे पर घंटी की आवाज भी सुनाई दी।

अगाफिया—मालूम होता है कोई मेहमान आया है। अब आपकी उदासीनता जल्दी दूर हो जायगी।

लेविन अपनी कुर्सी से उठा और फाटक की ओर बढ़ा।

———

२०

फाटक पर खड़ा कोई खाँस रहा था। लेविन ने खाँसी का शब्द सुना। शब्द परिचित सा मालूम हुआ; पर उसने सहसा विश्वास नहीं किया। फाटक के पास पहुँच कर उसने देखा कि उसके भाई निकोले खड़े हैं।

लेविन का भ्रातृ प्रेमप्रशंसनीय था। फिर भी निकोले के साथ रहने से वह बहुत ही घबराता था। इस समय उसके हृदय में जो भीषण आन्दोलन उठ रहा था, उसके सामने निकोले का सामना करना उसके लिये और भी कठिन जँचता था। उसने आशा की थी कि कोई तबीयतदार मित्र इस समय आवेगा और दो-चार हँसी-मजाक की बातों से मेरी उदासी दूर करेगा; पर आये उसके भाई। निकोले लेविन की आदतों से जानकार थे। इससे लेविन को इस बात का भी भय था कि कहीं वह मेरे मनकी बातें कबुलाने न लगें। और लेविन उनसे कुछ नहीं कहना चाहता था।

भाई को देख कर लेविन दौड़ पड़ा और उनके पास जाकर खड़ा हो गया। उस समय बीमारी के कारण निकोले की दशा बड़ी खराब थी; पर इस समय भी उनका शरीर एक दम क्षीण था।

लेविन को देख कर निकोले ने एक सूखी हँसी हँसी। इस हँसी को देख कर लेविन को निकोले के ऊपर बड़ी दया आयी।

निकोले—बहुत दिनों से तुम्हारे यहां आने का इरादा कर रहा। पर बीमारी के कारण नहीं आ सका। अब तबीयत जरा सुधरी, तो आ रहा हूँ। अब मैं बिलकुल अच्छा हो गया हूँ।

लेविन—आपने बहुत अच्छा किया।

इसके कुछ ही दिन पहले लेविन ने निकोले के पास लिखा था कि जो थोड़ी मिलकियत बेचने को बची थी, उसे बेच दिया और आप के हिस्से का २०००) रुपया जमा है। निकोले वही रुपया लेने आया था।

लेविन भाई निकोले को लेकर ऊपर गया। इस समय निकोले ने कपड़ा भी बड़ी सावधानी से पहना था और बात-चीत में भी रसिकता आ गई थी। कोनिशे की चर्चा भी उसने की। अगाफिया से उसने मज़ाक भी किया और पुराने अन्य नौकरों की बात पूछी। एक नौकर के मरने का हाल सुन कर उसकी आखों में आंसू आ गये।

निकोले—मैं यहां मास दो मास रहना चाहता हूँ। यहां से मेरा विचार मास्को जाने का है। मैको ने मुझे नौकरी दिलाने का वादा किया है। मैं भी अब नौकरी करना चाहता हूँ। अब मैं अपने जीवन की व्यवस्था दूसरी तरह से करना चाहता हूँ। तुम्हें तो मालूम ही होगा कि मैंने मेरिया को छोड़ दिया।

लेविन—क्यों?

निकोले—वह बड़ी ही कर्कशा थी। उसने मुझे बड़ा कष्ट दिया। पर क्या कष्ट दिया, यह निकोले नहीं बतला सका था।...... इस के अलावा अब मैं नया सिल-सिला बांधना चाहता हूँ। मैंने अनेक वाहियात काम किये; पर रुपया बड़ी चीज़ है। ख़ैर, मुझे उसका दुःख नहीं है। शरीर रहते मैं फिर पैदा कर लूंगा।

लेविन अपने भाई की बातें सुनता गया; पर उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या उत्तर दे। निकोले भी यह समझ गया। इससे उसने लेविन से खेती-बारी का हाल पूछना आरम्भ किया। लेविन ने

सारी बातें कह सुनाई।

निकोले को खेती से प्रेम नहीं था।

लेविन और निकोले दोनों आस-पास बैठे थे। यहां तक कि एक के शरीर का साधारण हिलाव भी दूसरे से छिपा नहीं रह सकता था। निकोले की अवस्था से लेविन समझ रहा था कि उनकी मृत्यु निकट है। निकोले भी यह बात समझ रहा था; पर किसी को मुंह खोलने का साहस नहीं होता था।

लेविन के घर में सीड़ अधिक थी। उसका बिछौना गर्म कर दिया जाता था। एक ही बिछौना गर्म था। इससे उसने उस पर निकोले को सुलाया और आप दूसरे पर सो रहा।

निकोले सोने गया। उसे नींद आई या नहीं; पर वह बीमारों की तरह बेचैनी से करवटें बदल रहा था। खांसी भी प्रबल वेग से आरही थी, लेविन को अधिक रात तक नींद नहीं आई। लेविन की आंखों के सामने निकोले की मृत्यु नाच रही थी। उसे प्रत्यक्ष दीख रहा था कि इन सब दुःखो का अन्त शीघ्र ही मृत्यु में होनेवाला है। उसने कहा—"यह मृत्यु एक न एक दिन सब के सिर पर सवार होगी। चाहे आज हो, चाहे सौ वर्ष बाद। मैं अनेक तरह का काम करता रहता हूँ। पर क्या मैंने कभी भी इस बात पर विचार किया कि एक न एक दिन मुझे भी मरना होगा।"

मृत्यु की विभीषिका उसके सिर पर इतनी प्रबल होकर सवार हो कि वह सारी बातें भूल गया। चारों ओर उसे मृत्यु ही मृत्यु दिखाई लगी। वह उठ बैठा और कहने लगा—"जब अन्तिम परिणाम यही होता है, तब फिर भला कोई काम क्यों किया जाय। आरम्भ करने में

ही क्या लाभ, जब तक पहुँचने का निश्चय नहीं है। पर मैं तो अभी जीता हूँ। इस समय मुझे क्या करना चाहिये।"

रोशनी जला कर वह शीशे के सामने खड़ा हो गया। उसने अपना मुंह खोला। उसके दांत गिर रहे थे। पर उस के हाथ अब भी उसी तरह पुष्ट थे।

निकोले जाग पड़ा। उसने कहा—"सोते क्यों नहीं। क्या इधर-उधर कर रहे हो।"

लेविन—न जाने क्यों मुझे नींद नहीं आ रही है।

निकोले—मैं तो गहरी नींद में सोया था। पसीना भी बन्द हो गया है।

लेविन ने रोशनी बुझा दी। बिछौने पर जाकर पड़ रहा; पर बहुत देर तक उसे नींद नहीं आई।

इस जीवन और मरण के प्रश्न ने लेविन के चित्तको और भी चञ्चल कर दिया। वह नहीं समझ सका कि इस समस्या को किस तरह हल किया जाय।

२१

जब आदमी को चिड़चिड़ापन का रोग हो जाता है, तब उसे आस पास की सभी बातें खटकती हैं। वह प्रत्येक बात से चिढ़ता है और दोष ढूंढ़ता है। चाहे उसका मिजाज कितना भी सरल क्यों न हो, कोई चारा नहीं निकलता। निकोले की ठीक यही अवस्था थी। सवेरे उठते ही उसका रोग बढ़ गया। वह हर बात पर लेविन से झगड़ने लगा।

लेविन ने अपना ही सारा दोष समझा; पर वह सुधार नहीं सका। उसने मन में कहा "यदि साफ-साफ बातें हुई होतीं तो आज यह नौबत न आती और मैं उनसे साफ-साफ कह दिये होता कि 'आप मर रहे हैं' तो यह बखेड़ा न खड़ा होता।"

तीसरे दिन निकोले ने लेविन से कहा—खेती का नया उपाय जो तुमने सोचा है, मुझे एक बार फिर समझाओ।

लेविन सब कुछ बयान कर गया। निकोले उसकी फब्तियां लेने लगा। बोला "यह भाव तुम्हारा नहीं हैं। तुम ने कहीं से चुराया हैं; पर उसका रूप विकृत कर दिया है और तुम इसका प्रयोग वहां करना चाहते, हो जहां असम्भव है।"

लेविन—मुझे तो सिर्फ मजूरसंगठन से काम है और बातों पर तो मेरा ध्यान भी नहीं है।

निकोले—इसी से तो मैं कहता हूँ कि तुम ने इसका रूप विकृत कर दिया है उसके अन्य उपक्रम को आरम्भ कर तुम केवल विला पर की चिड़िया को उड़ाने का यत्न कर रहे हो।

लेविन—मेरी बात तो किसी से मिलती-जुलती नहीं। मैं तो एक नया सिद्धान्त लेकर चल रहा हूँ।

निकोले—इससे लाभ ही क्या होगा। विना रुपया-पैसा के कुछ हो सकता है?

लेविन—मैं कब यह कह रहा हूँ। मैं तो सिर्फ यही कह रहा हूँ [illegible]ही उचित और उत्तम तरीका है और भविष्य में इसमें इसी पर [illegible] होगा। मैं चाहता हूँ कि प्रकृति का पर्यवेक्षण करके ही मजूरों का [illegible]न और व्यवस्था की जाय। पहले मजूरों की दशा का परिचय पाकर

तब उनकी उचित व्यवस्था की जाय।

निकोले—इस में केवल समय की बरबादी है। समय के अनुसार सब तरह का सुधार आप ही आप हो जाता है। क्या दासता का प्रचार यूरोप के अन्य देशों में नहीं था। धीरे-धीरे अवस्था बदल ही गई। अब तुम किस फेर में पड़े हो?

लेविन चिढ़ गया। उसका चेहरा क्रोध से लाल हो गया। उसने चिढ़ कर कहा—"मैं अपना और मजूरों का उद्धार चाहता हूँ। मैं उनका संगठन करना चाहता हूँ।"

निकोले—तुम संगठन क्या करोगे। तुम संसार को यह दिखलाना चाहते हो कि तुम किसानों को ठगना नहीं चाहते; पर तुम्हारे मन में कोई दूसरी बात है।

लेविन-यही सही। आप यही समझ कर हमें छेड़ना छोड़ दीजिये।

निकोले—आज तक न तो तुम ने कभी अपनी भूल स्वीकार की है और न करोगे। तुम तो अपने घमण्ड में चूर रहते हो।

लेविन—ठीक है, जैसा आप समझिये।

निकोले—यही होगा। मैं तुम्हारे साथ अपना दिमाग खराब नहीं करना चाहता। मुझे खेद है कि मैं यहाँ तक आया ही क्यों?

बाद को लेविन ने निकोले को शान्त करने का अनेक यत्न किया; पर सब व्यर्थ था। उसने यही कहा—"अब यहाँ से चले जाना ही अच्छा है।"

निकोले—चलने के लिए तैयार हो गया। लेविन उससे क्षमा मांगने लगा।

निकोले—मैं ठहर नहीं सकता। तुम्हारे सन्तोष के लिये मैं इतना कह सकता हूँ कि तुम्हारा कहना ठीक था।

निकोले ने अपने भाई को गले से लगाया और कहा—"भाई लेविन! मेरी बातों से नाराज न होना। तुमसे मेरी अवस्था छिपी नहीं है।

शायद यही अन्तिम मुलाकात हो।

लेविन से यह बात छिपी न थी। वह प्रत्यक्ष देख रहा था कि उसके भाई की मृत्यु निकट है। उसकी आंखों से आंसू निकल आये।

निकोले चला गया। तीसरे दिन लेविन अपनी यात्रा के लिये रवाना हुआ। स्टेशन पर किटी के भाई से मुलाकात हुई। लेविन का पीला चेहरा देख कर किटी के भाई को बड़ा आश्चर्य हुआ, उसने पूछा—"क्या मामला है, तबीयत कैसी रहती है?"

लेविन—अच्छी तरह हूँ। इस जीवन में कोई सुख नहीं रह गया है।

किटी का भाई—इस जीवन में सुख नहीं है! मेरे साथ एक बार पेरिस चलो। वहां देखोगे कि जीवन का क्या आनन्द है।

लेविन ने कहा—"अब तो मैं मृत्यु की अन्तिम बाट देख रहा हूँ।"

किटी का भाई—लेकिन अभी तो मैं इस जीवन का आरंभ कर रहा हूँ।

लेविन—थोड़े दिन पहले मैं भी यही सोचता था; पर अब मैं अपनी मृत्यु निकट देख रहा हूँ।

लेविन ने हृदय की बात कही थी। इधर कई दिनों से वह सदा जीवन-मरण की बातें सोचा करता था। उसे यही मालूम होता था कि मैं प्रतिक्षण मृत्यु के मुंह में जा रहा हूँ। इतने पर भी उसका सारा ध्यान खेती के नये उपाय में व्यस्त रहता था। मृत्यु के पहले, समय को किसी न किसी तरह काटने का, उसने यही उपाय निकाल रखा था। संसार की वस्तु उसे निर्जीव दिखाई देती थी; पर इसमें भी उसका ध्येय चलता ... ही दिखाई देता था और अपनी सारी शक्ति लगा कर उसने पकड़ रखा था।

चौथा खण्ड

१

अलक्से अन्ना के पास प्रतिदिन आता; लेकिन घर पर भोजन कभी न करता, रंस्की का आना जाना बन्द था; पर अन्ना स्वयं जाकर उससे मिल आया करती थी।

यह अवस्था नितान्त दुःखदायी थी और तीन में से एक भी इस को नहीं स्वीकार कर सकता था। यदि इस आशा का पतला धागा यह न बतलाता कि यह अस्थायी है। इसका अन्त शीघ्र ही होगा। अलक्से की धारणा थी कि धीरे-धीरे यह कामाग्नि बुझ जायगी और अन्ना रंस्की का साथ छोड़ देगी। धीरे-धीरे सब लोग यह बात भूल जायंगे तब मैं बद-नामी से बच जाऊंगा। अन्ना को आशा थी कि इस अवस्था का शीघ्र ही निपटारा हो जायगा, उसके ध्यान में यह बात नहीं आती थी कि मामला किस तरह तै होगा; पर वह इतना समझती थी कि शीघ्र ही तै होगा।

रंस्की को विश्वास था कि मुझे हाथ-पैर हिलाने की जरूरत नहीं पड़ेगी। एक न एक दिन यह आप ही निश्चित हो जायगा। यही कारण था कि वह अभी तक अन्ना के कहने के अनुसार ही चलता था।

जाड़े में कहीं के युवराज रूस की यात्रा करने आ गये। उनका भार रंस्की को दिया गया। रंस्की उन्हें लेकर रूस के प्रधान-प्रधान स्थानों की सैर कराने के लिये चला; पर यह भार उसे बहुत ही खला और बुरा मालूम हुआ। वह युवराज साधारण से साधारण स्थानों की सैर करके जाना चाहता था, ताकि कोई वस्तु अनदेखी न रह जाय। रंस्की को हर तरह से उसे सन्तुष्ट करना था। दिन भर तो एक स्थान से दूसरे स्थान को वे लोग मारे-मारे फिरते और रात को राष्ट्रीय उत्सवों में शामिल होते। युवराज को यात्रा से विशेष अनुराग था। वर्तमान युग का इसे वे प्रधान गुण मानते थे।

हाल में ही वे स्पेन में रह कर आये थे। वहां उन्होंने बड़े आनन्द से बिताया था। स्पेन की अनेक सुन्दर युवती और गुणवती रमणियों से उन्होंने मित्रता और परिचय किया था। स्विट्जरलैण्ड में उन्हें शिकार खेलने का अच्छा अवसर मिला था। इङ्गलैण्ड और तुर्की में भी उन्हें बड़ा आनन्द आया था। भारत में उन्हों ने हाथी पर चढ़ कर शिकार खेला था। रूस में आकर वे रूस का पूरा परिचय पाना चाहते थे।

रंस्की को युवराज के आमोद-प्रमोद के लिये हर तरह की तैयारी करनी पड़ती। जो कोई नई बात युवराज को मालूम हो जाती, वह उसी लिये अनुरोध करते और रंस्की को उसका बन्दोबस्त करना पड़ता। युवराज को खेल-तमाशों, सरकस और जिमेनास्टिक से इतना प्रेम था कि वे स्वयं इन सब खेलों में भाग लेते थे। वे नये-नये तमाशों को

देखने, उनमें भाग लेने और आनन्द लूटने के लिये सदा उत्सुक रहते थे।

युवराज को सब से आनन्द रूस की फरासीसी नाचनेवाली और तमाशा करनेवाली में आया। रंस्की का यह समय बड़ी कठिनाई से बीतता था। उसे बड़ी होशियारी और सावधानी से रहना पड़ता था। जिससे उसकी मर्यादा में कहीं से कमी न पड़ने पावे। रंस्की ने देखा कि जो लोग रूस के आमोद-प्रमोद आदि के संग्रह करने में नीचे तक जा सकते हैं, उन्हें युवराज श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं और रूस की औरतों की रहन-सहन तथा तरीके को वे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इससे रंस्की को बड़ा खेद हुआ। रंस्की को विशेष दुःख इस बात से था कि युवराज उससे से भली-भांति हिल-मिल नहीं सकते थे। रंस्की को युवराज में कोई भी असाधारण बात नहीं देखने में आई। रंस्की यह बात मानने के लिये तैयार था कि युवराज शरीफ आदमी है; पर इससे अधिक उसमें कुछ नहीं था। उन्हें मान-मर्यादा का कोई विचार नहीं था। हर तरह के आदमियों से वह बिना किसी रुकावट के मिलते थे। रंस्की को यह बात पसन्द थी। पर युवराज उसे नीची निगाहों से देखता था। यह रंस्की को असह्य था। रंस्की अपने मन में कहता—"यह निरा खच्चर है, यह मेरी कदर क्या जानेगा?"

जो कुछ हो, सात दिन रूस में रह कर युवराज ने प्रस्थान किया। रंस्की के सिर से भारी बोझ उतर गया और उसे अतिशय प्रसन्नता हुई।

युवराज को गाड़ी में बैठाकर रंस्की घर लौटा तो अन्ना का उसे एक पत्र मिला। उसमें लिखा था "मेरी तबीयत अच्छी नहीं है। मैं घर से बाहर नहीं निकल पाती; पर मैं तुम्हें देखे बिना नहीं रह सकती। अलक्से सात बजे कौंसिल की बैठक में जावेंगे और दस बजे तक रहेंगे। तुम्हीं

बीच में मुलाकात कर जाना" पति के मना करने पर भी जोर देकर बुलाते देख रंस्की को विस्मय हुआ। पर उसने जाना स्थिर किया।

अभी हाल में ही रंस्की की तरक्की हुई थी। वह कर्नल के पद पर उठा दिया गया था। इसलिये रेजिमेण्ट छोड़ कर अलग मकान लेकर वह रहता था। जल-पान कर वह पलंग पर लेट गया और उसे नींद आगई। उसे भीषण स्वप्न दिखाई देने लगे और वह चौंक कर उठ बैठा। रोशनी जलाकर उसने घड़ी में देखा तो साढ़े आठ हो गये थे। उसने झट-पट कपड़े बदले और रवाना हो गया। नौ बजने में दस मिनिट बाकी था, जब तक अन्ना के दरवाजे पर पहुंचा। फाटक के सामने अन्ना की गाड़ी खड़ी थी। रंस्की ने समझा कि मुझे देरी हो गई, इसी से शायद घबड़ा कर अन्ना खुद मेरे पास जा रही है। गाड़ी से उतर कर रंस्की भीतर घुसा। उसे न जरा हिचकिचाहट मालूम हुई और न शर्म आई। दरवान ने आंखें फाड़ कर उसकी ओर देखा, पर उसने इसकी कोई परवा नहीं की। वह भीतर घुसा। रास्ते में उससे अलक्ले से मुठभेड़ होगई। रंस्की का चेहरा पीला पड़ गया, उसका मुंह सूख गया। शर्म से उसकी आंखें झुक गई। डरते-डरते उसने अलक्ले का अभिवादन किया। अलक्ले अपना होंठ चबाते आगे बढ़ गया। रंस्की वहीं ठिठक गया। अलक्ले गाड़ी पर सवार हुआ और गाड़ी चल दी।

रंस्की ऊपर कमरे में गया। उसका चेहरा उदास था। वह अपने मन में सोच रहा था—"यदि वह इस समय मुझ से द्वन्द्व के लिये तैयार हो जाता तो भारी संकट उपस्थित होता, तब मैं क्या करता। वह मुझे बना रहा है; पर······"

रंस्की का विचार पहले दूसरा था; पर अन्ना के चक्कर में आकर वह

अन्ना-और उसने तुम्हें इस तरह अभिवादन किया। (अन्ना ने ठीक उसी तरह का रूपक बनाया जैसा अलक्से ने किया था।)

रंस्की-मैं उन्हें जरा भी नहीं समझ पाता। मुझे आशा थी कि कुल घटना समझ कर वह तुम्हें छोड़ देगा या मुझ से द्वन्द्व करेगा; पर उसने कुछ भी न किया। मेरी समझ में नहीं आता कि यह अवस्था उन्हें किस तरह सह्य है।

अन्ना—उन्हें इससे पूरा सन्तोष है।

रंस्की—जब हम सब लोग सुखी हो सकते हैं और उसका उपाय भी है तो फिर क्यों इस तरह सड़ रहे हैं?

अन्ना-क्या मैं उसे समझती नहीं। वह पक्का मक्कार है। क्या कोई भी आत्माभिमानी इस तरह रह सकता है। अपनी पत्नी की बेव-फाई का समाचार उसी की जबानी सुन कर कौन बेहया उसे फिर अपने घर में रखना, उससे मिलना जुलना, उसे 'प्रिये' कह कर संबोधन करना पसन्द करेगा। उसे मैं मनुष्य नहीं कह सकती। वह बेजान का पुतला है। सिवा मेरे उसे कौन समझ सकता है। यदि आज मैं पुरुष और वह स्त्री होता तो मैं अपनी कुलटा पत्नी की धज्जियां उड़ा डाले होती। वह जानता है कि मैं कुलटा हूं; फिर भी वह आँख मूंद कर पड़ा है। उसकी बातें मुंह पर लाना ही पाप है।

रंस्की-(उसे आस्वासन देते हुए) प्रिये! यह तुम्हारा अन्याय है। उसकी बातें दूर करो। आज तुम क्या कर रही थीं। तुम्हारी तबीयत कैसी है? डाक्टर ने क्या बतलाया? मैं समझता हूं कि तुम्हें कोई बीमारी नहीं है। गर्भ के कारण तुम्हारी यह दशा है और प्रसव के बाद सब ठीक हो जायगा।

घृणा के भाव धीरे-धीरे गायब हो गये, गहरी उदासी की कालिमा उसके चेहरे पर छा गई। वह बोली—"तुम कहते हो कि इस दारुण दशा का अन्त कर डालना ही अच्छा है। तो यही होगा। यह मेरे लिये सब से अधिक असहनीय है। क्या मैं स्वतन्त्र होकर तुम्हारे प्रेम में सराबोर होना नहीं चाहती। न तो मैं अपनी ही बरबादी चाहती हूँ और न डाह की आग से तुम्हें ही जलाना चाहती हूँ। ···············इसका अन्त तो अवश्य होगा; पर जिस तरह हम लोग चाहते हैं, उस तरह नहीं।"

इस दारुण अवस्था का अन्त किस तरह होगा, इसे स्मरण कर अन्ना का कलेजा कांप उठा। उसकी आंखे डब-डबा आईं। वह न बोल सकी। ······ फिर बोली—"मैं तुमसे यह नहीं कहना चाहती थी कि जिस तरह हम लोग इस दारुण दशा का अन्त करना चाहते हैं, उस तरह उसका अन्त नहीं हो सकता; लेकिन तुमने मुझे मजबूर किया। इसलिये मैं कह देती हूँ कि इस का अन्त शीघ्र ही होगा और सब को शान्ति मिल जायगी।

रंस्की अन्ना का अभिप्राय समझ गया। बात बना कर बोला—"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझ सका।"

अन्ना—तुमने पूछा था कि इसका अन्त कब होगा? मैं कहती हूँ कि बहुत जल्द। मैं इसे बहुत दिन तक नहीं बरदाश्त कर सकती। मैं इसे खूब समझ रही हूँ। मेरी मृत्यु इस बार निश्चित है और इसमें सारा बखेड़ा मिट जायगा।

उसकी आंखों से अश्रुधारा बह निकली। वह फिर बोली—"यही अच्छा और यही सब से उत्तम तरीका भी है।"

रंस्की—क्या फजूल की बातें कह रही हो।

उसका गुलाम हो गया था। अब वह अपनी स्वतंत्र प्रकृति के अनुसार नहीं चल सकता था। जब से अन्ना से वर्डे-बाग में उससे बातें हुई, उसे विश्वास हो गया था कि मेरे यत्न करने पर भी यह संबंध नहीं टूट सकता। इससे वह अपनी नीच वृत्तियों का शिकार होकर अन्ना के प्रेम-पाश में अधिकाधिक बंधता जा रहा था।

रंस्की को देखते ही अन्ना की आंखों से आंसू आने लगा। वह बोली—"यदि यही हाल रही तो यह संबंध शीघ्र ही समाप्त हो जायगा।"

रंस्की—प्रिये! क्या बात है?

अन्ना—"मैं दो घंटे से रो-रो कर तुम्हारी बाट देख रही हूँ और तुम पूछते हो कि क्या बात है? ठीक है। मैं तुम से झगड़ा तो कर नहीं सकती—" इतना कह कर उसने अपना दोनों हाथ उसके कन्धे पर रख दिया और प्यासी तथा मतवाली आंखों से उसकी ओर देखने लगी, मानों उसे पी जाना चाहती है। थोड़ी देर इसी तरह टकटकी लगा कर देखने के बाद दोनों सामने कुर्सी पर बैठ गये। तब वह बोली—"रास्ते में उनका सामना हो गया था न। तुमने विलम्ब किया। इसी का यह दण्ड मिला।"

रंस्की—पर वे तो सात बजे ही कौंसिल की बैठक में जानेवाले थे?

अन्ना—वे गये थे और लौट भी आये। अब न जाने कहां गये हैं। पर इस से क्या। उनकी बातें न करो। इतने दिन तक तुम कहां थे? क्या अब तक उसी युवराज के साथ रहना पड़ा था?

रंस्की सारा किस्सा कह सुनाना चाहता था कि किस प्रकार वह उस युवराज को पहुंचा कर आया। उसे नींद लग गई और भीषण स्वप्न देख कर वह चौंक उठा; पर उसके चेहरे की परेशानी देख कर वह सब बात छिपा दी गयी। बोला—"युवराज के प्रस्थान की सूचना देने गया था।"

अन्ना–वह गया तो। चलो बखेड़ा दूर हुआ।

रंस्की–किसी तरह पिण्ड छूटा। तुम नहीं समझ सकतीं कि इस सात दिन में मेरी कैसी दुर्गति हुई।

अन्ना—सभी नवयुवकों की यही हालत है।

रंस्की–मैंने तो वह सब बातें कभी छोड़ दीं। इतने दिनों के बाद मुझे फिर उस जीवन को झलक मिली। घृणा के मारे चित्त व्याकुल हो उठा।

अन्ना अभिमान भरी आंखों से उसकी ओर देखती रही। बोली– "आज लिजा मेरे यहां आई थी। कौण्टेस लौंडिया के मना करने पर भी वह मेरे यहां आती है। वह मुझसे उस दिन की बात कहती थी। मुझे उस पर बड़ी घृणा आई।

रंस्की–मैं तुमसे कहने ही वाला था।

अन्ना–(उसे रोक कर) पुरुषों का भी विश्वास नहीं करना चाहिये, उनके कठोर हृदय में यह बात कहां समा सकती है कि एक रमणी के लिये ये सब बातें असह्य हैं। विशेष कर उस रमणी को, जो उस पुरुष के बारे में कुछ भी नहीं जानती। मैं तुम्हारे बारे में क्या जानती हूँ। तुम मुझ से सारी बातें छिपाते हो। ऐसी अवस्था में जो कुछ तुम कहते हो, उस पर भी मैं कैसे विश्वास कर सकती हूँ।

रंस्की—तुम मुझे चोट पहुंचा रही हो। मैं तुम से क्या छिपाता हूँ। मैंने सदा अपना हृदय खोल कर तुम्हारे सामने रख दिया है।

अन्ना–(अपने हृदय के भाव को छिपा कर) हां-हां, तुम ठीक कह हो। मैं ही भूल कर रही हूँ। पर क्या तुम समझ सकते हो कि मैं यातना में पड़ी कराह रही थी। कहो क्या कहना चाहते थे।

रंस्की कुछ न बोल सका। डाह के ये भाव जो इधर हाल में और भी अधिक प्रबल हो उठे थे, रंस्की को खले। उसने इस बात को छिपाना चाहा; पर उसका हृदय स्तब्ध हो गया। वह जानता था कि इस डाह का कारण अन्ना का अनुराग है। रंस्की ने अनेक बार अपने मन में कहा था—"अब अन्ना की सारी प्रसन्न्ता केवल इसी प्रेम पर अवलंबित है, इसी प्रेम के कारण उसने अपना सर्वस्व गँवाया है और अब यही प्रेम उसका एक मात्र साथी रह गया हैं। पर आज मुझे वह खुशी नहीं है, जो उस दिन थी। जब पहले-पहल मैंने मास्को में उसका पीछा किया था। मैं बदनसीब हूँ। नहीं, सारी प्रसन्नता का बीज तो वह मेरे सामने हैं। ... "अब उसमें भी वह बात नहीं रही। पहली मुलाकात में उसने जो भाव दिखाया था, उसका लेश भी अब नहीं रह गया। न तो अब उसका वह सौन्दर्य रह गया और न वह सदाचार। आचरण में भी वह गिर गई।

रंस्की इस समय अन्ना को उसी दृष्टि से देख रहा था, जिस दृष्टि से माली उस फूल को देखता है, जिसे उसने सुबह प्रेम से एक-एक करके चुना था; पर तीसरे पहर वह मुरझा कर मलिन हो गया है। परिश्रम का ख्याल कर उसे उठा कर फेंक देने का साहस नहीं होता, रह-रह कर उसकी प्रातःकालीन सुन्दरता आंखों के सामने नाचने लगती हैं; पर इस समय उसका रूप इतना विकृत हो गया है कि उसे छूने की भी इच्छा नहीं होती। साथ ही वह यह देख रहा था कि जिस समय, उस पर प्रगाढ़ अनुराग था, उस समय यदि वह चाहता तो उस से अलग भी हो सकता था; लेकिन इस समय अनुराग के अभाव में भी वह उससे अलग नहीं हो सकता है।

अन्ना–युवराज के बारे में तुम क्या कह रहे थे। मैंने उस ज़ालिम को मार भगाया। क्यों तुम उस से घबरा गये थे।

रंस्की–उसकी सूरत से मैं घबराता था। वह किसी से घनिष्ठता नहीं चाहता था।

अन्ना—वह पढ़ा-लिखा तो खूब है।

रंस्की–उसकी शिक्षा बेकार है। उसे मनुष्यत्व का ज्ञान तक नहीं। पाशविक आमोद में वह विशेष रुचि रखता है।

अन्ना–सभी पुरुषों की हालत एकसी है।

रंस्की (हंस कर) तुम उसका पक्ष इस तरह क्यों ले रही हो ?

अन्ना–मैं उसकी सफाई नहीं दे रही हूँ। मैं सिर्फ यह कहना चाहती हूँ कि यदि तुम्हीं उस तरह के आमोद-प्रमोद में न पड़े होते तो कभी उससे पार हो गये होते।

रंस्की–(उसका हाथ पकड़ कर) फिर वही डाह भरी बातें।

अन्ना–मैं विवश हूँ। मैं बार बार सम्हालती हूँ, पर मेरी जबान पर यह बात अनायास आ ही जाती है। तुम्हारी इन्तजारी में मुझे जो वेदना सहनी पड़ी है, उसका तुम अनुमान तक नहीं कर सकते। मैं डाह नहीं रखती, मुझे तुम पर पूरा भरोसा है, मैं हृदय से तुम्हारा विश्वास करती हूँ। जब मुझसे लगातार नहीं मिलते और न जाने किस फेर में पड़े रहते हो, उस समय······

इससे आगे वह न बोल सकी। बात को टालने की गरज से उसने

"तो अलक्से से कहां मुलाकात हुई ?"

उस बोली में अस्वाभाविकता भरी थी।

रंस्की–ठीक दरवाजे पर।

अन्ना—मैं सच कह रही हूँ। मेरी मृत्यु निश्चित है। आज मैंने बिकट स्वप्न देखा है।

रंस्की को अपना भी वह भीषण स्वप्न स्मरण हो आया।

अन्ना—मैंने स्वप्न में देखा कि मैं अपने शयनगृह की ओर दौड़ी जा रही हूँ। मैंने एक कोने में कुछ खड़ा देखा, मुझे देखते ही वह चल पड़ा, मैंने देखा कि वह कोई किसान है। उसकी लम्बी दाढ़ी और बाल बिखरे हैं। उसकी सूरत बड़ी भयानक थी। मैंने भाग जाना चाहा; पर मैंने देखा कि वह पास ही बैठ गया और अपना हाथ जोरों से घुमाने लगा।

रंस्की ने देखा अन्ना घबड़ा गई है, भय से व्याकुल है। उसे अपना स्वप्न याद आगया। वह भी घबड़ा गया।

अन्ना—वह न जाने क्या-क्या बकता गया। मैं स्वप्न में ही उठ बैठी और दाई से इसका अभिप्राय पूछने लगी। उसने कहा—"यह स्वप्न तो बड़ा खराब है। इसका अभिप्राय तो यही है कि प्रसव की वेदना से तुम्हारा अन्त होगा। मैं व्याकुल हो उठी थी। इसी समय मेरी नींद टूटगई थी।"

रंस्की—सब वाहियात बातें हैं। स्वप्न भी कभी सच हुआ है?

रंस्की इतना कह तो गया; पर उसकी आवाज में जोर नहीं था।

अन्ना—अब उसकी चर्चा मत करो। घंटी बजाओ। चाय मंगाते हैं। अधिक रात नहीं गई है। थोड़ी देर और ठहरो।

कहते-कहते वह चुप हो गई। उसके चेहरे का रंग बदल गया। घबराहट और भय के स्थान पर नरमी, मधुरता और रसीलापन दिखाई देने लगा। रंस्की की समझ में कुछ नहीं आया। अन्ना अपने हृदय के भीतर नयी स्फूर्ति अनुभव कर रही थी।

२

अलक्ले घर से सीधे सिनेमा में गया, कुछ देर तक मन बहलाव करके वह घर लौटा। रंस्की तब तक चला गया था। कुछ निश्चय करके वह मकान के अन्दर गया और बैठक में कपड़े उतार कर वह पाठनालय में चला। उसकी आँखों में नींद नहीं थी। उसका चेहरा क्रोध से लाल था। वह स्थिर होकर बैठ तक नहीं सका। उठकर टहलने लगा। अन्ना पर रह-रह कर उसे क्रोध आता था—"कैसी बेवफा है। एक साधारण बात भी मानने के लिये तैयार नहीं है। मैंने उसे बार-बार समझाया कि रंस्की को इस घर न बुलाया करे; पर उसे इसकी कोई परवा नहीं।" अलक्ले का हृदय क्षुब्ध था। उसने फिर सोची—"यदि वह मेरी बात मानती ही नहीं तो मैं उसे क्यों न दण्ड दूं। मुझे तलाकनामा लेना ही पड़ेगा। शिरोजा को भी मैं उससे छीन लूँगा। मैं जानता हूँ कि तलाकनामा लेने में अनेक कठिनाइयां हैं, पर जब मैंने एक बार स्थिर कर लिया है तो मैं अवश्य उसे चरितार्थ करूँगा। कैन्टेस लीडिया का भी यही मत है और आज कल तलाक नामा हो, सबसे उत्तम मार्ग समझा जाने लगा है। इससे मेरी कठिनाई बहुत कुछ दूर हो जायगी। विपत्तियां अकेली कभी नहीं आती। कौंसिल के कामों से मैं यों ही परीशान था कि यह दूसरा बखेड़ा आ उपस्थित हुआ। खैर, ईश्वर को यही मंजूर है।"

रात भर उसे नींद नहीं आई। अन्ना के इस आचरण पर वह जितना ही विचार करता, उसका क्रोध उतना ही बढ़ता जाता। सवेरा होते होते क्रोध का पारा अपने पूरे माप पर चढ़ गया था। सवेरा होते उसने कपड़े पहना और जल्दी-जल्दी अपनी पत्नी के कमरे में गया

वह इतनी जल्दी में गया मानो यदि वह कहीं बीच में रुक गया तो उसकी भभकती क्रोधाग्नि कम हो जायगी।

अन्ना ने उसके पैरों की आहट सुनी। उसे विस्मय हुआ। अलक्से की भौंहे तनीं थीं उसकी आकृति विकृत थी। उस दिन उसके चलने बोलने तथा बात करने का ढंगही निराला था। अन्ना ने ऐसी दृढ़ता पहले कभी नहीं देखा था। कमरे में पहुँच कर अलक्से ने अन्ना से बात तक न की सीधे उसके टेबुल के पास गया और दराज खोलने लगा।

अन्ना—आप क्या चाहते हैं ?

अलक्से—तुम्हारे प्रेमी के सभी पत्र।

अन्ना—(दराज बन्द करके) वे यहां नहीं हैं।

उसके रंग से अलक्से ताड़ गया पत्र यहीं हैं। उसने उसे पीछे खींच लिया और जबरदस्ती पत्रों का एक बण्डल दराज के भीतर से खींचा, और बोला—"चुपचाप बैठो तुमसे कुछ कहना है।"

अन्ना भय और विस्मय से उसकी ओर देख रही थी।

अलक्से—मैंने तुमसे कहा था कि यह मुझे सह्य नहीं है कि तुम अपने प्रेमी को इस घरमें बुलाओ।

अन्ना—उनसे मिलना जरूरी था।

अलक्से-खैर मैं इस बखेड़े में नहीं पड़ना चाहता।

अलक्से के इस व्यवहार से अन्ना को क्रोध हो आया। उसने कहा तुम्हीं समझो, इस तरह मेरा अपमान करना तुम्हारे लिये कहां तक उचित है।

अन्ना—इस तरह का पाशविक व्यवहार तुममें पहले नहीं था। आज पर नई बात देख रही हूँ।

अलक्से—यह अत्याचार है। एक पति अपनी पत्नी को इसी

स्वतंत्रता दे देता है। उसे इज्जत के साथ रखता है। और केवल एक कार्ज उससे कराता है।

अन्ना—यह अत्याचार की पराकाष्ठा है यदि तुम विचार कर देखो तो इसे नीचता कहेंगे।

इतना कहते-कहते क्रोध से चेहरा लाल होगया और वह उठ कर जाने के लिये प्रस्तुत हुई।

अलक्ले—(चिल्ला कर) इसमें कोई अत्याचार नहीं है।

इतना कह कर उसने अन्ना का हाथ जोर से पकड़ लिया। अलक्ले की पांचों अंगुलियां अन्ना के बांह में उपट आईं। बोला, अपने पति के टुकड़ों से पल कर भी प्रेमी के लिये पति और पुत्र का त्याग करना नीचता है या यह।

अन्ना नीचा सिर करके चुप हो रही। दूसरे दिन रात को उसने रंस्की से जो कुछ कहा था इस समय अलक्ले से नहीं कह सकी। इस समय उसे वह बात उसके मुंह से नहीं निकली कि मेरा वास्तविक पति तो रंस्की है तुम तो नाम ही नाम के पति हो। उसने अपने मनमें कहा—" अलक्ले का कहना न्यायोचित ही है।" मुलायम स्वर में बोली।

"अपनी अवस्था का जितना शर्म मुझे है तुम अनुमान नहीं कर सकते। पर इस सब का क्या अभिप्राय है।"

अलक्ले—तुमने मेरी बात नहीं मानी। अपने प्रेमी को मेरी इच्छा के विरुद्ध इस घर में बुलाया। इससे मैं अब शान्त नहीं रह सकता। मैं उचित कार्रवाई करूंगा और इस संबंध का अन्त कर दूंगा।

अन्ना—जितना जल्दी हो सके इसका अन्त कर दो। इसका अन्त ‍भी जल्दी होने वाला है।

उसे उस स्वप्न और मृत्यु की भावना का स्मरण हो आया, उसकी आंखों से आँसू आने लगे।

अलक्ले-तुमने अपने प्रेमी के साथ सलाह करके जो तै किया होगा उससे पहले ही मैं इसका अन्त कर दूंगा।

अन्ना-अलक्ले, मैं इसे अनुदारता नहीं कह सकती। पर मरे को मारना क्या तुम्हारी दृष्टि में उचित जंचता है।

अलक्ले-सब बातें तुम अपनी दृष्टि से कह रही हो। क्या तुमने एक बार भी मेरी अवस्था पर विचार किया है? क्या तुमने एक बार भी सोचा है कि इससे मुझे कितनी मानसिक यातना है। मेरी जिन्दगी तुमने बरबाद कर दी, पर क्या इसके लिये तुम्हें एक बार भी पश्चात्ताप हुआ?

अलक्ले क्रोध से पागल हो रहा था। उसके मुंह से साफ शब्द भी नहीं निकल रहे थे। इस समय क्षण भर के लिये अन्ना के हृदय में दया आई। उसका हृदय विषाद से भर गया। लेकिन अब वह कर ही क्या सकती थी। वह सिर झुका कर बैठ गई। अलक्ले भी कुछ क्षण चुप रहा। फिर बोला—"मैं तुम से यह कहने आया हूँ कि कल मैं मास्को जा रहा हूँ। अब मैं इस मकान में फिर लौटकर नहीं आऊंगा। मैंने जो कुछ करना निश्चय किया है, उसकी सूचना तुम्हें वकील द्वारा मिलेगी। तलाकनामा की सूचना वही देगा। शिरोजा को आज से मैं बहिन के घर भेज दूंगा।

अन्ना-तुम जानते हो कि शिरोजा पर तुम्हारा स्नेह नहीं है। केवल मुझे सताने के लिये उसे छीन रहे हो। दया करके उसे मेरे पास रहने दो।

अलक्ले-तुम्हारे संसर्ग में रहने के कारण मुझे अपने एक मात्र पुत्र से भी स्नेह नहीं रहा। फिर भी मैं उसे यहां नहीं छोड़ना चाहता।

मैं उसे अपने साथ ही ले जाऊंगा।

इतना कह कर अलक्ले कमरे से बाहर निकल रहा था कि अन्ना ने उसे रोक कर कहा—"मैं हाथ जोड़ कर विनती करती हूँ कि शिरोजा को यहीं छोड़ते जाओ। उसे मुझे दे दो। इससे अधिक मैं कुछ नहीं चाहती, शिरोजा को मुझे सौंप दो। मेरा दिन पूरा हो गया है। शीघ्रही मुझे सौरी के घर में बन्द होना पड़ेगा······शिरोजा को छोड़ते जाओ।

अलक्ले का क्रोध अन्तिम सीमा पर चढ़ गया। उसने अपना हाथ जबर्दस्ती खींच लिया और बिना कुछ कहे कमरे से बाहर हुआ और सीढ़ियों से उतर कर नीचे चला गया।

३

घर से चल कर अलक्ले सीधे वकील के पास पहुंचा। वकील का कमरा मुवक्किलों से भरा था। गरीब, अमीर सभी तरह के नर नारी बैठ कर वकील साहब की प्रतीक्षा कर रहे थे। सामने दो मुहर्रिर बैठे तेजी के साथ कागज पर कलम रगड़ रहे थे। मुहर्रिरों की कलम जिस तरह चल रही थी, अलक्ले को बहुत पसन्द आई। वह गौर से उनकी ओर देखने लगा। एक की निगाह उस पर पड़ी। अपनी जगह पर बैठा ही उसने मुंह बना कर पूछा—"क्या कहते हो?"

अलक्ले—वकील साहब से कुछ काम है। उनसे मिलने आया हूँ।

मुहर्रिर—वे इस समय काम कर रहे हैं। देखते नहीं कितने आदमी उनकी बाट जोह रहे हैं।

इतना कह कर वह चुप हो गया और अपना काम करने लगा।

अलक्ले—क्या वे थोड़ी देर के लिये मुझसे मिल नहीं सकते ?

मुहर्रिर–(मुँह बना कर) चुपचाप बैठो। बारी आवेगी तब जाना।

अलक्ले अपना नाम प्रगट नहीं करना चाहता था; पर उसने देखा कि इस तरह काम नहीं चल सकता। वह बोला–"उन्हें मेरी सूचना देदो।"

इतना कह कर उसने अपने नाम का कार्ड निकाला और मुहर्रिर के हाथ पर रख दिया।

मुहर्रिर ने कार्ड लिया और वकील के कमरे में गया। अलक्ले का इस समय आना उसे पसन्द नहीं था।

मुहर्रिर ने आकर खबर दी–"बैठिये अभी आते हैं।"

थोड़ी देर में वकील साहब कमरे के बाहर आये। उनकी शकल तथा उनका पहनावा देखते ही बनता था। नाटा कद, गंजा सिर, भूरी दाढ़ी और लम्बी लम्बी तनी भौंहें अजब बहार दे रही थीं। उस पर नाटा कोट, चम-चमाता जूता, उनकी सुन्दरता को और भी बढ़ा रहा था।

पास पहुँच कर वकील साहब ने अलक्ले से कहा–"चलिये कमरे में बैठकर बातचीत करें।

इतना कहकर अलक्ले को लेकर वह कमरे में गया और पीछे से दरवाजा बंद करता गया।"

कमरे में जाकर दोनों बैठ गये। इतने में एक मक्खी आकर वकील साहब के बदन पर बैठ गई। वकील साहब ने हाथ उठाया और बड़ी सफाई से मक्खी को पकड़ लिया और बड़ी मुलायमियत से उसे मोड़ना आरम्भ किया।

अलक्ले इस सफाई से दंग हो गया। वह बोला–"कुछ कहने से पहले मैं आपको सूचित कर देना चाहता हूँ कि जिस काम के लिये मैं

आपके पास आया हूँ, वह अतिशय गुप्त है।"

वकील—यदि मैं लोगों की बातें गुप्त नहीं रख सकता तो मैं वकील किस बात का हुआ? पर क्या आप प्रमाण चाहते हैं?

अलक्ले—आप मेरा नाम जानते हैं?

वकील—(दूसरी मक्खी को पकड़ कर) मैं आपसे और आपके कामों से भली भांति परिचित हूँ। रूस का बच्चा बच्चा आपसे परिचित होगा।

किसी बात के स्मरण से अलक्ले को दुःख हुआ। उसने ठंढी सांस भरी; लेकिन वह एक बार दृढ़कर लेने पर वह पीछे हटने वाला आदमी नहीं था। इसलिये साहस भरकर उसने कहा—दुर्भाग्य से मेरी विवाहिता पत्नी ने मेरे साथ विश्वासघात किया है। मैं कानूनी कारंवाई द्वारा अपना संबंध तोड़ डालना चाहता हूँ। अर्थात् तलाक दे देना चाहता हूँ। पर साथ ही यह भी चाहता हूँ कि मेरा पुत्र किसी भी तरह उसके पास न रह जाय।"

वकील का चित्त प्रसन्न हो उठा। अलक्ले ने देखा कि उसके चेहरे पर जो प्रसन्नता दिखलाई देती है, वह केवल आर्थिक लाभके कारण नहीं है कि उसे अच्छा आसामी मिल गया है, बल्कि नीचता की झलक है। वह बोला—"तलाक नामा देने में आप मेरी सहायता चाहते हैं?"

अलक्ले—हां, मैं अभी आपसे सलाह लेने आया हूँ। क्यों कि तलाक नामे पर मैं विशेष ध्यान रखूँगा। यदि तलाकनामा मेरी इच्छा के अनुकूल न हुआ तो मैं कानूनी कारंवाई नहीं करूँगा, उस अवस्था में आपका यह सारा श्रम व्यर्थ जायगा।

वकील—कोई हर्ज नहीं। अपने मन को संतोष देकर ही कारंवाई जियेगा।

इसी समय एक तीसरी मक्खी उसकी नाक पर भनभनाने लगी। उसने अपना हाथ तो उठाया; पर अलक्ले का लिहाज़ कर उसने उसे पकड़ा नहीं।

अलक्ले—तलाकनामा संबंधी कानून का तो मुझे ज्ञान है; पर मैं व्यावहारिक ज्ञान नहीं रखता।

वकील—यदि आप चाहें तो मैं आपके सामने तलाकनामे के के सभी रूप पेश कर दूं।

इतना कहकर उसने तलाकनामे के सभी रूप बतला दिये। अलक्ले ने सब बातें सुनी। वह बोला—"पत्नी की बेवफाई को मैं केवल पत्रों द्वारा सिद्ध करना चाहता हूँ।"

वकील—लेकिन इतने से ही काम नहीं चल सकता। पत्रों से प्रमाण मिल सकता है; पर इसमें आंखों देखी गवाही सब से आवश्यक होती है। मेरी आप से एक प्रार्थना है, जिस तरह आपने अपना सारा भेद मुझसे प्रकट किया है। उसी तरह उचित कार्रवाई मेरे ही ऊपर छोड़ दीजिये। मैं सब ठीक कर दूँगा।

अलक्ले—मैं अपना निर्णय पत्र द्वारा लिख भेजूँगा। तलाकनामा दिया जा सकता है, केवल प्रकार की बात तै करनी है।

वकील—यदि आप मुझे कार्रवाई की पूरी स्वतंत्रता दे दें तो मैं ठीक कर सकता हूँ।......आपके पत्रकी कब तक आशा करूँ?

अलक्ले—एक सप्ताह में। उस समय आप मुझे यह लिखकर सूचित कीजियेगा कि आप किस शर्तपर यह काम कर देंगे।

वकील—ठीक है।

इतना कहकर वकील ने झुककर अभिवादन करते हुए अलक्ले को

कमरे से बाहर किया। अलक्ले के चले जाने पर उसने अपने मनमें कहा—"अगर यह फँस गया तो इस साल मकान की भलीभाँति मरम्मत करवा डालूंगा। और प्रत्येक कमरे के लिये परदा बनवा लूँगा।"

८

१७ अगस्त की बैठक में अलक्ले की विजय हुई थी। पर बाद के परिणाम ने उसकी विजय को धक्का पहुंचाया। किसानों की अवस्था की जांच के लिये नया कमीशन पूरे उत्साह के साथ रवाना हुआ। सभी अवस्थाओं के अनुसार किसानों की दशा की जांच की गई और तीन मास में रिपोर्ट पेश की गई। रिपोर्ट साफ-साफ लिखी गई थी, जांच भी परिश्रम से किया गया था। किन्तु मानव-प्रकृति ही भूल की जड़ है। कमीशन के सदस्यों ने सरकारी अफसरों के कागज-पत्रों के अनुसार ही जांच की थी। किसानों की दुरवस्था का कारण अधिकतर फसल का ठीक तरह से न होना और किसानों का पुरानी लकीर का फकीर बने रहना बतलाया गया था। बात अलक्ले के पक्ष में थी। पर उसके विकट शत्रु स्ट्रेमों ने रिपोर्ट की सूचना पाकर चाल चलने की सोची। अलक्ले को इसकी संभावना ही नहीं थी। वह अन्य अनेक सदस्यों को लेकर अलक्ले के पक्ष में हो गया और अलक्ले की ओर से और भी उदार उपाय पेश किया। अलक्ले के मन्तव्य के यह कहीं बाहर था। कमीशन ने इसका ख्याल न किया और उसे स्वीकार कर लिया। " की चाल अब व्यक्त हुई। प्रतीकार के ये उपाय इतने आगे बढ़

गये थे कि चारों ओर उसकी निन्दा होने लगी और साथ ही साथ अलक्ले की भी निन्दा हुई।

स्ट्रेमों ने यह प्रगट किया कि हम लोगों ने बिना विचार किये अलक्ले का साथ दिया था और जो कुछ हुआ उसके लिये वह खेद प्रगट करके अलग हुआ। सबको प्रत्यक्ष हो गया कि इससे अलक्ले का पराजय अनिवार्य है।

अस्वस्थ रहने पर ही, घर की चिन्ता से दुःखित रह कर भी, अलक्ले हताश नहीं हुआ और न उसने कदम पीछे हटाया। कमीशन में मतभेद हो गया। स्ट्रेमों के सदस्यों ने अपनी भूल यह कह कर स्वीकार की कि—"अलक्ले ने पुनः जांच के लिये जो कमीशन बैठाया था, उसमें हम लोगों को विश्वास अवश्य था; पर उनकी रिपोर्ट एकदम वाहियात थी। उन्होंने केवल कागज रंगा है।" अलक्ले के साथियों ने सरकारी कार्रवाई का इस तरह विरोध होते देख के पुनः जांच करने के लिये बैठे, कमीशन की रिपोर्ट का समर्थन किया। इससे चारों ओर गड़बड़ी मच गई और दो मत के होने से कोई भी निश्चित रूप से नहीं कह सकता था कि किसानों की वास्तविक दशा क्या है। वे दिन-दिन नीचे गिरे जा रहे हैं, अथवा सुधर रहे हैं। एक तो यह गड़बड़ी, दूसरे स्त्री की व्यवहार जनित चिन्ता; दोनों ने अलक्ले की मिट्टी खराब कर दी। उसने कहा—"यदि कौंसिल की आज्ञा हो तो मैं स्वयं जाकर वास्तविक अवस्था की जाँच करूँ।" इससे लोगों को बड़ा विस्मय हुआ।

कौंसिल ने आज्ञा दे दी और अलक्ले देहातों की यात्रा की तैयारी करने लगा।

अलक्ले की यात्रा के समाचार ने चारों ओर हल-चल मचा दिया।

गली-कूचे में इसी की चर्चा होने लगी। तब तो उसकी वाह-वाही और भी अधिक बढ़ गई, जब कि सवारी के लिये घोड़ों का खर्च उसने लौटा दिया।

इस प्रसंग को लेकर वेत्सी ने अपनी सखी मेकी से कहा—"यह तो उचित ही है। जब सब जगह रेलें गई हैं तो फिर घोड़ों का खर्च क्यों लिया जाय।"

मेकी का मत इससे विरुद्ध था। इससे वेत्सी की बातें उसे न जँची। वह बोली—"तुम्हारे पास इतनी सम्पत्ति है, इसलिये तुम जो चाहो कहो; पर गर्मी के दिनों में जब मेरे पति दौरा करते हैं, उस समय मेरे आनन्द का ठिकाना नहीं रहता। उन्हें सवारी के लिये जो भत्ता मिलता है, उसी से मैं गाड़ी घोड़ा रख लेती हूँ।

रास्ते में अलक्ले मास्को में तीन दिन के लिये ठहर गया। दूसरे दिन वह मास्को के गवर्नर से मिलकर आता था। अब्लास्की ने उसे दूर से ही देखा और जोर जोर से चिल्लाना आरम्भ किया। अलक्ले ने देखा कि अब्लास्की जोर से चिल्लाता और गाड़ी दौड़ाता, उसकी तरफ आ रहा है। गाड़ी में एक स्त्री और दो बच्चे भी थे। स्त्री मन्द मन्द मुस्करा रही थी और अलक्ले की ओर देखकर अपना दाहिना हाथ हिला रही थी। वह स्त्री डाली थी।

अलक्ले मास्को में किसी से भी मिलना नहीं चाहता था। अब्लास्की से तो और भी मिलना नहीं चाहता था। अलक्ले अभिवादन करके लौट जाना चाहता था; लेकिन अब्लास्की ने कोचवान से गाड़ी रोकने को कहा और आप उतर कर गाड़ी के पास खड़ा हुआ। वह बोला—आये और सूचना तक न दी। कितने शर्म की बात है।"

अलक्ले—काम का भार इतना अधिक है कि मुझे क्षण भर का

अवकाश नहीं मिलता।

अब्लास्की–डाली आपसे मिलने के लिये अत्यन्त उत्सुक है। उसके पास तक तो आपको चलना ही होगा।

अलक्ले आगे कुछ नहीं कह सका। गाड़ी से धीरे से उतरा और डाली के पास गया।

डाली–(हँसकर) हम लोगों ने क्या अपराध किया है कि आप इस तरह छोड़ रहे हैं, नाता तोड़ रहे हैं।

अलक्ले–मैं एक दम काम में फँसा था। दम मारने की भी फुरसत नहीं थी। सब लोग कुशल से तो हैं न?

डाली–प्यारी अन्ना का क्या हाल है?

अलक्ले ने धीमी आवाज में कुछ कहा और कहता गया होता; पर अब्लास्की ने उसे रोककर कहा–"डाली, कलके लिये इन्हें निमन्त्रण दे दो। कल मास्को के रईसों से इनका परिचय करावेंगे।"

डाली–कल आपको आना होगा। हम लोग आपकी बाट देखते रहेंगे। अन्ना का कुशल-मंगल आपने नहीं बतलाया।

अलक्ले–(नाक भौंह सिकोड़कर) मजे में हैं।

इतना कह कर वह अपनी गाड़ी की ओर चला गया।

डाली—आप अवश्य आइयेगा।

अलक्ले ने धीरे से कुछ कहा। गाड़ी की पहियों की आवाज में अलक्ले की आवाज डूब गई।

अब्लास्की–(चिल्लाकर) मैं कल तुम्हारे पास आऊँगा।

अलक्ले अपनी गाड़ी में इस तरह जा बैठा, जिससे न तो वह उन लोगों को देख सके और न वेही उसे देख सकें।

अब्लास्की–(गाड़ी में बैठकर) विचित्र तरह का आदमी है।

गाड़ी चलने लगी।

डाली–ग्रीशा और टेनी के लिये कोट लेना जरूरी है।

अब्लास्की–जाकर ख़रीद लेना। कह देना, मेरे नाम बिल भेज देगा।

५

आज रविवार का दिन था, अब्लास्की घर से सीधे थिएटर गया। उसने नई प्रेयसी ढूंढ निकाला था और उस दिन उससे मिलना था। उससे मिल कर वह होटल में गया। उसी होटल में उसके नये अफसर, उसका मित्र लेविन और बहनोई अलक्ले टिके थे। अलक्ले को लेकर उसे घर लौटना था।

अब्लास्की खाने और खिलाने दोनों का शौकीन था। खिलाने का उसे विशेष शौक था। आज की दावत में उसे विशेष आनन्द इस बात का था कि इतने दिनों के बाद लेविन और किटी का साक्षात् होगा। दूसरे हर तरह के लोग इस में शामिल होंगे। एक तरफ से रूस के वर्तमान राजनैतिक प्रधान पुरुष अलक्ले आ रहे थे तो दूसरी ओर से रूस के प्रधान दार्शनिक तथा आध्यात्मिक इवानोविच आ रहे थे। इसी तरह बातूनी, पेस्टो, इतिहास के विद्वान् तथा अच्छे अच्छे गानेवालों का भी विचित्र जमाव होनेवाला था।

यद्यपि इस बीच में दो घटनायें ऐसी हो गई थीं, जिनका असर ी पर पड़े बिना नहीं रह सका, फिर भी इस दावत के आनन्द में सब भूल गया। पहली घटना अलक्ले के संबंध की थी। कल अलक्ले

से मिल कर अब्लास्की को विस्मय हुआ। इतनी रुखाई और उदासीनता उसमें पहले कभी भी देखने में नहीं आई थी। मास्को में आकर अब्लास्की से न मिलना अथवा उसके घर न जाना एक दम नई बात थी। अन्ना और रंस्की के संबंध में अनेक तरह की बातें वह थोड़े दिनों से सुनता आ रहा था। अलक्से के इस व्यवहार से उसे उन बातों पर कुछ विश्वास होने लगा। यह तो पहली विपत्ति थी। दूसरी विपत्ति यह थी कि नया अफसर बड़ा ही ज़ालिम था। सुबह ६ बजे उठ कर वह काम करने बैठ जाता और दिन भर बैलों की तरह पीसता। अपने आधीन कर्मचारियों से भी वह उसी तरह काम लेना चाहता था। इसके अलावा अफवाह फैल रही थी कि वह कुलीन वर्ग का नहीं है और चरित्र का बड़ा कड़ा है। इससे एक दिन पहले अब्लास्की सरकारी लिबास में उससे मिलने गया था। उसने बड़े स्नेह से बात-चीत की थी। आज वह सरकारी लिबास में नहीं था। इससे भय था कि कहीं वह डाँट न बतावे। इससे भी अब्लास्की का मन थोड़ा दुःखी था।

यही सोचता-विचारता अब्लास्की होटल में पहुँचा और अपने अफसर का पता लगाने लगा। इतने में लेविन से साक्षात् हो गई। लेविन ने उसे बैठने के लिये कहा। उसने उत्तर दिया—"भाई, समय नहीं है।" फिर भी वह बैठ गया और घंटों बेकार बातें करता रहा। लेविन की यात्रा का हाल पूछा।

लेविन—मैं जर्मनी, आष्ट्रिया, फ्रांस और इङ्गलैण्ड की यात्रा करके आ रहा हूँ। किसी भी देश की राजधानी में मैंने अपना समय नष्ट नहीं किया। मैं उन नगरों की सैर करता रहा, जहां कल-कारखाने हैं और रोजगार होता है। इस यात्रा से मुझे बड़ा लाभ हुआ।

अब्लास्की—मजूरों की समस्या के संबंध में तुम्हारे मत को मैं पहले से ही जानता था।

लेविन—कुछ नहीं जानते। रूस में तो मजूरों का प्रश्न ही नहीं उठ सकता। यहां तो प्रश्न यह है कि उन्हें खेतों में काम किस तरह दिया जाय। यह प्रश्न उन लोगों के सामने भी है; पर वहां इसका रूप भिन्न है।

अब्लास्की लेविन की बातें गौर से सुन रहा था। वह बोला—"तुम्हारा अनुमान सच हो सकता है। पर मुझे तो इस बातसे खुशी है कि तुम्हारा चित्त प्रसन्न है। थोड़े दिन पहले किटी के भाई से मुलाकात हुई थी। उसने मुझसे कहा था कि तुम्हारी हालत खराब हो गई है। तुम दिन रात मृत्यु की ही चिन्ता किया करते हो।"

लेविन—पर उससे क्या। मैंने मृत्यु का विचार छोड़ नहीं दिया है। मुझे अपने कामों और विचारों का अभिमान है। फिर भी यह संसार क्षणभंगुर है।

अब्लास्की—यह सब वाहियात बातें मैं नहीं सुनना चाहता।

लेविन—वाहियात तो जरूर हैं; पर एक बार इन पर गौर से विचार कर देखो कि फिर संसार की कोई चिन्ता रह जाती है। मान लो कि कल तुम मरनेवाले हो और तुम्हें दृढ़ निश्चय हो गया कि कल तुम्हारी मृत्यु अवश्य होगी। फिर क्या उस समय संसार की कोई भी वस्तु तुम्हें रुचेगी।

अब्लास्की लेविन की बातें सुन-सुन कर हंस रहा था। उसने कहा—"अब तुम ठीक रास्ते पर आये। एक दिन तुम मेरी दिल्लगी ले रहे थे कि मैं मौज में फजूल खर्च करता हूँ।"

लेविन—यह तो जानना चाहिये कि जीवन में सब से उचित बात है? पर मैं कुछ नहीं जानता। मैं तो केवल इतना ही जानता हूँ

कि हम सब की मृत्यु निकट है।

अब्लास्की—क्यों, इतनी जल्दी क्यों ?

लेविन–तुम जानते हो कि मृत्यु की चिन्ता करते ही संसार की सभी वस्तुओं से स्पृहा घट जाती है; पर आत्मा को अटल शान्ति मिलती है।

अब्लास्की–मैं यह बात नहीं स्वीकार करता। अन्त सदा अच्छा होता है।

इतना कह कर वह उठने लगा और बोला–"अब मुझे जाने दो।"

लेविन–(हाथ पकड़कर) थोड़ी देर और बैठो। मैं कल जारहा हूँ। न जाने कब मुलाकात होगी।

अब्लास्की–आज ही शाम को दावत है। मैं तुम्हें बुलाने के लिये ही तो आया हूँ। तुम्हारे भाई कोनिशे भी आवेंगे और अलक्से भी।

लेविन को मालूम था कि जाड़े में किटी अपनी मझिली बहन के साथ पीटर्सबर्ग में थी। लेविन जानना चाहता था कि वह मास्को लौट आई है और इस दावत में शामिल होगी या नहीं। पर उसे पूछने का साहस नहीं हुआ। उसने अपने मन में कहा–"वह शामिल हो या नहीं, मुझे इससे क्या प्रयोजन।"

अब्लास्की–तुम जरूर आना।

लेविन–अच्छी बात है।

अब्लास्की वहां से उठा और अपने अफसर के कमरे की ओर बढ़ा। उसने बड़े सत्कार से अब्लास्की को बैठाया। चार बजे तक बातें करता रहा। चार बजे के बाद उससे रुखसत होकर अब्लास्की अपने बहनोई के पास चला।

६

उपासना से लौट कर अलक्ले सीधे होटल में आया। इस समय उसके हाथ में दो काम थे और वह दोनों को समाप्त करना चाहता था। पहला काम तो यह था कि उसकी प्रेरणा से किसानों का एक डेपुटेशन अपना सुख-दुःख सुनाने पीटर्सबर्ग जा रहा था, संयोग ने मास्को में उससे मुलाकात हो गई। डेपुटेशन के सदस्यों को उसे सब बात समझा कर, ठीक करना था कि वहां उन्हें क्या क्या कहना होगा, तथा सरकार के सामने कौन कौन बातें रखनी होगीं। बात-चीतसे अलक्ले ने देखा कि यदि डेपुटेशन उससे बिना मिले ही चला जाता तो सब काम नष्ट हो जाता। क्योंकि सदस्यगण कई बात ऐसी भी कहनेवाले थे, जो उनके शत्रुओं का मत था और इससे उनके विरुद्ध पड़ता। डेपुटेशन का मसविदा तैयार करके उसने उन्हें दिया और अपने सहायक साथियों को पत्र लिख दिया कि इनकी पूरी सहायता करना। कौण्टेस लीडिया से अलक्ले को विशेष आशा थी। क्योंकि इस काम में उसकी योग्यता का पीटर्सबर्ग में दूसरा कोई न था।

इस काम से छुट्टी पाकर वह वकील को खत लिखने बैठ गया। जबसे अलक्ले ने अपना भेद वकील से कहा और घर छोड़कर निकल आया तबसे उसका हृदय अत्यन्त कठोर और दया हीन हो गया। इससे उसने बिना किसी संकोच के वकील को लिख दिया कि कानून के अनु-, जो कार्रवाई तुम उचित समझो, करो। उस पत्र के साथ उसने तीन को भी भेज दिया, जो रंस्की ने अन्ना को लिखे थे। ये पत्र उस दिन की दराज़ से इसने निकाला था। लिफाफा बन्द कर के वह मुह

कर रहा था कि बाहर से अब्लास्की की आवाज़ सुनाई पड़ गई। अलक्ले का चपरासी उसे आने से रोक रहा था और वह जबर्दस्ती आना चाहता था। अलक्ले ने मनमें कहा-"चलो अच्छे मौके से आया है। मैं इस समय साफ-साफ कह दूंगा कि तुम्हारी बहन की यह कीर्ति है और इसी कारण मैं तुम्हारे घर नहीं चल सकता।"

इतना कह कर वह कमरे से बाहर निकला और उसने अब्लास्की को बुलाया। चपरासी को डाट बतलाते अब्लास्की अलक्ले के कमरे की ओर बढ़ा।

अलक्ले ने न तो अब्लास्की को बैठाया और न कुशल-प्रश्न पूछा। उसके आते ही बड़ी रुखाई से उत्तर दिया—"मुझे खेद है कि मैं न चल सकूँगा।"

अलक्ले ने सोचा था कि अब्लास्की के आते ही मैं उसकी बहन की कीर्ति-कथा आरम्भ कर इस संबंध का यहीं अन्त कर दूंगा। उस समय वह अब्लास्की के प्रेम की सारी बात भूल गया था। उसकी बात पूरी भी नहीं होने पायी थी कि अब्लास्की ने कहा-"क्यों? यह नहीं हो सकता। हम लोगों ने अन्य मेहमानों से कह रखा है कि तुम भी आज की दावत में शरीक होओगे।"

अलक्ले—मैं तुमसे साफ-साफ कह देना चाहता हूँ कि जिस धागे में हम तुम बँधे थे, वह टूट गया। इससे मैं तुम्हारे घर नहीं जा सकता।

अब्लास्की—क्यों? ऐसा क्यों हो रहा है?

अलक्ले—मैं अपनी पत्नी यानी तुम्हारी बहन को तलाक देने जा रहा हूँ, ऐसा करने के लिये मैं विवश हूँ।

अलक्ले की अन्तिम बात ने अब्लास्की के हृदय पर बड़ी चोट

पहुँची। वह खड़ा नहीं रह सका। कुर्सी पर बैठ गया। अपने को सम्हाल कर बोला—"अलक्ले, यह क्या कह रहे हो?"

इतना कहते-कहते उसका गला भर आया। चेहरा पीला पड़ गया।

अलक्ले—जो कह रहा हूँ, सच कह रहा हूँ। यही होगा।

अब्लास्की—मुझे विश्वास नहीं होता।

अलक्ले को खेद हुआ। क्योंकि अब्लास्की पर जो असर वह अपनी बातों का डालना चाहता था, नहीं पड़ा। अब उसे लाचार होकर सब बातें साफ-साफ कहनी होंगी और इतने पर भी अब्लास्की अपना संबंध नहीं तोड़ेगा। बोला—"लाचार होकर यह कार्रवाई करनी पड़ी।"

अब्लास्की—मैं तुम्हारे चरित्र को जानता हूँ। अन्ना को भी मैं भली भांति जानता हूँ। मुझे सहसा इस बात पर विश्वास नहीं होता। कुछ भ्रम है।

अलक्ले—यदि यह भ्रम होता!

अब्लास्की—जो हो, इस काम में इतनी जल्दबाजी न करो।

अलक्ले—मैं जल्दबाजी नहीं कर रहा हूँ। यह ऐसा मामला है कि दूसरों की राय पर नहीं चला जा सकता। मैंने यही स्थिर किया है।

अब्लास्की—मेरी एक प्रार्थना है। जहां तक मैं समझता हूँ, तुमने अभी तक कोई कार्रवाई नहीं की है। तुम उचित कार्रवाई करने के लिये स्वतन्त्र हो, पर एक बार मेरी स्त्री से सलाह कर लो। तुम जानते ही हो कि वह तुम्हें और अन्ना दोनों को कितना चाहती है।

अलक्ले सोच में पड़ गया। अब्लास्की दीनभाव से उसकी ओर लगा। उसने पूछा—"तुम चलोगे तो?"

अलक्ले—मैं निश्चय नहीं कर सकता, यही कारण था कि मैं तुम

लोगों से मिलने नहीं आया। मेरी समझ में अब इस संबंध का यहीं अन्त हो जाना चाहिये।

अब्लास्की—यह क्यों ? मेरा और तुम्हारा संबंध तो केवल अन्ना के कारण नहीं था। हम लोगों की प्रगाढ़ मैत्री पहले से चली आ रही है। यदि तुम्हारा अनुमान ठीक भी हुआ, तो भी इसके कारण हमारे प्रेम में क्यों धक्का पहुँचे। मेरी फिर भी यही प्रार्थना है कि एक बार डाली से मुलाकात कर लो।

अलक्ले—हम लोग इस मामले को भिन्न-भिन्न पहलू से देख रहे है। किसी भी अवस्था में उस पर बहस करना उचित नहीं।

अब्लास्की—क्यों नहीं ? या जैसा तुम उचित समझो। परन्तु आज दावत में तो तुम्हें चलना ही होगा। डाली तुम्हारी बाट देख रही होगी, तुम एक बार उसकी सलाह अवश्य लो। वह विचित्र स्त्री है। मैं हाथ जोड़कर तुमसे प्रार्थना करता हूँ।

अलक्ले—(ठंढी सांस भर कर) यदि तुम इतना जोर दे रहे हो तो मैं अवश्य आऊंगा।

प्रसंग बदलने के लिये अलक्ले ने अब्लास्की के नये अफसर की चर्चा छेड़ दी। उससे पूछा—"तुमने उससे मुलाकात की ?"

अब्लास्की—कलकी बैठक में वे उपस्थित थे। इतनी कम अवस्था होने पर भी अपने काम में वह बड़े ही चतुर मालूम होते हैं।

अलक्ले—रंग-ढंग कैसा है ? कुछ सुधार करने की ओर प्रवृत्ति है, अथवा जो कुछ हुआ है, उस पर भी पानी फेरना चाहते हैं। हमारी सरकार में ही दोष है और उसी के वे समर्थक हैं।

अब्लास्की—मैं तो उनमें कोई दोष नहीं देखता। वे किस नीति ;

पर चलेंगे, यह तो नहीं कह सकता। पर वे बड़े ही सज्जन हैं। मैं उनके पास से ही आ रहा हूँ। उनसे बातें कर बड़ा आनन्द आया।

इतना कह कर अब्लास्की ने समय देखा। उसने कहा—"चार बज गया। मुझे अभी एक व्यक्ति के पास और जाना है। फिर कहे जाता हूँ कि आना अवश्य, नहीं तो हम लोगों को अतिशय खेद होगा।"

अलक्से—जब मैंने बचन दे दिया है तो मैं अवश्य आऊँगा।

अब्लास्की—आकर तुम्हें पछताना नहीं पड़ेगा। तुम प्रसन्न होगे। विश्वास मानो। ठीक पांच बजे पहुंच जाना।

इतना कह कर अब्लास्की अपनी जगहसे उठा और रवाना हुआ।

७

पांच बज चुका था। अनेक मेहमान आ गये थे। लेकिन अभी तक अब्लास्की का पता नहीं। इतने में कोनिशे और पेस्टो को लिये अब्लास्की ने घरमें प्रवेश किया। ऊपर जाकर उसने देखा कि अलक्जेण्डर डिमरिच, चेरवास्की, किटी, किटी के भाई और अलक्से आकर बैठे हैं।

अब्लास्की ने देखा कि कमरे में सन्नाटा छाया हुआ है। डाली लड़कों में परीशान है। इसलिये वह मेहमानों को प्रसन्न रखने का यत्न नहीं कर पाती। ऐसा कोई नहीं था, जो एक दूसरे से परिचय कराता और लोगों को बात चीत में लगाता। सब के सब मूर्ति के समान चुपचाप बैठे थे और एक दूसरे की ओर देख रहे थे।

कमरे में प्रवेश कर अब्लास्की ने सब से क्षमा मांगी। इसके बाद एक दूसरे से परिचय कराया। आते ही उसने अलक्से, कोनिशे और

पेस्त्रो में बहस छिड़वा दी कि पोलैण्ड को रूस में मिलाना उचित था, या नहीं। एक क्षण में ही उसने मजलिस की सूरत बदल दी। अभी जहां सन्नाटा छाया था, वहां कहकहा मच गया। अभी तक लेविन नहीं आया था। किटी की आंखें रह-रह कर दरवाजे की तरफ जातीं और लौट आतीं। उसका कलेजा धड़क रहा था। इतने दिनों बाद आज लेविन से मुलाकात होगी। वह अपने को कैसे सम्हाल सकेगी?

मेहमानों को बात-चीत में लगा कर अब्लास्की बैठक में कपड़ा उतारने गया। रास्ते में ही लेविन से मुलाकात हुई।

लेविन—मुझे देर तो नहीं हुई?

अब्लास्की—आज तक तुम ठीक समय पर कब आये हो? तुम्हारा सभी काम अवसर चूक कर होता है।

लेविन—क्या अधिक भीड़-भाड़ है? कौन कौन लोग आये हैं?

अब्लास्की—सब तो आये ही हैं। किटी भी आई है। चलो भीतर अलक्से से तुम्हारी मुलाकात करादें।

उदार मतका होते हुये भी अब्लास्की अलक्से से मिलना अभिमान समझता था। इसी से वह अपने घनिष्ट मित्रों से उसका परिचय अवश्य कराता था। पर लेविन को उस समय अलक्से से अभीष्ट नहीं था। किटी को उस दिन के बाद एक बार उ[illegible] गाड़ी में देखा था, आज उसके दर्शन की आशा थी। पर हृदय में बात न लाने का बराबर यत्न किया था। उसका समाचार सुनकर, उसका चित्त प्रसन्न हु[illegible] अज्ञातभय ने उसे कँपा दिया। उसके मुंह से एक [illegible]

उसने मनमें सोचा—"किटी कैसी होगी[illegible]

गाड़ी में जैसा मैंने देखा था। क्या डाली की बातें सच थीं ? उनमें संदेह की तो कोई गुञ्जायश नहीं ?" इसके बाद बड़ा जोर करके उसने कहा—"अलवले से मेरा परिचय अवश्य करा दो।"

अब्लास्की के साथ उसने कमरे में प्रवेश किया। उसका दिल उसके काबू में नहीं था। उसके पैर ठिकाने नहीं पड़ते थे।

किटी की आंखें दरवाजे पर लगीं थीं। लेविन पर उसकी पहली निगाह पड़ी। शर्म, हया और लज्जा से उसकी आखें ढंकी पड़ती थीं। उसका हृदय गदगद हो गया, हृदय की कलियां खिल उठीं। उसका चेहरा लाल हो गया, गालों में गुलाबी रंग खिल गये। उसके होंठ फड़कने लगे, मानो वह उसे अपने पास बुला रही है। लेविन सीधे किटी के पास गया और बिना कुछ कहे, उसने हाथ मिलाया। किटी बोली—"आज तो बहुत दिनों के बाद आपके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ ?"

लेविन—मुझे तो बीच में आपके दर्शन मिल गये थे। स्टेशन से जिस समय आप गाड़ी पर बैठी, डाली के पास, इगुंशो जा रहीं थीं, मैंने आपको देखा था।

लेविन के दिल में ज्वार-भाटा-सा प्रबल वेग उठता था। वह डरता था कि कहीं तूफान का वेग उसे व्याकुल न बना दे। किटी की आकृति पर लक्ष्य करके उसने कहा—"डाली की बातें सच मालूम होती हैं।"

अब्लास्की ने उसका हाथ पकड़ कर खींचा और अलवले के पास ले कर फिर उसने दोनों का परिचय कराया।

अलवले—आज आपसे एक बार फिर मिल कर बड़ी प्रसन्नता हुई।

अब्लास्की—क्या आप लोग पहले से ही एक दूसरे को जानते हैं ?

अलवले—एक बार आप और मैं एक ही डब्बे में यात्रा कर रहा था।

इतनी ही बात होने पाई थी कि अब्लास्की मेहमानों को लेकर भोजनालय की ओर बढ़ा। भोजनालय में कुर्सी-टेबुल सजी थी। सब मेहमान आकर कुर्सियों पर बैठ गये। पोलैण्ड को रूस में मिलाने की चर्चा फिर छिड़ गई। अलक्ले ने कहा—"यह तभी संभव है, जब रूस सरकार उदार नीति से काम ले।"

पेस्टो—एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को अपने अन्तर्गत तभी कर सकता है, जब उसकी जन-संख्या खूब बढ़ जाय।

कोनिशे—दोनों बातें अंशतः ठीक हैं। (हंस कर) पेस्टो के अनुसार हम लोगों को अधिक से अधिक सन्तान पैदा करनी चाहिये। (लेविन की ओर लक्ष्य कर के) हम दोनों भाइयों ने तो इस विषय में भारी भूल की है। रूस की सच्ची सन्तान वे ही हैं, जिन्होंने विवाह किया है। इनमें भी हमारे मित्र अब्लास्की का नम्बर पहला है। (अब्लास्की से) जन-संख्या में कितना नम्बर जोड़ा है?

इस पर सब कोई हंस पड़े।

अब्लास्की—मेरी समझ में भी यही उपाय है।

इसके बाद भोजन आरम्भ हुआ। पेस्टो को सन्तोष नहीं था। इनसे भोजन के उपरान्त, उसने फिर वही चर्चा छेड़ दी। वह बोला—"मेरा यह अभिप्राय नहीं था कि केवल जन-संख्या की वृद्धि से ही यह साध्य है। अन्य उपायों के साथ यह भी आवश्यक है।

अलक्ले—यह हो सकता है। मेरा विश्वास है कि एक जाति पर दूसरी जाति अपना प्रभाव तभी डाल सकती है, यदि वह अधिक उन्नत है।

पेस्टो—(उतावलेपन से) यही तो प्रश्न है, उन्नति से क्या अभिप्राय है। फ्रांस, जर्मनी, इङ्गलैण्ड तीनों में से एक भी कम उन्नत नहीं है;

पर राइन प्रान्त फ्रांस के अधीन चला गया। इससे प्रत्यक्ष है कि यह नियम नहीं लागू हो सकता।

अलक्ले—(शान्त होकर) मेरी समझ में जिसकी जितनी उच्च सभ्यता होगी, उसका उतना ही अधिक प्रभाव पड़ेगा।

पेस्टो–पर सच्ची सभ्यता का बाह्य-चित्र क्या हो सकता है ?

अलक्ले—बाह्य-चित्र तो सब पर प्रगट रहता है।

कोनिशे–पर क्या यह बात सब को विदित रहती है ? यह बात सर्व स्वीकृत है कि सच्ची संस्कृति का आधार साहित्य है, फिर भी इस पर मतभेद हैं। दोनों पक्षों के मत प्रबल हैं।

अब्लास्की–(कोनिशे से) आप तो साहित्य के पक्ष में होंगे ?

कोनिशे–मैं अपना मत नहीं प्रगट कर रहा हूँ। मैं साहित्य के पक्ष में अवश्य हूँ; फिर भी मैं निश्चितरूप से कोई मत स्थिर नहीं कर सकता।

पेस्टो–प्रकृति विज्ञान से भी तो वही लाभ हो सकता है।

अलक्ले–मेरा इससे मत भेद है। यह बात तो माननी ही पड़ेगी कि हम भाषा का ज्ञान जिस पाय या रीति से प्राप्त करते हैं, उसका प्रभाव हमारी बौद्धिकविकास पर अवश्य पड़ता है। इसके अलावा साहित्य की पुस्तकें, चरित्रऔर सदाचार पर अधिक जोर देती हैं। पर प्राकृतिक विज्ञान का प्रभाव हानिकर होता है। वर्तमान कालकी बुराइयाँ प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

कोनिशे कुछ कहना चाहता था; पर पेस्टो ने बीच में ही बोल कर ... मत का समर्थन करना चाहा। उसके समाप्त करने पर कोनिशे

"दोनों से जो लाभ या हानि हो सकती है, उसकी तुलना करना ... काम है। हां, इतना तो अवश्य स्वीकार किया जा सकता है कि

यदि साहित्य के पक्ष में चरित्र और सदाचार का सहारा न होता तो शिक्षा के लिये साहित्य को ही चुनना, इतना सहज नहीं हो गया होता। इन्हीं गुणों के कारण इसे इतना जल्दी स्वीकार कर लिया गया है।"

पेस्टो—मैं इसे स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं हूँ कि सरकार की दृष्टि में यह बात थी। सरकार कुछ काम करना चाहती है और उसके परिणाम पर कभी भी विचार नहीं करती। स्त्रीशिक्षा ही को ले लीजिए। इससे समाज को हानि हो सकती है; पर सरकार स्त्रियां के लिये स्कूल और कालेज बराबर खोलती जा रही है।

पेस्टो की अन्तिम बात से दूसरा विचारणीय विषय लोगों के सामने आ गया। अलवले ने कहा—"स्त्रीशिक्षा से स्त्रियों की स्वतन्त्रता का भ्रम हो सकता है और इसी से इसे हानिकर समझा जा सकता है।"

पेस्टो—मेरी समझ में दोनों प्रश्नों का अन्योन्याश्रय संबंध है। स्त्रियां शिक्षिता नहीं हैं, इससे वे अपने अधिकारों से वञ्चित हैं। वे अधिकारच्युत हैं, इससे अपनी शिक्षा की व्यवस्था नहीं कर सकतीं। इस बात को तो सदा स्मरण रखना चाहिये कि स्त्रियों को हम लोगों ने इतना कुचल डाला है और उनकी यह बेबसी की दशा इतनी प्राचीन काल से चली आ रही है कि हम लोग उस भेद को भी स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं है। जिसके द्वारा वे हम से अलग कर दी गई हैं।

कोनिशे—आपने स्त्रियों के अधिकार की चर्चा की है।

'अधिकार' शब्द से कोनिशे का अभिप्राय था जूरी होने का अधिकार, वोट देने का अधिकार, सरकारी सभाओं में अध्यक्ष होने का अधिकार पार्लामेंट में बैठने का अधिकार तथा सरकारी नौकरी पाने का अधिकार।

पेस्टो—हां!

कोनिशे—आप इसे अधिकार क्यों कहते हैं ? इसे कर्तव्य कहिये। हम लोग जो काम करते हैं, उसे कर्तव्य समझ कर करते हैं। यदि स्त्रियां यह सब प्राप्त करना चाहती हैं तो वे अपना कर्तव्य पालन करना चाहती हैं और यह उचित ही है। इससे हमें प्रसन्न होना चाहिये और उनकी सहायता करनी चाहिये।

अलक्ले—आपका कहना बहुत ठीक है। प्रश्न यह उठता है कि इन कार्यों की योग्यता उनमें है, या नहीं।

अब्लास्की-शिक्षा का अधिकाधिक प्रचार होने पर वे भी योग्य हो जायंगी।

पेस्टो—(क्रोध से) हबशी जाति के बारे में भी लोगों का यही कहना था।

कोनिशे—मुझे इस बात पर विस्मय हो रहा है कि पुरुष तो अपने कर्तव्यपालन से भाग रहे हैं; पर स्त्रियां अपने सिर पर नया बोझ लेना चाहती हैं।

पेस्टो—कर्तव्य और अधिकार का घना संबंध है। स्त्रियाँ अधिकार, धन तथा प्रतिष्ठा तीनों साथ ही चाह रही हैं।

किटी के पिता—यह चेष्टा उसी तरह की है, जिस तरह स्त्रियों को लोग रुपया देकर धाय के काम में लेते हैं, पर मुझे यों ही नहीं पूछेंगे।

इस पर सब के सब हँस पड़े।

पेस्टो—एक पुरुष के लिये बच्चों का पालन करना कठिन है; पर एक [illegible] में यह काम कर सकती है।

[illegible] के पिता—मैं एक अंग्रेज की कथा जानता हूँ। उसने जहाज में [illegible] का पालन किया था।

कोनिशे—जितने इस तरह के अंग्रेज धाय मिलेंगे, उतनी स्त्रियां भी अधिकार-पद पर मिलेंगी।

अव्लास्की—पर यदि किसी रमणी के कोई न हो तो वह क्या करे ?

डाली—यदि अनुसन्धान किया जाय तो मालूम होगा कि कर्तव्य रहते उस रमणी ने पिण्ड छुडाया है। सगे-संबंधी तो उसके अवश्य ही होंगे। उनके यहां वह रह कर अपने कर्तव्य का पालन कर सकती थी।

पेस्टो—हम लोग तो सिद्धान्त को ही आदर्श बना कर चलते हैं। स्त्रियां स्वतन्त्र होना चाहती हैं, शिक्षिता होना चाहती हैं, वे जानती हैं कि उनमें किसी बात की योग्यता नहीं है और यही कारण है कि वे हर तरह सताई जाती हैं और अनेक तरह के अपमान सहती हैं।

इसी तरह देर तक बात-चीत होती रही। बारी-बारी से सभी लोगों ने अपना-अपना मत प्रगट किया; पर लेविन और किटी इससे सर्वथा उदासीन रहे। आज इतने दिनों के बाद मिलने पर वे दोनों अपने-अपने हृदय की बात एक दूसरे तक पहुँचा देना चाहते थे; पर मारे शर्म के साफ-साफ कोई कुछ नहीं कहता था। केवल इंगित और इशारा चलता था।

किटी ने छेड़ा—आपने उस दिन गाड़ी में मुझे कहां से देखा ?

लेविन—मैं कटाई से लौट रहा था कि गाड़ी की आवाज सुनाई दी। फिर कर देखा। सवेरा हो रहा था। शायद आप जाग उठी थीं। आपकी मां तब तक सो रही थीं। समय बड़ा ही सुहावना था। आप खिड़की पर झुक कर चारों ओर का दृश्य देख रही थीं। टोपी आपके हाथ की अँगुलियों पर नाच रही थी। देखने में साफ मालूम होता था कि आप किसी विचार में थीं। क्या आप बतला सकती हैं कि उस समय आप के मन में क्या था ?

किटी ने देखा कि उसका प्रभाव पड़ गया है। उसने हंस कर कहा-"याद नहीं आता।"

लेविन-(एक मेहमान की ओर लक्ष्य कर के) तुरोसिन किस मजेदारी से हंस रहा है।

किटी-आप उन्हें बहुत दिनों से जानते हैं ?

लेविन-उसे कौन नहीं जानता। लोग कहते हैं बड़ा जालिम है; पर मैं तो समझता हूँ बेपेंदी का लोटा है।

किटी-बड़े ही अच्छे आदमी हैं। दया की खान है। बड़ा ही उदार हृदय है। उस बार आपके जाने के बाद मैं बहिन डाली के घर गई। अभाग्यवश सभी लड़के बीमार हो गये। ये भी मिलने आ गये थे। उस असहाय दशा में दो सप्ताह तक टिके रहे और लड़कों की बराबर देख-रेख करते थे (डाली से) बहन ! इनसे तुरोसिन की बातें कह रही हूँ।

डाली-(तुरोसिन की ओर देख कर) बड़े ही भलेमानस हैं।

अपने संबंध की चर्चा होती देख, तुरोसिन ने उन लोगों की ओर देख कर केवल मुस्करा दिया।

लेविन ने तुरोसिन की ओर देखा। उसे विस्मय हुआ कि इस व्यक्ति के हृदय को मैं अभी तक नहीं पहचान सका था। उसने किटी से कहा-"आज से मैं किसी की बुराई नहीं करूंगा।"

८

जिस समय स्त्रियों के अधिकार पर विवाद हो रहा था, स्त्रियों को

वैवाहिक संबंधी अधिकार की असमानता का प्रश्न भी पेस्टो ने उठाया था। पर कोनिशे और अव्लास्की ने उसे दबा दिया। स्त्रियों के अलग हो जाने पर, पेस्टो ने अलक्ले से कहा—"इस संबंध में मुझे केवल यही कहना है कि स्त्रियों की बेवफाई और पुरुषों की बेवफाई के लिये कानून और जनसाधारण में असमान दण्ड है।"

अलक्ले—यह प्रथा चली आ रही है।

इतना कह कर वह बैठक में जाना चाहता था। इतने में तुरोसिन ने कहा—"आपने सुना है कि रंस्की के साथ वस्या ने द्वन्द्व किया और उसे मार डाला।"

अव्लास्की ने देखा कि ये सब बातें अलक्ले के हृदय पर चोट करेंगी, इससे वह उसे वहां से ले जाना चाहता था; पर अलक्ले ने उत्सुकता के साथ उससे पूछा—"यह द्वन्द्व क्यों हुआ?"

तुरोसिन—उसकी स्त्री ने बेवफाई की।

अलक्ले ने एक लम्बी सांस ली और बिना उत्तर दिये बैठक में चला गया।

डाली उनकी प्रतीक्षा कर रहीथी। वह उन्हें लेकर एकान्त में गई और बैठ कर बातें करने लगी। डाली को अन्ना की सच्चरित्रता पर पूरा विश्वास था। इसलिये अलक्ले पर उसे क्रोध हो रहा था कि यह व्यक्ति उसका जीवन क्यों नष्ट करना चाहता है। वह बोली—"मैंने आप से अन्ना के बारे में कई बार पूछा; पर आपने कुछ उत्तर नहीं दिया। क्या कारण है? अन्ना कैसी है?"

अलक्ले—(उसकी ओर से आंखें फेर कर) मैं समझता हूँ, वह अच्छी तरह है।

डाली—मैं इस समय अनधिकार चर्चा करने नहीं हूँ। अन्ना मुझे

प्राणों से भी प्यारी है। इसी से मैं पूछती हूँ। क्या बात है? आपने उनमें क्या दोष देखा?

अलक्ले का चेहरा विकृत हो गया। आंखे बन्द कर के उसने अपना सिर नीचा कर लिया। वह बोला—"अब्लास्की ने तो सब बातें कही होंगी।"

डाली—मैं कभी भी विश्वास नहीं कर सकती कि ऐसी बात हो सकती है।

डाली ने यह बात जिस तरह कहा था, उसका अलक्ले पर बहुत प्रभाव पड़ा। उसने कहा—"जो बात आंखों देखी हैं, उन पर अविश्वास कैसे करूं?"

डाली—बात क्या है? साफ-साफ बतलाइये?

अलक्ले—वह अपने कर्तव्य से गिर गई है और अपने पति को धोखा दे रही है।

डाली—यह संभव नहीं। आपको भ्रम है।

अलक्ले ने रूखी हँसी हँस कर कहा—"जब स्वयं उसकी पत्नी कहती है कि उसने दूसरा मार्ग पसन्द कर लिया है तो फिर अविश्वास कैसे किया जाय?"

डाली-(जोर देकर) अन्ना और इस तरह का पाप! दोनों बातें एक साथ असम्भव हैं।

डाली का चेहरा घबड़ाया हुआ था। उसने कहा"-डाली! मैं सन्देह को अपने पास कभी नहीं फटकने देता। जिस समय मुझे अन्ना पर सन्देह हुआ, मैं दुःखी अवश्य था; पर उस समय मुझे इतना सन्ताप [illegible] था। क्योंकि उस समय आशा थी; पर इस समय सारी आशा [illegible] रही। इस समय मेरे चारों ओर आशंका की दीवार बन गई है।

यहां तक कि मैं अपने एक मात्र पुत्र को भी सन्देह की दृष्टि से देखने लग गया हूँ। मेरे समान अभागा दूसरा नहीं है।

डाली-इस बात का मुझे हृदय से खेद है; पर क्या आपने तलाक देना ही निश्चय कर लिया है?

अलवले-मैं इससे भी भीषण कार्रवाई के लिये तैयार हूँ। दूसरा चारा ही क्या है?

डाली रो रही थी। उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बह रही थी, उसने कहा—"कोई उपाय नहीं रह गया है। यह न कहो।"

अलवले—सब से बुरी बात यह है कि इस दुरवस्था में पड़े नहीं रहा जा सकता। इससे छुटकारा पाना ही होगा।

डाली—मैं सब कुछ समझती हूँ; पर जरा ठहरो! तुम ईसाई हो, उसकी दशापर जरा विचार करो। यदि तुम उसे निकाल दोगे तो उसकी क्या दशा होगी?

अलवले—मैंने खूब सोच-विचार लिया है।

इतना कहते-कहते उसकी आंखें लाल हो गईं। डाली को उसकी दशापर बड़ी दया आई।

अलवले—मैंने क्या नहीं किया। जिस समय उसने मुझसे अपनी नीच कहानी कही, मैंने कुछ नहीं किया। उसे सुधरने का अवसर दिया; पर नतीजा हुआ यह कि उसने मेरी बातों पर जरा ध्यान नहीं दिया। अगर वह अपने सर्वनाश पर तुली ही है तो मैं क्या कर सकता हूँ? इसीमें उसने अपना उद्धार समझा है।

डाली—तलाक मत दो। और चाहे जो करो।

अलवले—और उपाय ही क्या है!

डाली—उस तरह से उसका सर्वनाश हो जायगा। वह कहीं को नहीं रहेगी।

अलक्ले—मैं क्या कर सकता हूँ?

अन्ना के आचरण का स्मरण कर अलक्ले का क्रोध जागृत हो गया। वह अब अधिक समय तक ठहर नहीं सकता था। उसने कहा—"आपको इस दया के लिये अनेकशः धन्यवाद है। अब मैं अधिक समय तक ठहर नहीं सकता। मुझे जाने की आज्ञा दीजिये।"

डाली—जरा देर और ठहरिये। मेरी प्रार्थना है कि अन्ना का इस तरह सर्वनाश नहीं कीजिये। मैं अपनी कथा सुनाती हूँ। मेरा विवाह हुआ। मेरे पति ने मुझे धोखा दिया। क्रोध और क्षोभ में मैं सर्वनाश पर तुली थी; पर मैंने अपने को सम्हाला और गौर से विचार किया। मैं बच गई। अन्ना ने मुझे बचाया। मैं इस समय सुखी हूँ। अब्लास्की घर में रहने लगे। बाल-बच्चे मजे में हैं। मैंने अब्लास्की को क्षमा कर दी। वह अपने पापों का पश्चात्ताप कर रहे हैं। तुम भी अन्नाको क्षमा कर दो।

अलक्ले ने डाली की बातें सुनी; पर उस पर कोई असर नहीं हुआ। घृणा के भाव उसके हृदय में फिर प्रबल हो उठे। उसने अपनी गरदन हिलाई और बोला—"क्षमा! असम्भव। क्षमा करना मैं पाप समझता हूँ। मैंने उसके लिये बहुत कुछ किया; पर उसने सब कुछ अपने पैरों तले रौंद दिया। आज तक मैंने किसी के प्रति घृणा का भाव नहीं रखा था। लेकिन उससे घृणा करता हूँ।

अलक्ले के प्रत्येक शब्द में घृणा के भाव थे।

डाली—ईसाई धर्म क्या कहता है—"जो तुमसे घृणा करे उससे तुम प्रेम करो।"

अलक्ले–(घृणा की हँसी हँसकर) जो मुझसे गृणा करता है, उसे मैं स्नेह की दृष्टि से देख सकता हूँ। पर जिसे मैं घृणा की दृष्टि से देखता हूँ, उससे प्रेम कैसे रख सकता हूँ ? जहाँ तक संभव होता है, बरदाश्त किया जाता है। लेकिन इसकी भी सीमा है। आप क्षमा करें।

इतना कहकर वह उठा और घर से बाहर हो गया।

६

भोजन के बाद किटी बैठक की ओर चली। लेविन भी उसके साथ जाना चाहता था। उसे शंका हुई कि कहीं किटी को यह बुरा न मालूम हो। इस भाव के आते ही वह ठिठक गया और किटी का ध्यान छोड़ कर लोगों की बात-चीत में शामिल हो गया।

बात-चीत का प्रसंग बराबर बदलता जाता था। इस समय देहातों की चर्चा छिड़ी थी। ऐस्टो का कहना था कि–"देहातों के संघ में एक खास उद्देश्य की झलक आती है।" कोनिशे का भी मत एकदम भिन्न था। लेविन का मत भी मिला था। रूस के देहातों के संगठन में उसे ज़रा भी भरोसा नहीं था; पर दोनों को सम्हालते हुए वह इस प्रसंग पर बात-चीत करता रहा। न तो उनकी बातों से उसे सन्तोष था और न अपने ही मत से उसे सन्तोष था। वह सबको सम्पन्न और सुखी देखना चाहता था। वह बातें तो यहाँ कर रहा था; लेकिन उसका ध्यान बैठक में था। उसने देखा कि किटी बैठक में से निकल कर किसी ओर आ रही है, वह द्वार के पास आकर रुक गई। उसकी आँखें लेविन पर लगी थीं और वह मुस्करा रही थी। लेविन उठ पड़ा और उसके

पास जाकर बोला—"मैंने समझा था, आप पियानो बजाने जा रही हैं। देहातों में पियानो का मधुर शब्द सुनने में नहीं आता।

किटी—(हँस कर) हम लोग आपको धन्यवाद देने आ रहे थे कि आप ने आज हम लोगों पर बड़ा अनुग्रह किया। वे लोग विवाद किस लिये कर रहे हैं? जब एक दूसरे को अपने पक्ष में नहीं ला सकता।

लेविन—आपका कहना ठीक है; लेकिन कभी-कभी केवल इसीलिये विवाद करना पड़ता है कि हमारा शत्रु कोई निर्दिष्ट विषय लेकर नहीं चल रहा है।

लेविन ने अनेक बार देखा था कि बड़े-बड़े विद्वान् घंटों वाद-विवाद करने के बाद परिणाम पर पहुँचते हैं। उसे दोनों पहले ही से जानते रहते हैं; पर केवल हार के भय से उसकी चर्चा नहीं करते। उसे स्वयं कई बार इस स्थिति में पड़ना पड़ा था और उस समय वह अपने शत्रु की बात समझ कर झगड़ा बन्द करने के लिये कह देता था। इस समय भी वह यही बात कहना चाहता था।

अब तक किटी के पिता उसके साथ थे। दोनों को इस तरह बात करते देख के धीरे से खिसक गये। किटी पास ही एक कुर्सी पर बैठ गई और टेबुल पर से खड़िया उठा कर लकीरें खींचने लगी।

यहाँ भी दोनों में वही स्त्रियों के अधिकार और कर्तव्य की चर्चा छिड़ गई। लेविन ने डाली के मत का समर्थन किया कि—"जिस रमणी का विवाह नहीं हुआ है, वह अपने बन्धु-बान्धवों के घर में रह कर अपने कर्तव्य का पालन कर सकती है।" उसने कहा कि—"बिना स्त्रियों के ...भी नहीं चल सकती।"

किटी—लेकिन ऐसा भी तो हो सकता है कि किसी ऐसी जगह रहने

में उसका अपमान होता हो तो वह कैसे रह सकती है। पर अकेले तो···

लेविन ने उसका तात्पर्य समझ लिया। वह बोला, "तुम्हारा कहना ठीक है।"

लेविन ने देखा कि इस प्रसंग से किटी को खेद होगा। इसलिये आगे कुछ कहना, उसने उचित नहीं समझा। क्षण भर सन्नाटा रहा। किटी टेबुल पर लकीरें खींच रही थी। उसका गुलाबी चेहरा अजीब बहार दे रहा था। उसकी अन्तरात्मा अतिशय प्रसन्न थी। उसने देखा कि लकीरों के मारे टेबुल भर गयी है। खड़िया रख कर उसने उठना चाहा।

लेविन ने अपने मन में कहा—"क्या मुझे अकेला छोड़ कर किटी चली जायगी।" उसने खड़िया उठा कर कहा—"मैं तुमसे एक बात बहुत दिनों से पूछना चाहता हूँ।"

उसने चकित नेत्रों से उसकी ओर देखकर कहा—"पूछिये।"

लेविन ने टेबुल पर लिखा—"तुमने मुझसे उस समय कहा था, ऐसा कभी नहीं हो सकता। यह उसी समय के लिये था या सदा के लिये।"

किटी जिस उत्सुकता के साथ यह लिखावट पढ़ रही थी, उससे स्पष्ट था कि इन्हें ही वह अपने जीवन का सार समझती है। वह पढ़ती जाती थी और लेविन के चेहरे की ओर देखती जाती थी, मानों पूछ रही है कि—"क्या मेरे मन की बात तो नहीं कह रहे हो।"

किटी—मैं समझ गई, मेरा वह अभिप्राय कभी नहीं था।

किटी ने खड़िया लेकर लिखा—"उस समय मैं इसके अतिरिक्त कुछ नहीं कह सकती थी।"

लेविन और किटी को इस तरह एकान्त में बात-चीत करते देख

डाली को हार्दिक प्रसन्नता हुई। अलक्से से बात करके उसे जो खेद हुआ था, क्षण भर के लिये उसे वह भूल गयी।

लेविन-(अभिप्राय भरी आंखों से उसकी ओर देख कर) केवल उस समय।

उसने हँस कर कहा-"हाँ।"

लेविन-और अब ?

किटी ने खड़िये से फिर टेबुल पर लिखा-"यदि तुम उन बातों को भूल जाओ और मुझे क्षमा कर दो तो मैं......"

लेविन ने झट उसके हाथ से खड़िया छीन और लिखा-"भूलने और क्षमा करने के लिये कोई बात नहीं रह गई है। मेरा प्रेम आजतक पूर्ववत् बना रहा है।"

किटी अनिमेष दृष्टि से लेविन की ओर देखती रही। वह धीरे से बोली-"मैं समझ गई।"

लेविन बैठ गया और उसने कुछ लिखा। किटी ने उत्तर में न जाने क्या लिख दिया। लेविन देर तक गौर करता रहा; पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। वह उसकी ओर देखता रहा। खुशी के मारे उसकी इन्द्रियां शिथिल होती जा रही थीं। वह चेतनाशून्य होता जा रहा था। वह उसकी लिखावट का अभिप्राय नहीं समझ सका। लेकिन उसकी सरल आंखों ने उसे जो कुछ वह जानना चाहता था, बतला दिया। उसने तीन शब्द लिखा। उत्तर में किटी ने लिखा-"हाँ।"

इतने में किटी के पिता ने आकर कहा-"तुम लोगों का खेल कब खतम हुआ ? अगर थियेटर में चलना है तो अभी रवाना होजाना चाहिये।"

लेविन उठ कर खड़ा हो गया और किटी को दरवाजे तक पहुंचा आया।

लिखा-पढ़ी से ही किटी ने बता दिया था कि मैं तुम्हें चाहती हूँ और माता-पिता से कह कर कल बुलवाऊँगी।

१०

किटी चली गई। लेविन अकेला रह गया। बिना किटी के वह बेचैन हो गया, एक-एक मिनट उसे अपाढ़ हो गया। वह विचार करने लगा—"किस तरह सवेरा हो और किस तरह उससे फिर मिलूं। अभी चौदह घण्टे बिताने हैं। उल्लास के मारे मेरी मृत्यु तो न हो जायगी। हाय! यह घड़ियाँ किस तरह कटेंगी? इस समय यदि कोई मेरे साथ बात-चीत करनेवाला होता तो मेरा समय मजे में कट जाता। अब्लान्स्की मेरे हृदय की बातें जानता है; पर उसे इस समय फुरसत कहाँ। वह तो अपनी धुन में है। दो मिनिट ठहर कर, वह यदि मेरी बातें सुन ले तो भी उसकी कृपा ही होगी।"

इतने में अब्लान्स्की आगया। लेविन ने कृतज्ञता भरे शब्दों में कहा—"मैं तुम्हारा अतिशय कृतज्ञ हूँ। तुमने मेरा बड़ा उपकार किया है।"

लेविन का हँसता चेहरा और आँखें साफ कह रही थीं कि हम तुम्हारे हृदय की हालत समझ रहे हैं। अब्लान्स्की ने लेविन की गालों हलकी थपत मार कर कहा—"मरने का समय तो शायद अभी नहीं आया होगा!"

लेविन—भाई! अब तो और दूर चला गया।

विदा करते समय दाली ने भी बधाई के रूप में कहा—"किटी से आपका मेल हो गया, इससे मुझे हृदय से प्रसन्नता है। पुरानी [illegible]

बड़ी मीठी होती है।" डाली के ये शब्द लेविन को नहीं भाये।

उनसे विदा होकर लेविन घर चला; पर वह अकेला नहीं रहना चाहता था। इसलिये वह अपने भाई कोनिशे के साथ हो लिया। उसने पूछा—"आप कहाँ जा रहे हैं?"

कोनिशे—मैं एक सभा में जा रहा हूँ।

लेविन—मैं भी आप के साथ चलना चाहता हूँ।

कोनिशे—क्यों? चल सकते हो। आज तुम्हारी क्या हालत है?

लेविन—अतिशय उल्लास के कारण मेरी यह हालत है। आपने आज तक शादी क्यों नहीं की?

कोनिशे मुस्करा कर रह गया। उसने कहा—"मुझे अतिशय प्रसन्नता है। लड़की अच्छी है?"

लेविन—इस संबंध में कुछ मत कहिये।

कोनिशे—(हंसकर) जो हो, मुझे इस संबंध से खुशी है।

लेविन—कल जो चाहे कहियेगा। आज कुछ मत कहिये। आपके साथ मैं भी चल सकता हूँ कि नहीं?

कोनिशे—इसमें आपत्ति क्या है?

लेविन—(मुस्कराते हुए) आज किस विषय पर बहस होगी?

दोनों भाई सभा में पहुँचे। सेक्रेटरी कार्य-विवरण पढ़ रहा था। उसके चेहरे से स्पष्ट था कि वह उस विवरण का एक शब्द भी नहीं समझ रहा है। क्योंकि विवरण पढ़ते पढ़ते-वह घबरा जाता था, अस्त-व्यस्त [illegible] था। उसके समाप्त कर चुकने पर बहस आरम्भ हुई। विवाद [illegible] कुछ रुपयों के गबन का मामला और नल काल के पाइप का प्रश्न था। कोनिशे दो सदस्यों पर बुरी तरह बौछार छोड़ रहा

था। उसके उत्तर में एक सदस्य लिख-लिख कर पढ़ रहा था। इसके बाद स्विस्की उठा। उसका भाषण बड़ा ही प्रभावशाली हुआ। सभा के संचालन के रंग-ढंग से लेविन को बड़ी प्रसन्नता हुई। इतना वाद-विवाद करके भी ये लोग आपस में प्रेम से मिलते हैं, संभाषण करते हैं, क्रोध, रोष या द्वेष को स्थान नहीं देते। किसी को हानि पहुँचाने का यत्न नहीं करते। जिस तरह वे परस्पर मिलते थे और एक दूसरे से बातें करते थे उसका लेविन के हृदय पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

कोनिशे—सभा की कार्रवाई तुमको पसन्द आई ?

लेविन—खूब ! मैं नहीं समझता था कि इतना आनन्द आवेगा।

स्विस्की लेविन के पास गया और उसने कहा—"बड़ी कृपा होगी, यदि आप मेरे साथ चाय पीने की कृपा करेंगे।"

लेविन स्विस्की से घृणा करता था। वह विस्मित हो गया। उसने मन में सोचा—"मैं इस व्यक्ति से क्यों घृणा करता था ? इसमें कौन ऐसा दोष है, जो मैं नहीं पसन्द करता था। इतना बुद्धिमान् ! और इतना चतुर तथा उदार !"

उसने उससे कहा—"बड़ी खुशी से।"

स्विस्की ने लेविन की जमींदारी की चर्चा छेड़ दी। सुधारों की बात करने लगा। स्विस्की का कहना था कि—"रूसी के संबंध में कोई बात नई नहीं हो सकती। यूरोप के किसी न किसी देश में सब बातें की गई हैं।" पर इससे लेविन को दुःख नहीं हुआ। स्विस्की सच बात कह रहा था। सुधार की योजना बड़े महत्व की बात नहीं थी। लेविन ने देखा कि संकोच से स्विस्की अपने भाव को स्पष्ट नहीं प्रकट कर रहा है। स्विस्की की पत्नी और साली लेविन से मिलकर बहुत

वड़ी मीठी होती है।" डाली के ये शब्द लेविन को नहीं भाये।

उनसे विदा होकर लेविन घर चला; पर वह अकेला नहीं रहना चाहता था। इसलिये वह अपने भाई कोनिशे के साथ हो लिया। उसने पूछा—"आप कहाँ जा रहे हैं?"

कोनिशे—मैं एक सभा में जा रहा हूँ।

लेविन—मैं भी आप के साथ चलना चाहता हूँ।

कोनिशे—क्यों? चल सकते हो। आज तुम्हारी क्या हालत है?

लेविन—अतिशय उल्लास के कारण मेरी यह हालत है। आपने आज तक शादी क्यों नहीं की?

कोनिशे मुस्करा कर रह गया। उसने कहा—"मुझे अतिशय प्रसन्नता है। लड़की अच्छी है?"

लेविन—उस संबंध में कुछ मत कहिये।

कोनिशे—(हंसकर) जो हो, मुझे इस संबंध से खुशी है।

लेविन—कल जो चाहे कहियेगा। आज कुछ मत कहिये। आपके साथ मैं भी चल सकता हूँ कि नहीं?

कोनिशे—इसमें आपत्ति क्या है?

लेविन—(मुस्कराते हुए) आज किस विषय पर बहस होगी?

दोनों भाई सभा में पहुँचे। सेक्रेटरी कार्य-विवरण पढ़ रहा था। उसके चेहरे से स्पष्ट था कि वह उस विवरण का एक शब्द भी नहीं समझ रहा है। क्योंकि विवरण पढ़ते पढ़ते-वह घबरा जाता था, अस्त-व्यस्त हो जाता था। उसके समाप्त कर चुकने पर बहस आरम्भ हुई। विवाद का विषय कुछ रुपयों के गबन का मामला और नल कल के पाइप बैठाने का प्रश्न था। कोनिशे दो सदस्यों पर बुरी तरह बौछार छोड़ रहा

था। उसके उत्तर में एक सदस्य लिख-लिख कर पढ़ रहा था। इसके बाद स्विस्की उठा। उसका भाषण बड़ा ही प्रभावशाली हुआ। सभा के संचालन के रंग-ढंग से लेविन को बड़ी प्रसन्नता हुई। इतना वाद-विवाद करके भी ये लोग आपस में प्रेम से मिलते हैं, संभाषण करते हैं, क्रोध, रोष या द्वेष को स्थान नहीं देते। किसी को हानि पहुँचाने का यत्न नहीं करते। जिस तरह वे परस्पर मिलते थे और एक दूसरे से बातें करते थे उसका लेविन के हृदय पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

कोनिशे—सभा की कार्रवाई तुमको पसन्द आई ?

लेविन—खूब ! मैं नहीं समझता था कि इतना आनन्द आवेगा।

स्विस्की लेविन के पास गया और उसने कहा—"बड़ी कृपा होगी, यदि आप मेरे साथ चाय पीने की कृपा करेंगे।"

लेविन स्विस्की से घृणा करता था। वह विस्मित हो गया। उसने मन में सोचा—"मैं इस व्यक्ति से क्यों घृणा करता था ? इसमें कौन ऐसा दोष है, जो मैं नहीं पसन्द करता था। इतना बुद्धिमान् ! और इतना चतुर तथा उदार !"

उसने उससे कहा—"बड़ी खुशी से।"

स्विस्की ने लेविन की जमींदारी की चर्चा छेड़ दी। सुधारों की बात पूछने लगा। स्विस्की का कहना था कि—"कृषी के संबंध में कोई बात नई नहीं हो सकती। यूरोप के किसी न किसी देश में सब बातें की गई हैं।" पर इससे लेविन को दुःख नहीं हुआ। स्विस्की सच बात कह रहा था। सुधार की योजना बड़े महत्व की बात नहीं थी। लेविन ने देखा कि संकोच से स्विस्की अपने भाव को स्पष्ट नहीं प्रकट कर रहा है। स्विस्की की पत्नी और साली लेविन से मिलकर बहुत

प्रसन्न थीं। उनका व्यवहार इतना सरल और दयापूर्ण था कि लेविन को संदेह हुआ कि किटी के सम्बन्ध की सभी बातों का उन्हें पता है और इसीसे वे इस तरह पेश आ रही हैं। केवल शिष्टता के ख्याल से साफ-साफ कुछ नहीं कह रही हैं। घंटों बैठ कर वह उनसे बातें करता रहा। वह अपनी धुन में इतना मग्न था कि उसे समय का कुछ भी ज्ञान नहीं रहा। उसे इस बात का भी ध्यान नहीं रहा कि उनके सोने का समय कभी बीत गया और उन्हें अब कष्ट हो रहा है।

स्विस्की लेविन को लेकर बड़े हाल में गया। उसे जँभाई आ रही थी। लेविन की इस असाधारण अवस्था पर उसे विस्मय था। एक बज चुका था। लेविन अपने मित्र से विदा हुआ और होटल पहुँचा। अभी उसे ११ घंटे और बिताने थे। अकेले वह इतना समय किस तरह काट सकेगा? उसके पहुंचते ही होटल का बेयरा आया, रोशनी करके चलने लगा। लेविन ने उसे रोक कर कहा—"यागर! न सोना भी कितना कठिन काम है? क्यों ठीक है न?"

यागर—क्या करें मालिक! किसी तरह चलाना ही पड़ता है। इसी बात की तनखाह खाते हैं।

बातों ही बातों में लेविन ने यागर के घर की बात पूछी। यागर ने बतलाया कि—"मेरी पत्नी, एक पुत्र और एक पुत्री, तीन प्राणी घर में हैं। लड़की व्याहने योग्य हो गई है। एक जगह व्याह भी ठीक किया है।"

लेविन—बिना प्रेम के व्याह नहीं होना चाहिये। जहाँ दोनों में प्रेम है, वहीं सच्चा सुख भी है।

यागर ने सिर हिलाकर लेविन की बात मान ली। उसने कहा—"मालिक! मनुष्य अपने को प्रत्येक अवस्था के अनुकूल बना लेता है। जहाँ

पहले काम करता था, वहां रूसके ही लोग थे। मुझे बड़ा आराम था। मेरे वर्तमान मालिक फरांसीसी हैं। यहां भी मुझे सुखी ही समझिये।"

इस उत्तर से लेविन को बड़ा विस्मय हुआ। उसने अपने मन में कहा—"कितना अच्छा आदमी है।"

उसने उससे पूछा—"जब तुम्हारी शादी हुई थी, उस समय तुमसे और तुम्हारी पत्नी से पहले से ही अनुराग था क्या?"

यागर—हां मालिक।

लेविन ने देखा कि यागर का हृदय उल्लास से भर गया है और अपने हृदय की सारी बातें कहने के लिये उत्सुक है। उसने कहा—"मालिक! मेरी पत्नी भी असाधारणमहिला है। लड़कपन से ही······"

वह इतना ही कह पाया था कि घंटी की आवाज हुई। यागर दौड़ कर उधर गया। बेचारा लेविन फिर अकेला रह गया। उसने नाम मात्र भोजन किया था। उसका पेट खाली था; पर भोजन की उसे चिन्ता नहीं थी। पहली रातको भी उसे सोनेका अवसर नहीं मिला था; लेकिन इसकी भी उसे परवा नहीं थी। बहुत सर्दी होने पर भी वह गरमी से व्याकुल था। उसने कमरे की दोनों खिड़कियां खोल दीं और टेबुल पर बैठ गया। चार बजे तक वह इसी तरह बैठा रहा। चार बजे के उपरान्त उसे किसी के आने की आहट मालूम हुई। उसने बाहर सिर निकाल कर देखा। जुआड़ी मेस्किन उदास मन से चला आ रहा था। उसकी दीन दशा पर लेविन को बड़ी दया आई। वह उसे धीरज देना चाहता था। लेकिन यह देख कर कि कपड़े-लत्ते वह सभी बेच आया है, लेविन ने उसके पास जाना उचित नहीं समझा। सात बजे तक वह इसी तरह बैठा रहा। इसके बाद उठ कर नित्यकृत्य से निवृत्त हुआ और

कपड़ा पहन कर बाहर हो गया।

सड़क पर आना-जाना बहुत ही कम था। लेविन सीधे किटी के मकान पर गया। दरवाजा चारों ओर से बन्द था। सब लोग, नौकर-चाकर सो रहे थे। वह होटल लौट आया और चाय पीने बैठ गया। लेविन को चाय न भाई। उसे यों ही छोड़ कर उसने कपड़ा पहना और फिर घर से बाहर निकल गया। ९ बजते बजते-वह किटी के घर दूसरी बार पहुँचा। उस समय तक लोग जाग उठे थे। पर दो घंटे के बाद मुलाकात हो सकती थी।

उस रात को लेविन की विचित्र अवस्था थी। उसे किसी बात का ज्ञान नहीं था। वह न जाने किस दुनियाँ की सैर कर रहा था। दो दिन से वह सोया नहीं था, रात को उसने भोजन नहीं किया था, बराबर चार घंटे तक सर्दी में खुले बदन बैठा था। इससे भी उसके शरीर पर किसी तरह का विकार नहीं उत्पन्न हुआ। इस समय उसके शरीर में दूनी ताकत थी, अजीब फुर्तीलापन था। उस दो घंटे को उसने सड़क में बेकार घूम कर बिताया। इसके बाद वह किटी के घर गया। दरवान ने झुक कर सलाम किया, उसने कहा—"सरकार अबकी बहुत दिनों के बाद आये।"

घर में सब को किटी के संबंध की बात मालूम हो गई थी; पर सब के सब भीतरी भाव को छिपा रखना चाहते थे।

लेविन—सब लोग उठ तो गये हैं?

दरवान—सरकार के आने की सूचना किसे दी जाय?

लेविन—किटी और उसकी मां तथा बाबा को।

एक मिनिट के बाद लेविन को किसी के पैरों की मधुर ध्वनि सुनाई

दी। आज इतने दिनों से जिसकी प्रतीक्षा कर रहा था, वही रत्न आज निछावर होने के लिये चला आ रहा है। किटी को मालूम होता था, मानों कोई शक्ति उसे खींचे चली आ रही है। किटी की आंखें विचित्र तरह से चमक रही थीं। उसके तेज के सामने लेविन की आंखें ठहर नहीं सकती थीं। नजदीक आकर उसने अपना दोनों हाथ लेविन के कन्धे पर रख दिया।

लेविन ने उसे दोनों भुजपाशों से पकड़कर गाढ़ आलिंगन किया।

किटी की दशा भी वही थी। रात भर उसे नींद नहीं आई थी। पल-पल वह लेविन की प्रतीक्षा कर रही थी।

किटी—चलो, मां के पास चलें।

लेविन बहुत देरतक चुप रहा। उसका हृदय धड़क रहा था। उसके मुंह से शब्द नहीं निकलते थे। बड़ी कठिनाई के बाद उसने कहा-"मैं स्वप्न तो नहीं देखरहा हूँ। मुझे विश्वास नहीं होता कि मैं तुम्हारा प्रेम पा सकता हूँ।"

लेविन कातर दृष्टि से किटी की ओर देख रहा था।

किटी हंस पड़ी। उसने कहा-'मेरा आज अहोभाग्य है।"

लेविन को लिये वह बैठक में पहुंची। किटी की मां इन्हें देख कर उठी और दौड़पड़ी। उसकी आंखों से आंसुओं की धारा बह रही थी। उसने लेविन का माथा सूंघा। और बोली—"बेटा! आज मेरी छाती शीतल हुई। ईश्वर तुम लोगों को सुखी करे।"

इतने में किटी के पिता भी वहीं आ पहुंचे। लेविन को देख कर उनका हृदय गद्गद हो गया। लेविन की पीठ पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा-"मेरी सदा से यही अभिलाषा थी। उस दिन भी मैंने यही बात

कही थी, जब कि इस अबोध बालिका ने……”

किटी के पिता आगे कुछ नहीं कह सके। किटी ने अपने हाथ से उनका मुंह बन्द कर दिया।

किटी के पिता–नहीं बेटी ! मैं वह बात नहीं कहूँगा। मुझ से भूल हुई, क्षमा करना बेटी।

इसके बाद उन्होंने किटी और लेविन को शुभ आशीर्वाद दिया। आज इस समय लेविन के आनन्द की सीमा न रही। इसके बाद विवाह की तैयारी होने लगी। बातों ही बातों में लेविन ने किटी से कहा–“प्रिये ! मैं तुमसे दो बातें कह देना चाहता हूँ।”

किटी–कह दीजियेगा। क्या इसी समय कहना है ?

लेविन–फिर कभी। (नोटबुक देकर) इसमें लिखा है, पढ़ लेना।

किटी ने नोटबुक उलट कर पढ़ना आरम्भ किया। लेविन ने अपनी पत्नी के लिये उसमें दो बातें लिख दी थीं। पहली तो यह–“कि उसका चरित्र एक दम शुद्ध नहीं है और दूसरे यह कि ईसाई होकर भी उसका धार्मिक विश्वास ढीला है।”

किटी को यह पढ़कर हार्दिक खेद हुआ। उसने नोटबुक लेविन के सामने फेंक कर कहा-“जला दो इसको, तुमने मुझे यह क्यों दिया ? मैं न पढ़ती तभी अच्छा होता।”

लेविन–प्रिये ! इसे पढ़ कर तुम्हें दुख हुआ। मैं तुमसे कोई बात १७ नहीं चाहता। इससे यह पाप-कथा भी मैंने तुम्हारे सामने प्रगट कर दिया। मुझे क्षमा करना।

किटी–क्षमा ही किया; पर मुझे बड़ी पीड़ा हुई।

लेविन का हृदय उल्लास से भरा था। इससे उसे जरा भी खेद

नहीं हुआ। किटी ने उसे क्षमा कर दिया। किटी का अनुराग लेविन पर और बढ़ गया। पर इसी दिन से लेविन की किटी पर बड़ी श्रद्धा हो गई। वह अपने को उसके सर्वथा अयोग्य समझता था। उसे श्रद्धा की दृष्टि से देखता और उसे पाकर अपना भाग्य सराहता था।

११

अब्लारकी से विदा होकर अलक्से सीधे होटल गया और कमरे का द्वार बन्द करके बैठ गया। पेस्टो की बातें उसे भूली न थीं। डाली ने अन्ना के संबंध में जो बातें कही थीं, उनसे उसका चित्त चंचल हो उठा था। इस संबंध में ईसाई धर्म की नीति स्वीकार करनी चाहिये या नहीं। इसका उत्तर अलक्से ने पहले ही दे दिया था। तुरोसिन के शब्द उसके कानों में गूंज रहे थे—"बहादुरों की भांति उसने मुकाबिला किया और गोली दाग कर उसके प्राण ले लिये।"

उसने अपने मन में कहा—"मेरी अवस्था पर तर्स खाकर किसी ने जबान नहीं हिलाई; पर तुरोसिन की बातें सबको जँचीं।......पर अब तो मामला तै हो चुका। उसकी अब चर्चा क्यों? उस ओर से अपना ध्यान खींच कर, उसने यात्रा की चिन्ता आरम्भ की। गाइड-बुक निकाल कर उसने रास्ता ठीक किया।

इसी समय दो तार उसके नाम के आये। पहले तार में स्ट्रेमो की एक पद पर नियुक्ति की सूचना थी। अलक्से इस पद के लिये लालायित था। इस समाचार से उसका जी जल गया। उसने तार उठा कर

फेंक दिया और क्रोध से कमरे में इधर-उधर टहलने लगा। उसे इस बात का दुःख नहीं था कि उसकी उपेक्षा की गई। उसे दुःख इस बात का था कि स्ट्रैमो उस पद के योग्य नहीं था। आश्चर्य है कि लोगों को यह बात नहीं सूझी कि इससे कौंसिल की मर्यादा घट जायगी, उसके यश में बट्टा लगेगा।

दूसरा तार अन्ना का था। उसमें लिखा था, मैं मर रही हूँ। आकर मुझे क्षमा कर दीजिये। तब मैं शान्ति से मर सकूंगी। अलक्से ने विकट हंसी हंस कर कहा—"अब भी वही दगा और फरेब! जो नीच हो जाता है, वह कौन सी नीचता नहीं कर सकता। फिर उसे किसी बात का खटका नहीं रहता, मालूम होता है। उसे लड़का हो गया। लेकिन मुझे क्यों बुला रहे हैं? क्या मुझे समझा बुझा कर तलाकनामा रोक करी इस लड़के को जायज बनाने का यत्न किया जायगा? पर उसने लिखा है—"मैं मर रही हूँ।" उसने तार फिर पढ़ा।

उसने मनमें सोचा—"संभव है कि प्रसववेदना के कारण उसका प्राण संकट में हो और मैं चाल समझ कर न जाऊं। इससे मेरी ही बेवकूफी प्रगट होगी। मुझे पीटसवर्ग जाना चाहिये। यदि यह उसकी चाल है तो तुरन्त लौट आऊंगा। यदि वह सच-मुच मरणासन्न है और अपने किये पर उसे हृदय से पश्चात्ताप है तो मैं उसे क्षमा कर दूंगा।" इस के बाद उसने गाड़ी मंगाई और पीटर्सबर्ग के लिये रवाना हुआ।

रास्ते में उसने इस बात पर कुछ विचार नहीं किया। गाड़ी से उतर कर जब वह घर की ओर चला, उस समय उसके चित्त में यह बात उठी—"यदि उसने चाल किया है तो उसी पावँ लौट आऊंगा; पर यदि

सचमुच वह बीमार है तो क्या किया जायगा ?

इतने में गाड़ी दरवाजे पर पहुंची । दरवान ने दरवाजा खोला । गाड़ी से उतरते ही अलक्ले ने दरवान से पूछा—"मालकिन की तबीयत कैसी है ?"

दरवान—कल लड़की पैदा हुई है ।

अलक्ले का चेहरा सफेद हो गया । वह हृदय से उसकी मृत्यु चाहता था । सही-सलामत लड़की पैदा होने के समाचार से वह सन्नाटे में आ गया । उसने पूछा—"इस समय क्या हाल है ?"

इतने में नौकरानी दौड़ी हुई नीचे आई । उसने कहा—"सख्त बीमार है । डाक्टर आये हैं ।"

यह समाचार सुन कर उसे कुछ सन्तोष हुआ । संभव है, वह इसी बीमारी में मर जाय । नौकर को सामान सहेज कर वह कमरे में गया अरगनी पर फौजी लिबास रखा था । अलक्ले ने नौकर से पूछा—"और कौन है ?"

नौकर—डाक्टर, दाई और रंस्की ।

अलक्ले भीतर गया । बैठक में कोई नहीं था । उसके पैर की आवाज सुन कर दाई हाथ में टोपी लिये बाहर आई । उसने कहा—"संयोग से आप ठीक समय पर आ गये । आप की याद में ही वह आज तक जी रही हैं ।"

इतने में भीतर से डाक्टर की आवाज आई—"जल्दी बरफ दो ।"

अलक्ले प्रसूति घर में गया । कुर्सी पर एक तरफ रंस्की बैठा था । उसका सिर झुका था, वह दोनों हाथ से मुंह बन्द कर के रो रहा था । डाक्टर की बात सुन कर वह सचेत होकर उठ बैठा, देखा सामने अलक्ले खड़ा है । अलक्ले को देख कर वह सन्नाटे में आ गया । अपने को सम्हाल

कर बोला—"वह मर रही है। डाक्टर साहब कहते हैं कि बचने की कोई आशा नहीं। मैं इस समय आपके अधीन हूँ।......मैं आप से यही भीख मांगता हूँ कि मुझे इस के पास रहने दीजिये।"

अलक्ले किसी का आंसू नहीं देख सकता था। रंस्की की आंखों में आंसू देख कर उसका सिर घूमने लगा। वह जल्दी-जल्दी कमरे से बाहर चला गया। इसी समय अन्ना को आवाज सुनाई दी। वह कुछ कह रही थी। आवाज साफ नहीं थी। अलक्ले उसके पास गया। उसका गुलाबी चेहरा खिल रहा था, उसकी अंगुलियां नाच रही थीं। उसे देख कर कोई भी नहीं कह सकता था कि वह बीमार है। वह सुखी और शान्त मालूम होती थी। वह आप ही आप कह रही थी—"अलक्ले! मैं उन्हीं की बातें कह रही हूँ। वह मुझे अस्वीकार नहीं कर सकते...... मैं भूल जाऊंगी और वह मुझे क्षमा कर देंगे। पर वे अभी तक आये क्यों नहीं? वे बड़े ही मेहरबान हैं। उनकी मेहरबानी का वर्णन नहीं कर सकती। मेरे ईश्वर! कैसी यंत्रणा है। ......पानी......पानी पानी......ओह! मेरी प्यारी लड़की। उसके लिये यह नुकसान करेगा। उसे दाई के सिपुर्द कर दो।......मैं राजी हूँ।......यह ठीक है। वे जरूर आते होंगे। मुझे बीमार देख कर उनका जी दुखेगा......इसे दाई के सिपुर्द करो।"

दाई—अन्ना! अलक्ले आ गये हैं। तुम्हारे सामने खड़े हैं।

अन्ना उसी तरह बक रही थी—"कैसी बेवकूफी की बात है...... लड़की को मुझे दे दो......वे अब तक नहीं आये। तुम लोग कहते हो, वह मुझे क्षमा नहीं करेंगे?...... तुम लोग उन्हें पहचानते नहीं। मैं ही केवल उन्हें पहचान सकी हूँ। सो भी बड़ी कठिनाई से। शिरोत

की आंखें इनकी आंखों से एक दम मिलती हैं। इसीसे मुझे उसको देखने का साहस नहीं होता। शिरोजा को भोजन दिया गया ? उसकी कोई भी खबरदारी नहीं रखता; पर वह नहीं भूल सकता। शिरोजा को कोने वाले कमरे में रख दो। मैरिटी को उसके पास रहने को कह दो।

एकाएक वह चीख मार कर चुप हो रही। इसके बाद अपना दोनों हाथ उठा कर उसने मुह ढंक लिया मानों कोई उसे पीटने जा रहा हो।

उसने अलक्ले को देखा।

उसने पुनः बड़बड़ाना आरम्भ किया—"नहीं-नहीं मैं उससे डरती नहीं, मैं मरने से डरती हूँ। अलक्ले, मेरे पास आओ, अब मुझे अधिक समय तक नहीं जीना है। समय नजदीक है। अभी ज्वर चढ़ेगा और मैं ज्ञान-शून्य हो जाऊंगी। इस समय मेरी चेतना ठीक है, मैं सब समझ रही हूँ। सब देख रही हूं।"

अलक्ले का सूखा चेहरा दर्द से भर गया। अन्ना का हाथ पकड़ कर उसने कुछ कहना चाहा; पर उसके मुँह से आवाज नहीं निकली। उसके होंठ हिल रहे थे। उसके हृदय में विचित्र तरंगें उठ रही थीं। वह रह रहकर अन्ना के मुँह की ओर देखता था। अन्ना की आँखों में दीनता भरी थी। वह टकटकी लगाकर अलक्ले की ओर देख रही थी।

उसने आवेग में कहा—"ठहरो ! ठहरो !! एक मिनिट ठहरो ! तुम कुछ नहीं जानते ! ठहरो ! जरा देर ठहरो ! (एक क्षण चुप रहकर मानों कुछ सोच रही है) मैं तुमसे यही बात कह रही थी,···मुझे देख कर विस्मय न करो। मैं फिर भी वही हूँ। पर इस समय मेरे भीतर एक दूसरी रमणी की आत्मा वास कर रही है।···मैं उससे डर गई हूँ। उसने उसे प्यार

किया'''मैंने तुमसे घृणा करने का यत्न किया। मैं वह औरत नहीं हूँ, मैं इस समय मर रही हूँ। मैं अब नहीं बच सकती। वह यहीं है, मैं उसका भार मालूम कर रही हूँ। मेरे पैर की अँगुलियां देखो, वे कैसी भारी हो रही हैं। पर इसका अन्त होने ही वाला है। मैं तुमसे सिर्फ एक बात चाहती हूँ, मुझे क्षमा कर दो। मैं क्रूर हूँ, कुचक्री हूँ; पर दाई ने मुझे अभी धर्मपुस्तक सुनाई है, उस पत्नी का क्या नाम है, वह मुझ से भी पतित थी मैं रोम जाऊँगी'''मैं अपने साथ शिरोजा और इस लड़की को ले जाऊँगी, मैं किसी को कष्ट नहीं दूंगी। तुम मुझे क्षमा नहीं करोगे? मैं खूब जानती हूँ। यह अपराधक्षमा नहीं है, तुम बड़े उदार हो, जाओ यहाँ से चले जाओ।' एक हाथ से उसने अलक्ले का हाथ पकड़ा और दूसरे से ढकेल दिया।

इस समय तक अलक्ले का मानसिक विचार बहुत-कुछ दूर हो चुका था, उसकी घबराहट कम हो चली थी। उसने देखा जिसे वह मानसिक विकारसमझ रहा था, वह आत्मा की प्रसन्नता का एक स्थान है। इस विचार से उसे जो आनन्द मिल रहा था, उसका उसने कभी पहले अनुभव नहीं किया था। उसका यह विश्वास नहीं था कि ईसाई धर्म इस बात की मन्त्रणा देता है कि मैं अपने दुश्मन को क्षमा कर दूँ, पर उसके हृदय में उस शत्रु के लिये क्षमा और दया भर गया, २ घुटने टेककर बैठ गया और उसके बाजुओं पर हाथ रख कर ..कों की भांति रोने लगा।

अन्ना—(स्पर्श करके) हां, यही है मुझे क्षमा कर दो। सब कोई मुझे क्षमा कर दो। देखो! देखो!! वे सब के सब आ गये। तुम लोग यहाँ से क्यों नहीं चले जाते। मेरे बदन पर से कपड़े उतार लो।

डाक्टर ने उसका हाथ पकड़ कर धीरे से चारपाई पर तकिये के सहारे रख दिया।

अन्ना-बस, एक बात याद रखना। मैं कुछ नहीं चाहती, केवल क्षमा और कुछ नहीं। वह क्यों नहीं आया? (रंस्की की ओर मुँह फेरकर) आओ! मेरे पास आओ!! मुझे अपना हाथ दो।

रंस्की अन्ना के पास आया। उसकी यन्त्रणा, उसे असह्य थी। उसने अपना मुँह छिपा लिया।

अन्ना-मुँह खोलो, उनकी तरफ देखो, वे तपस्वी हैं, अलक्ले इसका चेहरा खोल दो, मैं उसे देखना चाहती हूँ।

अलक्ले ने रंस्की का हाथ हटा दिया। उसका चेहरा लज्जा और घबराहट से पीला पड़ गया था।

अन्ना-(अलक्ले से) मुझे अपना हाथ दो, उसे क्षमा करो।

अलक्ले ने अपना हाथ अन्ना के हाथ में रख दिया। उसकी आँखों से अविरल धारा बह रही थी।

अन्ना—सब ठीक हो गया। जरा मेरा पैर फैला दो। आह! ये फूल कैसे अच्छे बने हैं, ओह! ईश्वर! इस यन्त्रणा का कब अन्त होगा? डाक्टर! डाक्टर!! दवा!! दवा!!!

वह बिस्तरे पर बेचैनी से लोटने लगी।

डाक्टर ने कहा-इन्हें प्रसूत ज्वर है, विरले ही इस ज्वरसे बचते हैं।

ज्वर का प्रकोप दिन भर रहा। बेहोशी रह रह कर आती थी। आधी रात तक दशा औरभी बिगड़ गई। रोगी की नाड़ी छूट गई थी, अन्त निकट था।

रंस्की रात को अपने घर चला गया था। प्रातःकाल रोगी की

खबर लेने आया। अलक्ले उसे अपनी बैठक में ले गया और उसने कहा-"ठहर जाओ, शायद वह तुम्हें पूछे।" इतना कह कर वह उसे अन्ना के कमरे में ले गया।

सवेरे वायु का प्रकोप फिर बढ़ गया। अन्ना बकने-झकने लगी। क्रमशः फिर बेहोशी हो आई। तीसरे दिन फिर वही हालत थी। अब डाक्टर को रोगी के बचने की आशा होने लगी। तीसरे दिन रंस्की अन्ना के पास गया। रंस्की वहां बैठा था। उसने दरवाजा बन्द कर लिया और उसके ठीक सामने बैठ गया।

रंस्की-अलक्ले! मेरी जबान नहीं खुलती। तुम्हें जितना क्लेश है, उससे कहीं अधिक मुझे है। इस समय मेरी दशा विकट हो रही है, मैं सब कुछ समझते हुए भी बुद्धिहीन होरहा हूँ।

अलक्ले-(रंस्की का हाथ पकड़ कर) मेरी बात ध्यान से सुनिये। मैं अपने हृदय की बात साफ-साफ कह देना चाहता हूँ, ताकि आप भ्रम में न रहें। मैंने तलाकनामा देना ठीक कर लिया है। वकील को कार्रवाई करने के लिये भी कह दिया है। मैं आप से यह कह देना चाहता हूँ कि आरम्भ में मैंने कुछ भी स्थिर नहीं किया था। उस समय मेरी दशा ठीक नहीं थी। चिन्ता और वेदना के मारे मैं मरा जा रहा था। मैंने एक बार बदला लेने की ठानी। जिस समय मुझे यह तार मिला, मैं सीधे यहां चला आया। मैंने अन्ना की मृत्यु की कामना की थी।

इतना कहते-कहते यहां पर वह रुक गया और सोचने लगा कि सारा भेद उस पर प्रगट कर दूं या नहीं? अलक्ले फिर कहने लगा-"मैंने उसकी अवस्था देखी और उसे क्षमा कर दिया। मैं उसे हृदय से क्षमा कर देता हूँ। मैं सच्चे ईसाई की भांति दूसरी चपत भी

बरदाश्त करने के लिये तैयार हूँ। मेरी यही कामना है कि क्षमा का यह भाव मेरे हृदय में बराबर बना रहे।

उसकी आंखें आंसुओं से तर थीं। उसकी आवाज भर्राई हुई थी। उसने कहा—"यही मेरी वास्तविक स्थिति है। चाहे संसार मेरी निन्दा करे, मुझे पैरों तले रौंद दे; पर मैं उसका त्याग नहीं करूंगा। मैं आपको भी कुछ नहीं कहूँगा। मेरा कर्तव्य साफ है। मैं इसका साथ कभी नहीं छोड़ूँगा। अगर वह आप को याद करेगी तो मैं आप को बुला दूंगा। पर इस समय आप जाइये।"

रंस्की उठ बैठा। वह अलक्ले के हृदय की बात ताड़ नहीं सका, लेकिन उसके दिल में जो भाव उठे, वे ये थे—"यह आदमी मुझसे कहीं ऊंचे आदर्शवाला है। मैं इसकी समता नहीं कर सकता।"

१२

अलक्ले से बातचीत करके रंस्की नीचे उतरा और दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया। उस समय उसकी विचित्र दशा थी। वह ज्ञानशून्य हो रहा था। कहां जाय, क्या करे? उसे कुछ नहीं सूझता था। शर्म से वह मरा जाता था। अपमान, बेइज्जती और अपयश का अमिट काला धब्बा उसके शरीर पर लग गया था। किसी भी तरह वह उसे धो नहीं सकता था। जिन नियमों के अनुसार, रंस्की आज तक अपने जीवन का सभी कार्य करता चला आया है, जिन्हें वह अमिट सिद्धान्त मानता चला आया है, आज वे ही उसे पोले और सारहीन प्रतीत होने लगे।

जिस अलक्ले को अन्ना ने इस प्रकार ठगा था, जिसे वह अपने आनन्द के मार्ग का कंटक समझती थी, उसी पति के चरणों का उसे सहारा लेना पड़ा। वह आया। उसने न तो क्षोभ दिखलाया, न क्रोध दिखलाया, न वैर या द्वेष दिखलाया और न प्रतिहिंसा, बल्कि उसने उदारता का स्रोत बहा दिया और अपने विशाल हृदय में सब बातों को स्थान दिया। आज पल्ला एकदम से पलट गया। रंस्की अपनी ही आंखों में खटकने लगा। जिसे वह सुख समझता था, वही आज उसे घोर यातना और उसके पतन का कारण प्रतीत हुआ। उसने अपने को एकदम नीचे गिरा पाया और उसकी दृष्टि में अलक्ले इस विषम यातना की दशा में भी लाख दर्जे अच्छा प्रतीत हुआ। रंस्की का विषाद इस कारण इतना तीव्र नहीं था कि उसे अलक्ले के सामने इतना नीचा देखना पड़ा, जिसे वह हृदय से घृणा करता था। बल्कि विषाद का कारण अन्ना थी। अन्ना के प्रति उसका प्रेम धीरे-धीरे शिथिल हो रहा था; पर इस बीमारी के समय से उस प्रेम ने फिर जोर पकड़ा। साथ ही अलक्ले के कथन के अनुसार अन्ना का संबंध सदा के लिये टूट गया था। यही उसके विषाद का प्रधान कारण था।

वह मन-ही-मन कहने लगा-"हा! जब मैंने उसके हृदय को पहचाना, जब मेरा हृदय उसके प्रेम से रंग गया, उसी समय मुझे इतना नीचा देखना पड़ा और अन्त में वह मुझसे छिन गई। आह! उस समय शर्म के मारे मैं गड़ जाता था और अलक्ले ने उसके मुंह पर से मेरा हाथ जबर्दस्ती हटा दिया। इससे बढ़ कर शर्म की कौन सी बात हो सकती है।" मतवाले की भांति वह बड़ी देर तक फाटक पर खड़ा रहा।

दरबान—गाड़ी मंगा दूँ हजूर ?

रंस्की—हां।

गाड़ी में सवार होकर रंस्की घर पहुंचा। तीन रात उसे बराबर जागते बीत गई थी। वह सीधा पलंग पर पड़ रहा। उसके सिर में चक्कर आ रहा था। अन्ना के घर की एक-एक बातें उसके ध्यान में आने लगीं।

उसने अपने मन में कहा—"लोग कहते हैं कि नींद में सभी चिन्ता जाती रहती है तो अब सो जाना चाहिये।"

इतना कह कर वह सोने का यत्न करने लगा। एकाएक वह चौंक कर उठ खड़ा हुआ। वह आंखें फाड़-फाड़ कर चारों ओर देखने लगा। उसकी थकावट और सिर का दर्द न जाने कहां गायब हो गया।

उसे मालूम हुआ मानों अलक्से उसके सामने खड़ा है और कह रहा है "तुम चाहे मुझे कांटों में घसीटो, धूल में मिलादो।" और बगल में अन्ना खड़ी प्रेम भरी दृष्टि से अलक्से की ओर देख रही है। उसी समय उसने देखा कि वह दोनों हाथ से आंख बन्द किये अन्ना के पलंग के पास बैठा है और अलक्से उसका हाथ हटा रहा है। वह घबरा कर पलंग पर पड़ गया और उसी प्रकार दोनों हाथों से अपनी आंखें बन्द करलीं। आंखें बन्द कर लेने पर वह दृश्य उसे और विकट दिखाई देने लगा। उसने देखा अन्ना घुड़दौड़ के लिये तैयारी कर रही है। रंस्की अपने मन में कहने लगा—"न यह हुआ है और न हो सकता है। वह यह बात भूल जाना चाहती है; पर मैं बिना इसके क्षण भर भी नहीं जी सकता। कैसे समझौता हो!" वह ज़ोर-ज़ोर से इन शब्दों को दोहराने लगा।

इससे उसकी उत्तेजना और भी बढ़ गई। वही भावनायें फिर उसकी आँखों के सामने आने लगीं। इस बार उसने देखा, अन्ना कह रही है, "उसके चेहरे पर से हाथ हटा दो" अलक्से उसका हाथ हटाता है।

रंस्की बिछौने पर पड़ा रहा, सोने का हजार यत्न किया; पर सब व्यर्थ था। वह न जाने क्या-क्या बकता रहा। उसे मालूम होने लगा मानो कोई उसके कान में कह रहा है—"मैं उसे पसन्द नहीं करता था, इसीलिये मैंने दिल लगाकर वह काम नहीं किया।"

वह कहता रहा—"यह क्या है? क्या मैं पागल तो नहीं हो गया हूँ। लोग पागल क्यों हो जाते हैं? आप से आप गोली क्यों मार लेते हैं?" इतना कह कर उसने अपनी आँखें खोलीं, देखा कि उसके बगल में एक कामदार तकिया पड़ी है, जिस पर उसके भाई की पत्नी ने कसीदा काढ़ा है। उसने तकिये को हाथ में ले लिया और अपनी भाभी की बातें याद करके ही मन बहलाने की चेष्टा करने लगा, पर इससे भी उसे एक तरह की वेदना उत्पन्न हुई। उसने तकिया उठाकर सिरहाने रख लिया और सोने की चेष्टा करने लगा। उसने ज्यों ही आंखें बन्द की, वह फिर चौंक कर उठ बैठा—"बस, अब मेरा काम खतम होगया। सोचना यही है कि मुझे क्या करना चाहिये। अब क्या बचा ही है।" अन्ना के प्रेम से भिन्न अपने जीवन पर विचार करने लगा।

संसार की सभी वस्तुयें उसके लिये निःसार हैं। वह उठ खड़ा हुआ। उसने कपड़ा उतार डाला और कमरे में टहलने लगा। अपमान से अपनी रक्षा करने के लिये इसी तरह लोग पागल हो जाते हैं और आत्महत्या कर लेते हैं।

उसने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया, दबे पैर टेबुल के पास

गया और पिस्तौल उठा लिया। पिस्तौल भर कर एक क्षण तक वह न जाने क्या सोचता रहा। वह एकाएक बोल उठा—"ठीक है।"

इतना कह कर उसने छाती पर बायीं ओर पिस्तौल का मुंह किया और घोड़ा दबा दिया। गोली पसली की एक हड्डी तोड़ती पार हो गई। पिस्तौल के छूटने की आवाज से नौकर-चाकर घबरा कर दौड़े हुए ऊपर आये।

गोली ठीक निशाने पर न लगी। उसके प्राण न गये। खिझलाकर उसने पितौल उठाना चाहा; पर उसमें हिलने तक की शक्ति नहीं थी। खून से उसका सारा शरीर लथ-पथ हो रहा था।

तुरन्त डाक्टर बुलाये गये और मरहम-पट्टी करके उसे पलंग पर सुलाया गया। उसकी भाभी देख-रेख करने लगी।

१२

अन्ना का तार पाकर जिस समय अलक्से मास्को से रवाना होने लगा, उसने इन बातों पर ध्यान नहीं दिया था कि अन्ना हृदय से अपने किये पर पश्चात्ताप करेगी, मैं उसे क्षमा कर दूंगा और वह जी उठेगी। मास्को से लौटने के दो मास बाद उसे अपनी इस भूल का पता लगा। पर इसका प्रधान कारण यह था कि इसके पहले वह स्वयं डावा-डोल था। किसी की पीड़ा वह अपनी आँखों नहीं देख सकता था। इसे वह अपने हृदय की कमजोरी समझता था। आज अन्ना को मौत के मुँह में पड़ा देखकर उसका हृदय भर आया। उसने उसे क्षमा कर दिया। जो आनन्द उसे आज आया था, सारे जीवन में कभी नहीं

मिला था। जिसे आज तक वह अपनी यातना का कारण समझता था, उसे ही वह असीम आनन्द का आगार समझने लगा। जिस काम को एक क्षण पहले वह असम्भव समझ रहा था, वही काम इस समय उसे सरल और साधारण प्रतीत होने लगा।

उसने अन्ना को क्षमा कर दिया। उसके दुःख से वह दुखी था। उसने रंस्की को भी क्षमा कर दिया। रंस्की की आत्महत्या की चेष्टा से उसे बड़ा खेद हुआ। वह शिरोजा को अधिक प्रेम से देखने लगा और उसे इस बात का खेद था कि आजतक मैंने उसकी उपेक्षा की। हाल में पैदा हुई लड़की के प्रति उसके दूसरे ही भाव थे, केवल दया ही नहीं बल्कि प्रेम भी था। बालिका यद्यपि उसके वीर्य से नहीं उत्पन्न थी, तथापि उसपर उसकी बहुत अधिक ममता थी और यदि अन्ना की बीमारी के दिनों में उसने ध्यान न दिया होता तो जिस तरह मारी-मारी वह फेंकी जाती तो कभी यमलोक की मेहमान हुई होती। वह दिन में कई बार लड़की के पास जाकर बैठता, उसका मुंह देखकर अपनी छाती शीतल करता। उस समय अलक्ले यह बात भूल जाता कि वह किसी असाधारण संकट में फँसा है।

पर ज्यों-ज्यों समय बीतता गया अलक्ले को यह बात प्रत्यक्ष होने लगी कि यह अवस्था अधिक काल तक नहीं चल सकती। यह बालू का [illegible] है, जो अधिक काल तक नहीं ठहर सकता। उसने देखा कि उसके [illegible] में पशुबल उसी शान्ति तोड़ने का यत्न कर रहा है। सबकी ओर वह सशंक नेत्रों से देखता, मानों लोग उसके आचरण पर आश्चर्य कर रहे हैं और कह रहे हैं कि तुम्हारा यह कर्तव्य नहीं था। साथ ही अन्ना के साथ यह संबंध उसे अस्वाभाविक प्रतीत होने लगा।

अलक्ले ने यह भी देखा कि ज्यों-ज्यों अन्ना अच्छी होने लगी, उससे डरने लगी। उसकी आंखें सशंक रहतीं, मानों उसे इस वर्तमान संबंध पर विश्वास नहीं है, भरोसा नहीं है।

फरवरी में लड़की बीमार पड़ गई। डाक्टर का बन्दोबस्त कर अलक्ले दफ्तर गया। दफ्तर से लौट कर आया तो उसने देखा एक खूबसूरत दाई बैठक में किसी का कपड़ा लिये बैठी है।

अलक्ले—(दाई से) कौन आया है ?

दाई—बेत्सी।

बेत्सी का आना अलक्ले को नहीं जँचा। मुँह बना कर वह वहाँ से चला गया।

अलक्ले यह देख रहा था कि जब से यह संकट उसके ऊपर आया है, तब से स्त्रियों का अनुराग उसके कुटुम्ब के प्रति बढ़ता जा रहा है। उनका आना-जाना बढ़ रहा है। उसको इस अवस्था में सबको आनन्द है, जहां जो मिलता है, अन्ना के स्वास्थ्य की बात पूछता है और इस तरह की बातें करता है, मानों उसने अभी नया विवाह किया है। बेत्सी से अलक्ले हृदय से घृणा करता था, इसलिये अन्ना की तरफ न जाकर वह सीधे लड़की के पास गया।

शिरोजा टेबुल पर बैठ कर दोनों पैर हिलाकर, न जाने क्या बक रहा था। अलक्ले को देखकर दाई ने उसे नीचे खींच लिया। अलक्ले कमरे में गया। उसने शिरोजा की पीठ ठोंकी और दाई से डाक्टर की राय पूछी ?

दाई—डाक्टर कहते हैं कि कोई बीमारी नहीं है। इन्होंने बहलाने के लिये कहा है— 'मुझे शक हो रहा है कि जो दाई हम दिखाती है,

उसके स्तन में दूध नहीं है, ऐसा बहुधा होते दिखाई दिया है।"

अलक्ले–दाई की परीक्षा करवा लेनी चाहिये।

इतना कह कर अलक्ले ने डाक्टर को बुलाने के लिये आदमी भेजा और आप अन्ना के कमरे की ओर चला। दूर से ही उसे बेत्सी और अन्ना के बात-चीत करने की आवाज सुनाई दी। उसके पैर की आहट पाकर बात-चीत बन्द हो गई।

अलक्ले कमरे में पहुंचा। उसके पहुँचते ही बेत्सी उठ कर चलने लगी। अन्ना ने उसे रोक लिया। उसने कहा–"बेत्सी मुझसे कहने आई हैं कि रंस्की की बदली ताससखण्ड को हो रही है। वह अन्तिम मुलाकात करने आना चाहता है; पर मैंने मिलना अस्वीकार कर दिया है।"

अलक्ले—इस सम्बन्ध में जो तुमको उचित जँचे, करो। मैं कुछ नहीं कह सकता।

इतनी बात सुनकर बेत्सी उठ खड़ी हुई और अन्ना से हाथ मिलाकर नीचे उतरने लगी। अकक्ले उसे दरवाजे तक पहुँचा आया।

लौट कर अलक्ले ने अन्ना से कहा–"तुमने उचित ही किया, उसके यहां आने की कोई जरूरत नहीं दिखाई देती।"

अन्ना–(विषाद के साथ) उसी बात को बार-बार दोहराने की क्या जरूरत है? इस बात की चर्चा ही मुँह पर न लाइये।

इतना कह कर उसने अपने मन में कहा–"ठीक है। जिसने मेरे लिये अपने प्राण दिये, उससे मिलने की कोई जरूरत नहीं।"

अलक्ले–मैं तो इस संबंध में यों ही कुछ नहीं कह रहा हूँ। जो तुम्हें उचित समझ पड़ा, तुमने किया। हां, बेत्सी की धृष्टता मुझे पसन्द नहीं।

अन्ना-(जोर देकर) उसके बारे में जो कुछ कहा जाता है, मैं इस पर विश्वास नहीं करती। मुझे पक्का विश्वास है कि वह प्रत्येक बात मेरी भलाई का विचार कर कहती है।

अलक्से बिना कुछ उत्तर दिये चुप-चाप बैठा रहा। उसने कहा—"लड़की सवेरे से रो रही है। दाई कहती है, दूध पिलानेवाली के स्तन में दूध नहीं है। इसलिये डाक्टर को बुलाया है।"

अन्ना-मैं बार-बार कहती आ रही हूँ कि उसे दूध पिलाने दीजिये। पर मेरी कोई सुनता ही नहीं। लोग उसे मार डालना चाहते हैं। इस पर भी सारा दोष मेरे ही सिर मढ़ा जाता है।

अलक्से-मैंने तो तुम्हें कुछ नहीं कहा।

अन्ना-और क्या कहोगे? मेरे ईश्वर! मैं उसी दिन मर क्यों न गई। वह घिग्घी बांध कर रोने लगी। उसने कहा—"मैं होश में नहीं हूँ। मुझे चक्कर आ रहा है। आप कृपा कर इस समय यहां से चले जाइये।"

अलक्से वहां से उठ कर बाहर चला आया। उसने अपने मन में कहा—"इस तरह कब तक चल सकता है?"

आज उसकी वेदना सब से अधिक बढ़ गई। संसार की आंखों में अपनी हीनता, अन्ना के घृणा भरे भाव, इस समय पूरी तरह से प्रत्यक्ष हो उठे। उसके हृदय की शान्ति भंग होकर, उसे किसी दारुण अवस्था में लिये जा रही थी, हृदय के सारे अच्छे भाव लुप्त होते जा रहे थे। उसने कहा—"उचित तो यही था कि अन्ना रंस्की का पल्ला छोड़ देती; पर यदि वह नहीं छोड़ना चाहती तो मैं तब तक इसे बरदाश्त करने के लिये तैयार हूँ, जब तक लड़कों पर इस की आंच नहीं पहुँचती। यह अवस्था दारुण थी; पर इस निस्सहाय अवस्था ने इसे वह [illegible] समझना

था। पर क्या वह इसी तरह रह सकेगा। आज संसार उसका शत्रु हो रहा है। उसे अपने मन की कभी भी नहीं करने देगा। चाहे वह कितना भी लाभकारी क्यों न हो।

१४

अलक्ले से विदा होकर बेत्सी दो ही चार कदम आगे बढ़ी होगी कि अव्लास्की से मुलाकत हुई। अन्ना के संबन्ध की दो चार बातें करके, अव्लास्की ने बेत्सी से विदा ली और उसने अन्ना के घर में प्रवेश किया। अन्ना के पास जाकर उसने पूंछा-"तुम्हारी क्या हालत है?"

अन्ना—बड़ी बुरी हालत है। पति में लाख अवगुण होने पर भी स्त्रियां उनकी पूजा करती हैं। पर अनेक गुण होने पर भी मैं उससे घृणा करती हूँ। उसके साथ मेरा क्षण पर भी निर्वाह नहीं हो सकता। उसकी सूरत से मुझे नफरत है। उसे देख कर मेरा सारा शरीर जलने लगता है। पर मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्या करूँ।

अव्लास्की—बीमारी के कारण तुम व्याकुल हो गई हो। इसी में इस तरह निराश हो। नहीं तो जो बात तुम कह रही हो, नहीं है।

इतना कहकर उसने अन्ना को अनेक प्रकार से धीरज दिया। अन्ना का चित्त कुछ शान्त हुआ। उसने कहा—"भाई! मेरा सर्वनाश हो गया समझो। मामला यों ही नहीं रह सकता। इसका अन्त अत्यन्त भयानक होगा।"

अव्लास्की—मेरी बात सुनो। तुमने आरम्भ में ही भूल की है। तुमने मर्यादा के घमण्ड में ऐसे आदमी से विवाह किया जो तुमसे

२० वर्ष उमर में अधिक था। साथ ही जिसके प्रति तुम्हारे हृदय में अनुराग भी नहीं था। इसके बाद अभाग्यवश तुमने दूसरे से प्रीति लगाई। यह बात तुम्हारे पति को विदित हुई, फिर भी इसने क्षमा कर दिया। पर प्रश्न यह है कि क्या तुम अपने पति के साथ रह सकती हो? यदि तुम नहीं चाहती तो तलाकनामा से इसका अन्त हो सकता है।

इतना कहकर अव्लास्की ने अन्ना की ओर तीव्र दृष्टि से देखा। तलाकनामे से उसके चेहरे पर उदासी नहीं आई, बल्कि उसे एक तरह का सन्तोष हुआ। अव्लास्की बोला—"अभागी बहिन! मैंने तेरा कल्याण चाहा था; पर तुझे अभीष्ट नहीं है। तेरे भाग्य में दुर्दशा ही बदा है। अब मैं अलबले से मिलकर सब बातें तै करने जाता हूँ।"

इतना कह कर वह अपनी जगह से उठा और चला गया।

अव्लास्की सीधे अलबले की बैठक में चला गया और उसने कहा—"मैं आप से अन्ना के सम्बन्ध में दो बातें करने आया हूँ। यदि कोई आपत्ति न हो तो दो बातें कर लीजिये।"

अलबले ने सूखी हँसी हँस कर कहा—"इस संबंध में मैंने विचार किया है। जिस निर्णय पर मैं पहुंच सका हूँ, उस का परिचय इस पत्र से मिल जायगा।"

इतना कहकर उसने दराज से एक अधूरा पत्र निकाला और अव्लास्की के हाथ पर रख दिया। उसने फिर कहा—"मैं यही जानना चाहता हूँ कि वह क्या चाहती है? इसीलिये मैंने उसे यह पत्र लिखा है, मैं हर एक काम उसकी ही इच्छा के अनुसार करने को तैयार हूँ।"

अव्लास्की—उसकी बुद्धि ठिकाने नहीं है। तुमने अतिशय उदारता से काम लिया और तुम्हारी यही उदारता उसके नाश का कारण हुई।

मेरी समझ में तो उससे पूछने की कोई जरूरत नहीं। जिस तरह हो, इस संबंध का अन्त कर देने में ही दोनों का कल्याण है। एक बार तुमने भी यही उपाय उत्तम समझा था।

अलक्ले—तुम चाहते हो कि मैं उसे तलाँक दे दूँ ?

अलक्ले ने इस पर सैकड़ों बार विचार किया था। पर उसे यह बात इतनी सहज नहीं प्रतीत होती थी, जितनी अब्लास्की इसे समझता था। वह सोचने लगा—"शिरोजा का क्या होगा ? मां के साथ छोड़ देना, उसका जीवन नष्ट करना है। अपने साथ रखना अन्ना से बदला लेना है, जो मुझे पसंद नहीं। मैं उसे क्षमा कर चुका। तलाकनामा से मैं उसका सर्वनाश कर दूंगा। इसके अलावा अन्ना स्वेच्छाचारिणी हो जायगी। मेरे जीते वह विवाह कर नहीं सकती। रंस्की उसे सदा अपने साथ रखेगा नहीं। इस तरह तलाक देकर मैं उसके सर्वनाश का पाप अपने सिर पर नहीं ओढ़ सकता।"

अब्लास्की इतनी देर में अनेक बातें कह गया। पर अलक्ले ने किसी का उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप मुँह फेर कर न जाने क्या क्या सोचता रहा।

अब्लास्की को उसकी अवस्था पर बड़ी दया आई। वह बोला—"अलक्ले ! मैं सच कहता हूँ, अन्ना तुम्हारी उदारता पर मुग्ध है; पर ईश्वर की यही इच्छा है कि तुम दोनों साथ न रहो।"

अलक्ले कुछ कहना चाहता था पर उसकी आंखों में आंसू भर आये वह कुछ न बोल सका।

अब्लास्की—इसे ईश्वरीय कोप समझना चाहिये। इसीलिये मैं ऐसा यत्न कर रहा हूँ, जिसमें दोनों का कल्याण हो।

अलक्के के साथ देर तक बात-चीत करके अब्लास्की घर से बाहर हुआ। अलक्ले की अवस्था पर उसे खेद था; पर उसे इस बात का संतोष था कि अन्त में उसने सब ठीक कर दिया। अन्ना के भाग्य का फैसला हो गया। अलक्ले अब अपने निर्णय से नहीं हटेगा।

१५

कई दिन के बाद रंस्की को होश हुआ। उसे अपनी करनी पर घृणा आने लगी। अपनी भाभी से वह बोला—"मैंने काम तो बुरा किया; पर इसकी चर्चा कहीं न करना।"

भाभी—नहीं, पर आप भी भविष्य में ऐसी भूल नहीं कीजियेगा।

इस घटना से रंस्की की अवस्था बहुत कुछ सुधर गई। उसका परिताप जाता रहा। शर्म भी धुल गई। वही पुरानी रफ्तार उसने जारी की। अन्ना का ख्याल कर उसका हृदय सदा दुःखी रहता। पर उसने हृदय में दृढ़ कर लिया कि अब मैं उसके मार्ग में बाधास्वरूप नहीं खड़ा होऊँगा। लेकिन अन्ना का वह पूर्व प्रेम वह नहीं भूल सका।

ताशकण्ट जाना उसने स्वीकार कर लिया था। नियुक्ति-पत्र भी उसे मिल गया था; पर ज्यों-ज्यों दिन निकट आता जाता था। उसे मालूम होता था कि वह भीषण स्वार्थत्याग कर इस पद पर जा रहा है।

बेत्सी की जबानी अन्ना का उत्तर सुन कर उसने सन्तोष कर लिया था; पर दूसरे ही दिन सबेरे बेत्सी ने फिर आकर कहा—"अब्लास्की को मालूम हुआ है कि अलक्जे ने तलाक देना स्थिर कर लिया है। अब तुम अन्ना से बिना किसी बाधा के मिल सकते हो।"

रंस्की एक क्षण भी नहीं ठहर सका। बेत्सी को वहीं छोड़ कर वह अन्ना से मिलने के लिये चल पड़ा और बेतहाशा दौड़ता उसके कमरे में जा पहुँचा और बिना विचार के उसका आलिंगन और चुम्बन करने लगा। अन्ना भी रंस्की से मिलने की ही तैयारी कर रही थी। उसने कहा—"तुमने मुझे जीत लिया। आज से मैं तुम्हारी हूँ।"

रंस्की-मेरा इतना प्रबल भाग्य! अभी मुझे रास्ता साफ नहीं दिखाई देता।

अन्ना-उसके तलाक की मुझे चिन्ता नहीं है। मुझे केवल शिरोजा की चिन्ता है?

रंस्की को यह अच्छा न लगा। उसने मन में कहा—"इस समय भी बस इसी तलाक और शिरोजा की बात है।" उसने अन्ना को रोकना चाहा।

अन्ना-(रोती हुई) हाय! मैं मर क्यों न गई। सारी विपत्तियों का अन्त हो गया होता। पर ईश्वर को यह कष्ट मंजूर था।

आंसुओं से उसके गुलाबी गाल तर हो गये।

अभी एक क्षण पहले तासखण्ड की नियुक्ति को अस्वीकार करना, रंस्की अपमान जनक और हीन समझता था; पर दूसरे ही क्षण उसने नौकरी से अलग हो जाना ही निश्चय किया। तदनुसार उसने स्तीफा भी दे दिया।

इस घटना के एक मास बाद अन्ना रंस्की के साथ निकल गई। शिरोजा अलक्से के ही पास रहा। अलक्से ने तलाक नहीं दिया था; पर अन्ना को इस बात की परवा नहीं थी।

पाँचवाँ खण्ड

९
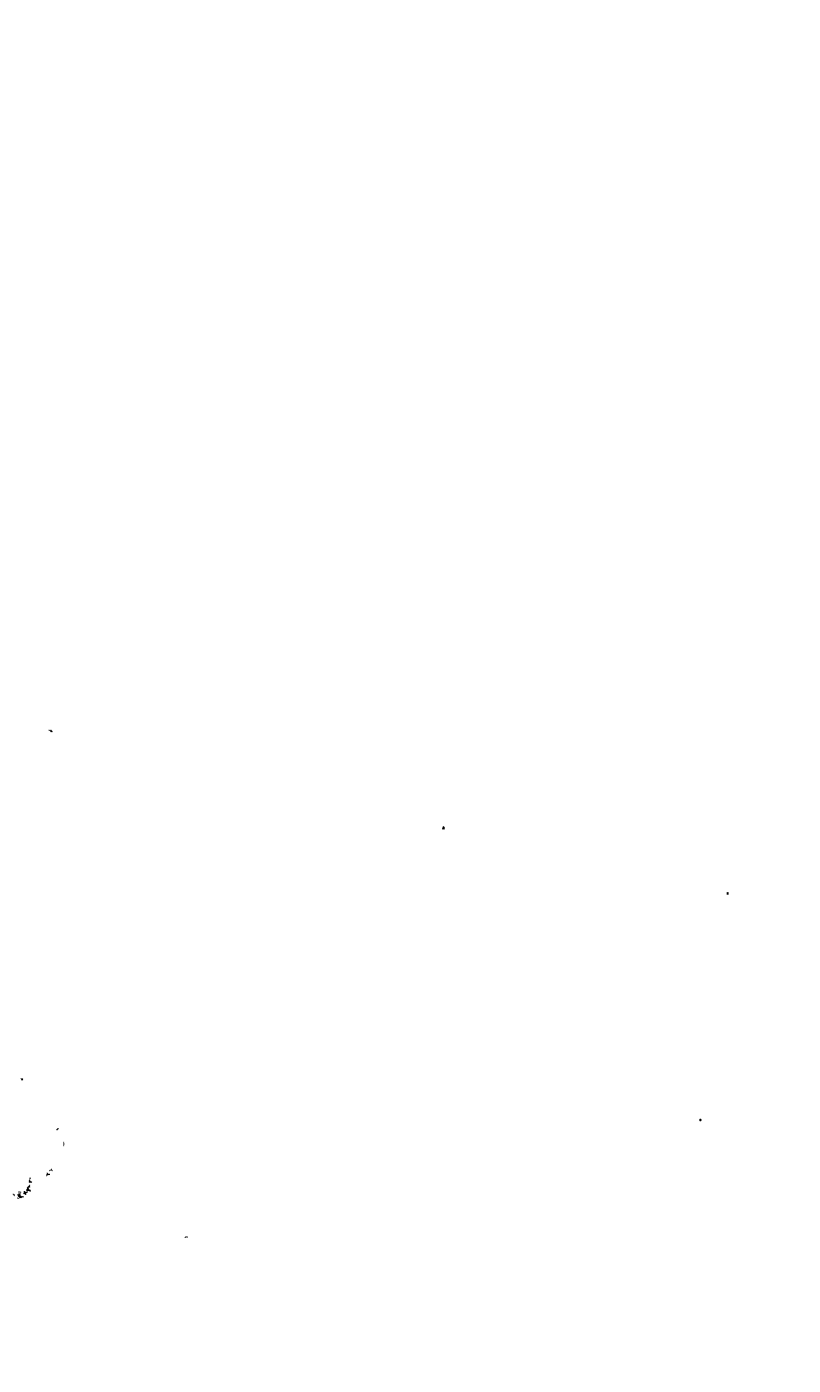
रंस्की को लेकर अन्ना घर से निकल गई। रूस छोड़कर दोनों विदेश भ्रमण करने लगे। वेनिस, रोम तथा इटाली के अन्य नगरों में भ्रमण करते, वे एक नगर में पहुंचे और वहां कुछ दिन रहने का विचार करने लगे। इन्होंने भाड़े पर एक मकान ठीक किया। रंस्की बाहर से आकर घर में प्रवेश ही करनेवाला था कि दरवान ने रंस्की को झुक कर सलाम किया और बोला—"वह आदमी रूस का रहने वाला है और आपके बारे में पूछ रहा था।"

रंस्की ने मर्म भरी दृष्टि से उस आदमी की ओर देखा। उसे देखते ही रंस्की पहचान गया, बोला—"कौन! गोलनिशे!"

गोलनिशे—हां, मैं ही हूं।

गोलनिशे रंस्की के साथ सेना में काम करता था। पर थोड़े ही

दिन तक काम करके, उसने अपना नाम कटा लिया था। तब से उसने सरकारी नौकरी का फिर नाम नहीं लिया। दोनों का जीवन दो भिन्न स्रोत में बह गया था। तब से आज पहली दफा दोनों मित्रों से मुलाकात हुई।

रंस्की ने देखा कि गोलनिशे उदार मत के पथ पर जाकर, उच्च सिद्धान्तों को लेकर चल रहा है और वह रंस्की के पेशे को घृणा की दृष्टि से देखता है। यही कारण था कि पुराने मित्र से मिल कर भी रंस्की को प्रसन्नता नहीं थी। वह उदासीनता के साथ उससे बातें करता था, जिसका अभिप्राय यही था—"मैं इस बात की परवा नहीं करता कि तुम मुझे प्रेम करते हो कि घृणा। पर यदि तुम मुझे जानना चाहते हो तो तुम्हें मेरा आदर करना ही होगा।"

रंस्की के हृदय के भाव, गोलनिशे से छिपे न रहे। पर उसने भी पूरी उपेक्षा की। मुझे यदि इस तरह के कभी मिलने की सम्भावना होती तो शायद कोई न कोई इसके निराकरण का प्रतीकार किये होता; पर जब मुलाकात हो गई तो दोनों ने परस्पर हर्ष प्रकट किया और खुशी गले मिले।

रंस्की-(हँस कर) आज इतने दिन के बाद तुमसे मिल कर मुझे अतिशय प्रसन्नता हुई। चलो भीतर चलें। आज कल क्या कर रहे हो?

गोलनिशे—मैं यहां दो वर्ष से रहता हूँ। यहीं काम भी करता हूँ।

रंस्की-तुम श्रीमती अलक्ले को जानते हो? हम लोग एक ही साथ यात्रा कर रहते हैं। इस समय मैं उन्हीं से मिलने जा रहा हूँ।

गोलनिशे-नहीं, मैं उन्हें नहीं जानता। तुम्हें यहां आये कितने दिन हुये?

रंस्की—आज चौथा दिन है।

गोलनिशे के चेहरे की ओर देख कर उसने अपने मन में कहा—
—"अन्ना से इसका परिचय कराने में कोई हर्ज नहीं है। यह किसी तरह
का सन्देह नहीं कर सकता।"

इन तीन महीनों में रंस्की जहां कहीं नया मुलाकाती पाता, वह
इसी बात का सबसे पहले पता लेता कि अन्ना के प्रति उसका क्या भाव
है? अधिकांश लोगों ने, उसकी समझसे इसे साधारण बात समझा
है। पर यदि उनकी वास्तविक राय पूछी जाती तो शायद कोई भी
ठीक-ठीक उत्तर देने के लिये तैयार न होता।

जिन लोगों के भाव को, वह ठीक समझता था वास्तव में
इस संबंध में वे कोई मत नहीं रखते थे। उनका मत था, संसार में
अनेक तरह की जटिल समस्यायें उपस्थित हुआ करती हैं। मानव-हृदय
अपनी सहज उदारता का परिचय देकर, उन्हें बरदाश्त कर लेता है या
उसपर लक्ष्य नहीं करता, इसी तरह यह भी एक समस्या है। यही कारण
था कि वे लोग ऐसा एक भी प्रश्न नहीं उपस्थित करते थे, जिससे किसी
का दिल दुखता। वे लोग सब अवस्था समझ कर भी कुछ बोलना या
कहना उचित नहीं समझते थे।

गोलनिशे के व्यवहार से रंस्की को संतोष हुआ। अन्ना के साथ
उसने इस तरह बात-चीत की, मानों कोई असाधारण अवस्था
उपस्थित नहीं है।

अन्ना को उसने आज से पहले कभी नहीं देखा था। उसके अ-
तीव रूप लावण्य को देख कर वह मुग्ध हो गया। अन्ना ने रंस्की के
सम्बन्ध को बिना किसी संकोच के स्वीकार कर लिया, इससे उसका

विस्मय और भी बढ़ गया; पर उसके इस तरह के व्यवहार से गोलनिशे को बड़ा संतोष हुआ।

अन्ना के चेहरे से रंस्की को मालूम हुआ कि उसे इस बात की प्रसन्नता है कि गोलनिशे उससे मिलकर प्रसन्न है, वह अपनी जगह से उठी और तेजी के साथ कमरे से बाहर हो गई।

दोनों मित्र कमरे में अकेले रह गये। रंस्की ने कहा—"तुमने इसी नगर को अपना घर बना लिया है? अभी तक वही लिखने का ही काम जारी है न?"

गोलनिशे—उस पुस्तक का पहला भाग तो तैयार हो गया। अब मैं में। दूसरे भाग के लिये मसाला इकट्ठा कर रहा हूँ।

इसके बाद उसने पहले भाग के संबंध में अनेक बातें कहीं। पहले तो रंस्की कुछ समझ नहीं सका; पर धीरे-धीरे गोलनिशे की बातों से ही, उसने कुछ अभिप्राय निकाला।

२

इस भ्रमण से अन्ना का स्वास्थ्य ठीक हो गया। उसका विषाद भी जाता रहा। उसका हृदय प्रसन्न था। वह बेहद खुश थी। अलक्से की विषम अवस्था पर जरा भी उसे खेद नहीं था। एक तरफ तो वह उस बात को ध्यान में नहीं लाती थी और दूसरी ओर उसके विषाद का स्मरण कर, उसे जो हर्ष होता था, उसमें दुखका कोई स्थान नहीं था। बीमारी के समय की घटनायें, अलक्से के साथ सुलह, फिर विग्रह, रंस्की की आत्म-हत्या की चेष्टा, उसका अन्ना से मिलने आना, अलक्से का तलाक देने

की तैयारी, अन्ना का पुत्र और पति का त्याग कर घर से निकल जाना आदि बातें उसे स्वप्न की तरह प्रतीत होने लगीं। मानों वह गहरी नींद में पड़ी भयानक स्वप्न देख रही थी और अभी उस नींद से आंखें खुल गईं अलक्से की विपत्ति का उसे उतना ही ख्याल था, जितना एक डूबते हुए को दूसरे डूबते हुए को—जो उसका गला पकड़ कर खड़ा था—ढकेल देने से हो सकता है। "वह तो डूब ही गया। मैंने उसे ढकेल कर अनुचित किया; पर मेरी रक्षा का और उपाय ही क्या था। इसलिये इन बातों पर विचार करना व्यर्थ है।"

अन्ना के मन में इस तरह के विचार उमड़ रहे थे—"मैंने उसे हीन बनाया है; पर मैं उसकी इस दशा से लाभ नहीं उठाना चाहती। मैं भी घोर यातना सह रही हूँ। जब तक जीऊंगी; इस यातना से मुक्त नहीं हो सकती। मेरा यश गया, मान गया, प्रतिष्ठा गई, सब से बढ़ कर प्यारा पुत्र हाथ से गया। मैंने बुराई की है। इसलिये मैं सुखी होना भी नहीं चाहती। मैं तलाक भी नहीं चाहती। पुत्र-वियोग और शर्म तथा अपमान की यातना, इसी तरह सहती रहूँगी।"

लेकिन वास्तवमें अन्ना को कोई संकट नहीं था। शर्म उसे छू तक नहीं गयी थी। जहां तक संभव था, रूसवालों से इन्होंने परदेशमें कभी मुलाकात नहीं की। इससे इन्हें नीचा भी कहीं नहीं देखना पड़ा। जो लोग इनसे मिलते, वे यही भाव प्रगट करते कि तुम लोगों की अवस्था को हमलोग तुमसे अच्छी तरह समझते हैं। तुम लोगों का कोई दोष नहीं है। शिरोजा को वह हृदय से चाहती थी; पर इस समय उसके लिये भी वह आतुर नहीं थी। नई लड़की अन्ना के साथ ही थी। उसने अन्ना के हृदय पर इस तरह अधिकार कर लिया था कि अन्ना को

शिरोजा का ख्याल भी नहीं आता था।

रंस्की से प्रेम के साथ-साथ घनिष्ठता बढ़ती गई। उसके साथ इस तरह इच्छा पूर्वक रह कर, वह बेहद प्रसन्न थी। रंस्की की सभी बातें अन्ना को पसन्द आतीं। पर अन्ना अपने हृदय के भाव को रंस्की पर प्रगट करने से डरती। कहीं उसका दिमाग बिगड़ न जाय और वह उसे छोड़ दे। यद्यपि इस बात की सम्भावना कम थी। रंस्की के व्यवहार से अन्ना को पूर्ण सन्तोष था। अन्ना सोचती—"यह कितना बुद्धिमान् है। यदि राजनैतिक क्षेत्र में यह उतरता तो शायद सब को परास्त कर देता पर इसने मेरे लिये सबको ठुकराया। इसके लिये उसे जरा भी खेद या पछतावा नहीं है।" इससे अन्ना का अनुराग अधिकाधिक बढ़ता जाता। कहीं उसका जी दुखे नहीं, इससे वह एक क्षण के लिये भी उससे अलग नहीं होती थी। रंस्की भी अपने मनसे कोई काम नहीं करता था। वह अन्ना की इच्छा का सदा अनुगामी था।

इतने पर भी रंस्की सुखी नहीं था। सब बातें उसकी इच्छा के अनुकूल ही हुईं, फिर भी उसे लेशमात्र ही सन्तोष हो सका। आज उसे मालूम हुआ कि जो लोग मन की इच्छा की पूर्ति को ही परम सुख मानते हैं, भूल करते हैं। अन्ना को पाकर उसे कुछ दिन तो अवश्य सुख था पर वह सुख सदा बना नहीं रहा। थोड़े ही दिनों में उसके मन में नई-नई अभिलाषा उत्पन्न होने लगी। न कोई काम था, न धन्धा। विदेश में परिचय भी इतना अधिक नहीं था। इससे सोने से जो समय बचता था, उसके काटने की सदा चिन्ता लगी रहती थी। रंस्की अविवाहित था; पर वह उस स्वच्छन्दता के साथ चल फिर नहीं सकता था और न उस तरह के लोगों से हिल-मिल ही सकता था, क्योंकि

यह अन्ना को असह्य था। वहाँ के लोगों की रहन-सहन और मिलना-
जुलना, इतना अनवस्थित था कि अन्ना उनसे मिलना भी पसन्द नहीं
करती थी। नई देखने योग्य चीजें इतनी अधिक नहीं थीं कि प्रतिदिन
का समय कट जाय।

इस समय रंस्की की ठीक यही अवस्था थी, जो किसी भूखे की
होती है। क्षुधा से आतुर होकर, जिस तरह वह जो कुछ पाता है, मुंह
में रख लेता है, इसी तरह रंस्की जो कुछ सामने आता, उसी से मन
बहलाने का यत्न करता।

चित्रकारी का उसे लड़कपन से शौक था। रुपया भी उसके पास
काफी था। इसलिये उसी समय से उसने चित्र-संग्रह करना आरम्भ कर
दिया था। अब उसने चित्रकारी की ओर रुचि बढ़ाई और कूंची
लेकर बैठ गया।

चित्रकारी में उसे असाधारण रुचि थी। अनेक तरह की, सामा-
जिक गार्हस्थ्य, राजनैतिक और धार्मिक चित्र, वह बनाता गया। जिन
लोगों ने उसके चित्रों को देखा, उसके कलम की प्रशंसा की।

एकदिन उसने अन्ना का चित्र बनाना आरम्भ किया।

३

नगर में अधिक दिन तक न रह कर रंस्की अपना डेरा-डण्डा उठा
कर पास ही के एक गांव में ले गया। मकान बड़ा ही विशाल और
रमणीय था। प्राकृतिक दृश्य की छटा खूब निखरी थी। तोलस्तोय भी
वहीं गांव के पास रहता था। धीरे-धीरे आस-पास के भले आदमियों

से इनका परिचय हो गया और ये लोग आनन्द से रहने लगे।

इटाली के एक प्रसिद्ध चित्रकार से रंस्की ने चित्रकारी सीखना आरम्भ किया। उसकी सहायता से वह प्रकृति के सुन्दर-सुन्दर दृश्य खींचत और इसी तरह अपना दिन काटता।

एक दिन प्रातःकाल गोलनिशे रंस्की से मिलने आया। दोनं मित्रों में परस्पर वार्तालाप होने लगी।

रंस्की—हम लोग ऐजी जगह रहते हैं, जहां संसार के झंझटों से ह तरह मुक्त हैं। क्या तुमने मिहलों के चित्र देखे हैं?

इतना कह कर वह गोलनिशे को एक लेख सुनाने लगा। य लेख रूस के एक चित्रकार के संबंध में था, जो उसी गांव में रहता थ और एक तस्वीर तैयार कर रहा था, जिसकी चारों ओर शोहरत थी तैयार होने के पहले ही उस तस्वीर को किसी ने खरीद भी लिया था उस लेख में सरकार तथा एकाडमी की निन्दा की गई थी। इतने चतु चित्रकार का जरा भी आदर नहीं किया।

गोलनिशे—मैंने उसके चित्र को देखा है। उसमें मौलिकता जरूर है पर चित्र अस्त-व्यस्त है। भूलें बहुत हैं।

अन्ना—उस चित्र का विषय क्या है?

गोलनिशे—मल्लाह के सामने ईसा-मसीह खड़े हैं। नये सम्प्रदाय वे अनुसार ईसा को यहूदी बनाया गया है।

चित्र के विषय की चर्चा से गोलनिशे को कुछ कहने का अवसर मिल गया, बल्कि यों कहिये कि अपने हृदय के उद्गारों के उगलने का अवसर मिल गया। उसने कहा—"मेरी समझ में नहीं आता कि लोग इतनी भीषण भूल किस तरह कर बैठते हैं। ईसा का स्थान तो स्पष्ट है।

इसलिये जिन्हें ईश्वर का चित्र न खींचकर किसी क्रान्तिकारी या तपस्वी का चित्र खींचना रहता है तो वे शुकरात आदि को क्यों नहीं लेते। ईसा-मसीह को क्यों छेड़ते हैं। जिसका चित्रण नहीं हो सकता, उसीको अपने चित्र का विषय बनाते हैं और तब ...।"

रंस्की—क्या वास्तव में मिहलों नितान्त गरीब है।

रूसी होने की वजह से रंस्की ने उसकी सहायता करना अपना कर्तव्य समझा, चाहे उसका चित्र अच्छा हो या बुरा।

गोलनिशे—मैं नहीं समझता, तस्वीरसाजी में उसका हाथ पक्का है। मैंने उसकी अनेक तस्वीरें देखी हैं। इधर उसने यह काम छोड़ दिया है। इससे सम्भव है, वह कठिनाई में हो।

रंस्की—तो हम लोग अन्ना की एक तस्वीर उससे क्यों न बनवावें?

अन्ना—मेरी क्यों? तुमने जो तस्वीर रंग कर तैयार की है, उसके सामने मुझे दूसरी तस्वीर नहीं जँचेगी। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो बच्ची की तस्वीर बनवा लो।

रंस्की—तुम मिहलों को जानते हो?

गोलनिशे—मुझसे उनकी जान-पहचान है। ऐसा विचित्र आदमी मैंने कभी नहीं देखा। आज कल इस देश में एक हवा बही है। जिसे देखो वही कहता है, मुझे किसी की क्या परवा। मैं तो स्वतन्त्र विचार का आदमी ठहरा। पर यदि इन स्वतन्त्र विचारवालों की आन्तरिक दशा देखो तो दंग रह जाओगे। असीम दर्जे की संकुचित हृदयता, संकीर्णता और धर्मवादिता इनमें भरी है।

अन्ना और रंस्की दोनों कुछ कहना चाहते थे; पर गोलनिशे ने इसकी परवा नहीं की, वह बोलता गया—"प्राचीन समय में धर्म, नियम

और सदाचार के मर्म का पारङ्गत ही स्वतन्त्र विचार का समझा जाता था और कठिन संघर्ष के बाद ही वह स्वतन्त्र बुद्धि प्राप्त करता था। पर आजकल के स्वतन्त्र विचारवाले महानुभाव धर्म, सदाचार तथा नियम का नाम तक नहीं जानते। बस, सब बातको अस्वीकार करना ही वे स्वतन्त्र विचार का बोधक समझते हैं। ठीक यही बात इसकी है।

रंस्की के भाव से अन्ना समझती थी कि रंस्की किसी न किसी तरह उसकी सहायता करना चाहता है। उसके पाण्डित्य और कला-चातुरी तथा शिक्षा आदि से उसे कोई प्रयोजन नहीं है। इससे गोल-निशे को बीच में ही रोक कर उसने कहा—"तो चलो, एक बार उससे मिल लिया जाय।"

अन्ना की बात सुन कर गोलनिशे ने होश सम्हाला। सब कोई चलने के लिये तैयार हो गये।

जिस समय ये लोग मिहलों के घर पहुंचे, वह अपनी पत्नी से वाक् युद्ध कर रहा था। इनके आने की खबर सुन कर वह बैठक में दौड़ा आया और तीनों को उसने बड़े आदर के साथ बैठाया।

तीनों व्यक्तियों ने घूम-घूम कर उसकी तस्वीर देखी। सब को उसकी कलमचातुरी जँची। अन्ना को सबसे अधिक आनन्द मिला। रंस्की ने एक तस्वीर खरीदा भी और अन्ना के चित्र रँगने की फर-माइश कर आया।

४

किटी के साथ लेविन की शादी होगई। पति-पत्नी गले-गले मिले। लेविन इस विवाह से सुखी था; पर जिस सुख की उसने कल्पना की थी, वह उसे प्राप्त न हुआ। पग-पग पर उसकी पुरानी आशायें कुचली जाती थीं और विचित्र तरह की नई आशाओं का उद्गम होता था। उसे सुख तो था; पर गार्हस्थ्य जीवन में प्रवेश करते ही उसे प्रतीत होने लगा कि गार्हस्थ्य जीवन की जो कल्पना मैंने की थी, उससे यह एक दम भिन्न है। उसकी दशा ठीक उस मनुष्य की भांति थी, जो किनारे पर एक सुन्दर नौका बंधी देख, उस पर चढ़जाता है और थोड़ी देर के बाद उसे मालूम होता है कि नाव पानी के सहारे बह रही है और यदि इसे खेया नहीं जायगा तो वह न जाने कहां चली जायगी। खेने में हाथ दुख जायंगे। नाव पर चढ़ना तो सुखकर अवश्य था; पर अब उसे ठीक रास्ते पर लेजाना कष्टकर हो रहा है।

जब उसकी शादी नहीं हुई थी, वह विवाहित पति-पत्नी के प्रेम, कलह, झगड़े और डाह की बातें देखकर मनमें हँसता और कहता-"जब मैं शादी करूंगा तो लोगों को दिखला दूंगा कि पति-पत्नी में इस तरह की बातें नहीं हो सकतीं।" दिखौआ व्यवहार भी सर्वसाधारण से भिन्न होगा। पर शादी होते ही उसने देखा कि उसका दाम्पत्य संबंध औरों से भी अधिक जटिल तथा दिखौआ हो रहा है और इस तरह चलने में बड़ी कठिनाई उपस्थित हो रही है। गार्हस्थ्यजीवन के असलियत को भली भांति समझ कर भी वह उसका आदर्श अनिर्वचनीय प्रेम और चिन्ता-शून्यता मानता था। उसकी कल्पना थी कि घर के बाहर उसे [illegible] काम

करना चाहिये और गृहस्थी का स्निग्ध प्रेम उसकी सारी चिन्ताओं और व्यथाओं इसकी अमृत वर्षा करता रहे । बस, पत्नी सदा प्रेम से अपने पति को सराबोर करती रहे । सर्वसाधारण की भांति, वह भी इस बातको भूल जाता कि स्त्रियों का भी कुछ कर्तव्य है । उसे यह देखकर विस्मय हुआ कि शादी होने के दूसरे ही दिन किटी गृहस्थी के इन्तजाम की चर्चा करने लगी । टेबुल पर कपड़ा नहीं है, कुर्सी-टेबुल कुछ कम हैं, मेहमानों के लिये कमरा और रसोई का प्रबन्ध ठीक कर देना चाहिये, इत्यादी ।

सगाई होजाने के बाद किटी ने शहर छोड़कर देहातों में घूमने की इच्छा प्रगट की थी, मानों देहातों में कोई ऐसी बात है, जिसे किटी नहीं जानती और वहाँ रहकर वह सीखेगी । इस समय शादी हो जाने के बाद गृहस्थी की साधारण चिन्ता ने उसे आ घेरा था । लेविन इससे मन ही मन झुँझलाता; पर किटी पर उसका इतना अगाध प्रेम था कि सब बातें न समझ कर भी वह आवश्यक समझता और मनही मन उसकी सराहना करता । मकान को किटी ने जिस तरह सजाया, वह भी लेविन को अच्छा नहीं लगता था । आते ही किटी ने अगाफिया से भण्डार की कुंजी ले ली । यह भी लेविन को अच्छा नहीं लगा । लेविन ने देखा कि पुराना रसोइया तो किटी की व्यवस्था से प्रसन्न है, पर अगाफिया को यह सब नया प्रबन्ध नहीं जँच रहा है । किटी कभी-कभी आकर नौकरों की शिकायत हँसते-हँसते करती । उस समय उसका सौन्दर्य दूना विकसित होजाता; पर लेविन अपने मनमें कहता—"इसने यह सब क्या झमेला पाला है। यदि इससे दूर ही रहती तो अच्छा होता ।" लेविन इस बात की कल्पना तक नहीं कर सकता था कि

इस परिवर्तन में किटी को कितना सुख मिल रहा है । अभी थोड़े दिन पहले किटी दूसरों के आधीन थी। जिस तरह की व्यवस्था वे करते, उसीके अनुसार इसे चलना पड़ता; पर इस समय वह सर्वस्व की मालकिन होकर जो चाहे कर सकती थी ।

किटी हृदय से चाहती थी कि यदि इस समय बहन डाली अपने लड़कों को लेकर आ जाती तो मैं लड़कों के लिये ऐसा इन्तजाम कर देती कि उसकी तबीयत खुश हो जाती । घरके प्रबन्ध में उसे एक अजीब आनन्द मिलता; पर वह उसका कारण नहीं समझ सकती । वसन्त के आगमन की कल्पना से उसने अपने घरका सारा प्रबन्ध ठीक कर लिया ।

लेविन के लिये एक यातना और उपस्थित हुई । अब तक तो वह यही समझता था कि पति-पत्नी का परस्पर संबंध एक दूसरे पर अनुराग रखना, प्रेम करना, इज्जत करना तथा नरमी से पेश आना है । इसके अलावा भी कोई संबंध हो सकता है, वह नहीं जानता था । पर किटी का रोना-धोना और यह कहना कि तुम अपने ही में व्यस्त रहते हो, मेरी चिन्ता तक नहीं करते, लेविन को बाण सा लगा ।

एक दिन की बात है कि लेविन अपने एक नये खेत पर गया । शाम देर तक होता रहा । एक तो योंही देर होगई थी, दूसरे पगडंडी से जो वह चला तो रास्ता भूल गया । रास्तेभर उसे किटी की चिन्ता लगी रही । घर पहुंच कर वह सीधे दौड़ा हुआ, किटी के कमरे में पहुंचा । इस समय उसके हृदय में किटी के प्रति जो स्नेह और अनुराग था, कदाचित प्रथम मिलन के दिन भी न रहा होगा । पर किटी ने इसका उत्तर बड़ी ही कठोरता से दिया । लेविन दौड़ा-दौड़ा किटी के पास गया और चाहा कि उसको चूमले; पर किटी ने उसे अलग ढकेल दिया । लेविन के

हृदय को कड़ी चोट पहुंची। उसने पूछा–"इसका क्या मतलब ?"

किटी—दिनभर कहां-कहां मौज लेते रहे। तुम्हें दूसरे की क्या फिकर है ?

इतना कह कर किटी रो पड़ी। दिन भर अकेली रहने से उसे जो मानसिक पीड़ा हुई थी, वह फूटकर बह निकली। आज उसके जीवन में एक नये रहस्य का उद्घाटन हुआ। आज उसे मालूम हुआ कि किटी उसके कितने भीतर तक घुस गई है। न तो एक के आरम्भ का पता है और न दूसरे के अन्त का। अपमान की वेदना उसके हृदय से दूसरे ही क्षण जाती रही। उसकी दशा उस समय ठीक उस मनुष्य की भांति थी, जो किसी पेड़ से टकराकर पीछे फिरता है और अपनी ही लापरवाही समझ कर चोट को मलने लगता है।

एक बार तो लेविन ने सोचा कि उसकी भूल समझा दें; पर दूसरे ही क्षण, उसके मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ कि इससे वह और भी खीझ जायगी। एक बार उसके मनमें आता कि उसे बतला दूं कि तुम दोषी हो; पर दूसरे ही क्षण वह देखता कि इससे रोग बढ़ेगा। इस तरह चुप रह जाने में मुझे मानसिक वेदना अवश्य होगी; पर अपनी सफाई देने में किटी के हृदय को चोट पहुंचेगी। उसने अपने रो[ग] की दवा की।

लेविन ने क्षमा मांग ली। किटी को जल्दी ही मालूम हो गया [कि] मैं ही भूल कर रही हूँ। इससे उसका चित्त और भी सरल हो गया। प[र] इसमें भी इस तरह के कलहों का अन्त नहीं हुआ। इन झगड़ों [का] प्रधान कारण यह भी था कि दो में से एक भी आवश्यक और अनावश्य[क] नहीं समझता था और गुस्सा आ जाता था। पर एक को गुस्से [में]

देख, दूसरा नरम पड़ जाता। इससे कलह न होता, कभी इतनी साध हने
बातों पर वे लड़ पड़ते कि मिलाप हो जाने पर, उन्हें यह भी पता नका
लगता कि इस झगड़े का क्या कारण था। हम लोग क्यों लड़े थे।
इतने अगाध प्रेम के रहते भी वैवाहिक जीवन का प्रथम चरण उनके
लिये कठिन समस्या थी।

प्रथम चरण की विषमता दोनों समझ रहे थे। कभी-कभी तो
वे देखते कि दोनों एक दूसरे से भिन्न मार्ग पर चले जा रहे हैं।
वैवाहिक जीवन का आरम्भिक समय तो बड़े संकट से बीता।
दो महीना प्रायः इसी तरह बीता। तीसरे महीने में कुछ सुधार
हुआ और उनका समय शान्ति से कटने लगा।

५

किटी को लेकर लेविन मास्को से अपनी छावनी पर चला आया।
यहाँ इनका समय सुख से बीतने लगा। लेविन कुर्सी पर बैठ कर
लिखना आरम्भ करता और किटी उसके पास ही पलंग पर लेटे-लेटे उसे
देखा करती। लेविन का सारा काम पहले की भाँति चलता था। कृषि-
सुधार संबंधी नई पुस्तक वह लिख रहा था, खेती-बारी का काम उसी
तरह जारी था। जिस तरह पहले वह इन कामों को गौण समझता था,
इसी तरह अब भी गौण समझता था। भेद केवल इतना हो गया था कि
उस समय जीवन की निराशा से इनकी तुलना थी, इस समय जीवन की
सुलझन से इनकी तुलना हो रही थी। पहले काम करने का एक विशेष
उद्देश्य था। उसे किसी न किसी तरह समय काटना पड़ता था। किन्तु

हृदय के उसका जीवन विष-मय हो जाता था। पर इस समय वह विला-
.ता से बचने के लिये काम करता था। दो चार पन्ने लिखकर वह रुक
जाता, उसे उठा कर पढ़ता और मन ही मन संतुष्ट होकर फिर आगे बढ़ता।
इस समय वह रूस की कृषि की दुरवस्था पर लिख रहा था। उसका मत
था कि—"रूस की दरिद्रता का यह कारण नहीं है कि भूमि का विभाजन
समता के साथ नहीं हुआ है। पर इसका प्रधान कारण बाहरी सभ्यता
का रूस में प्रचार है, जिसके कारण लोगों में विलासिता आ गई है,
लोग देहातों में रहना पसन्द नहीं करते। सब तरफ अस्त-व्यस्तता
आ गई है। किसी भी देश का वैभव तभी उन्नत हो सकता है, जब
खेती पर लोगों का विशेष ध्यान हो। उस देश की समृद्धि का विकाश
इसी हिसाब से होना चाहिये कि कृषि पीछे न पड़ जाय और कारखानों
का काम बढ़ जाय। जिस तरह कृषि की उन्नति हो, उस के हिसाब से
ही बाहर से सम्पर्क का साधन ठीक किया जाय। पर इस समय हमारी
अवस्था इतनी खराब होने पर भी राजनैतिक कारणों से इतनी अधिक
रेलों की लाइनें बिछा दी गई हैं। इसका परिणाम यह हो रहा है कि
कृषि का सुधार तो इनसे हो नहीं रहा है, उलटे कल-कारखानों की
वृद्धि कर ये कृषि को हानि पहुँचा रही हैं। इस एकतरफा विचार का
परिणाम यह होगा कि अन्य अङ्गों का विकास मारा जायगा।"

लेविन अपनी धुन में मस्त होकर लिख रहा था, उधर किटी बैठी
सोच रही थी—"उन्होंने प्रिंस चर्स्की का इतना आदर क्यों किया? उसने
मुझे ताना दिया था, वह मुझसे जलता है। यदि उसे मालूम हो जाता
कि मैं उसकी रत्ती भर भी परवा नहीं करती।"

"..." कह कर उसने लेविन की ओर देखा। लेविन उसी तरह

एकाग्र चित्त कागज पर झुका हुआ था। किटी अपने मनमें कहने लगी—"इस समय इन्हें छेड़ना तो उचित नहीं होगा। पर मैं उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना चाहती हूँ।"

यह सोच कर उसने जोरों से जम्हाई ली।

इसी समय लेविन कलम रोक कर आप ही आप बोल उठा—"कुछ नहीं, यह विभूति दिखौआ मात्र है।"

उसकी जम्हाई की आवाज लेविन के कानों में पड़ी। उसने घूमकर देखा किटी मेरी ओर ताक रही है और मुस्करा रही है। वह बोला—"क्या है?"

किटी—कुछ नहीं। मैं तुम्हारा ध्यान खींचना चाहती थी।

इतना कहकर किटी ने लेविन की ओर गौर से देखा। वह जानना चाहती थी कि इस बाधा से लेविन खिझला तो नहीं गया है।

लेविन—मुस्कराता हुआ अपनी जगह से उठा और उसके पास जा-कर बैठ गया। उसने कहा—"यहां एकान्तवास में भी हम लोग कितने सुखी हैं।"

किटी—यहां का सा सुख कहीं प्राप्त नहीं। मुझे तो यहां से कहीं भी जाने की इच्छा नहीं होती। खास कर मास्को......

लेविन—तुम अभी क्या सोच रही थीं?

किटी—मैं......कुछ नहीं, अपना काम करो। ख्याल हट जायगा तो पुस्तक बिगड़ जायगी।

लेविन—नहीं, तुम्हें कहना पड़ेगा।

किटी—मैं मास्को की बातें सोच रही थी।

लेविन ने किटी का आलिंगन किया और बोला—मैं ही इतना सुखी

क्यों हूँ। क्या यह अन्याय नहीं है ?

किटी—इसमें अन्याय की कौन सी बात है। उत्तमता प्रकृति का साधारण नियम है।

काम वहीं रुक गया। प्रेमालाप होने लगा। इतने में कोमा ने आकर खबर दी, चाय तैयार है। कोमा को आते देख दोनों अलग होकर सावधानी से बैठ गये।

लेविन—क्या वे लोग नगर से लौट आये ?

कोमा-अभी आये हैं। चीजें खोल-खोल कर रख रहे हैं।

किटी उठी और कमरे से बाहर हो गई। चलते-चलते उसने लेविन से कहा—"जल्दी आना नहीं तो मैं तुम्हारे सारे पत्र खोलकर पढ़ लूंगी।"

किटी के चले जाने पर लेविन ने पहले तो अपने लिखे कागज-पत्रों को सम्हाल कर रखा; फिर हाथ मुंह धोया। उसके हृदय में एकाएक कोई भाव उठा, जिससे उसका सिर नीचा हो गया। उसने अपने मन में कहा-"इस तरह कब तक चलेगा। तीन-तीन महीने बीत गये और मैं कुछ नहीं कर रहा हूँ। तीन महीने के बाद आज मैं काम करने बैठा; पर क्या किया ? साधारण काम-काज भी बन्द है। खेतों में क्या हो रहा है ? यह भी देखने में नहीं जाता। क्या करु, मैं उसे छोड़ कर कहीं जा भी नहीं सकता, क्यों कि अकेले उसका मन उदास हो जाता है। पहले मैं समझता था कि विवाह करने के बाद मनुष्य को गम्भीर होकर काम-काज करना पड़ता है; पर तीन महीने से मैं आलस्य में दिन काट रहा हूँ। यह तो उचित नहीं। मुझे अब काम करना चाहिये। पर इसमें उसका क्या दोष है। मुझे कड़ा होना चाहिये। मैं पुरुष हूँ। कुछ भी तो स्वतन्त्र प्रवृत्ति, काम करने की होनी चाहिये।

इस तरह से तो मैं यों ही बहता चला जाऊँगा और वह भी इसकी आदी हो जायगी।"

प्राय: देखने में आता है कि जब कभी मनुष्य अपने काम से असन्तुष्ट होता है तो वह अपना दोष किसी न किसी के माथे मढ़ना चाहता है। अधिकतर वह अपने निकटवाले के सिर पर ही सारा दोष मढ़ता है। लेविन ने भी यही किया। लेविन ने अपने मनमें कहा-"उसका दोष तो नहीं है; पर उसकी शिक्षा-दीक्षा का दोष तो अवश्य है। उसे हर समय कमरों के सजाने की चिन्ता पड़ी रहती है। जमींदारी, खेती, किसानों की चिन्ता, वह कभी नहीं करती। गाने-बजाने का भी वह नाम नहीं लेती। पढ़ने-लिखने की भी उसे इच्छा नहीं होती। आश्चर्य तो यह है कि कुछ न करते हुए भी, कभी वह परम सन्तुष्ट है।" लेविन इसी तरह की आलोचना और प्रत्यालोचना करता रहा। उसके ध्यान में यह बात क्षण भर के लिये भी न समाई कि किटी जो तैयारी कर रही है, उससे एक दिन वह सच्ची पत्नी, सच्ची गृहिणी के पद पर पहुँचेगी। किटी इस बात की आवश्यकता को समझती है, उसके लिये अपने को तैयार कर रही है। इस लिये उसे इस समय दोषी ठहराना उचित नहीं।

हाथ मुँह धोकर लेविन नीचे गया। किटी बैठ कर सामानों की जांच कर रही थी और टाली का खत पढ़ रही थी। अगाफिया को उसने अगोरने के लिये बैठा रखा था।

अगाफिया-(लेविन से हँस कर) आपने देखा ? मालकिन ने मुझे यह सब सामान अगोरने के लिये बैठा रखा है।

अगाफिया का हँसता चेहरा और उसकी बातों से लेविन को बड़ा सन्तोष हुआ। उसने देखा कि अन्त में किटी ने इसे भी

अपने प्रेमपाश में बाँध ही लिया।

किटी–(लेविन से) मैंने आपका यह पत्र खोल डाला था। पर मैंने इसे पढ़ा नहीं। शायद यह पत्र आपके भाई निकोले की पत्नी मेरिया ने लिखा है।

लेविन ने मेरिया का पत्र लिया और पढ़ने लगा। मेरिया ने एक पत्र लेविन के पास पहले भी लिखा था। उसमें उसने लिखा था–' कि बिना किसी अपराध के निकोले ने मुझे निकाल दिया है। मैं तकलीफ में हूँ फिर भी मैं आप से कुछ चाहती नहीं। मैंने यह पत्र केवल इस लिये लिखा है कि निकोले का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। बिना किसी सहायक के उन्हें बड़ी तकलीफ होगी। आप उनकी देख-रेख या उचित प्रबन्ध करें।" दूसरे पत्र में उसने लिखा था–"मास्को में निकोले से मुलाकात हुई। उन्होंने मुझे फिर रख लिया। उन्हें सरकारी नौकरी मिल गई। इससे मुझे लेकर वे उसी नगर में चले आये। यहाँ आकर अपने अफसर से लड़ गये। और नौकरी छोड़ कर फिर मास्को लौट रहे थे। रास्ते में ही बीमार हो गये। बचने की कोई आशा नहीं है। उनके पास इस समय एक कौड़ी भी नहीं है। होश आने पर आप का नाम लिया करते हैं।"

किटी प्रसन्न चित्त होकर डाली का खत लेविन को सुनाना चाहती थी; पर उसका गम्भीर और विकृत चेहरा देख कर वह रुक गई। उसने पूछा–"क्या बात है?"

लेविन–मेरिया ने लिखा है कि भाई निकोले सख्त बीमार हैं। बचने की कोई आशा नहीं है। मैं अभी उनके पास जाने के लिये [illegible] ।

किटी का चेहरा पीला पड़ गया। डाली की सभी बातें उसे उस समय भूल गईं। वह बोली—"मैं भी तुम्हारे साथ चलना चाहती हूँ।"

लेविन—(चिढ़ कर) क्या तुम समझती हो कि तुम्हारे चलने से कोई सुविधा होगी ?

किटी—आपत्ति क्या है ? मैं आपके काम में बाधक नहीं होऊँगी।

लेविन—मैं तो भाई की बीमारी का हाल सुन कर जा रहा हूँ। तुम क्या करोगी ?

किटी—क्या मेरा उनसे संबंध नहीं है ?

लेविन ने अपने मन में सोचा, किटी को इस समय भी अपने सुख की चिन्ता है। अकेले मनहूसियत में समय बीतेगा, इसी भय से वह चलने के लिये हठ कर रही है। इसके हृदय में जरा भी सहानुभूति नहीं है। इससे लेविन को बड़ा दुःख हुआ। उसने कहा—"फजूल है।"

अगाफिया ने देखा कि झगड़ा बढ़ रहा है। उसने प्याला टेबुल पर रख दिया और वहां से चली गई। लेविन के अन्तिम शब्द, उसके हृदय में बाण से लगे, उसने देखा कि लेविन को उसकी बातों पर विश्वास नहीं है। वह बोली—"मैं तुम्हारे साथ अवश्य चलूंगी। इसे तुम फजूल क्यों समझते हो ?"

लेविन—मुझे दर-दर मारा-मारा फिरना पड़ेगा। मैं उनकी सेवा करूँगा या तुम्हारी रखवाली ?

किटी—तुम्हें भ्रम है। मेरे विषय में तुम निश्चिन्त रहना। तुम्हें मेरे लिये ज़रा भी चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी।

लेविन—एक बात और है। वहां [illegible] है। तुम उनसे किस तरह मिलोगी ?

किटी-इस समय मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं है। मेरे ध्या में इस समय एक ही बात है कि मेरे पति के भाई बीमार हैं, उनक हालत अच्छी नहीं है। मेरे पति उनके पास जा रहे हैं। मेरा भी य कर्तव्य है कि मैं भी उनके साथ जाऊं।

लेविन—किटी ! क्रोध न करके क्षण भर विचार करो। मैं जानत हूँ कि यहां अकेले तुम्हारी तबीयत नहीं लगेगी; पर इस अवस्था में तु यह दुर्बलता दिखलाना उचित नहीं, यदि अनुचित न समझो तो त तक के लिये तुम मास्को चली जाओ।

किटी रो पड़ी। उसके दिल को कड़ी चोट लगी। उसने कहा-"तु सदा इसी तरह की ओछी कल्पना, मेरे संबंध में किया करते हो। मे हृदय में यह बात कभी नहीं थी। मेरे पति संकट में हैं। उनके सा रहना मेरा कर्तव्य है। पर तुम जान बूझ कर मुझे पीड़ा पहुँचाना चाहते हो।"

लेविन-क्रोध से उठ खड़ा हुआ। बोला यह गुलामी मुझे सह्य नहीं है, दूसरे ही क्षण उसने विचारा कि इससे तो मैं अपना ही पैर का रहा हूँ।

किटी-यदि यह बात थी तो तुम ने विवाह ही क्यों किया अविवा- हित रह कर, तुम सदा स्वच्छन्द रहते।

इतना कह कर वह उठी और बैटक में चली गई। किटी सि बांध कर रो रही थी। लेविन उसके पास गया।

लेविन उसे समझा बुझा कर तसल्ली देने लगा। पर किटी का रोना नहीं हुआ। बड़ी मुश्किल से लेविन ने किटी को राजी किया।

दूसरे दिन दोनों ने प्रस्थान किया। ऊपर से तो लेविन ने यद्यपि का

कि—"किटी मेरी सहायता के लिये ही जाने के लिये इतनी आतुर थी। और मेरिया के रहते भी उसका जाना कोई अनुचित बात नहीं है पर" मन में उसे सन्तोष नहीं था। उसे इस बात से भी दुःख था कि मैंने दृढ़ता से काम नहीं लिया। उसे इस बात से विशेष खेद था कि किटी ने मेरिया की उपस्थिति का जरा भी ख्याल नहीं किया। भला वह मेरिया के साथ एक ही कमरे में कैसे रहेगी ? इन सब बातों का ख्याल कर उसका हृदय विषाद और घृणा से भर गया।

६

जिस होटल में निकोले मरणशय्या पर पड़ा, अपनी अन्तिम घड़ी गिन रहा था, वह निहायत गन्दा था। भले आदमियों के ठहरने लायक एक भी कमरा उसमें नहीं था। किटी को लिये लेविन होटल में पहुँचा और एक कमरा किराये पर लेकर उतरा। लेविन मन ही मन कुढ़ रहा था कि—"यदि किटी मेरे साथ न होती तो मुझे यह सब झंझट न उठाना पड़ता। मैं सीधे भाई के पास जाता, उन की देख-रेख करता। नहीं तो पहले मुझे इनके आराम की व्यवस्था करनी होगी।" कमरे में दाखिल होते ही किटी ने कहा—"आप फौरन जाकर देखिये, उनकी क्या हालत है।"

लेविन कमरे से निकला। रास्ते में ही मेरिया से मुलाकात हो गई थी। लेविन की आवाज सुनकर मेरिया उसके पास आ रही थी। लेविन ने उससे पूछा—"भाई साहब की क्या हालत है ?"

मेरिया—बड़ी खराब ! हिल-डोल तक नहीं सकते। तुम्हारे ही लिये अब तक जी रहे हैं। क्या किटी को भी साथ लाये हो ?

लेविन नहीं समझ सका कि मेरिया की घबराहट का क्या कारण है ? इतने में मेरिया ने फिर कहा—"उन्हें मालूम हो गया है। किटी को वे जानते हैं। उन्हें बड़ी खुशी होगी। मैं नीचे रसोई घर में चली जाती हूँ।"

अब लेविन की समझ में सब बातें आईं। पर यह उसकी समझ में न आया कि क्या उत्तर दिया जाय ? वह बोला—"चलो उनके पास मुझे ले चलो।"

उसी समय कमरे का दरवाजा खोलकर किटी ने बाहर की ओर झांका। किटी की इस हरकत से लेविन को बड़ी लज्जा आई। शर्म से उसका चेहरा लाल हो गया। मेरिया तो शर्म के मारे गड़ गई। उसकी आंखों से आँसू निकल पड़े।

लेविन ने देखा, किटी विस्मय के साथ मेरिया को देख रही है। क्षणभर के बाद किटी ने पूछा—"उनकी क्या हाल है ?" पहले उसने लेविन की ओर देखा फिर मेरिया की ओर

लेविन—(क्रोध से) इस तरह रास्ते में खड़े होकर बात-चीत करने का कोई तरीका नहीं है।

किटी—तब सब कोई कमरे में चले आओ। (मेरिया से) अथवा उन्हें पहुँचा कर मेरे पास आना और मुझे भी ले चलना।

लेविन निकोले के कमरे में पहुंचा। उसे ऐसी आशा नहीं थी। जो कुछ उसने वहां देखा, दंग हो गया। उसे आशा थी कि निकोले उसी तरह लापरवाहों की भांति अपनी अन्तिम घड़ी गिन रहे होंगे, शरीर कांटा हो गया होगा; पर वहां की अवस्था एकदम भिन्न थी। [illegible] चारपाई पर पड़ा था। उसे सुध-बुध नहीं थी। एक बार

तो लेविन को विश्वास नहीं हुआ कि यह निकोले हैं। वह नजदीक
गया और उसका चेहरा खोलकर देखा, उसका सन्देह जाता रहा।
लेविन को घोर विषाद हुआ। निकोले की पुतली तनी थी, मानों वह
लेविन को धिक्कार रहा है। लेविन को अपनी विलासिता और सुख पर
बड़ा खेद हुआ।

लेविन ने निकोले का हाथ उठा कर अपने हाथ में रख लिया।
निकोले के होठों पर सूखी हँसी आ गई। पर चेहरे के लक्षण ज्यों
के त्यों बने रहे।

लेविन बोलना चाहता था, पर उसकी समझ में नहीं आया कि
क्या कहे। निकोले भी चुप था, केवल अनिमेष दृष्टि से लेविन का चेहरा
देख रहा था मानो उसके हृदय के भीतरी भावों को जानना चाहता है।
अन्त में लेविन ने कहा—"किटी भी साथ आई है।"

निकोले—अच्छा हुआ; पर मेरी अवस्था देखकर कहीं वह घबरा न
जाय। क्षण भर दोनों भाई चुप रहे। निकोले ने करवट बदला और कुछ
कहने लगा। उसने डाक्टर की शिकायत की, यहां कोई अच्छा
डाक्टर भी नहीं है।

लेविन ने देखा कि निकोले को अभी भी जीवन की आशा है।
लेविन का हृदय विषाद से भर गया था। क्षण भर के लिये वह शान्ति
चाहता था। इससे वह उठा और बोला—"मैं जाकर किटीको लाता हूँ।"

निकोले—अच्छी बात है। पर कमरा बड़ा गंदा है। मेरिया, जरा साफ
कर दो। और तुम यहां से चली जाओ।

इतना कहकर निकोले ने सन्देह दृष्टि से लेविन की ओर देखा।
लेविन चुप था। वह डरता था, अपनी पत्नी को लाने; पर उसके

हृदय में जो आंदोलन उठ खड़ा हुआ, उससे उसने यही स्थिर किया कि किटी को समझादूँगा कि यहां मत जाओ। मैं तो यह यातना भोग ही रहा हूँ। उसे इस संकट में क्यों डालूँ।

यही सोचता-विचारता लेविन अपने कमरे में पहुँचा। किटी ने पूछा-"तुम्हारे भाई की क्या हालत है।"

लेविन-हालत तो बड़ी खराब है।

किटी क्षण भर चुप रही। उसने लेविन के हाथों में हाथ डालकर कहा-"प्रियतम! एक बार मुझे उनके पास ले चलो। यहां आकर उन्हें न देखना मेरे लिये अति कष्टकर होगा। शायद मैं उनकी कुछ सेवा कर सकूँ। यदि ऐसा ही हो तो मुझे पहुंचा कर तुम वहां से चले आना।"

उन शब्दों को किटी ने इतनी दीनता और व्यग्रता से कहा, मानो इसी पर उसका जीवन अवलम्बित है।

लेविन विवश हो गया। मेरिया की बात भूल गया, किटी को लेकर निकोले के पास पहुंचा?

दबे पांव, किटी ने लेविन के साथ निकोले के कमरे में प्रवेश किया और द्वार बंद कर दिया। निकोले के बिछौनेके पास खड़ी होकर उसने उनकी अवस्था देखी, अपने मुलायम हाथों को निकोले के बदन पर फेरा और प्रेम से बातें करने लगी। सोडनमें मैंने आपको देखा था; पर उस समय कौन समझता था कि मैं आपकी अनुजवधू होऊँगी।

निकोले—(मुस्करा कर) तुमने तो मुझे इस समय पहचान भी न सकी होगी।

—क्यों नहीं, एक दिन भी बिना आपकी चर्चा के नहीं

बीतता था। (लेविन की ओर इशारा करके) ये रोज आपकी चर्चा करते थे।

इतने में किटी ने देखा कि निकोले का चेहरा पीला पड़ गया। मृत्यु की छाया उसके चेहरे पर दिखाई देने लगी। किटी बोली—"इस कमरे में आपको तकलीफ है।"

इतना कहकर उसने कमरे में चारों ओर देखा और लेविन से कहा—"कहीं नजदीक कोई कमरा ठीक कर लिया जाता तो बड़ी सुविधा होती।"

७

लेविन अपने भाई की शोचनीय दशा पर विशेष दत्तचित्त नहीं था। उसके सामने उसका चित्त टिकाने नहीं रहता था। उसके सामने जाकर उसकी चेतना इतनी बिगड़ जाती कि वह उनकी शोचनीय दशा को समझ तक नहीं सकता था। कमरे की बदबू से उसका दिमाग खराब हो जाता, उसकी कराहें सुन कर वह घबरा जाता, उसने समझ लिया था कि इनकी कोई दवा नहीं हो सकती। रोग का निदान करा कर असली दशा का पता लगाना उसने बेकार समझा। उसका ध्यान इस बात पर भी न गया कि जिस चारपाई पर निकोले पड़ा है, उस पर शरीर भी ठिकाने से नहीं रह सकता। यदि वह बच नहीं सकता तो क्या उसे आराम भी नहीं दिया जा सकता। पर जब इस बात पर उसने गौर किया तो उसका खून सूख गया। उसे पक्का विश्वास था कि बड़ा से बड़ा डाक्टर भी इसे आराम नहीं कर सकता। लेविन की यह धारणा और कुछ न करने के भाव निकोले के हृदय में बड़ी वेदना पहुँचाने लगे। लेविन से यह

बात छिपी न रही। इससे उसका दुःख और भी बढ़ गया। निकोले के कमरे में रहना मौत था, पर वहां न रहना उससे भी खराब था। इससे अनेक तरह का बहाना कर वह कमरे से बाहर जाता और लौट आता था।

पर किटी ने अवस्था देखते ही उपचार आरम्भ कर दिया। निकोले की दशा पर उसे बड़ी दया आई, उसके हृदय में घृणा था, किन्तु भय के भाव नहीं आये। उसने रोग का निदान कर तुरन्त दवा करने का विचार किया। उसने तुरन्त प्रबन्ध किया। जिन बातों को देख कर लेविन घबड़ा गया था, उन्हीं की उसने व्यवस्था करनी चाही। उसने डाक्टर बुलाने के लिये आदमी भेजा और अपनी दाई तथा मेरिया की सहायता से कमरा साफ करवाने लगी। कितनी ही अनावश्यक चीजों को उसने कमरे में से हटाया और कितनी ही चीजें उसने मंगवा कर उसमें रख दिया। अपने कमरे से उसने साफ चद्दरा, तकिया और तौलिया आदि लाकर रख दिया।

होटल के वेटर को उसने कई बार बुलाया और काम सहेजा। वह कुढ़ कर आता; पर किटी की बातों को टालने का साहस नहीं करता। लेविन यह सब फजूल समझता। अपने मनमें वह कहता—"इन सबसे क्या हो सकता है।" साथ ही उसे इस बात का भी भय लगा रहता कि कहीं रोगी चिढ़ न जाय। पर निकोले ने एक बार भी कुछ नहीं कहा। जिस समय लेविन डाक्टर के पास से लौटा किटी निकोले का बिछौना बदल रही थी। किटी के कहने से मेरिया और दाई दोनों मिल कर निकोले की कमीज उतार रही थीं; पर वह नहीं उतरती थी।

[illegible] कहा—"जल्दी करो।"

इतना कह वह निकोले की तरफ बढ़ी।

निकोले (घबड़ा कर) तुम इधर मत आओ। मैं उतार लेता हूँ।

किटी ने देखा कि निकोले को मेरे सामने नंगे बदन होने में शर्म मालूम होती है। वह बोली—"मैं आपकी तरफ नहीं देख रही हूँ।" (लेविन से) मेरे बैग में एक छोटी शीशी है, उसे लेते आओ।

लेविन शीशी लेकर लौट आया। तब तक निकोले का कपड़ा बदल कर, उसे फिर आराम से सुला दिया गया था। कमरे की गन्दगी हटा दी गई थी। गर्द का कहीं नाम-निशान नहीं था। टेबुल पर दवा की शीशियां सजा कर रख दी गई थीं। कपड़ा बदल देने से रोगी की अवस्था एक दम बदल गई थी। आशा के लक्षण उसमें दिखाई देने लगे थे। वह कृतज्ञता पूर्ण नेत्रों से किटी की ओर देख रहा था।

लेविन जिस डाक्टर को लाया, उसने निकोले की दवा नहीं की थी। डाक्टर ने रोगी की हालत देखी, दवा दी, अनुपान बतलाया, डाक्टर के चले जाने पर निकोले ने लेविन से कुछ कहा। उसकी आवाज इतनी धीमी थी कि लेविन ने केवल इतना सुन सका—"तुम्हारी किटी।" लेविन ने समझा कि निकोले किटी की प्रशंसा कर रहा है।

उसने कहा—"मैं अब बहुत अच्छा हूँ। तुम्हारे साथ मैं बड़े मजे में दिन काटता।" उसने किटी का हाथ पकड़ लिया। वह बोला—"मेरी करवट फेर कर तुम लोग सो रहो।

उसने जो कुछ कहा, सिवा किटी के और कोई नहीं समझ सका। किटी ने लेविन से कहा—"इनकी करवट बदल दीजिये। दाएँ करवट इन्हें सोने की आदत है।"

बड़ी कठिनाई से लेविन ने अपने भाई के इस जीर्ण-शीर्ण शरीर को

उठाया और बायें करवट कर दिया।

निकोले ने लेविन का हाथ अपने हाथ में लेकर अपनी ओर खींचा। धीरे-धीरे उसे अपने मुँह की ओर ले गया और उसे चूम लिया। लेविन के मुँह से कोई शब्द नहीं निकला। वह कमरे से बाहर चला गया।

८

उस दिन लेविन की विचित्र दशा थी। बाइबिल के यह वाक्य बार-बार उसके ध्यान में आते—"तूने विद्वानों और बुद्धिमानों से यह बात छिपा रखी है, पर अनजान लोगों को यह पाठ पढ़ा दिया है।"

लेविन—अपने को 'विद्वान् और बुद्धिमान' नहीं समझता था; पर इतना तो वह अवश्य जानता था कि किटी और अगाफिया दोनों से उसकी समझ अच्छी है। वह यह भी समझता था कि जिस समय मौत की चिन्ता करता था, मैं अपनी बुद्धि का पूर्णतया प्रयोग करता था इसके अतिरिक्त इस संबंध में उसने अनेक अन्य विद्वानों का भी म पढ़ा था। पर इस समय उसने प्रत्यक्ष देखा कि इस विषय को जितन किटी और अगाफिया ने समझा है, और लोगों ने नहीं समझा है किटी और अगाफिया जीवन-मरण के प्रश्न को भली-भाँति समझ हैं। यद्यपि दोनों में से एक भी लेविन की समस्या को हल नहीं क सकती थीं फिर भी दोनों को इसका विशेष ज्ञान था। मृत्युशय्या पर प निकोले की सेवा शुश्रूषा का भार, उन्होंने बिना किसी डर भय के लिया था, यही उनके बोध का पर्याप्त प्रमाण था। लेविन तथा उसी त

आदमी लम्बी-चौड़ी व्याख्या भले ही कर देते; पर वे उ

बारे में कुछ भी नहीं जानते थे, क्यों कि वे उसके नाम से ही डरते थे और किसी को मरते देख उन की बुद्धि चक्कर खाने लगती थी और वे उसका उपचार नहीं कर सकते थे। अगर आज लेविन अकेला होता तो वह डरके मारे घबड़ा गया होता और उससे किये-कराये कुछ न बन पड़ता। इस के अतिरिक्त उसकी बुद्धिमें यह भी नहीं समाता था कि ऐसे समय क्या कहा जाय। बाहर की बातें करना वाहियात था, चुपचाप रहना और भी खराब था। यदि रोगी की ओर गौर से देखा जाय तो वह समझेगा कि मेरी जांच कर रहा है। यदि उसकी ओर से आंखें फेर ली जायँ तो वह समझेगा कि कहां तो मैं मर रहा हूँ और कहां यह न जाने क्या-क्या सोच रहा है। पर किटी के मन में यह सब बातें नहीं थीं। वह निकोले को हर बार देखती, उससे दिल की हालत पूछती, यह कह कर ढाढस देती कि—"अनेक ऐसे रोगी अच्छे हो गये हैं, आप भी अच्छे हो जायंगे।" केवल शारीरिक चिकित्सा पर ध्यान न देकर मानसिक शान्ति की भी दोनों ख्याल रखतीं। तरह-तरह की बातें कहतीं, जिससे रात्रि को मानसिक यन्त्राण न हो।

रात को जिस समय लेविन अपने कमरे में लौटा, उसकी विचित्र दशा थी। खाने-पीने या सोने की उसे कुछ भी फ़िक्र नहीं थी। वह मारे शर्म के सिर नीचा किये बैठा रहा। उसने किटी से बात तक नहीं की। किटी रोज़ से अधिक प्रसन्न थी। उसने भोजन मंगाया, अपने हाथों असबाब खोला, बिछौना लगाया। रोग की साधारण बातों में से उसने एक भी नहीं छोड़ा। उसके शरीर में प्राण नहीं स्फूर्ति थी, वही देख था जो संग्राम के समय आ जाती है। इस समय जीवन मरण की प्रौढ़ावस्था में आदमी पर दिखला देना चाहता है कि मैंने अपना

जीवन व्यर्थ नहीं बिताया है। आज तक मैं केवल इसी दिन के लि सारी तैयारियां कर रहा था।

लेविन ने देखा कि उसने झट-पट सब काम कर डाला बिछौना ल दिया शीशा कंघी, ब्रश, मंजन, साबुन, तेल, सभी चीजें उसने ठी ठिकाने रख दी। होटल का कमरा घर की बैठक के समान होगया।

लेविन अब तक चुप था। उसे न भोजन करने के लिये उठने क साहस होता न बोलने का साहस होता था और न सोने जाने का ही सा हस होता था। अपना प्रत्येक आचरण उसे खटकता था।

दोनों में से किसी ने भोजन नहीं किया और न विस्तरे पर ही गये

शीशे के सामने खड़ी होकर बालों को सँवारती हुई किटी ने कहा "किसी न किसी तरह मैंने उन्हें राजी कर लिया है। कल वे संस्क लेंगे मैंने कभी देखा नहीं है, पर मां कहती थीं कि आरोग्य-लाभ के लियेइस तरह के पूजा-पाठ होते हैं।

लेविन—(किटी के घूंघरवाले बालों की ओर देखकर) क्या तुम समझती हो कि वे अच्छे हो जायँगे ?

किटी—मैंने डाक्टर से पूछा था। उन्होंने कहा—"तीन दिन से अधिक नहीं जी सकते; पर इसका क्या ठिकाना। चाहे जो हो, वे राजी तो होगये। धर्म से क्या नहीं हो सकता।

इतना कहते-कहते उसके चेहरे का रंग विचित्र तरह का होगया। जब कभी वह धर्म की चर्चा करती, उसके चेहरे का रंग सदा इसी तरह का हो जाता।

सगाई के समय दोनों में धर्म की चर्चा हुई थी। उसके बाद इस े किसी ने नहीं उठाया था। किटी अपनी नित्यक्रिया सद

सच्चे हृदय से करती। वह गिरजे में जाती, प्रार्थना करती और यह सब वह अवश्यक समझती। लेविन की धारणा सदा इन सब बातों के प्रतिकूल रहती तो भी वह सदा उसे अपने ही समान सच्चा ईसाई समझती। उसका ख्याल था कि धर्म के संबंध में लेविन जो कुछ कहता है, वह उसका ऊपरी भाव है।

लेविन—बिचारी मेरिया कुछ बन्दोबस्त नहीं कर सकती थी। तुम न आई होतीं तो बड़ी कठिनाई में मैं पड़ जाती, तुम इतनी........

इसके आगे वह कुछ नहीं कह सका। उसका हाथ पकड़ कर उसने अपनी ओर खींचा और सतृष्ण नेत्रों से उसके चेहरे को निहारने लगा। इस विपत्ति में प्यार करना उसने उचित नहीं समझा।

किटी—यहां अकेले तुम्हें बड़ा कष्ट होता। मैं भी तो कुछ नहीं जानती थी। भाग्यवश सोडन में मुझे इसकी थोड़ी शिक्षा मिली थी। (घड़ी देख कर) एक बज रहा है। चलो सोने चलें।

६

दूसरे दिन रोगी को संकल्प दिया गया। ईसा-मसीह की मूर्ति सामने टेबुल पर रख दी गई और कपड़े से ढक दी गई। निकोले ने गद्गद हृदय से प्रभु की प्रार्थना की। लेविन इसे अपनी आंखों से न देख सका। लेविन ने देखा कि इस तरह इस जीवन का मोह इसे बढ़ता जा रहा है और मरते समय इसे अधिक यन्त्रणा होगी। निकोले की वास्तविक दशा से लेविन भलीभांति परिचित था। निकोले के धार्मिक विश्वास की शिथिलता का यह कारण नहीं था कि इससे उसका दैनिक जीवन आनन्द से

कटता था, बल्कि प्राकृतिक विकासवाद से धर्मपर धक्का पहुंच रहा था इसलिये इसकी वर्तमान धार्मिक प्रेरणा, उसके आन्तरिक विश्वास क फल नहीं था, बल्कि बाहरी कल्पना जो पुनः जी उठने की आशा स जागृत हो उठी थी। अनेक रोगियों के अच्छे होने का उदाहरण देकर कि ने उसकी आशा और भी जागृत कर दी थी। इसीसे आशापूर्ण नेत्रों से प्रार्थना करते देख लेविन को बड़ा कष्ट हुआ।

लेविन ने अपने साधारण विश्वास के अनुसार कहा—"ईश्वर! यदि तू वास्तव में कोई चीज है तो इस रोगी को पुनः स्वास्थ्य प्रदान कर।"

इसके बाद ही निकोले की दशा बहुत कुछ सुधर गई। खाँसी में कमी दिखाई देने लगी। दर्द कम हो गया, शरीर में ताकत मालूम होने लगी और साथ ही भूख भी लगी। पथ्य लेने के समय वह आप ही आप उठ भी बैठा। उसकी बीमारी बिगड़ गई थी। किसी को भी आशा नहीं थी कि यह फिर उठ बैठेगा। पर उसकी यह दशा देख कर दोनों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा, यद्यपि दोनों को भय बना हुआ था।

लेकिन यह धोखे की टट्टी अधिक काल तक नहीं टिक सकी। पथ्य लेकर रोगी सो गया। आधे घंटे के बाद खाँसी का वेग उभड़ा। इस समय खाँसी ने जो उग्र रूप धारण किया, उसे देख कर सारी आशा जाती रही।

इस समय रोगी के चेहरे से साफ प्रगट होता था कि घंटा भर पहले, उसने जो कुछ किया था, उसके लिये उसके हृदय में पश्चाताप था। उसने लेविन से कहा—"किटी कहां है, मैंने उसी के कहने से यह तमाशा किया। उसका चेहरा कितना प्यारा है। पर हम लोग आ[illegible] नहीं दे सकते।"

रात को आठ बज गये थे। लेविन और किटी अपने कमरे में बैठ कर चाय पी रहे थे। इसी समय मेरिया दौड़ी हुई, उनके पास गई। वह घबड़ाई हुई थी। उसका चेहरा पीला पड़ गया था। उसने रोकर कहा—"उनका अंत समय आ गया। अब एक मिनिट की भी देरी नहीं है।"

दोनों निकोले के कमरे की ओर दौड़ पड़े। वह अपने हाथों के सहारे विस्तरे पर बैठा था। उसका सिर झुका था।

लेविन (धीरे से) आपकी तबीयत कैसी है?

निकोले—मैं समझता हूँ, अब अन्त होना ही चाहता है। किटी को यहां से इस समय हटा दो। लेविन ने इशारे से किटी से चले जाने के लिये कहा।

मेरिया (उसके पास जाकर) आप लेट रहिये।

निकोले—वह समय भी आना ही चाहता है। जब मेरा प्राण निकल जाय तो तुम लोग जिस तरह चाहना मुझे लेटा देना।

लेविन ने निकोले को सुला दिया, आप उसके पास बैठ गया और उसकी सांस देखने लगा। निकोले आंखें बन्द करके पड़ा रहा; पर रह रह कर उसके ललाट पर शिकन आ जाती, मानों उसे आन्तरिक वेदना हो रही है। लेविन समझता था कि यह वेदना किसलिये है। निकोले छटपटाने लगा......एक मिनिट ठहरो!......ठीक है......ईश्वर......इतना कह कर उसने ठण्डी सांस ली।

मेरिया ने उसके पैर छूकर देखा, वे ठंडे होते जा रहे थे।

निकोले अचेत पड़ा था, पर जीवन अभी शेष था। वह रह-रह कर ठंडी सांसें भरता। लेविन बैठे-बैठे घबड़ा गया। उसका दिमाग चकराने लगा, वह विचार करने लगा कि निकोले ने "ठीक" किस बात में

लिये कहा; पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। उस समय उसने मरण की समस्या पर भी विचार नहीं किया जाता था। पर प्रेरणा के विना ही अनेक तरह के ख्याल उसके दिल में उठने लगे, जैसे रोगी को कफन पहनाना होगा, उसे दफनाना होगा आदि। इस समय उसकी विचित्र दशा थी। संकट, दुःख, हानि, दया सब उससे दूर हो गये थे। केवल एक डाह का भाव उसके हृदय में वर्तमान था कि मेरा भाई जो कुछ ज्ञान रखता है; मैं नहीं रखता।

लेविन घंटों निकोले के पास बैठा, उसकी मृत्यु की प्रतीक्षा करता रहा; पर मृत्यु नहीं आई। दरवाजा खुला और किटी ने कमरे में प्रवेश किया। लेविन उसे रोकने के लिये उठा। पर उसी समय रोगी हिला और उसने कहा—"मेरे पास से मत हटो।"

इतना कह कर उसने अपना हाथ आगे बढ़ाया। लेविन ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और किटी को चले जाने का इशारा किया।

अपने हाथ में रोगी का हाथ लिए लेविन घंटों बैठा रहा। उसे इस समय मृत्यु का ख्याल नहीं था। वह सोच रहा था—"उसने में किटी अकेली क्या करती होगी। बगल वाले कमरे में कौन रहता है। डाक्टर का निजका घर है या किराये का।" इसके अलावा उसे भूख और नींद ने भी बुरी तरह सताया था। धीरे-धीरे उसने अपना हाथ हटाया और पैर छूआ। पैर ठंढा था; पर सांस चल रही थी। लेविन ने बाहर जाना चाहा; पर रोगी ने फिर भी रोक कर कहा—"कहीं मत जाओ।"

सबेरा हो गया। रोगी की दशा ज्यों की त्यों बनी रही। लेविन वहां से उठा और सोने चला गया। जिस समय वह सोकर उठा, ... अवस्था सुधर गई थी। पर इस समय उसमें चिड़चिड़ापन

अधिक आ गया था। जो कोई सामने आता उसी पर वह बिगड़ जाता। कोई भी उसे शांत नहीं कर सका। अगर कोई उसकी तबीयत का हाल पूछता तो वह एक ही उत्तर देता—"मेरी हालत बहुत खराब है।"

बिस्तरे पर पड़े-पड़े उसकी पीठ पक गई। इससे। उसकी तकलीफ और भी बढ़ गई थी। किटी ने उसे शांत करने का अनेक तरह से प्रयत्न किया; पर सब व्यर्थ था। मृत्यु की छाया उसके चेहरे पर नाच रही थी। सब कोई हृदय से यही चाहते थे कि वह अब मर जाय तो अच्छा। लेकिन दवा का क्रम बन्द नहीं था।

लेविन इन दोनों भाइयों में मेल कराने के लिये बहुत दिनों से यत्न कर रहा था। इसीलिये उसने कोनिशे को पत्र लिखा था। कोनिशे ने जो उत्तर दिया था, उसको वह रोगी को सुनाने लगा। कोनिशे ने लिखा था—"इस समय मैं आने में सर्वथा असमर्थ हूं। मैं विनीत होकर फिर क्षमा चाहता हूं। आशा है, निकोले इस अन्तिम समय मुझे क्षमा कर देंगे।"

निकोले ने पत्र सुना, पर कुछ कहा नहीं।

लेविन—क्या उत्तर दे दूं? मैं समझता हूं, इस समय तो आप उनसे क्रुद्ध न होंगे?

निकोले—नहीं, जरा भी नहीं। उन्हें लिख दो कि कोई अच्छा चतुर डाक्टर भेज दें।

दसवें दिन किटी की तबीयत एका-एक खराब हो गई। उसे साधारण ज्वर था और सिर में दर्द था।

डाक्टर ने कहा—परीशानी के कारण ज्वर आ गया है। पूरा आराम दिया जाय।

भोजन के बाद किटी बिछौने से उठी और रोगी के पास गई। पूछा—"आप की तबीयत कैसी है ?"

निकोले—भीषण वेदना सह रहा हूँ। अंग प्रत्यंग में दर्द हो रहा है।

मेरिया—आज सभी दुःखों का अन्त हो जायगा।

यह बात मेरिया ने धीरे से कहा था, पर निकोले ने सुन लिया, किंतु इसका उस पर कोई असर नहीं पड़ा।

लेविन—(एकान्त में) तुम ऐसा कैसे कहती हो ?

मेरिया—उन्हें बाई हो गई है। रह-रह कर हाथ फैलाते हैं मानों कोई वस्तु नोच रहे हों।

मेरिया की बात सच निकली। रात के अन्तिम भाग में रोगी की दशा एक दम बिगड़ गई, वह हिल-डोल नहीं सकता था। उसकी आँखें उलट गईं। किटी ने पादरी को बुलवाया।

पादरी बाइबिल पढ़ने लगा। लेविन, किटी, और मेरिया चारपाई के सामने हाथ जोड़ कर खड़े थे। रोगी ने एक बार आंखें खोलीं और बन्द कर लीं।

प्रार्थना समाप्त हुई। पादरी ने क्रास उसकी छाती पर रखा। उसके हाथों को स्पर्श किया। वे ठंडे थे।

लेविन के शोक का अन्त नहीं था। मृत्यु की विभीषिका फिर ...ने उसी तरह नाचने लगी जिस तरह इस समय ने उसे उन

समय सताया था, जिस समय निकोले उसके पास गया था। लेकिन इस समय भी मरणरहस्य, उसकी समझ में नहीं आया; पर उसकी वेदना और भी भीषण हो गई। भाग्यवश किटी लेविन के साथ थी। इस लिये निराशा ने उसे अपना शिकार नहीं बनाया। मृत्यु के भय के समय उसे जीवन और प्रेम की पिपासा शेष रही। प्रेम ही के भरोसे वह जीता रहा और मृत्यु की समस्या वह हल ही नहीं कर पाया था कि दूसरी समस्या उपस्थित हो गई। यह समस्या थी जीने और प्यार करने की।

किटी की बीमारी दूर नहीं हुई थी। डाक्टर ने देखा और कहा—"किटी गर्भवती है, इसे दूसरी कोई बीमारी नहीं है।"

१०

बेत्सी तथा अब्लान्स्की की बातचीत से अलक्से को यह विदित हुआ कि उसे अपनी पत्नी का त्याग कर देना ही उत्तम होगा तथा अन्ना भी यही चाहती है, वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। उसकी समझ में नहीं आया कि क्या करना चाहिये। जो लोग खैरख्वाह बन कर उसके काम में दखल देते रहे, उनकी इच्छा के अनुकूल वह सदा आचरण करता गया। उसे तब तक कोई [illegible] नहीं था। जिस दिन अन्ना ने व्रंस्की के साथ रास्ता लिया और अलक्से को इसकी सूचना मिली, उस दिन उसे अपनी स्थिति की असलियत का पता लगा। वह डर के मारे कांप उठा। जिस दिन अन्ना ने अपने प्रेम की [illegible] उससे की थी, उसी दिन-रात वह उससे अलग हो गई होती तो—उसे

कष्ट हुआ होता, वेदना हुई होती, विषाद हुआ होता, पर उसे निरा न होना पड़ता। लेकिन अन्ना की बीमारी के साथ की विडम्बनाओं के बाद, इस घटना का घटना नितान्त दारुण था, असहनीय था। अल को कहीं भी इसकी समता नहीं मिली। पापिनी भार्या को उसने क्षमा कर दिया। दूसरे के वीर्य से उत्पन्न बच्ची से उसने ममता जोड़ी और उसका परिणाम क्या निकला। आज लोग उस पर हँस रहे हैं, अंगुलियां उठा रहे हैं, घृणा की दृष्टि से देख रहे हैं और तरह-तरह की अफवाहें उड़ा रहे हैं।

अन्ना रंस्की के साथ निकल गई। पहले दिन अलक्ले ने बड़ी वीरता से काम लिया। सब काम सदा की भांति करता रहा। उसी तरह से लोगों से मिलता-जुलता, उसी तरह काम करता जो कोई कुछ पूछता, उसका उसी तरह उत्तर देता, मानों कोई असाधारण घटना घटी ही नहीं है; पर दूसरे दिन दरजी एक पुरजा चुकाने के लिये आया, जिसे अन्ना चुकाना भूल गई थी, उसे देखकर उसका शोक उमड़ आया, उसने दरजी को बुलवा भेजा।

दरजी—सरकार क्षमा करें। विवश होकर आपको को कष्ट देना पड़ा। यदि श्रीमतीजी का पता मिल जाय तो मैं उन्हीं के नाम पुरजा भेज दूँ।

अलक्ले ने कातर नेत्रों से दरजी की ओर देखा, फिर आंखें बंद कर कुर्सी पर बैठ गया। कई बार उसने बोलने का साहस किया; पर कुछ बोल न सका। नौकर ने अपने मालिक की यह दीन अवस्था देख कर दरजी से कहा—"इस समय चले जाओ; किसी दूसरे समय आना।"

चला गया। अलक्ले ने नौकर से कहा—"गाड़ी लौटा दो,

कमरे का दरवाजा बन्द कर दो। यदि कोई मिलने आवे तो कह देना तबीयत ठीक नहीं है, नहीं मिल सकते।"

उस दो दिन में अलक्ले ने जिस किसी से मुलाकात की, उसने देखा सब के चेहरे पर घृणा का चिह्न वर्तमान था। एक तरफ तो शोकके वेग से उसका हृदय फटा जा रहा था, दूसरी ओर लोगों का यह निर्घृण व्यापार उसे और भी कष्टमय होता जा रहा था। इसलिये उसने लोगों से मिलना-जुलना बन्द कर देना ही अपने उद्धार का एक मात्र रास्ता समझा। दो दिन तो उसने इसी तरह काटा; पर तीसरे दिन उसे यह संघर्ष असह्य हो गया।

उसने सोचा—"हा! मैं ही एक अभागा हूं, जिसे इस तरह की विषम वेदना भोगनी पड़ती है।"

इस समय समस्त पीटर्सवर्ग में एक भी ऐसा आदमी नहीं है, जिससे वह अपनी वेदना का हाल कह कर दुःख का भार हलका करे। आज संसार उससे विमुख हो रहा था।

छोटी अवस्था में ही अलक्ले के पिता-माता का देहान्त हो गया था। अलक्ले दो भाई थे। पिताजी थोड़ी सम्पत्ति भी छोड़ गये थे। इसके चचा ने पाला-पोसा और बड़ा किया था। पढ़ने में अलक्ले बड़ा ही तेज था। स्कूल और कालेज दोनों ही पढ़ाई में इसे तमगे मिले थे। चचा की इसके ऊपर बड़ी कृपा थी। उन्हीं की सहायता से अलक्ले को भी अच्छी नौकरी मिल गई। इसी समय से अलक्ले ने राजनीति में प्रवेश किया और तन-मन से लगा रहा। अलक्ले की घनिष्ठता कभी भी किसी से नहीं हुई, छोटे भाइयों से प्रगाढ़ प्रेम था; पर भाई वैदेशिक कर्मी था और सदा बाहर ही रहता था। अलक्ले के विवाह के थोड़े ही दिन

बाद उसने इस लोक से यात्रा भी कर दी थी।

जिस समय अलक्ले किसी प्रान्त का शासक था, अन्ना की चाची अन्ना के साथ इसकी शादी का यत्न किया। अलक्ले की अवस्था उ समय ३४ वर्ष की थी। अलक्ले इस विवाह से सहमत नहीं था। प अन्ना की चाची ने इसपर इतना दबाव डाला कि अन्त में इसे लाचार हो पाणिग्रहण करना पड़ा। पाणिग्रहण के बाद उसने सच्चे पति का प्रे दिखलाया और अन्ना की काफी खातिरदारी करता रहा। पति-पत्न का प्रेम इतना घनिष्ट था कि उसे किसी अन्य की शरण जाने की इच्छ नहीं हुई और आज उसका संसार सूना था। जान-पहचान उस सैकड़ों से थी; पर वह किसी को अपना मित्र नहीं कह सकता था। ऐ सैकड़ों आदमी थे, जिनके साथ वह भोजन कर सकता था, सार्वजनि कामों में सहायता ले सकता था, पर ऐसे लोगों का संबंध वहीं तक परिमि था। अलक्ले का एक सहपाठी था। उससे घनिष्टता बाद को हो गई थ पर इस समय वह भी रूसके शिक्षाविभाग में काम कर रहा था। पी संवर्ग में उसके दो ही मित्र थे, डाक्टर और उसका प्रधान मन्त्री।

अलक्ले का मन्त्री मिहल समझदार, चतुर और दयालु व्यक्ति थ पांच वर्षों से वह अलक्ले के अधीन काम कर रहा था, इसमें अल अपना हृदय उसके सामने नहीं खोल सकता था। जब कभी वह काग पत्र लेकर आता, अलक्ले हस्ताक्षर करने के बाद उसके चेहरे की अ देखता, उससे कुछ कहना चाहता; पर उसकी जबान नहीं खुलती। व उससे कहना चाहता था कि—"तुमने मेरी विपत्ति-कथा तो सुनी होगी" पर उसकी जबान रुक जाती और यही कह कर समाप्त करता "[illegible] काम मेरे लिये किये रहना।"

डाक्टर भी अलक्ले से बड़ी सहानुभूति रखता; पर दोनों के ऊपर काम का इतना अधिक भार रहता था कि किसी को इतनी फुरसत नहीं मिलती कि वे एक दूसरे के पास बैठ कर कुछ समय तक बात-चीत करें।

इन दोनों के अतिरिक्त एक तीसरा व्यक्ति भी था, जिसे अलक्ले का बहुत ख्याल था। यह व्यक्ति एक रमणी थी। इसका नाम कौंटेस लीडिया था। इस विपत्ति के समय अलक्ले को लीडिया का स्मरण नहीं रहा; पर लीडिया अलक्ले को भूलनेवाली नहीं थी।

लीडिया के लिये अलक्ले के घर में कोई रोक-टोक नहीं थी। उसके लिये दरवाजा हर वक्त खुला रहता था। उस दिन लीडिया सीधे अलक्ले की बैठक में चली गई, उसने देखा अलक्ले दोनों हथेलियों से मुंह ढंक कर उदास बैठा है। वह बोली—"अलक्ले! मैंने तुम्हारी सारी विपत्ति-कहानी सुन ली है!"

अलक्ले चौंक उठा। उठ कर खड़ा हो गया। उसके बैठने के लिये उसने सामने एक कुर्सी रख दी। उसने कहा—"आप बैठ जाइये। इस समय मेरी आंखों के तले अंधेरा छा रहा है। मुझे कुछ दिखाई नहीं देता।"

लीडिया ने जिस तरीके से बात-चीत की अलक्ले का हृदय बहुत कुछ हलका हो गया। बोली—"इस तरह अभिभूत होने से तो काम नहीं चल सकता। इस महान् विपत्ति के समय भी धीरज धर-कर रहना होगा।"

अलक्ले—मैं बुरी तरह मारा गया, मेरा सर्वनाश हो गया। मुझ में इतनी भी शक्ति नहीं कि मैं खड़ा हो सकूं।

लीडिया—आप को सहारा मिलेगा। मनुष्य के ऊपर भी एक महाशक्ति है, उसी के भरोसे रहो। वह ईश्वर अवश्य खड़ा कर तुम्हारी सहायता करेगा।

लीड़िया की बातें धार्मिक भाव से भरी थीं और आज कल पी
वर्ग में इसका इतना प्रबल प्रवाह हो रहा था कि लोग इस समझ
तो लग गये थे, फिर भी अलक्ले के चित्त को इससे शान्ति मिली।

अलक्ले—मुझे अन्ना के चले जाने का इतना अधिक खेद नहीं
जितना खेद मुझे इस बात का है कि लोगों के सामने मैं अपने
गुनहगार समझता हूँ। यह मेरी भूल है, पर मैं लाचार हूँ।

लीडिया—सब कामों की प्रेरणा उसी परमपिता द्वारा होती है
इसलिये सब काम को तुम्हें अपना न समझ कर उसका समझना चाहि
फिर तुम्हें किसी बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

अलक्ले थोड़ी देर तक चुप रहा। फिर बोला—"मनुष्य की सह
शीलता की सीमा है और मैं उस सीमा तक पहुंच गया। दिन भर
घर के प्रबन्ध में ही मरा जाता हूँ। दास-दासियों की आंखें देख
मुझे डर लगती है। परसों मैं खाना खाकर उठ रहा था। शिरोज़ा
जिस तरह मेरी तरफ देखा, मैं नहीं सह सकता था। उसने इस
घटना का अभिप्राय मुझसे पूछना चाहा; पर केवल देख कर रह गय
कुछ पूछा नहीं। इसके बाद वह दरजी के पुरजे का वृत्तान्त भी कह दे
चाहता था; पर उसकी जबान काँप उठी और वह चुप हो गया।

लीडिया—मैं सब कुछ समझती हूँ। मैं तुम्हारे लिये तन मन
तैयार हूँ। यदि मुझमें वह क्षमता होती और मैं तुम्हारी सारी विप
और चिन्ता दूर कर सकती। हाँ, तो क्या कहना था तुम्हें एक स्त्री की सह
यता की आवश्यकता है। क्या वह भार मैं अपने ऊपर ले सकती हूँ

अलक्ले ने धीरे से उसका हाथ दबाया।

[illegible]डिया—बच्चों का हम दोनों मिल कर देख-भाल करेंगे। [illegible]

व्यवहारिक ज्ञान मुझे भी अधिक नहीं है; पर मैं सब ठीक कर लूंगी। मैं तुम्हारी गृहस्थी का बोझ अपने सिर पर उठालूंगी।

अलक्ले-मेरे रोम-रोम से आप के लिये कृतज्ञता निकल रही है।

लीडिया-आप उस परमपिता को धन्यवाद दीजिये और उसी की शरण जाइये। वही हमारी विपत्तियों को दूर कर हमें शान्ति देता है।

अलक्ले उसकी बातें सुनता जाता था। यदि दूसरे समय कोई उससे इस तरह की बातें कहता तो वह उन पर हँसता; पर इस समय उन्हीं से उसे शान्ति मिल रही थी। धार्मिक विश्वास उसका परिमार्जित था। आज कल पीटर्सबर्ग में जिस धर्म की हवा बह रही थी। लीडिया उसी के अनुसार यह सब कह रही थी। उसमें उसे विश्वास नहीं था; पर इस समय उसकी बातों को वह धैर्य से सुन रहा था।

लीडिया ने अलक्ले के लिये ईश्वर से प्रार्थना की।

प्रार्थना समाप्त होने पर अलक्ले ने कहा—"आप मेरे लिये जो कुछ कर रही हैं, उसके लिये मैं आप का आजन्म आभारी रहूँगा।"

लीडिया-अब मैं अपना भार उठाती हूं। मैं फिरोजा के पास जाती हूं। जहां तक हो सकेगा, मैं आप को किसी बात के लिये कष्ट नहीं दूंगी।

लीडिया ने फिरोजा को गोद में उठा लिया। उसका मुँह चूम कर उसने कहा—"तुम्हारी माँ मर गई। तुम्हारे पिता तपस्वी हैं।"

लीडिया ने अलक्ले के घर का प्रबन्ध अपने सिर पर उठा लिया। लीडिया को व्यावहारिक ज्ञान नहीं था। पर दोनों की सहायता से वह सारा काम-काज करने में चतुर होती। घर का वास्तविक इन्तजामकार [illegible] था। घर का रत्ती-रत्ती हाल वह दूध-वाले [illegible] से [illegible]

कह देता था। लीडिया ने अलक्ले की मानसिक चिन्ता दूर करने का भं
यत्न किया। उसने धर्म का भाव उसके हृदय में इस तरह भरा कि व
भी नये प्रचलित सिद्धान्त का प्रतिपादक हो गया।

११

कौण्टेस लीडिया का पति अतिशय समृद्ध था। रूस सरकार
किसी भारी ओहदे पर था। उसका स्वभाव बड़ा ही अच्छा था। हरव
वह हँसता रहता था। पर शादी के दो महीने बाद ही उसने लीडि
का त्याग किया। उसके बात का सौजन्य तथा लीडिया की सहन
शीलता का विचार कर लोग चकित थे कि इस विच्छेद का क्या कारण
है। अलग रह कर भी दोनों के प्रेम में किसी तरह की कमी नहीं हुई
थी। जब कभी दोनों से मुलाकात होती तो उसी प्रेम से मिलते। इससे
भी लोगों को कम विस्मय नहीं होता था।

लीडिया के हृदय में पतिप्रेम तो न रहा; पर उसका हृदय प्रेमशून्य
भी नहीं था। उस संकीर्ण प्रेम ने व्यापक रूप धारण किया और
लीडिया प्रेम की उपासना करने लगी। जिस किसी में कोई विशे-
षता देखती, उसीसे वह प्रेम करने लगती। इस तरह अनेक स्त्री-पुरु
उसके प्रेमके पात्र बन गये। अलक्ले की विपत्ति से उसका हृदय पानी-
पानी हो गया। उसने उसकी सहायता करना अपना धर्म समझा और
उसका सारा भार अपने सिर पर ओढ़ लिया। उसी दिन से लीडिया
का प्रेम फिर संकीर्ण होने लगा। संसार का ख्याल उसकी आँखों से
[illegible] लगा। अलक्ले के सुख दुःख का ख्याल, उसका सारा [illegible]

और चिन्ता का विषय हुआ। उसने हर तरह से अलक्ले को प्रसन्न रखने का यत्न किया। उसको प्रसन्न रखने के लिये उसने अपनी रहन-सहन में भी परिवर्तन किया। यदि इसकी शादी न हुई होती तो शायद वह अलक्ले को अपना सर्वस्व निछावर कर देती। अलक्ले को प्रसन्न रखने के लिये इसकी बातों पर वह हँस दिया करती थी।

एक दिन लीडिया को मालूम हुआ कि अन्ना और रंस्की पीटर्सवर्ग में ही हैं। इससे लीडिया की चिन्ता बढ़ गई। जिस तरह हो, अलक्ले के कानों तक यह समाचार नहीं पहुँचना चाहिये, नहीं तो वह व्याकुल हो जायगा कि—"इस पापिनी से कहीं मेरा सामना न हो जाय।" साथ ही इस बात का भी यत्न करना चाहिये कि अलक्ले को इसके देखने का अवसर न मिले।

लीडिया ने पता लगाया तो उसे मालूम हुआ कि वे लोग दूसरे ही दिन पीटर्सवर्ग छोड़ कर बाहर जाने वाले हैं। लीडिया की चिन्ता बहुत कुछ दूर हुई। दूसरे दिन सबेरे ही उसे एक पत्र मिला। हरफ पहचान कर वह व्याकुल हो उठी। पूछा—"इस पत्र को कौन लाया?"

दरबान—होटल का बैरा।

नियत कर दें तो मैं ही वहाँ आकर उसे देख जाऊँ। आप लोगों की उदारता का स्मरण कर यही आशा करती हूँ कि मेरी प्रार्थना अवश्य स्वीकृत होगी। शिरोजा के लिये मेरा हृदय कितना व्याकुल है, आप अनुमान नहीं कर सकतीं।"

आपकी—अन्ना।

इस पत्र के प्रत्येक शब्द से लीडिया जल उठी। उ[illegible]रवान कहा—"जाकर बेयरा से कह दो कि उत्तर नहीं देना है।" इसके बाद उस अलक्ले को लिखा—"एक बजे दफ्तर में मैं आप से मिलना चाहती हूँ। कई आवश्यक बातें करनी हैं। शायद उन बातों से आप का दिल दुखे पर ईश्वर हम लोगों के साथ है। वह आप को बरदाश्त करने की शक्ति दे।"

अलक्ले नियत समय पर दफ्तर के बरामदे में खड़ा लीडिया की प्रतीक्षा कर रहा था। आते-जाते लोगों की भीड़, उनकी बातें, वह देखता और सुनता था। अलक्ले को देख कर एकने दूसरे से कहा—"अलक्ले का शरीर एक दम ढल गया। वह अभी बुड्ढा मालूम होता है।

१—आज-काल काम का भार अधिक हो रहा है। सब काम खुद करते हैं। नयी-नयी योजनायें तैयार कर रहे हैं।"

२—आज-कल कौंण्टेस लीडिया इनके साथ बहुत देखने में आती है।

१—कौण्टेस लीडिया के संबंध में अनुचित शंका करना उचित नहीं।

२—क्या अलक्ले से उनका प्रेम होना कोई अनुचित बात है?

१—सुना है अन्ना आज कल यहीं है।

२—महल में नहीं। मैंने कल पीटर्सबर्ग में रंस्की के साथ देखा था।

इस तरह लोग इधर-उधर टहल कर अलक्ले की निन्दा करते थे, उसकी हँसी उड़ाते थे और अलक्ले सभाभवन के द्वार पर खड़ा लोगों को अपनी नयी आय-व्यय संबंधी योजना समझा रहा था।

जब विपत्तियां आती हैं तो उनका अन्त नहीं होता। एक तरफ तो अन्ना ने [illegible] के हृदय पर कड़ी चोट पहुंचाई, उधर दूसरी ओर उसके ऊपर दूसरी [illegible]पत्ति की घटा भी मड़राने लगी। लोग प्रत्यक्ष देख रहे थे कि अलक्ले की उन्नति का अब अन्त हो रहा है। चाहे स्ट्रेपों के साथ झगड़े के कारण हो, चाहे अन्ना के कारण हो; चाहे यही उसके भाग्य में लिखी हो, पर उसका अन्त निकट था। यहाँ तक उन्नति उसकी प्रतिष्ठा अभी तक उसी तरह थी, अनेक कमेटी और कमीशन का वह सदस्य था; पर लोगों का विश्वास उस पर से उठता जा रहा था। उसकी योग्यता में किसी का विश्वास नहीं रहा। जो कुछ वह [illegible]रता, कोई उस पर ध्यान नहीं देता। सरकारी कार्रवाइयों से अलग [illegible]र दिये जाने पर उसे दूसरों की कार्रवाइयों में अधिकाधिक दोष दिखाई देने लगे। उसने उन्हें सुधारने और बतलाने का अधिक यत्न [illegible]या। अन्ना से अलग होने के बाद उसने क्रिटिकल कार्रवाई पर [illegible]लमाला निकालना आरम्भ किया। भविष्य में यह काम उसे अधि-

उन्हीं की चिन्ता में लगा रहता है ।" अलक्ले इस वाक्य को प्रा
दोहराया करता और अन्ना के चले जाने के बाद, उसने अपना स
समय इन्हीं सुधारों की योजना में बिता दिया । ऐसा करने से उसे
बात का सन्तोष था कि वह ईश्वर की अधिकाधिक सेवा कर रहा है

कौंसिल के सदस्य, अलक्ले से अपना पिण्ड छुड़ाना चाहते थे
पर उसे इसका पता न था । इसी समय शाही खानदान का एक व्य
उधर से निकला । इस अवसर से लाभ उठा कर सदस्य लोग उससे अल
हो गये । उस समय उसे अपनी अवस्था का पता लगा ।

अलक्ले अकेला रह गया । वह आगे बढ़ा । देखा सामने से कौन
स लीडिया आ रही है । लीडिया ने पास आकर अलक्ले को बधाई दी
पर उसके चेहरे से उसने देखा कि इस नयी उपाधि से उसे जरा
खुशी नहीं है । उसने पूछा—"शिरोजा कैसा है ?"

अलक्ले—मैं तो उससे खुश रहता हूँ । पर उसके मास्टर
शिकायत है ।

अन्ना के चले जाने पर शिरोजा की देख-भाल का भार अलक्ले
ही पड़ा, उसने शिरोजा के पढ़ने की व्यवस्था की । बहुत सोच वि
कर उसने, उसकी शिक्षा का क्रम तैयार किया और एक योग्य शि
नियुक्त कर दिया ।

लीडिया—पर अभी से उसके हृदय में पिता कीसी उदारता दि
देती है । ऐसा लड़का गलत रास्ते पर नहीं जा सकता ।

अलक्ले—यही मेरा भी ख्याल है । मैं तो अपना कर्तव्य पालन
देता हूँ । उसके भाग्य में जो कुछ होगा, देखा जायगा ।

लीडिया—मुझे आपसे कुछ बातें करनी हैं । समाचार आपने सि

कर है। मैं नहीं चाहती थी कि आपको फिर उस दुरवस्था में डालूँ; लाचार हूँ। अन्ना ने मेरे पास पत्र लिखा है। आजकल वह यहीं है।

अन्ना का नाम सुन कर अलक्ले कांप उठा। पर उसने तुरत ही ने को सम्हाला। उस समय उसके चेहरे से लाचारी टपक रही थी। बोला—"मैं भी यही आशा करता था।"

लीडिया अलक्ले का मुंह निहारने लगी। उसकी विशाल रता पर लीडिया मुग्ध हो गई। उसकी आँखों से आंसुओं की रा बह निकली, बह चली गई।

जिस समय अलक्ले लीडिया के घर पहुँचा, वह कपड़े बदल रही थी। मने टेबुल पर बाइबिल की एक प्रति रखी थी। कमरे में तस्वीरें क रही थीं। अलक्ले एक-एक करके तस्वीरों को देखने लगा। इतने लीडिया के पैर की आहट मिली। कमरे में प्रवेश कर लीडिया ने ा—"हम लोग निश्चिन्त होकर बातें कर सकते हैं।"

दोनों आमने-सामने कुर्सी पर बैठ गये। लीडिया ने अन्ना लक्ले के हाथ में रख दिया।

अलक्ले पत्र पढ़ कर थोड़ी देर तक चुप रहा फिर धीरे से मेरी समझ में, मैं अस्वीकार नहीं कर सकता।"

लीडिया—आप में यही तो गुण है। आप किसी में दोष नहीं दे

अलक्ले—मैं सब में दोष देखता हूँ; पर नहीं समझता कि यह उचित

उसमें बुद्धता नहीं थी। उसकी समझ में कुछ नहीं आता था। उसकी प्रकृति से प्रकट होता था कि वह स्वयं चाहता है कि क्या करे।

लीडिया—सब बातों की हद होती है। [illegible] है; [illegible] है।

अलक्ले–पर चोट कौन करे। मैंने उसे क्षमा कर दिया है। पु
से वह जो कुछ चाहती है, उसे मैं अस्वीकार नहीं कर सकता।

लीडिया–पर क्या वह प्रेम सच्चा है? मान लिया कि आ
क्षमा कर दिया; पर क्या उसके मन को कष्ट पहुँचाना, हमें उचि
शिरोजा अपनी मां को मरा समझता है। वह उसके लिये प्रार्थना
है कि –"हे ईश्वर, तू उसके पापों को धो दे।' यदि उससे य
कही जायगी तो वह क्या सोचेगा?

अलक्ले–मेरी समझ में यह बात नहीं आई थी।

लीडिया ने दोनों हाथों से अपना मुंह छिपा लिया और चुप
वह प्रार्थना कर रही थी। प्रार्थना समाप्त कर बोली–"यदि आ
राय चाहते हैं तो मैं इसके पक्ष में राय नहीं दूंगी। यदि आप
यातना का ख्याल करते हैं तो उसके साथ लेश मात्र भी सहा
दिखलानी चाहिये। आपकी बात छोड़ भी दें तो इसका प
अल ा। आपका घाव फिर ताजा हो जायगा। शिरोजा
शिकायत त आ जायगी। यदि उसमें मनुष्यत्व का लेश भी र
अन्ना वह यह आशा कभी भी न करती। यदि आप कहें
ही पड़ा. पास पत्र लिख दूं।'

कर इ अलक्ले राजी हो गया। तदनुसार लीडिया ने अन्ना को लि
नि "इस अवस्था में शिरोजा को तुम्हारे पास भेजना उचित नहीं
उसके हृदय में जो भाव उत्पन्न होगा, वह उसके लिये भीषण
इसीलिये अलक्ले ने अस्वीकार किया है। तुम कुछ और न सम
ईश्वर तुम पर दया करे।"

तुम्हारी-ली

उसका विश्वास उठ गया। पर यह भाव अधिक काल तक नहीं रह
थोड़ी देर के बाद ही उसे वही शान्ति और सुख प्राप्त हुआ, जि
प्रभाव से वह यातना की सभी कल्पना भूल जाता था।

१२

कल शिरोजा का जन्म-दिन होगा। एक दिन वह बाग में
गया था। घूम कर लौटा तो उसका भोला-भाला चेहरा मारे आन
खिल रहा था। दरबान को अपना कोट देते हुए उसने पूछा-
बाबा ने उस मुहर्रिर को मिलने की आज्ञा दी ?"

दरबान—हां, उसको उन्होंने सेक्रेटरी के जाने के बाद ही बु
ठहरिये, जूता उतार दूं।

पास ही दरवाजे पर उसके मास्टर खड़े थे, वे बोले—"शिरोज
अपने हाथ से ही उतार लो।"

शिरोजा ने शिक्षक की बात सुनी; पर ध्यान नहीं दिया।
की पेटी पकड़ कर वह खड़ा रहा।

शिरोजा—बाबा ने उसकी मदद भी की ?

दरबान—हां, यह क्लर्क सात-आठ दिन से लगातार
रहा था। इसकी दशा पर दरबान और शिरोजा दोनों को द
एक दिन यही क्लर्क दरबान से हाथ जोड़ कर विनती कर
कि—"सरकार तक मेरी प्रार्थना पहुँचा दो। मेरे बच्चे भूखों मर
शिरोजा की दृष्टि उसी दिन इस पर पड़ी थी। तभी से इसके
दया आ गई थी।

शिरोजा—तब तो इस क्लर्क को बड़ी खुशी हुई होगी।

दरबान—खुशी ! मारे खुशी के वह नाच रहा था।

शिरोजा—और कुछ कहो।

दरबान–(धीरे से कान में) कौण्टेस लीडिया ने आपके लिये कुछ भेजा है।

शिरोजा समझ गया कि जन्मदिन के उपलक्ष्य में कौण्टेस लीडिया ने मेरे लिये कोई उपहार भेजा है। उसने पूछा–"कहाँ है ?"

दरबान–मैं उसे कोर्नें बाबा के पास ले गया, वहीं रख आया हूँ। इतना खूबसूरत खिलौना है कि नहीं कह सकता।

शिरोजा–कितना बड़ा है (हाथ से इशारा कर) क्या इतना बड़ा होगा ?

दरबान–उससे कुछ छोटा है, पर बड़ा ही सुन्दर है ?

शिरोजा—क्या कोई किताब है ?

दरबान—नहीं, एक चीज है। दौड़ो, देखो वेसिली तुम्हें बुला रहा है।

शिरोजा–वेसिली !

इतना कह कर वह मारे खुशी के उछल पड़ा। मारे खुशी के उसका चेहरा दमक रहा था।

शिरोजा अतिशय प्रसन्न था। बाग में लीडिया की भतीजी ने उससे अनेक तरह की बातें कही थीं। वह दरबान को सुना कर कूदना चाहता था। खिलौने की खबर पाकर वह और भी खुश था।

शिरोजा ने अपने मन में कहा–"आज के दिन सबको प्रसन्न होना चाहिये।" वह फिर बोला–"तुमने सुना है, बाबा को [illegible] की उपाधि मिली है ?"

दरबान–हाँ, कितने ही लोग बधाई देने आते हैं।

शिरोजा–बाबा इससे खुश हैं ?

दरवान–जार की दया के लिये खुश हैं, वे इसके योग्य थे।

शिरोजा–तुम्हारी लड़की तुमसे मिलने आयी थी कि नहीं ?

दरवान–रोज वह किस तरह आ सकती है। नाचघर में उसे सब
लेना पड़ता है। आपको भी सबक याद करना है, जाइये याद कीजिये

शिरोजा मकतब में आकर पढ़ने नहीं बैठा। वह अपने अभिभाव
से कहने लगा–"यह खिलौना कल मालूम होता है। आप
क्या राय है ?"

वेसिली का ध्यान उस समय व्याकरण के पाठ की तरफ था।
बजे शिक्षक के आने का समय था। तब तक सबक याद
जाना चाहिये।

शिरोजा पुस्तक लेकर बैठ गया। उसने फिर पूछा–"अच्छा पह
बतलाइये कि अलेक्जेण्डर नेस्की से बड़ी कौन उपाधि है ? बाबा
यही उपाधि मिली है।"

वेसिली–व्लैडिमीर।

शिरोजा—उससे बड़ी।

वेसिली–अण्ड्र परवोजेनी।

शिरोजा–उससे बड़ी।

वेसिली–मैं नहीं जानता।

शिरोजा हथेली पर गाल रख कर सोचने लगा। उसने देखा–"उस
बाबा को सभी उपाधियां मिल गईं। बड़ा होने पर मैं भी इन सभी
उपाधियों को प्राप्त करूंगा। यदि इससे भी ऊँची कोई उपाधि होगी
तो मैं उसे भी प्राप्त करूँगा।"

दो बजे शिक्षक आये। व्याकरण का सबक याद नहीं था। शिक्षक
को बड़ा दुःख हुआ। शिरोजा भी दुखी था, पर वह अपने को दोषी
नहीं समझता था। क्योंकि लाख यत्न करने पर भी वह याद नहीं कर
सका। जब तक शिक्षक महाशय उसे समझाते रहे, उसे मालूम होता
था कि वह सब कुछ समझ रहा है, पर उनके चले जाने के बाद ही वह
सब कुछ भूल गया। इतने पर भी उसे खेद था कि मैंने शिक्षक महा-
शय का जी दुखाया।

शिक्षक महाशय चुप-चाप, किताब के पन्ने उलट रहे थे। उपयुक्त
अवसर देख कर शिरोजा ने पूछा—"आप का जन्मदिन कब होगा?"

शिक्षक—सबक पर ध्यान दो। जन्मदिन की चिन्ता छोड़ दो।
जैसे वर्ष के ३६४ दिन, उसी तरह वह ३६५ वां दिन। इसमें कोई
विशेषता नहीं है।

शिरोजा ने अपने शिक्षक की ओर गौर से देखा और सोचा—"मैं जानता
हूं कि जो कुछ इन्होंने कहा है, हृदय से नहीं कहा है। पर इन लोगों ने मेरे
साथ इसी तरह से बातें करना क्यों तै किया है। ये लोग इतनी रुखाई
से पेश आते हैं, मानो इनके हृदय में दया का लेश भी नहीं है।
पर मुझसे इतनी दूर क्यों रहते हैं! वे मुझसे प्रेम क्यों नहीं करते?"
इसी तरह के अनेक प्रश्न उसके मन में उठते रहे; पर एक का भी उत्तर
उसे नहीं मिला।

शिरोजा–बाबा इससे खुश हैं ?

दरवान–जार की दया के लिये खुश हैं, वे इसके योग्य थे।

शिरोजा–तुम्हारी लड़की तुमसे मिलने आयी थी कि नहीं ?

दरवान–रोज वह किस तरह आ सकती है। नाचघर में उसे सबक लेना पड़ता है। आपको भी सबक याद करना है, जाइये याद कीजिये।

शिरोजा मकतब में आकर पढ़ने नहीं बैठा। वह अपने अभिभावक से कहने लगा–"यह खिलौना कल मालूम होता है। आप की क्या राय है ?"

वेसिली का ध्यान उस समय व्याकरण के पाठ की तरफ था। दो बजे शिक्षक के आने का समय था। तब तक सबक याद हो जाना चाहिये।

शिरोजा पुस्तक लेकर बैठ गया। उसने फिर पूछा–"अच्छा पहले बतलाइये कि अलेक्जेण्डर नेस्की से बड़ी कौन उपाधि है ? बाबा को यही उपाधि मिली है।"

वेसिली–व्लैडिमीर।

शिरोजा—उससे बड़ी।

वेसिली–अगड्डे परवोजेनी।

शिरोजा–उससे बड़ी।

वेसिली–मैं नहीं जानता।

शिरोजा हथेली पर गाल रखकर सोचने लगा। उसने देखा–"उसके बाबा को सभी उपाधियां मिल गईं। बड़ा होने पर मैं भी इन सभी उपाधियों को प्राप्त करूंगा। यदि इससे भी ऊँची कोई उपाधि होगी तो मैं उसे भी प्राप्त करूँगा।"

दो बजे शिक्षक आये। व्याकरण का सबक याद नहीं था। शिक्षक को बड़ा दुःख हुआ। शिरोजा भी दुखी था, पर वह अपने को दोषी नहीं समझता था। क्योंकि लाख यत्न करने पर भी वह याद नहीं कर सका। जब तक शिक्षक महाशय उसे समझाते रहे, उसे मालूम होता था कि वह सब कुछ समझ रहा है, पर उनके चले जाने के बाद ही वह सब कुछ भूल गया। इतने पर भी उसे खेद था कि मैंने शिक्षक महाशय का जी दुखाया।

शिक्षक महाशय चुप-चाप, किताब के पन्ने उलट रहे थे। उपयुक्त अवसर देख कर शिरोजा ने पूछा—"आप का जन्मदिन कब होगा?"

शिक्षक—सबक पर ध्यान दो। जन्मदिन की चिन्ता छोड़ दो। जैसे वर्ष के ३६४ दिन, उसी तरह यह ३६५ वां दिन। इसमें कोई विशेषता नहीं है।

शिरोजा ने अपने शिक्षक की ओर गौर से देखा और सोचा—"मैं जानता हूं कि जो कुछ उन्होंने कहा है, हृदय से नहीं कहा है। पर इन लोगों ने मेरे साथ ऐसी तरह से बातें करना क्यों तै किया है। ये लोग इतनी कड़ाई से पेश आते हैं, मानो इनके हृदय में दया का लेश भी नहीं है। यह मुझसे इतनी दूर क्यों रहते हैं? ये मुझसे प्रेम क्यों नहीं करते?" ऐसी तरह के अनेक प्रश्न उसके मन में उठते रहे; पर एक का भी उत्तर उसे नहीं मिला।

१२

शिरोजा की शिक्षा के लिये घरवाले केवल शिक्षक पर ही निर्भर

शिरोजा उछल कर बाबा के पास गया और उसके मुंह की ओर निहारने लगा।

अलक्ले-(आराम कुर्सी पर बैठ कर तथा बाइबिल की पुस्तक उठाकर) खूब घूमे।

शिरोजा अपने बाबा के पास बैठ गया और नख से लकीर खींचने लगा, बोला—"मैं भी खूब घूमा। कौंटेस की भतीजी नादिंका से मुलाकात हुई। उसने कहा—"तुम्हारे बाबा को आज नई उपाधि मिली है।" आप खुश हैं, बाबा ?"

अलक्ले—कई बार कहा कि लकीर खींचना अच्छा नहीं। पारितोषिक का कोई मूल्य नहीं है। मूल्य है काम का। अगर तुम पारितोषिक के ख्याल से काम करोगे तो काम तुम्हें कड़ा जँचेगा, पर यदि काम करते रहोगे तो पारितोषिक आप से आप मिल जायगा।

जिस समय अलक्ले यह बात कह रहा था, उसे आज का कड़ा परिश्रम याद आ गया। सुबह से उसे प्रायः दो सौ अर्जियां देखनी पड़ी थीं।

अलक्ले की इस नीरसता से शिरोजा का दिल छोटा हो गया। उसका मुंह सूख गया। अलक्ले शिरोजा से इस तरह बातें करता, मानों वह गुड़िया या काठ का पुतला हो। शिरोजा लाचार होकर उसे उसी तरह का उत्तर भी दे देता।

अलक्ले—तुम्हारी समझ में मेरी बातें आ गईं ?

शिरोजा—हां, बाबा !

अलक्ले बाइबिल का पाठ पढ़ाता था। शिरोजा बड़े मन से सुनने लगा। शिरोजा का ध्यान न जाने कहां था। इससे वह पाठ को ठीक तरह से नहीं कह सका। इसके बाद उसने ओल्ड-टेस्टामेन्ट उठाया और

रण प्रार्थना के अतिरिक्त मैंने आज और कल के लिये भी प्रार्थना की है।"

वेसिली—यही कि तुम अपना सबक मजे में याद कर सको।

शिरोजा–नहीं! तुम नहीं समझ सकते। बड़ी अच्छी बात है। पर मैं उसे गुप्त रखूँगा। जब मेरा मनोरथ पूर्ण होगा तब तुम्हें बतलाऊँगा।

वेसिली–अच्छा सोजाओ, मैं रोशनी बुझाता हूँ।

शिरोजा–जो कुछ मैं देखना चाहता हूँ, जिसके लिये मैंने प्रार्थना की है, उसे बिना रोशनी के भी मैं देख सकता हूँ। अरे! मैं तो तुम्हें बता ही चुका था।

रोशनी बुझ गई। शिरोजा को मालूम हुआ मानों वह अपनी मां की बोली सुन रहा है। उसका चित्त चञ्चल हो उठा। उसने देखा, उसकी मां उसके पास आ गई है और उसे प्यार कर रही है। इसके बाद उसे पनचक्की, छुरी तथा अन्य चीजों का ख्याल आया और उसी में निमग्न, वह धीरे-धीरे सो गया।

१४

पीटर्सबर्ग लौटकर अन्ना और रंस्की एक होटल में उतरे। दोनों ने अलग-अलग कमरे लिये। दूसरे दिन रंस्की अपने भाई से मिलने गया। रंस्की की मां भी कार्यवश मास्को से आ गई थी। भाई तथा भाभी ने बड़े प्रेम से स्वागत किया। इन्होंने यात्रा की अनेक बातें पूछीं; पर सदा यह बचाते रहे कि कहीं अन्ना का नाम मुंह से न निकल पड़े। दूसरे दिन रंस्की का भाई उससे मिलने आया। इसने अन्ना के

से बैठे रह सकते हैं, पर यदि यह आशंका है कि घंटा दो घंटा भी एक तरह से बैठने के बाद फिर गति बदलनी कठिन है तो हम घंटे में जितना अधिक हो सकेगा गति बदलेंगे। रंस्की की ठीक यही अवस्था थी। वह समझता था कि संसार उनकी उपेक्षा करेगा। फिर भी उसके चित्त को सन्तोष नहीं होता था। फिर उसने देखा कि अन्ना का मार्ग तो एकदम से बन्द है।

पीटर्सबर्ग आकर रंस्की ने सबसे पहले बेत्सी से मुलाकात की।

बेत्सी—(हँसकर) किसी तरह मनोरथ पूर्ण हुआ। अन्ना कहाँ है? कहाँ ठहरे हैं! इस यात्रा में तो बड़ा आनन्द आया होगा। पीटर्सबर्ग तो नीरस मालूम देता है। तलाक की चर्चा का क्या अन्त होगया?

रंस्की ने देखा कि यह जानकर कि अभी तक तलाकनामा नहीं हुआ है, बेत्सी का चेहरा सुस्त पड़ गया। वह बोली—"समाज में मेरी बदनामी तो होगी; फिर भी मैं अन्ना से मिलने अवश्य आऊंगी। तुम पीटर्सबर्ग में कितने दिन ठहरोगे?"

शाम को बेत्सी अन्ना से मिलने जरूर गई, पर उसकी बातें पहले की तरह नहीं थीं। मुश्किल से दस मिनिट तक वह अन्ना के पास रही और बराबर अन्ना से मिलने के लिये साहस के लिये डींग मारती रही। चलते समय उसने कहा—"तुमने मुझे यह नहीं बतलाया कि तलाक कब होगा? मैं तो तुम्हारा साथ हर तरह से देने के लिये तैयार हूँ; पर जब तक तुम लोगों का विवाह नहीं हो जाता, समाज के लोग हँसी उड़ावेंगे। तुमलोग शुक्र को चले जाओगे। देखें फिर मुलाकात कब होती है।"

बेत्सी के व्यवहार से ही रंस्की को समझ लेना चाहिये था कि समाज

में उनके साथ कैसा व्यवहार होगा; पर उसे दूसरी चेष्टा भी कर लेनी चाहिये। रंस्की को विश्वास था कि उसकी मां अन्ना से जलती है। क्यों कि उसी की बदौलत उसके पुत्र का (मेरा) जीवन नष्ट हुआ; पर वेरिया (रंस्की की भाभी) तो खुशी से मिलेगी। दूसरे दिन रंस्की उसके पास गया और अपने मन की बात कही।

वेरिया–तुम जानते ही हो कि मैं तुम्हें दिलसे चाहती हूँ। तुम्हारे लिये सब कुछ करने को तैयार हूँ; पर मैंने तुमसे इस बात की चर्चा न की। क्योंकि मैं जानती थी कि इस समय मैं तुम्हारी या अन्ना की कोई सेवा नहीं कर सकती। यह मत समझो कि मैं उसकी जांच करना चाहती हूँ। उसके स्थान में यदि मैं रहती तो शायद मैं भी यही करती। पर मैं इस समय तुम्हारी बात स्वीकार नहीं कर सकती। मैं बाल-बच्चेवाली हूँ। पति का भी मुंह देखना है। मैं वहां आकर उससे मिल सकती हूँ, पर घर पर उन्हें नहीं बुला सकती।

रंस्की–मैं उसे गिरी हुई नहीं समझता। जिन लोगों से तुमलोग बड़ी प्रसन्नता से हाथ मिलाती हो, उनमें सैकड़ों इसी तरह की हैं। घर का रंग-ढंग देखकर वह चुपचाप उठ खड़ा हुआ।

वेरिया–आप मुझसे खफा न हों। आप स्वयं समझ सकते हैं कि मैं लाचार हूँ।

रंस्की–(उदास होकर) मैं तुमसे ज़रा भी नाराज नहीं हूँ। पर यहीं से हम लोगों के संबंध का अन्त समझना चाहिये। मेरी ओर से यह पक्का समझना।

इतना कह कर वह चला गया।

रंस्की ने देख लिया कि अब चेष्टा फिज़ूल है। इसलिये उसने तै किया

कि जितने दिन तक पीटर्सबर्ग में रहना है, इसी तरह लोगों की नजर
बचा कर रहेंगे। जिससे किसी से मुलाकात न हो जाय कि शर्म उठानी
पड़े। पीटर्सबर्ग में सब से अधिक भय उसे अलक्से का था। उसका नाम
सुनकर ही वह घबरा जाता था। जो कोई बात वह करता, अलक्से का
नाम आये बिना न रहता। जब कभी वह बाहर जाता, सदा डरता रहता
कि कहीं वह मिल न जाय। जिस तरह चोट लगा हुआ आदमी हरवक्त
डरता रहता है कि कहीं दरकच न लग जाय, उसी तरह से रंस्की हर
समय चोट की आशंका से लुक-छिप कर चलता था।

पीटर्सबर्ग में रहना रंस्की को बहुत ही बुरा मालूम होता था। इस
समय, उसने अन्ना में एक विचित्र परिवर्तन देखा। जिसका कारण वह
नहीं समझ सका। एक बार तो वह अतिशय प्रेम से उससे मिलती, दूसरी
बार उदास, सूखी और चिड़चिड़ी हो जाती। उस समय उसको समझना
भी कठिन हो जाता। कोई परीशानी उसके हृदय को व्याकुल कर
रही थी; पर वह रंस्की को उसका भेद बताना नहीं चाहती थी। अपनी
चिन्ता में उसे रंस्की की दैन्यावस्था का कुछ भी पता नहीं था, नहीं तो
वह उसके लिये और भी भीषण हो जाता।

१५

सिरोजा को एक बार देखने की लालसा अन्ना के हृदय में प्रबल
हो रही थी। इसी लालसा से प्रेरित होकर वह रूस लौटी। ज्यों-ज्यों पीटर्सबर्ग
करीब आता-जाता था, उसकी लालसा बढ़ती जाती थी। इस समय
उसके मन में यह बात नहीं समाई कि सिरोजा को किस तरह देख

में उनके साथ कैसा व्यवहार होगा; पर उसे दूसरी चेष्टा भी कर लेनी चाहिये। रंस्की को विश्वास था कि उसकी मां अन्ना से जलती है। क्यों कि उसी की बदौलत उसके पुत्र का (मेरा) जीवन नष्ट हुआ; पर वेरिया (रंस्की की भाभी) तो खुशी से मिलेगी। दूसरे दिन रंस्की उसके पास गया और अपने मन की बात कही।

वेरिया–तुम जानते ही हो कि मैं तुम्हें दिलसे चाहती हूँ। तुम्हारे लिये सब कुछ करने को तैयार हूँ; पर मैंने तुमसे इस बात की चर्चा न की। क्योंकि मैं जानती थी कि इस समय मैं तुम्हारी या अन्ना की कोई सेवा नहीं कर सकती। यह मत समझो कि मैं उसकी जांच करना चाहती हूँ। उसके स्थान में यदि मैं रहती तो शायद मैं भी यही करती। पर मैं इस समय तुम्हारी बात स्वीकार नहीं कर सकती। मैं बाल-बच्चेवाली हूँ। पति का भी मुंह देखना है। मैं वहां आकर उससे मिल सकती हूँ, पर घर पर उन्हें नहीं बुला सकती।

रंस्की–मैं उसे गिरी हुई नहीं समझता। जिन लोगों से तुमलोग बड़ी प्रसन्नता से हाथ मिलाती हो, उनमें सैकड़ों इसी तरह की हैं। घर का रंग-ढंग देखकर वह चुपचाप उठ खड़ा हुआ।

वेरिया–आप मुझसे खफा न हों। आप स्वयं समझ सकते हैं कि मैं लाचार हूँ।

रंस्की–(उदास होकर) मैं तुमसे ज़रा भी नाराज नहीं हूँ। पर यहीं से हम लोगों के संबंध का अन्त समझना चाहिये। मेरी ओर से यह पक्का समझना।

इतना कह कर वह चला गया।

रंस्की ने देख लिया कि अब चेष्टा फिजूल है। इसलिये उसने तै किया

कि जितने दिन तक पीटर्सबर्ग में रहना है, इसी तरह लोगों की नजर बचा कर रहेंगे। जिससे किसी से मुलाकात न हो जाय कि शर्म उठानी पड़े। पीटर्सबर्ग में सब से अधिक भय उसे अलक्से का था। उसका नाम सुनकर ही वह घबरा जाता था। जो कोई बात वह करता, अलक्से का नाम आये बिना न रहता। जब कभी वह बाहर जाता, सदा डरता रहता कि कहीं वह मिल न जाय। जिस तरह चोट लगा हुआ आदमी हरवक्त डरता रहता है कि कहीं दरकच न लग जाय, उसी तरह से रंस्की हर समय चोट की आशंका से लुक-छिप कर चलता था।

पीटर्सबर्ग में रहना रंस्की को बहुत ही बुरा मालूम होता था। इस समय, उसने अन्ना में एक विचित्र परिवर्तन देखा। जिसका कारण वह नहीं समझ सका। एकबार तो वह अतिशय प्रेम से उससे मिलती, दूसरी बार उदास, सूखी और चिड़चिड़ी हो जाती। उस समय उसको समझना भी कठिन हो जाता। कोई परीशानी उसके हृदय को व्याकुल कर रही थी; पर वह रंस्की को उसका भेद बताना नहीं चाहती थी। अपनी चिन्ता में उसे रंस्की की दैन्यावस्था का कुछ भी पता नहीं था, नहीं तो वह उसके लिये और भी भीषण हो जाता।

१५

शिरोजा को एक बार देखने की लालसा अन्ना के हृदय में प्रबल हो रही थी। इसी लालसा से प्रेरित होकर वह रूस लौटी। ज्यों-ज्यों पीटर्सबर्ग करीब आता-जाता था, अन्ना की लालसा बढ़ती जाती थी। उस समय उसके मन में यह बात नहीं समाई कि शिरोजा को किस तरह देख

सकूंगी। उसने सोचा था—"शिरोजा मेरा पुत्र है, पीटर्सबर्ग में रह कर, उसे देखना क्या कठिन है।" पर पीटर्सबर्ग पहुंचने पर उसकी आंख खुली कि समाज में उसकी क्या स्थिति है। अब उसकी समझ में आया कि शिरोजा को देखना उतना ही कठिन है, जितना सहज में समझती थी।

पीटर्सबर्ग आये दो दिन हो गया। शिरोजा का ख्याल क्षण भर के लिये भी उससे अलग नहीं हो सका; अभी तक उसका मुँह वह नहीं देख सकी। घर में जाने का वह अपने को अधिकारिणी नहीं समझती थी। दूसरे अलक्ले का भय था। कहीं वह दरवाजे पर ही रोक दी जाय और अपमान के साथ निकाल न दी जाय। अलक्ले के पास पत्र लिख कर प्रार्थना करने का ख्याल, उसके हृदय को कठिन वेदना पहुंचाता था। केवल दूर से शिरोजा को देख कर ही उसकी छाती ठंढी नहीं हो सकती थी। वह उसे आंख भर देखना चाहती थी, मन भर प्यार करना चाहती थी, छाती से लगाना चाहती थी। उसने सोचा था कि शिरोजा की बुड्ढी दाई कोई न कोई उपाय अवश्य निकालेगी। पर उसने अलक्ले की नौकरी छोड़ दी थी। दाई का पता लगा कर बुलवाने में ही दो दिन बीत गये।

इसी बीच में अन्ना को मालूम हुआ कि आज कल अलक्ले और कौंटेस लीडिया में बड़ी घनिष्टता है। तीसरे दिन उसने लीडिया के पास पत्र लिख कर, अपने हृदय की इच्छा प्रगट की। उसने लिख भी दिया था कि—"इस उदारता के लिये मैं जन्म भर आभारी रहूँगी।" लीडिया को पत्र लिखने में उसे मार्मिक वेदना हुई; पर शिरोजा के लिये वह सब कुछ कर सकती थी। अन्ना जानती थी कि यदि पत्र अलक्ले तक पहुँच जायगा तो वह कभी भी इनकार नहीं करेंगे।

दरबान ने लौट कर कहा—"कुछ उत्तर नहीं मिला।" उसे इतने भीषण अपमान की आशा नहीं थी। इतने पर भी उसने सोचा कि कौण्टेस ने अनुचित नहीं किया। इस यातना की बात उसने रंस्की से नहीं कहा। सारी वेदना स्वयं बरदाश्त करना चाहा। अन्ना समझती थी कि रंस्की इस पर, उस दृष्टि से विचार नहीं करेगा, जिससे मैं कर रही हूँ। शिरोजा को देखना वह साधारण बात समझेगा। वह मेरे हृदय की बात कैसे समझ सकेगा। और मेरी इस तृष्णा से कहीं वह मुझ से घृणा न करने लग जाय। इससे बढ़ कर सन्ताप उसे और किसी बात से नहीं हो सकता था। इसलिये शिरोजा सम्बन्धी सभी बातों को उसने उससे छिपाया। दिन भर विचार करने पर उसने इस संबंध में अलक्से को पत्र लिखना स्थिर किया। निदान वह पत्र लिखने बैठ गई। उसी समय लीडिया का वह पत्र उसे मिला। पत्र पढ़ कर उसकी बुरी हालत हो गई।

उसने मनमें कहा—"यह अपमान! वे लोग मुझे जलाना चाहते हैं। लीडिया मुझसे भी गिरी है। मैं झूठ तो नहीं बोलती। कल शिरोजा का जन्मदिन है। मैं कल अलक्से के घर सीधे जाऊँगी। जिस तरह से होगा, शिरोजा से मिलूंगी। उससे बातें करूंगी और उसके दिल में से इन सब बातों को निकालूंगी, जिससे वे उस अभागे लड़के को ठगना चाहते हैं।"

वह बाजार गई और खिलौना खरीदा। उसने सोचा कि—"मैं सवेरे आठ बजे से पहले ही पहुंच जाऊंगी। उस समय अलक्से सो कर उठे भी नहीं रहेंगे। दरवान और सन्तरी को घूस देकर मैं भीतर जाऊंगी। नकाब मुंह पर से न हटाऊंगी। कोई पूछेगा तो कह दूंगी कि—

"पादरी ने मुझे भेजा है कि वह सब खिलौना शिरोजा के बिस्तरे पर र
आवे।" उसने सब तैयारी कर ली। अभी तक उसने यह नहीं सोच
था कि—"वह शिरोजा से क्या कहेगी ?"

अन्ना ने वैसा ही किया। ठीक आठ बजे उसने दरवाजे प
घन्टी बजायी।

एक दाई ने झांककर देखा कि नकाब डाले कोई रमणी दरवाजे प
खड़ी है, नौकर दौड़ा आया और दरवाजा खोल दिया। अन्ना ने
चुपचाप उसके हाथ में एक नोट रख दिया। बोली—"मैं शिरोजा के
पास जाऊंगी।" इतना कह कर आगे बढ़ रही थी कि नौकर ने रोक क
कहा—"आप किसके पास जाना चाहती हैं ?"

अन्ना ने उसकी बात नहीं सुनी। कुछ उत्तर नहीं दिया।

नौकर ने देखा कि रमणी घबड़ाई हुई है। उसने आगे से दूसरा
दरवाजा खोल दिया और पूछा—"आप क्या चाहती हैं ?"

अन्ना—मैं प्रिंस कोरोडोयो के यहां से आई हूँ और शिरोजा के
पास जाऊंगी !

नौकर—वह अभी सोकर नहीं उठे हैं।

अन्ना ने यह अनुमान नहीं किया था कि—"जिस घर में मैं नौ वर्ष तक
रह चुकी हूँ, उसे देख कर मेरी भावना बदल जायगी।" सभी बातें
उसे याद आ गईं और क्षण भर के लिये वह अपने को भूल गई।

नौकर—आपको ठहरना होगा।

अन्ना ने अपना लबादा उतार दिया। नौकर ने उसे पहचाना और
झुककर सलाम किया। उसने कहा—"चलिये।"

अन्ना बोलना चाहती थी; पर उसके मुंहसे आवाज नहीं निकली।

वह सीढ़ियों के ऊपर चढ़ने लगी। नौकर भी पीछे २ चला। वह बोला—"अभिभावक वेसिली शिरोजा के साथ ही सोते हैं। शायद कपड़ा नहीं पहने हों। मैं आगे से जाकर उन्हें सूचित कर दूं।"

अन्ना चुपचाप सीढ़ियां पार करती गई।

शिरोजा अभी सोकर उठा था और चारपाई पर बैठकर जम्हाइयां ले रहा था। अन्ना ने उसे फौरन पहचान लिया। वह कमरे में घुस गई। चारपाई के पास पहुंच कर उसने धीरे से कहा—"शिरोजा!"

आज शिरोजा वह नहीं था, जिसकी कल्पना अन्ना कर रही थी। इतने दिनों में वह कितना बढ़ गया है। उसके हाथ-पांव लम्बे और पतले हो गये हैं। सिर के बाल छोटे छोटे हो गये हैं। पर उसका उन्नत ललाट, पतला होठ, मुलायम गर्दन और उन्नत कन्धे ज्यों के त्यों थे।

शिरोजा ने अपनी गर्दन घुमाई और आंखें खोलीं। एक क्षण तक विस्मय के साथ, वह उसकी ओर देखता रहा। फिर मुस्कराकर उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं। दूसरे क्षण शिरोजा अपनी मां के भुजपाश से बंध गया।

अन्ना का कलेजा धड़क रहा था। उसने शिरोजा को अपनी बाहु-लता से कस कर बांध लिया।

शिरोजा के मुंह से केवल एक शब्द निकला—मां!

शिरोजा न जाने कब तक इसी तरह अपनी मां से चिपका पड़ा रहा। वह बोला—"आज मेरा जन्म दिन है। तुम आओगी मैं जानता था।"

अन्ना भूखों की तरह शिरोजा की ओर देख रही थी। वह उसके अंग-प्रत्यंगों को चूमने और विस्मय के साथ देखने लगी। आंखों से आंसुओं की धारा बह रही थी।

शिरोजा—मां ! तुम रोती क्यों हो ?

अन्ना—मारे खुशी के आँसू निकल रहे हैं, बेटा ! मैं रो नहीं रह हूँ । कितने दिनों के बाद तुम्हारा मुंह चूमने को मिला है ।

इतना कहते-कहते अन्ना ने अपने आंसू पोंछते हुए कहा—“ अ तुम्हें कपड़ा पहनना चाहिये ।” वह उसी के पास कुर्सी पर बैठ गई फिर बोली—“बिना मेरे तुम कपड़ा किस तरह पहनते होगे ?”

शिरोजा—मैं ठंढे जल से स्नान नहीं करूंगा । बाबा ने मना किया है । मां ! तुमने बेसिली को नहीं देखा होगा । वह अभी आवेगा । मां ! तुम तो मेरे कपड़ों पर बैठी हो ।

इतना कह कर शिरोजा खिलखिला कर हंस पड़ा । अन्ना ने उसकी ओर देखा और हंस दिया ।

अन्ना—तुम समझते थे कि मैं मर गई ?

शिरोजा—नहीं, हरगिज नहीं । मुझे विश्वास ही नहीं होता था । इतना कह कर वह मां का हाथ अपने हाथों में लेकर उसे चूमने लगा ।

बेसिली ने अन्ना को आते हुए देखा था; पर उसकी समझ में नहीं आया था कि यह औरत कौन है ! दोनों की बात चीत से उसने समझा . यह वही रमणी है, जिसने अपने पति और पुत्र का त्याग कर अपने प्रेमी के साथ निकल गई । वह इस चिन्ता में पड़ गया कि क्या करें । शिरोजा के कमरे में जायँ कि नहीं, अलक्ले को इसकी सूचना दें या नहीं । क्षण भर सोचने के बाद उसने यही स्थिर किया कि मुझे शिरोजा के पास जाकर उसे उठाना चाहिये क्यों कि मैं इसीलिये नियुक्त हूँ । कमरे में उसके पास कौन है, इससे मुझे क्या ।

निदान उसने कपड़े पहना और शिरोजा के पास गया। माता और पुत्र की बातें सुन कर उसका मन बदल गया। "दस मिनिट तक मैं और प्रतीक्षा करूंगा।" इतना कह कर उसने दरवाजा बन्द कर दिया। वह वहां से हट गया। उसकी आंखों से आँसू निकल रहे थे।

घर के नोकरों में खलबली मच रही थी, सबको मालूम हो गया था कि मालकिन आज आई हैं और शिरोजा के कमरे में हैं। ठीक नौ बजे सरकार वहां जाते हैं। दोनों का सामना होना उचित नहीं। इसे रोकना चाहिये।

कोर्नें ने जाकर दरवान को डाटना आरम्भ किया कि—"तुमनें इन्हें भीतर क्यों जाने दिया।" दरवान ने कहा—"यह नौकर का काम है।" कोर्नें उसे डाट-डपट कर, दूसरे नौकर के पास आया। नौकर ने उत्तर दिया—"मैं इनकार नहीं कर सकता था। जिसने दस वर्ष तक इतनी दया से रखा, उसे आज दुरदुरा नहीं सकता था। हम लोग भी आदमी हैं।"

कोर्नें ने दाई से कहा—"सुना इनकी करनी? बिना किसी से पूछे-पाछे हजरत ने मालकिन को शिरोजा के पास पहुँचा दिया। सरकार अभी उठे हैं और ठीक नौ बजे वहां जायंगे।"

दाई—ठीक तो हुआ! अब एक काम करो। मैं तो शिरोजा के कमरे में जाकर मालकिन को लिवा लाने का यत्न करती हूँ और तुम सरकार के पास जाकर उन्हें दस मिनिट तक किसी काम में फँसा रखो।

निदान दाई शिरोजा के कमरे में गई। उस समय शिरोजा अपनी मां से कह रहा था कि किस तरह वह और नदिका गाड़ी से गिरा और तीन बार चक्कर खाया। अन्ना चुप-चाप बैठी अपने प्यारे पुत्र की मधुर बोली का आनन्द ले रही थी। वह उसके चेहरे का उतार चढ़ाव और

से देख रही थी। वह इसी सब में इतना दत्तचित्त थी कि वह शिरोजा की बातें एक दम नहीं समझ रही थी। एक बात उसके दिल में और उठ रही थी—"अब मुझे जाना चाहिये। शिरोजा से अलग होना चाहिये।" उसने बेसिली का खांसना भी सुन लिया था। उसने दाई के पैरों की आहट भी सुनी; पर वह जड़वत् बैठी रही। न तो उससे कुछ कहा जाता था और न उठा ही जाता था।

दाई ने अन्ना के पास आकर सम्मान के साथ कहा—"आज शिरोजा का जन्म दिन है। भाग्य से आप भी आ गईं।"

अन्ना—तुम यहीं हो। मुझे नहीं मालूम था।

दाई—मैं यहां नहीं रहती। आज के दिन के लिये ही यहां आई हूँ। शिरोजा का जन्मोत्सव मना कर चली जाऊंगी।

इतना कहते ही दाई की आंखों में आंसू आ गये।

शिरोजा ने एक हाथ से अपनी मां को पकड़ा और दूसरे हाथ से दाई को और बिछौने पर नाचने लगा। वह बोला—"मां, यह मुझे देखने अकसर आती है। और जब कभी आती है......"इतना ही कह पाया था कि उसने देखा कि दाई अन्ना के कान में कुछ कह रही है और मां का चेहरा भय से उतरता जा रहा है।

अन्ना ने शिरोजा को गोद में उठा कर कहा—"बेटा!" इससे आगे कुछ नहीं कह सकी। उसने बार बार सोचा, पर एक भी शब्द उसे याद नहीं आये। शिरोजा समझ गया कि उसकी मां क्या कहना चाहती है। दाई की बातें भी वह समझ गया। 'हमेशा नौ बजे' उसने सुन भी लिया था। उसने समझ लिया कि बाबा से मां का सामना नहीं हो सकता। पर उसकी समझ में एक बात नहीं आई कि—"मां के

चेहरे पर घबराहट और शर्म क्यों है ? माँ दोषी नहीं है, फिर यह घबराहट और शर्म क्यों ?" वह पूछना चाहता था; पर उसे साहस नहीं हुआ। उसकी दैन्य दशा पर उसे दया आई। उसने धीरे से कहा-'अभी बाबा के आने का समय नहीं हुआ है। अभी मत जाओ।'

अन्ना ने कहा-"बेटा ! अपने पिता का सदा आदर करना। उनसा आदमी तुम्हें नहीं मिलेगा। मैंने उनको धोखा दिया है। बड़े होने पर तुम सब बातें समझोगे।"

शिरोजा-माँ ! तुमसे बढ़ कर मेरा कोई नहीं।

इतना कहते-कहते उसकी आंखों से आंसू बह निकले।

अन्ना भी रोने लगी।

इसी समय दरवाजा खुला और बेसिली ने कमरे में प्रवेश किया। उसी समय किसी के आने की आहट मालूम हुई। दाई ने घबरा कर कहा-"सरकार आ रहे हैं।" अन्ना ने अपनी टोपी उठाई।

शिरोजा बिस्तरे में मुँह छिपा कर रोने लगा। अन्ना ने अन्तिम बार शिरोजा का मुँह चूमा और जल्दी से कमरे से बाहर हो गई। अलक्से ने उसे देखा।

अन्ना ने अभी शिरोजासे कहा था कि-"उससे अच्छा आदमी तुम्हें नहीं मिलेगा।" पर अलक्से को देखते ही उसका सारा भाव बदल गया। उसके हृदय में घृणा के भाव भर गये कि इसी पापी ने मुझे पुत्रसे वंचित किया है। उसने उसी तरह नकाब चढ़ा लिया और मकान से बाहर हो गई।

खिलौना उसी तरह उसके हाथ में रह गया। उसे इतना भी समय न मिला कि वह उन्हें खोल कर शिरोजा को देती।

१६

शिरोजा को देख कर अन्ना होटल में लौटी । उसका हृदय शोकाकुल था । उसकी इन्द्रियां शून्य थीं । वह नहीं समझ सकती थी कि क्या करे ? उसी तरह वह कुर्सी पर बैठ गई ।

दाई लड़की लेकर अन्ना के पास आई । मां को देख कर लड़की ने अपना हाथ फैलाया । अन्ना ने उसे अपनी गोद में लिया, तरह-तरह से उसे खेलाया, हंसाया, प्यार किया, पर शिरोजा का ख्याल, उसके चित्त से क्षण भर के लिये भी गायब नहीं हुआ । उसका सारा प्रेम शिरोजा पर निछावर था ।

उसने लड़की दाई को दे दी । दाई को विदा कर उसने शिरोजा का चित्र निकाला । यह चित्र उसी समय का था, जब शिरोजा भी इसी उम्र का था । इसके बाद उसने अलबम उठाया । इसमें शिरोजा के भिन्न-भिन्न अवस्था के चित्र थे, उसने एक-एक को निकाल कर देखना आरम्भ किया । एक तस्वीर उसे सब से अच्छी जंची । उसे उसने निकालना चाहा । पर तस्वीर फंस गई थी । पास चाकू नहीं था इसलिये वह कोई चीज़ ढूंढने लगी । टेबुल पर रंस्की की तस्वीर पड़ी थी । उसी को उठाया । उसे देखते ही उसके हृदय में घृणा के भाव, उत्पन्न हुये । इसी व्यक्तिने उसका सर्वनाश किया, उसे शिरोजा से अलग किया ।

सुबह से उसने एक बार भी रंस्की का ख्याल नहीं किया था, इस समय एकाएक रंस्की का ख्याल उसे आ गया । वह सोचने लगी—"वह है कहां ? वह मुझे अकेला छोड़ कर कहां चला जाता है ? इस

दुर्दिन में भी वह मेरे साथ नहीं रहता।" इस समय उसे यह ख्याल न आया कि यह सब दोष मेरा है। मैंने ही शिरोजा की बातें उससे छिपा रक्खी हैं। उसने रंस्की को बुला भेजा। उत्तर मिला कि कोई मेहमान आया है। उससे बातें कर रहे हैं। अभी आवेंगे। पूछा है कि याशविन अभी पीटर्सबर्ग में आया है। क्या उसे मुलाकात करने के लिये साथ लेते आवें ?

अन्ना ने अपने मन में कहा—"एक तो कल से गायब हैं, दूसरे इस समय एक पोंछ लेकर आना चाहते हैं। जिससे मैं कुछ कह नहीं सकूं।" उसके दिल में यह ख्याल पैदा होगया कि अब उसका अनुराग पहले की तरह नहीं रहा। इधर दो दिन की घटना का ख्याल कर उसका विश्वास दृढ़ हो गया। उसने अलग कमरा लिया, साथ खाना छोड़ दिया, अकेले आना नहीं चाहता, यह सब क्या है ? पर उसे अपने दिल की बात साफ-साफ कह देना चाहिये। इस ख्याल के आते ही वह कांप उठी। उसने दाई को बुलाया, कपड़े पहिन कर बैठ गई। जब वह कपड़ा पहन रही थी, उसी समय घंटी की आवाज उसे सुन पड़ी। कमरे में जाकर उसने देखा कि याशविन उसकी प्रतीक्षा में बैठा है और रंस्की शिरोजा की तस्वीर टेबुल पर से उठा कर देख रहा है। अन्ना ने मुस्करा कर कहा—"आप से मेरा पहले का ही परिचय है। पार साल घुड़-दौड़ में आप से मुलाकात हुई थी।"

इतना कह कर वह रंस्की की ओर फिरी और शिरोजा की तस्वीर ले ली। फिर बोली—"इस साल घुड़दौड़ कैसा हुआ। मैंने तो रोम में घुड़दौड़ देखा। आप लोग तो देश-विदेश जाना ही पसन्द नहीं करते। मुलाकात तो कम है: पर मैं आपकी रुचि और पसन्दगी के बारे

मैं बहुत कुछ जानती हूँ।"

याशविन—मेरी पसन्द विचित्र है। आप यहाँ कब तक रहेंगी ?

अन्ना—यही दो चार दिन तक।

याशविन—तब तो और मुलाकात नहीं हो सकेगी।

अन्ना—आज यहीं भोजन कीजियेगा। खाना अच्छा तो नहीं मिलता; पर रंस्की से मुलाकात तो होगी। वह आप को बहुत चाहते हैं।

याशविन ने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और चला गया। रंस्की रुक गया।

अन्ना—तुम्हें भी कहीं जाना है ?

इतना कह कर उसने रंस्की का हाथ पकड़ लिया और उसके चेहरे की ओर गौर से देखने लगी। वह बोली—"जरा ठहरो, तुमसे कुछ कहना है। निमन्त्रण देना उचित था या नहीं ?"

रंस्की—ठीक किया ?

अन्ना—तुम बदल तो नहीं गये हो। मैं यहाँ अत्यन्त दुःखी हूँ। यहाँ से कब चलोगे ?

रंस्की—मैं खुद परीशान और दुखी हूँ। मैं यहाँ अधिक दिन तक नहीं ठहर सकता। जल्दी ही यहाँ से चलूंगा।

इतना कह कर उसने अपना हाथ खींच लिया। अन्ना ने क्रोध से कहा—"जाओ।"

रंस्की कमरे से बाहर हो गया।

पत्रवाहक–उनको वड़ा दुःख होगा।

अन्ना–मुझे भी खेद है। तुम भी यहीं भोजन कर लो न?

रंस्की को यह सब वहुत बुरा मालूम हुआ। एक तो चाची के आने पर ही वह कुढ़ रहा था, दूसरे इस आदमी को रोक लेने से उसको और भी बुरा मालूम हुआ। साथ ही वह थियेटर में भी जाना चाहती है। इसे यह ख्याल नहीं कि सभी परिचित लोग वहां मिलेंगे। उसने अन्ना की ओर घूर कर देखा; पर अन्ना ने इसकी परवा नहीं की। भोजन के समय भी अन्ना का दिमाग चढ़ा था। वह याशविन और उस आदमी के साथ वेढव वातें कर रही थी। भोजन के वाद वह आदमी तो टिकट लेने के लिये थियेटर में गया और रंस्की याशविन को लेकर अपने कमरे में गया। याशविन को वहां वैठा कर, वह अन्ना के पास आया। अन्ना कपड़ा पहन रही थी।

रंस्की—(उसकी ओर न देख कर) क्या तुम सचमुच जाने की तैयारी कर रही हो?

अन्ना—तुम इस तरह क्यों पूछ रहे हो? क्या जाने में कोई आपत्ति है?

रंस्की का अभिप्राय वह नहीं समझ सकी।

रंस्की–(जलकर) नहीं कोई हर्ज नहीं।

अन्ना–मैं भी यही सोचती हूं।

रंस्की ने ताना देकर कहा था; पर अन्ना ने उसकी परवा नहीं की।

रंस्की-अन्ना, तुम्हें क्या हो गया है?

अन्ना–मैं तुम्हारा मतलव नहीं समझ सकी।

रंस्की–तुम्हारा जाना उचित नहीं है।

अन्ना—क्यों ? मैं अकेली नहीं जा रही हूं । मिसेज बरबारा मेरे साथ जायँगी ।

उसने निराशा और घबराहट के साथ अपनी गर्दन हिलाई ।

रंस्की—पर क्या तुम्हें हम लोगों की अवस्था का ज्ञान नहीं ।

अन्ना—(चीखकर) मैं इसकी परवा नहीं करती । मैंने जो कुछ किया है, क्या उसके लिये मैं पश्चात्ताप करूं ? नहीं ऐसा नहीं हो सकता । मैं सिर्फ एक बात की परवा करती हूं कि तुम मुझे उसी तरह प्रेम करते हो या नहीं । मैं और किसी की परवा नहीं करती । मेरी समझ में नहीं आता कि हम लोग इस तरह लुक-छिप कर क्यों पड़े हैं और लोगों से मिलते-जुलते नहीं । मैं तुम्हें चाहती हूं । मैं किसी बात की परवा नहीं करती । यदि तुम्हारा हृदय बदल नहीं गया है तो तुम्हारी आंखें झुकी क्यों हैं ?

इतना कह कर उसने तीखी चितवन से रंस्की की ओर देखा ।

रंस्की—मेरे भाव कभी भी नहीं बदल सकते । पर मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं ।

उसने उसकी ओर देखा । उसका सौंदर्य आज द्विगुणित था । पर उल्लास के स्थान पर उसे क्रोध पैदा हो गया ।

उसने उसकी उदासीनता और आंखों की नीरसता देखी । उसके शब्दों को अनसुनी करके क्रोध में कहा—"तुम मुझे समझा दो कि मैं क्यों न जाऊँ ?"

रंस्की—क्योंकि इससे तुम्हें······

वह आगे कुछ नहीं कह सका ।

अन्ना—मैं नहीं समझती कि बरबारा और याशविन किसी से कम

प्रतिष्ठित हैं। लो, प्रिंसेस वरवारा आ भी गईं।

१८

अन्ना के इस आचरण से रंस्की को बहुत क्षोभ हुआ। उसने उससे साफ-साफ कह नहीं दिया, इससे उसका हृदय और भी जल रहा था। रंस्की उससे कहना चाहता था—"कि-इस तरह प्रिंसेज के साथ थियेटर में जाकर तुम अपनी हीनता ही नहीं कराओगी, वल्कि तुम यह स्पष्ट करोगी। तुम्हें समाज से किसी तरह का संबंध नहीं रखना है।" पर वह कह नहीं सका। उसकी समझ में नहीं आया कि उसके हृदय में क्या गुजर रही है। उसने देखा कि अन्ना के रूप पर वह अधिकाधिक मोहित हो रहा है। पर उसके हृदय में श्रद्धा कम होती जा रही है।

याशविन ने रंस्की का उदास चेहरा देखा। वह बोला—"तुम लांको-स्की के घोड़े को खरीद लो। बढ़िया घोड़ा है।"

रंस्की-मेरा भी यही विचार है।

याशविन रंस्की की उदासी का कारण जानता था; पर उसने उसकी परवा नहीं की। उसने कहा—"चलो चलें घूम आयें।"

रंस्की—मैं वाहर नहीं जाऊँगा।

याशविन चला गया। उसने अपने मनमें कहा—"अपनी पत्नी न होने पर यही हाल होती है।"

रंस्की अकेला रह गया। वह उठा और टहलते हुए विचार करने लगा।

"आज क्या है······चौथा दिन है······योगर अपनी पत्नी को लेकर वहां गया होगा, माँ भी गई होगी······पीटर्सबर्ग के सभी लोग वहां होंगे। उसने मेरा कहना न माना। बेहयाई का बुर्का ओढ़ कर वह गई है। और मैं भय से लुका पड़ा हूँ और उसे उस आदमी के सहारे छोड़ दिया है। वह मेरी यह दुर्दशा क्यों कररही है?" उसने पूर्ण निराशा में अपना हाथ हिलाया। हाथ का धक्का टेबुल में लगा। टेबुल गिर गया। उस पर की चीजें बिखर गईं। वह नौकर को डांटने लगा।

बिचारा नौकर निर्दोष था। अपनी सफाई देना चाहता था; पर रंस्की की हालत देख कर वह चुपचाप बटोरने लगा। रंस्की ने कहा—"यह तुम्हारा काम नहीं है। झाड़ू देनेवाले को बुलाओ और तुम मेरा कपड़ा निकालो।"

साढ़े आठ बजते बजते रंस्की थियेटर में पहुंचा। तमाशा शुरू था। हाल खचाखच भरा था। उसने चारों तरफ निगाह दौड़ा कर देखा। पहले की तरह सब बातें देखने में आईं। बाक्स में वह जाकर बैठ गया। रंस्की अपने भाई के पास नहीं गया। बीच में ही एक मुलाकाती ने ईशारा किया और वह उसीके पास जाकर बैठ गया।

रंस्की ने अभी तक अन्ना को नहीं देखा था। वह उसे देखना भी नहीं चाहता था। पर लोगों की निगाहों से उसने ताड़ लिया कि अन्ना कहां बैठी है। उसकी आखें थियेटर में चारों ओर अलक्से को तलाश कर रही थीं। भाग्यवश उस दिन थियेटर में अलक्से नहीं गया था।

उसके मित्र ने कहा—"तुम्हें देख कर कोई नहीं कह सकता कि तुम कभी भी सेना में थे।"

रंस्की का मित्र पहले से ही जानता था कि रंस्की की तबियत स्थिर

नहीं रह सकती। वह बोला—"पर तुमने देर क्यों की। पहला सीन बड़ा ही उत्तम था।"

रंस्की ने इधर-उधर देखा। कोई बीस कदम की दूरी पर अन्ना बैठी थी। याशविन उसी के पास था। वह याशविन से बातें कर रही थी। अन्ना ने उसकी ओर आंख उठा कर देखा भी नहीं, यद्यपि उसे उसने देख लिया था।

अन्ना के बगल में करतासो का कुटुम्ब बैठा था। ,वे लोग अन्ना को जानते थे। श्रीमती करतासो खड़ी होकर अपना कपड़ा सम्हाल रही थीं और उनके पति उनकी सहायता कर रहे थे। श्रीमती करतासो गुस्से में कुछ बड़-बड़ा रही थीं। करतासो रह-रह कर अन्ना की ओर देख रहे थे और अपनी पत्नी को शान्त कर रहे थे। श्रीमती करतासो उठ कर बाहर चली गईं। अन्ना जान-बूझ कर करतासो की निगाह बचाती थी। करतासो भी वहां से उठ कर चले गये।

रंस्की ठीक-ठीक तो समझ नहीं सका; पर उसे इतना जरूर मालूम हुआ कि कोई घटना ऐसी हुई है, जिससे अन्ना का अपमान हुआ है। रंस्की चिन्तित हो गया। अपनी जगह से उठकर आगे बढ़ा। उसने देखा कि उसकी सेना के करनल अन्ना के संबंध में कुछ कह रहे हैं। रंस्की को देखते ही उन्होंने चिल्लाकर कहा—"रंस्की, एक दिन तुम्हें सेना में आना होगा। बिना खिलाये नहीं जाने देंगे।"

रंस्की—खेद है कि मैं इस बार नहीं ठहर सकता। किसी दूसरे मौके पर।

इतना कह कर वह अपने भाई की तरफ चला। उसकी भाभी बेरिया ने उससे हाथ मिलाया। वह उत्तेजित थी। उसने कहा—"श्रीमती

करतालो को ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था। अन्ना......"

रंस्की–क्या मामला है ? मेरी समझ में कुछ नहीं आया।

वेरिया–उसने अन्ना का अपमान किया।

रंस्की क्रोध से जल रहा था। उसने उसी समय कुछ कहना चाहा; पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। रास्ते में भाई से मुलाकात हुई। पर उनकी परवा न कर वह नीचे चला गया। एक तो अन्ना पर उसे क्रोध आ रहा था कि उसने अपने आचरण से दोनों को नीचा दिखाया। दूसरे उसकी इस वेइज्जती पर उसे तर्स आ रहा था। वह सीधे अन्ना के पास गया।

अन्ना–तुमने देर कर दी। बड़ा अच्छा गाना था।

रंस्की–मैं और गाना ! दोनों में घोर अन्तर है।

इतना कह कर वह अपनी जगह पर आकर बैठ गया। दूसरा अंक समाप्त होते-होते अन्ना थेटर से उठी और घर चली आई। रंस्की ने देखा बॉक्स खाली है। वह भी उठ कर घर चला आया।

घर आकर उसने देखा अन्ना उसी तरह बैठी है। उसने कपड़ा तक नहीं बदला है। रंस्की उसके पास जाकर बोला–"अन्ना, सारा दोष तुम्हारा है। मैंने तुम्हें जाने से रोका था। मैं पहले से ही डरता था।"

अन्ना—यह अपमान मैं आजीवन नहीं भूल सकती। मेरे पास बैठना अपमानजनक था।

रंस्की—उसकी बातों पर ध्यान मत दो। व्यर्थ उत्तेजित मत होओ।

अन्ना–अगर तुम्हारा प्रेम सच्चा होता तो मेरी यह दुर्दशा न होती ?

रंस्की—मुझे क्यों घसीट रही हो।

रंस्की को क्रोध अवश्य था; पर उसकी दुर्दशा पर उसे दया थी।

उसने उसे तसल्ली दी ऊपर से तो उसने कुछ भी नहीं कहा पर मन ही मन वह कुढ़ रहा था।

दूसरे ही दिन दोनों पीटर्सबर्ग छोड़ कर देहात चले गये।

छठवाँ खण्ड

१
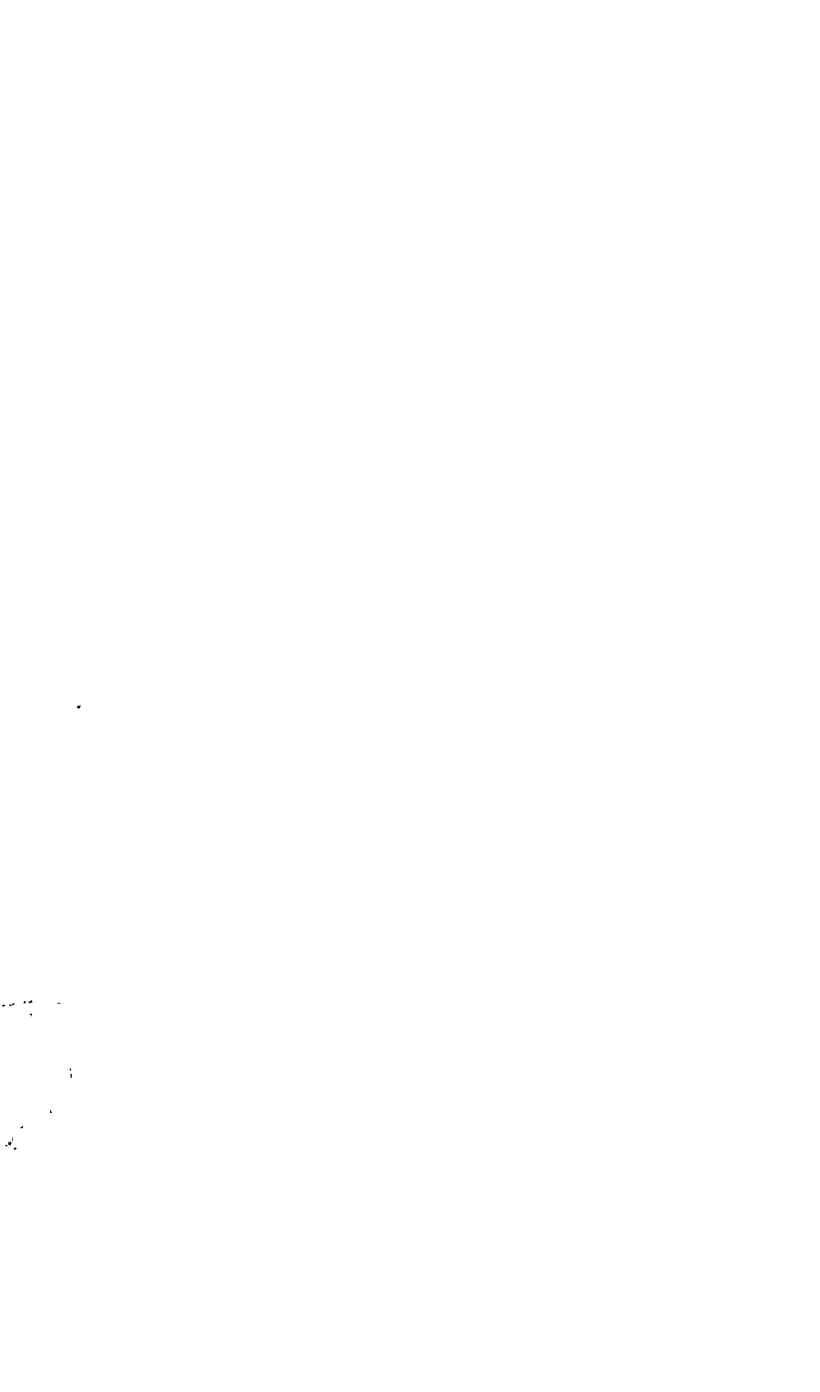
इस वर्ष की गर्मी में लेविन के घर बड़ी भीड़-भाड़ रही। किटी क सभी इष्ट-मित्र और रिश्तेदार आकर टिके थे और खूब चहल-पहल थी। लेविन और किटी के आग्रह से डाली बच्चों समेत आ गई थी। किटी की मां ने भी डेरा डाल दिया था। लड़की ने गृहस्थी में अभी प्रवेश किया है। उसे सिखलाने के लिये बड़े-बूढ़ों का होना जरूरी है, लेविन के घर में ऐसा कोई नहीं था। किटी की सखी वरंका ने भी अपने वचन के अनुसार आकर दम्पति के आनन्द को बढ़ाया था। इतने आनन्द के होते भी लेविन सुखी नहीं था। इनमें से एक भी ऐसा नहीं था, जो उसके जीवन को प्रसन्न करता, जिसके सामने वह अपने मन की बातें कहता। उसका भाई कोनिशे उसके साथ था; पर दोनों के सिद्धान्त में घोर मतभेद था। इसलिये लेविन की दृष्टि में, उसका रहना न रहना बराबर था।

प्रतिदिन २० आदमियों का भोजन बनता। किटी की मां भोजन के वक्त एक-एक कर सब को गिन डालती। किटी ने गृहस्थी का प्रबन्ध इतनी सावधानी से किया था कि किसी को किसी तरह का कष्ट नहीं होता था।

सब लोग भोजन करने बैठे थे। डाली के लड़के वरंका और अपनी दाई के साथ बटोरने की तैयारी कर रहे थे। इतने में कोनिशे ने कहा—"मुझे भी साथ लेते चलना। मुझे भी इस काम में आनन्द मिलेगा।" इतना कह कर उसने बरंका की ओर देखा।

वरंका के चेहरे का रंग बदल गया। उसने कहा—"बड़ी खुशी की बात है।"

इस रंग-ढंग को देख कर किटी ने भेदभरी दृष्टि डाली पर डाली। इधर कई दिनों से किटी के हृदय में एक बात पैदा हो गई थी। कोनिशे और वरंका के इस बात से किटी का सन्देह और भी पुष्ट हो गया। उसने झट-पट अपनी माँ से कुछ कहना चाहा, ताकि इस बात को कोई ताड़ न सके। भोजन के बाद कोनिशे बैठक में खिड़की के पास बैठ कर चाय पीने लगा और भाई से बातें करने लगा। पर उसकी आंख बराबर उसी दरवाजे पर लगी रही, जिधर से होकर लड़के जानेवाले थे। लेविन अपने भाई के पास ही बैठा था।

किटी लेविन के पास खड़ी इस प्रतीक्षा में थी कि कब इनकी बात का अन्त हो और कब मैं अपनी बात छेड़ दूं। इस बात में उसे जरा भी दिलचस्पी नहीं थी।

कोनिशे—विवाह के बाद तुम में बहुत कुछ सुधार हुआ; पर बेकार बहस करने की आदत नहीं गई।

लेविन-किटी ! कब तक खड़ी रहोगी। बैठ जाओ।

इतना कह कर उसने उसकी ओर देखा।

इतने में कोनिशे ने देखा कि लड़के घर से बाहर निकल रहे हैं। वह बोला—"अब समय भी नहीं है।"

टेनिया सब से आगे थी। उसके एक हाथ में टोकरी और दूसरे में कोनिशे की टोपी थी। वह दौड़ी कोनिशे के पास आई और टोपी उसे पहनाने लगी। उसने कहा-"वरंका आपकी प्रतीक्षा कर रही है।"

कोनिशे—मैं अभी आया।

इतना कह कर उसने कहवे का प्याला खाली किया और जेब में सिगरेट तथा रुमाल भर कर चल पड़ा।

किटी-(लेविन से) वरंका कैसी सुन्दर है।

उसने इस तरह से कहा, जिसमें इस बात की भनक कोनिशे के कान में पड़े-"आह ! उसके चेहरे पर कैसा सौन्दर्य है। (वरंका से) क्या तुम मिल के पास हम लोगों की प्रतीक्षा करोगी? हम लोग भी आवेंगे।"

किटी की मां—बेटी ! तुम अपनी अवस्था भूल जाती हो। तुम्हें इस तरह चिल्लाना नहीं चाहिये।

वरंका किटी के पास चली आई। वरंका की गति-विधि और चेहरे के रंग से साफ झलक रहा था कि कोई असाधारण बात हो रही है। किटी से यह बात छिपी नहीं थी। वह बड़ी उत्सुकता से इसकी प्रतीक्षा कर रही थी। किटी को आशा थी कि आज वह घटना अवश्य घट जायगी। इसलिये उसे आशीर्वाद देने के लिये उसने पास बुलाया। वह बोली-"वरंका ! यदि आज मेरी आशा पूरी हुई तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।"

वरंगा—(सुनी अनसुनी करके लेविन से) क्या आप भी हम लोगों के साथ चलेंगे ?

लेविन—खलिहान तक मैं तुम लोगों का साथ दे सकता हूँ। वहां तक मुझे जाना है।

किटी—खलिहान तक क्यों जाना है ?

लेविन—नये वैगन को देखने एक बार जाना जरूरी है । तथा बीज मिलान करना भी जरूरी है। तुम कहां रहोगी ?

किटी—इसी अटाने पर।

घर की सभी स्त्रियां भोजन के बाद अटाने पर आकर बैठती थीं और काम-काज करती थीं। कोई बच्चों का कपड़ा सीती, कोई अचार-तरकारी बनाती और कोई कुछ करती। इसी तरह गृहस्थी संबंधी अनेक तरह की बातों पर टीका-टिप्पणी होती। बातों ही बातों में किटी ने वरंका और कोनिशे के प्रेम का प्रसंग छेड़ दिया। वह बोली—"मुझे पूरी आशा है कि आज तै हो जायगा। अच्छा होगा न मां ! तुम्हारी क्या राय है ?"

डाली—वाह किटी ! तुम में भी जोड़ा मिलाने का अच्छा गुण है। कैसा एकान्त में मिला दिया है।

किटी—मां ! तुम्हारी क्या राय है ?

किटी की मां—रूस की कोई भी रमणी कोनिशे को अपना पति बनाने में गौरव समझती, यद्यपि इस समय उसकी अवस्था ढल गई है, फिर भी कोई हर्ज नहीं है । वरंका भी गुणवती है ! पर वह (कोनिशे)......

किटी—नहीं मां ! उस बात की आशंका मत करना।

डाली–इसमें तो कोई शक नहीं कि उसने कोनिशे पर अपनी मोहिनी शक्ति डाल दी है।

किटी की मां–समाज में उसकी इतनी प्रतिष्ठा है कि आदर और रुपये की उसे कमी नहीं। केवल पत्नी गुणवती होनी चाहिये।

डाली—वरेंका उसे सन्तुष्ट कर सकेगी।

किटी–ईश्वर करे आज तै हो जाय। उनकी सूरत देख कर मैं सब बातें समझ जाऊँगी। बहन! तुम क्या समझती हो?

किटी की मां–पर आपे से बाहर मत हो जाओ। इससे तुम्हें नुकसान पहुँचेगा।

इसी तरह की बातें हो रही थीं, इतने में लेविन भी वहीं आ पहुंचा। सब की सब चुप हो गईं।

लेविन–मुझे खेद है कि मैं आप लोगों की बातचीत में बाधक हुआ।

इतना कह कर वह किटी के पास गया। उसने पूछा–"तुम्हारी तबीयत कैसी है?"

किटी—मजे में हूँ। अपना काम खतम कर आये?

लेविन–गैड़ान में तिगुना माल आया है। क्या लड़कों के पास चलोगी? मैंने घोड़ा कस कर मँगवाया है।

मां के मना करने पर भी किटी लेविन के साथ जाने के लिये तैयार हो गई।

लेविन को इस तरह अकेले में पाकर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। सबको एकाएक चुप होते देख, लेविन को दुःख हुआ था, किटी ने यह देखा था। वह सब बातें उससे कह कर, उसके दिलका भार उतार देना चाहती थी। वह बोली–'आप जानते हैं, हम लोग क्या बातें कर रही थीं?'

लेविन—अचार-मसाले की बात-चीत कर रही होगी।

किटी—नहीं, हम लोग यह बातें कर रही थीं कि कोई पुरुष किसी रमणी से, परिणय की बात किस तरह करता है। बात यह है कि भाई कोनिशे और वरंका में अनुराग उत्पन्न हो गया है। इस संबंध में तुम्हारी क्या राय है ?

लेविन—मैं कोई निश्चित उत्तर नहीं दे सकता। कोनिशे विचित्र जीव है। मैंने तो तुमसे कहा ही था।

किटी—यही कि वह एक रमणी से प्रेम करता था और वह मर गई।

लेविन—तब से उसकी उदासीनता बढ़ गई। वह औरतों को स्निग्ध दृष्टि से देखता है; पर उसका अनुराग नहीं रहा।

किटी—पर वरंका के साथ तो वे रंगे से मालूम होते हैं।

लेविन—पर अच्छी तरह से विचार लेना होगा। क्योंकि वह बड़ा सदाचारी है और अधिकतर आध्यात्मिक जीवन बिताता है।

किटी—क्या इससे उनकी पदवी घट जायगी।

लेविन—नहीं, मेरे कहने का यह अभिप्राय है कि आध्यात्मिक जीवन में, वह इतना रम गया है कि वास्तविकता की ओर इस तरह नहीं दौड़ सकता।

किटी—उसकी भी यही हालत है। क्या आप समझते हैं कि कोनिशे नहीं कर सकता।

लेविन—मेरा यह कहना नहीं है; पर उसमें यह कमज़ोरी नहीं है। मैं सदा से उसके इस चरित्रबल पर डाह करता आया हूँ।

किटी—चूंकि वे प्रेम में फँस नहीं सकते, इससे आप उन्हें घृणा की दृष्टि से देखते हैं।

लेविन–नहीं, उसके लिये नहीं। उसमें अनेक गुण हैं, जो मुझ में नहीं है। यही मेरी ईर्ष्या के कारण हैं। वह कर्तव्य को प्रधान समझता है। इसीसे उसे सन्तोष और शान्ति रहती है।

किटी–(प्रेम से) और आप ?

इतना कह कर किटी ने हँस दिया। किटी अपनी इस हँसी का कारण स्वयं भी नहीं बतला सकती थी। उसे इस बात पर हँसी आई कि अपने भाई की प्रशंसा में लेविन इतना व्यस्त है कि उसे सच-झूठका भी ख्याल नहीं रहा। किटी लेविन के हृदय को जानती थी कि उसे इस बात की शर्म है कि मैं इतने अमन-चैन से रहता हूँ और उसे ऊपर उठने की दिन-रात चिन्ता लगी रहती है। किटी इसीसे लेविन में और अधिक भक्ति रखती थी और यही उसकी हंसी का कारण था।

उसने पूछा–"हां, तो आप को असन्तोष किस बात से है ?"

लेविन ने देखा कि किटी को इसपर विश्वास नहीं कि मुझे किसी बात से असन्तोष है। उसने कहा—"मैं सुखी हूँ; पर अपने से ही असन्तुष्ट हूँ।"

किटी–जब आप सुखी हैं तो इस असन्तोषका क्या कारण है ?

लेविन–मैं किस तरह बयान करूँ...मेरे हृदय में दिन रात इसी बात की चिन्ता बनी रहती है कि तुम कहीं ठोकर न खा जाओ।... वास्तव में किटी एक पेड़ से टकरा रही थी। उसे सम्हाल कर कहा—"जब मैं अपनी, संसार के अन्य व्यक्तियों से तुलना करता हूँ तो मैं अपने को तृण के बराबर भी नहीं समझता।"

किटी–पर किस हैसियत से ? क्या आप परोपकार नहीं करते ? सहयोग-समिति...किसानों से समझौता...कृषि पर पुस्तक लिखना...

यह सब क्या है ?

लेविन—पर मुझे उतने से ही सन्तोष नहीं है।

किटी—तब तो आपकी समझ में कोनिशे के लिये यह पृथ्वी पर भार स्वरूप हैं, क्योंकि उनसे सार्वजनिक लाभ की कोई बात नहीं होती।

लेविन—उसमें जो गुण है, वह कम लोगों में देखने में आता है। वह उदारता, वह सादगी, वह स्पष्टवादिता कहां मिलती है!

किटी—क्या आप कोनिशे से बदलौवल कर सकते हैं। अपना काम उन्हें देकर उनका काम आप ले सकते हैं ?

लेविन—कभी नहीं। हां, तुम कह रही थीं कि आज कोनिशे परिणय की बात कहेंगे।

किटी—मैं ठीक ठीक नहीं कह सकती। मुझे ऐसी सम्भावना है और मैं उसके लिए चिन्तित हूँ। आओ गोटी डाल कर देखें, क्या निकलता है।

इतने में गाड़ी पर सवार किटी की मां भी वहीं आ पहुँची। सब साथ ही आगे बढ़े।

२

वरंका लड़कों के साथ आगे-आगे चली जा रही थी। प्रत्येक क्षण उसका हृदय कहता था, आज तेरे परिणय की चर्चा उठेगी। जिसकी उपासना तूने की है, वह आज वरदान देगा। कोनिशे उसके पीछे-पीछे चला जा रहा था। उसकी आँखें वरंका के रूपरस को पी रही थीं। वह सोच रहा था—"मेरे मन में यह विचित्र भाव उठा है। मुझे जल्दी नहीं करना

चाहिये। खूब सोच समझ कर कदम आगे रखना चाहिये। क्या मुझे उचित है कि मैं अपने कर्तव्य के विरुद्ध इस तरह गिर पड़ूं। मैं मेरिया को चाहता था। वह मर गई। उस समय मैंने क्या संकल्प किया था कि मैं आजन्म अविवाहित रहूँगा। उस प्रतिज्ञा को तोड़ दूँ। उस संकल्प से विमुख हो जाऊँ। पर यह इतनी बड़ी बाधा नहीं है। हां, समाज की दृष्टि में इसका बहुत महत्त्व है। लोग मुझे क्या कहेंगे। एक बात है, इससे बढ़कर रमणी मिलना कठिन है।"

उसने अनेक स्त्रियों से वरंका की तुलना कर देखा कि इसमें जो गुण वर्तमान हैं, कहीं भी देखने में नहीं आये। उसने सोचा—"यौवन, रूप, गुण सभीका समावेश इसमें है। संसार की माया से भी यह परे है। यह हर तरह से मेरे अनुरूप है। धार्मिकता भी इसमें है। धार्मिक सिद्धान्तों के आधार पर ही इसके जीवन की भित्ति खड़ी है। गरीब भी है, कोई सजातीय भी नहीं है कि भीड़ इकट्ठी रहेगी। मुझ पर उसका गाढ़ अनुराग भी है। केवल एक प्रश्न है। मेरी उम्र अधिक है। पर मैं जिस कुल में पला हूँ, उसका ख्याल कर तथा मेरा ढांचा देख कर मुझे कोई भी चालीस वर्ष का नहीं कह सकता। इसके अलावा वरंका ने ही एक दिन मुझसे कहा था—"रूस के ही लोग ५० वर्ष में अपने को बुड्ढा समझने लगते हैं, नहीं तो फ्रांस आदि देशों में तो ४० वर्ष तक लड़कपन रहता है।"

उसका दिल धड़कने लगा। उसका मन स्थिर हो गया। उसने पक्का इरादा कर लिया। वरंका एक फूल तोड़ने के लिये झुकी थी। ज्योंही वह खड़ी हुई, कोनिशे ने सिगरेट फेंक दिया और उसकी ओर बढ़ा। वह अपने मनमें सोच रहा था कि—"मैं वरंका से कहूँगा कि वरंका!

वर्षों से मैं अपने अनुरूप पत्नी की तलाश में था। आज मुझे ऐसी रमणी भाग्य से मिली। मैं तुम्हें उन सब गुणों से युक्त देखता हूँ। क्या तुम मेरा परिणय स्वीकार करोगी।"

इस समय वरंका फूल तोड़ कर खड़ी हो रही थी और मिशा को पुकार रही थी-"यहां आओ, यहां फूल बहुत से हैं।"

कोनिशे को अपनी तरफ आते देख, उसने समझा कि यह हम कोनिशे को अधिक पसन्द है, इसलिये वह उसी तरह खड़ी रही। उसने कोनिशे से पूछा-"आपने भी कुछ बटोरा?"

कोनिशे-एक भी नहीं और तुमने?

वरंका ने कुछ उत्तर नहीं दिया। सब लोग चुपचाप आगे बढ़े। वरंका ने देखा कि कोनिशे कुछ कहना चाहता है। उसका कलेजा धड़कने कगा। चलते-चलते दोनों दूर निकल गये। पर कोनिशे चुप था। वरंका से न रहा गया। वह बोली-"जंगल के बीच में कम उगते हैं।"

कोनिशे को यह बात अच्छी नहीं लगी। आह! इसने वही फूल की बात छेड़ दी। वह चुप रहा। दोनों और आगे बढ़े। लड़के बहुत पीछे छूट गये। वरंका के हृदय को धड़कन बढ़ती गई। वह बेचैन होकर सोचने लगी-"कोनिशे की पत्नी होना बड़े भाग्य की बात है। इससे बढ़ कर सुख संसार में क्या हो सकता है। मैं उन्हें हृदय से चाहती हूँ। इसी क्षण निपटारा हो जायगा। वह सहम गई। देखें कुछ कहते हैं या नहीं।"

वरंका के चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं, आशा, निराशा, भय, आशंका सभी तरह के भाव दिखाई देते थे। 'कोनिशे ने अपने मन में कहा-"अभी, या कभी नहीं, यदि मैं इस समय कुछ नहीं कहता तो

उसका अपमान होगा।" उसने कहा-"वरंका, सफेद और लाल फूल में क्या फर्क है?"

वरंका ने दोनों का भेद बतला दिया।

इस बात-चीत के खतम होते न होते दोनों ने देखा कि जो कुछ कहना-सुनना था, समाप्त हो गया। जो उत्तेजना दोनों के हृदय में क्षण भर पहले उठ रही थी, इस समय गिरने लगी।

इसके बाद वे लोग लड़कों की ओर बढ़ने लगे। वरंका का हृदय शर्म और वेदना से व्याकुल हो उठा। पर साथ ही उसे शान्ति भी मिली।

घर जाकर कोनिशे ने अपने इस निर्णय पर विचार करना आरम्भ किया। उसने देखा कि वह भूल कर रहा था। मेरिया के मरने के बाद, उसने जो संकल्प किया था, उससे डिगना उचित नहीं था।

रास्ते में लेविन आदि से मुलाकात हो गई। किटी ने दोनों की आकृति देख कर समझ लिया कि उसकी चाल सफल नहीं हुई।

३

शाम को सब लोग चाय पीने बैठे। साधारण तरह से बातें हो रही थीं; पर सबके दिलमें यह भाव उठ रहा था कि कोई असाधारण घटना घटी है। कोनिशे, वरंका, किटी और लेविन पर इसका विशेष प्रभाव था। पर सब कोई असल बात को छिपा कर रखना चाहते थे।

किटी की मां-किटी के पिता ने लिखा है कि वे नहीं आवेंगे।

उसी दिन अव्लास्की और किटी के पिता दोनों शाम की गाड़ी से आनेवाले थे।

किटी की मां-उन्होंने लिखा है कि लड़कों को अकेले छोड़ देना चाहिये। उनके आनन्द में विघ्न डालना उचित नहीं।

किटी-पर कितने दिन से वे नहीं आये हैं और हम लोग अब लड़के नहीं रहे।

किटी की मां-यदि वे नहीं आये तो मुझे ही जाना पड़ेगा।

किटी और डाली-खूब मां! तुमने भी खूब कहा।

किटी की मां यहां बड़े सुख से थी; पर उसके हृदय में घोर वेदना थी। किटी के विवाह के बाद घर खाली होगया था, वह काटने दौड़ता था।

इतने में अगाफिया सामने आकर खड़ी हो गई।

किटी-क्या है अगाफिया?

अगाफिया-भोजन तैयार है।

डाली-ठीक है। चलो ठीक-ठाक करो। तब तक मैं लड़कों की देख-भाल कर लूं। ग्रीशा से सबक सुनना है। नहीं तो वह कल दिन भर कुछ नहीं करेगा।

लेविन-जो सबक मैंने दिया है, उसे सुनने मैं स्वयं जा रहा हूँ, तुम बैठो।

ग्रीशा स्कूल में पढ़ रहा था। डाली, ग्रीशा को प्रतिदिन लैटिन और गणित पढ़ाती थी। यहां आने पर लेविन ने यह भार अपने ऊपर ले लिया। पर लेविन के पढ़ाने का तरीका भिन्न था। डाली चाहती थी की स्कूल की पढ़ाई की तरह ही उसे पढ़ाया जाय। लेविन को विस्मय

हुआ कि स्कूल में इतनी बुरी तरह पढ़ाया जाता है। उसने लाचार होकर वही तरीका अख्तियार किया। निदान उसने ग्रीशा को उसी तरह पढ़ाना आरम्भ किया। पर वह तरीका उसे इतना नापसन्द था कि उसका पढ़ाने में मन नहीं लगता था। कभी कभी तो वह पढ़ाने का समय ही भूल जाता। आज भी वही बात हुई।

लेविन वहाँ से उठ कर ग्रीशा के पास गया।

वरंका ने ठीक उसी तरह की बातें किटी से कहीं—"तुम बैठो, मैं अगाफिया के साथ जाकर सामान ठीक करती हूँ।"

इतना कह कर वरंका अगाफिया के साथ चली गई।

किटी की मां—कितनी गुणवती है।

किटी—मां! मेरी समझ में तो दूसरी लड़की इसकी तरह नहीं मिलेगी।

कोनिशे वरंका के संबन्ध की बातें नहीं सुनना चाहता था।

बात उड़ाकर उसने कहा—"आप लोग आशा करती हैं कि अब्लास्की आज आवेंगे? (किटी की मां से) आपके दोनों दामाद दो भिन्न प्रकृति के हैं। अब्लास्की सभा-सोसायटी में पानी की मछली की तरह नाचते हैं। लेविन सभा में जाते ही घबड़ा जाता है। उसका दम घुटने लगता है।"

किटी की मां—वे जरा लापरवाह भी हैं। मैं आपसे कहना चाहती थी कि आप इन्हें समझा दें कि किटी के लिये यहां रहना कठिन है। इसे मास्को में ही रहना पसन्द है।

किटी—(अपने मनमें क्रोध करके) वे सब बन्दोबस्त कर लेंगे।

यही बातें हो रही थी कि घोड़ों के टापकी आवाज सुनाई दी।

फिर सबों ने देखा कि अव्लास्की किटी के चचेरे भाई के साथ चले आ रहा है। किटी के पिता के न आने से सबको हतोत्साह होना पड़ा।

किटी के चचेरे भाई का नाम वेलोस्की था, उसने किटी से हाथ मिलाया, फिर लेविन की ओर घूम कर बोला—"हम दोनों बालसखा हैं।

अव्लास्की सबसे मिल-जुल कर डाली से बातें करने लगा।

लेविन न जाने क्यों उदास हो गया, उसका चेहरा उतर गया। सब लोग बैठ कर बातें करने लगे; पर लेविन अपनी जगह से उठा और बाहर चला गया।

किटी ने देखा कि कुछ गड़बड़ी है। उसने उससे पूछना चाहा पर लेविन यह कहता चला गया कि उसे कुछ जरूरी काम है।

इतना कह कर वह बाहर हो गया।

४

भोजन का समय हुआ तो लेविन को बुलवाने के लिये आदमी गया। लेविन ने देखा कि सीढ़ी पर किटी और अगाफिया सलाह कर रही हैं कि क्या क्या चीज परसी जानी चाहिये।

लेविन—किस बात की परीशानी है? जो सामान हो, उसीसे काम चलाओ।

किटी—बात क्या है। तुम्हारा चेहरा इस तरह उदास क्यों है?

लेविन ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह सीधा भोजनालय में चला गया।

अव्लास्की—(लेविन से) क्या कल शिकार खेलने चला जायगा?

लेविन—बड़ी खुशी से।

इसी तरह की बातें देर तक होती रहीं। सोने का समय बीता जारहा था।

डाली-(अब्लास्की से) तुम्हारी तो रात भर जागने की आदत है और तुम दूसरों को भी जगाना चाहते हो।

अब्लास्की-अभी तो बहुत सी बातें कहनी हैं।

डाली-वे किसी महत्व की नहीं होगी।

अब्लास्की-वेलोस्की अन्ना के यहां गया था और वहीं फिर जायगा। वे लोग यहां से कोई ५० मिल पर रहते हैं। मैं भी जाऊँगा। (वेलोस्की से) यहां आओ।

वेलोस्की किटी के पास जाकर बैठा।

अब्लास्की-अन्ना के साथ और कौन था? वह कैसी है?

वेलोस्की-वह बड़े मजे में है। वहां भी खूब आनन्द है।

अब्लास्की—उनकी क्या मंशा है?

वेलोस्की—वे लोग मास्को जाकर रहने का विचार कर रहे हैं।

अब्लास्की-अगर हम लोग सब के सब उनके यहां चलें तो बड़ा आनन्द आवे। तुम कब जा रहे हो?

वेलोस्की-जुलाई में।

अब्लास्की-(डाली से) तुम भी चलोगी?

डाली-मैं बहुत दिनों से अन्ना से मिलना चाहती हूँ। मैं जाऊंगी, मुझे उसकी अवस्था पर बड़ा खेद है; पर मैं अकेली जाऊंगी।

अब्लास्की-(किटी से) तुम किटी?

किटी का चेहरा लाल हो गया। वह बोली-"मैं क्यों जाने लगी।"

इतना कह कर उसने अपने पति की ओर देखा।

वेलोस्की—(किटी से) अन्ना से तुम्हारा भी परिचय है ! अन्ना बड़ी ही शानदार औरत है।

किटी का चेहरा और भी लाल हो आया। उसने कहा—"हां !" इसके बाद अपनी जगह से उठी और लेविन के पास चली गई। उसने पूछा—"क्या आप कल शिकार खेलने जायंगे।"

लेविन मन ही मन जल भुन रहा था। उसके हृदय में ईर्ष्या और डाह के बुरे-बुरे भाव उठ रहे थे। वह समझता था—"किटी वेलोस्की पर आसक्त है और मुझे जंगल में भेज कर उससे प्रेमालाप करने का अवसर ढूंढ रही है।" वह बोला—"हां, जाने का विचार तो है।" उसने यह वाक्य इस तरह से कहा कि उसके ही कान को कटु मालूम हुआ।

किटी—नहीं, कल यहीं रहिये। नहीं तो डाली को अब्लास्की से बात-चीत का अवसर नहीं मिलेगा और वह परसों चल देंगे।

लेविन ने इसका दूसरा ही अर्थ निकाला। अगर वह शिकार खेलने जाता तो अब्लास्की वेलोस्की को जबर्दस्ती पकड़ ले जाता। फिर किटी को वेलास्की का दर्शन नहीं मिल सकता था।

लेविन—अगर तुम्हारी यही इच्छा है तो हम लोग घर पर ही दिन काटेंगे।

वेलोस्की को स्वप्न में भी इस बात का अनुमान नहीं था कि मेरी उपस्थिति ने इस तरह की विपत्ति का बीजारोपण किया है। किटी के बाद ही वह हँसता हुआ अपनी जगह से उठा और उसके पीछे हो लिया।

लेविन ने वेलोस्की की चितवन देखी। उसका चेहरा स्याह हो गया, उसका दम घुटने लगा। ओह ! यह व्यक्ति, उसकी पत्नी को इस तरह घूर सकता है !

वेलोस्की–(लेविन से) कल शिकार खेलने चलिगेगा न ?

लेविन की ईर्ष्या बढ़ती जाती थी। उसने देखा कि मैं धोखे में हूँ। पर वह आपसे बाहर नहीं हो गया। बड़ी नर्मी से उसने वेलोस्की से बातें कीं। शिकार की बात तै हो गई।

इतने में किटी की मां ने कहा–"किटी, तुम जाकर सो रहो।" किटी विदा होने लगी। वेलोस्की ने उसका हाथ फिर चूमना चाहा। किटी ने हाथ खींच लिया। वह बोली–"हम लोग यह तरीका नहीं पसन्द करते।"

एक तो लेविन इससे नाखुश था कि उसने इसका अवसर दिया। अब उसे इस बात का क्रोध था कि उसने वेलोस्की का अपमान किया।

अब्लास्की–लोग सोने के लिये इतने परीशान क्यों रहते हैं? (किटी से) देखो चन्द्रमा कितना सुन्दर दिखलाई पड़ता है। कितना अच्छा समय है। वेलोस्की, कोई गाना गावो।

सब लोग उठ खड़े हुए। अपने-अपने कमरे में जाकर लोगों ने छत पर अब्लास्की और वेलोस्की के गाने का राग सुना।

लेविन अपने कमरे में जाकर कुर्सी पर बैठ रहा। किटी ने बार बार उसकी उदासी का कारण पूछा, पर वह चुप रहा। अन्त में किटी ने कहा–"मालूम होता है, वेलोस्की की कुछ बातें आपको पसन्द नहीं आईं।" लेविन भरे घड़े की भांति फूट पड़ा, सब बातें कह गया। जितना-जितना वह कहता जाता था, शर्म से नीचे गड़ा जाता था। उसने कहा–"मुझे ईर्ष्या या डाह नहीं है। पर मैं यह नहीं देख सकता कि कोई भी व्यक्ति मेरी पत्नी को इस तरह घूरे।"

किटी की समझ में कुछ भी नहीं आया। उसने विस्मय से पूछा–"किस तरह से?"

उसने शाम की सारी घटना की आलोचना आरम्भ किया। उसने अनुमान किया कि शायद मेरे साथ ही, वेलोस्की का उठ कर आना इन्हें खटका। पर वह अपने मुंह से यह बात नहीं कहना चाहती थी। क्योंकि इससे लेविन की उत्तेजना और भी बढ़ जाती। वह बोली— "भला, इस अवस्था में मुझमें क्या धरा है, जो कोई मुझे घूरेगा ?"

लेविन—यह बात नहीं है।

किटी—तुम अन्याय कर रहे हो, संसार में तुम्हारे सिवा मेरे लिये कोई प्रिय वस्तु नहीं है। यदि तुम चाहते हो तो मैं आज से मनुष्य की सूरत तक देखना छोड़ सकती हूँ।

पहले तो किटी को क्रोध आया। उसे इस बात से क्षोभ था कि वह साधारण तौर भी किसी से हँस बोल नहीं सकती, लेविन को डाह होने लगती है। किटी ने देखा कि अगर वह उसी की तरह चलती है तो लेविन की वेदना और भी बढ़ जायगी। उसने लेविन को शान्त करना चाहा। वह बोली—"हम लोगों का एकान्त में बात करना तुम्हें खटका। मैंने उसी समय तुम्हारे चेहरे को गौर से देखा; पर तुम जानते हो कि हम लोगों में क्या बातें हो रही थीं ?"

इसके बाद उसने सारा दास्तान कह सुनाया।

लेविन—(शर्मा कर) प्रिये ! मैंने तुम्हारे साथ भीषण अत्याचार किया। तुम क्षमा करो। मैं पागल हो गया था, मेरा हृदय पापी है।

किटी—मुझे आपकी अवस्था पर बड़ा खेद था।

लेविन—मैं भी कैसा नीच हूँ। मेरी समझ में क्षण भर यह बात न आई कि हम लोगों का प्रेम-बन्धन अक्षुण्ण है के साथ भी अन्याय किया। मैं उसे रोककर अपने

खूब आदर करूँगा।

इतना कह कर लेविन ने किटी का आलिंगन किया।

५

सवेरा होते ही शिकार की तैयारी होने लगी। घोड़े कस कर तैयार किये गये। कुत्ते अपने अपने मालिकों के घोड़े के पीछे जा खड़े हुए। वेलोस्की और अव्लास्को अपने-अपने घोड़ों पर सवार भी हो चुके थे; अभी तक लेविन का पता नहीं था।

वेलोस्की—अभी तक लेविन नहीं आये।

अव्लास्की—नई स्त्री मिली है। क्या सहज ही में छुटकारा हो जायगा?

वेलोस्की—ठीक कहा। साथ ही ईश्वर ने रूप भी दिया है।

अव्लास्की—हजरत एक बार नीचे उतर कर फिर आज्ञा लेने गये हैं।

बात भी कुछ ऐसी ही थी। लेविन के चित्त को शान्ति नहीं थी। वह कपड़ा पहन कर एक बार नीचे आया, फिर अपनी पत्नी से रात की घटना के लिये क्षमा मांगने और दो दिन की छुट्टी लेने गया था।

किटी—आप निश्चिन्त होकर जाइये, लेकिन रोज शाम को किसी से कुशल समाचार भेज दिया कीजियेगा।

दो रोज के लिये पति का विछोह किटी के लिये असह्य था। पर इस समय वह लेविन के आनन्द में बाधा नहीं डालना चाहती थी। उसके उत्साह के सामने, वह अपना दुःख भूल गई और प्रसन्न चित्त होकर उसने पति का आलिंगन किया।

नीचे पहुँच कर लेविन ने देखा कि सब लोग घोड़े पर उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह बोला—"मित्रों, क्षमा करना मुझे देर हो गई। भोजन आदि की सामग्री तो यथेष्ट रख ली गई है न?"

लोग चार कदम भी आगे न बढ़े होंगे कि सामने से बढ़ई आते दिखाई दिया।

लेविन–एक विघ्न और उपस्थित हो गया। दो मिनट के लिये क्षमा करना। इस दुष्ट को भी विदा कर दें।

वह बोला–"कल तुम क्यों नहीं आये?"

बढ़ई–सिर्फ़ तीन डंडे और बनाने को रह गये हैं। मैं सब साथ ही तैयार कर दूंगा, इसमें बड़ी सुविधा होगी।

लेविन–मैंने तुमसे कहा था कि पहले खम्भा खड़ा कर दो, पीछे डण्डे जोड़ देना; पर मेरी बात कौन सुनता है। अब क्या हो सकता है? नई सीढ़ी तैयार करो और जैसा मैंने कहा है, उसी के अनुसार काम होना चाहिये।

नये मकान में सीढ़ियां लग रही थीं। बढ़ई ने बिना अन्दाजा किये ही सीढ़ियां लगा दी थीं। सीढ़ी एक दम ढालू हो गई थी। वह चाहता था कि तीन डण्डा और लगाकर उसी को रहने दिया जाय।

बढ़ई–(विकट हँसी हँस कर) उसे आप बरबाद क्यों कर रहे हैं? जिस तरह मैं बतला रहा हूँ, उस तरह ठीक हो जाता है।

लेविन–तीन डण्डा और लगने से लम्बाई बढ़ जायगी। उससे क्या होगा?

बढ़ई—जमीन से लेकर ऊपर तक चली जायगी।

लेविन-छत तक?

बढ़ई–नहीं इस तरह ।

लेविन ने कंकड़ उठा लिया और जमीन पर नकशा खींच कर बताना आरम्भ किया । अब बढ़ई की समझ में आया । उसने कहा– "सरकार, तब तो दूसरी सीढ़ी बनाना ही उचित होगा ।"

लेविन—मैंने जैसे बतलाया है, उसी तरह दूसरी सीढ़ी फौरन तैयार करो ।

इतना कह कर लेविन ने घोड़ा आगे बढ़ाया ।

लेविन का हृदय शान्त था । सारी चिन्तायें इस समय, उससे कोसों दूर हो गई थीं । उसके हृदय में एक विचित्र सन्तोष ने आसन जमा लिया था । इस समय उसे बात तक करने की इच्छा नहीं होती थी । हां, शिकारियों की भांति उसके चित्त में चञ्चलता और मन में उत्तेजना अवश्य थी–"देखें, कहां शिकार मिलता है । आज नये शिकारी का साथ पड़ा है । अगर हाथ की सफाई न दिखा सका तो नज़र नीची होगी" इत्यादि बातें रह-रह कर उसके चित्त में उठती थीं ।

अब्लास्की की भी यही हालत थी । उसके मुँह से भी बात नहीं निकल रही थी । पर बेलोस्की का मुँह क्षण भर के लिये भी बन्द नहीं था । लेविन चुपचाप उसकी बातें सुनता जाता था । उसे शर्म और घृणा आ रही थी । उसने सोचा—"मैं कितना बड़ा नीच हूँ । उस सीधे-सादे सज्जन के प्रतिकूल, किस तरह की भीषण कल्पनायें कर रहा था । आह ! अगर विवाह के पहले, इससे मुलाकात हुई होती तो मैं इससे जरूर मैत्री कर लेता ।" पढ़ा-लिखा भी वह अच्छा था । अंगरेजी और फ्रेञ्च भाषा वह इतनी सफाई के साथ बोलता था कि लेविन चकित होकर उसके मुँह की ओर देखता रह जाता था ।

वेलोस्की जिस घोड़े पर सवार था, उसकी प्रशंसा करतेही नहीं थकता था—"घोड़े का कितना सुडौल शरीर है। किस शान से झूमता हुआ चलता है। ऊँचे-नीचे जगहों पर कितनी सफाई से पैर रखता है।"

लेविन उसकी प्रत्येक बात पर हँस देता था। चाहे उसका सरल स्वभाव हो; चाहे लेविन का पश्चात्ताप हो। लेविन इसके सत्संग से प्रसन्न था।

दो मील जाने पर वेलोस्की को सिगरेट की जरूरत पड़ी। जेब में हाथ डाला तो मालूम हुआ कि न सिगरेट की डिबिया है, न नोटबुक है। नोटबुक में ५५५) रुपये थे। इसलिये उसी वक्त उनका पता लगाना जरूरी था। वेलोस्की खुद जाना चाहता था; पर लेविन ने उसे न जाने दिया और अपना एक नौकर घोड़े पर भेजा।

६

सबों ने घोड़े की रास ढीली कर दी। घोड़े दौड़ पड़े। वेलोस्की का घोड़ा सबसे आगे निकल गया। एक, दो, तीन करके वेलोस्की घोड़े हि. आंखों मे ओट हो गया। वह नियत स्थान पर सबसे पहले पहुंचा। जिस समय अब्लास्की और लेविन वहां पहुंचे, वेलोस्की नास्ता-पानी करके सिगरेट पी रहा था। वह बोला—"ये गृहस्थ बड़े ही उदार हैं। इन्होंने मुझे भोजन दिया, सिगरेट दिया, पर ये इसके लिये एक पैसा भी लेना नहीं चाहते।"

लेविन—वे तुम्हारा आतिथ्य कर रहे हैं। तुमसे लेने क्यों लगे।

े लोग रोजगारी थोड़े हैं कि एक तश्तरी भोजन दिया और १) पया ले लिया।

सब लोगों ने भोजन किया। शाम हो गई थी। इसलिये वहीं ठहर ाना निश्चित किया; पर नींद कहां थी। सब लोग बात-चीत करने गे। अब्लास्की ने एक शिकार का किस्सा बयान करना आरम्भ किया।

मालथस बहुत धनी आदमी था। रेलवे का हिस्सा खरीद कर उसने धन बटोरा था। इसके बाद अब्लास्की ने बतलाया कि वह किस संकट से फँस गया था और मालथस ने किस तरह उसकी सहायता की थी।

लेविन—(उठ कर) मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसे लोगों के पास तुम क्यों जाते हो। क्या इनसे मिलने में तुम्हें घृणा नहीं मालूम होती। किसी गरीब की रूखी रोटी, उससे कहीं अच्छी हो सकती है। ये नीच प्राचीन समय के पूंजीपतियों की भांति जिस पाप का धन कमाते हैं, उससे सभी को घृणा करनी चाहिये। लोगों की घृणा की परवाह न कर, ये लोग नीच से नीच उपाय भी काम में लाने से नहीं हिचकते।

वेलोस्की-आपका कहना बहुत ठीक है। मैं खुद जानता हूँ कि इसके लिये कितने ही लोग, अब्लास्की की तरफ उँगलियाँ उठाते हैं।

अब्लास्की-(लापरवाही से) सब वाहियात बातें हैं। क्या हमारे कुलीनवर्ग के लोग उससे कम घृणित हैं। उन्होंने कौन कमाई करके यह धन बटोरा है? क्या इसने अपनी बुद्धि लगा कर काम नहीं किया है।

लेविन - आह! इसे भी तुम काम कहते हो। किसी तरह रियासत पा जाना और उसका दुरुपयोग कर जुआ (फाटका) खेलना भी काम है?

अव्लास्की–जरूर है। अगर उन लोगों ने यत्न न किया होता तो आज रेलों का कहीं पता न होता। क्या यह कम काम है?

लेविन–पर इसे उस अभिप्राय में काम नहीं कह सकते। जिस अभिप्राय में किसानों और विद्वानों का काम समझा जाता है।

अव्लास्की–ठीक है; पर इसे इस अर्थ में 'कार्य' कह सकते हैं कि इससे भी फल निकलता है। अर्थात्–रेलवे। तो तुम रेलों को व्यर्थ समझते हो?

लेविन–यह दूसरी बात है। मैं मानता हूँ कि रेलों से लाभ है; पर मैं उस लाभ को अनुचित समझता हूँ, जिसमें मजूरों की मजूरी की समता न हो।

अव्लास्की–पर यह समता किस तरह निर्धारित हो सकती है?

लेविन जानता था कि यह सीमा निर्धारित करना कठिन है। वह बोला–"बेईमानी और दगाबाजी से लाभ उठाया जाता है। बैंक हो क्या है? बैंकों के हिस्सेदार ही क्या काम करते हैं। बैठे बैठे मुफ्त का नफा खाते हैं।"

अव्लास्की को दृढ़ विश्वास था कि उसका पक्ष प्रबल है। इसलिये उसने धीरे-धीरे कहा–"तुम्हारा कहना ठीक हो सकता है; पर तुमने यह तो नहीं बतलाया कि कहां तक नफा खाना उचित और अनुचित है। मेरा हेड क्लर्क मुझसे अधिक जानता है; पर मुझे उससे कहीं अधिक तनख़ाह मिलती है। क्या इसे बेईमानी नहीं कह सकते?

लेविन–इसमें बेईमानी क्या है?

अव्लास्की–पर मैं तो तुमसे कह सकता हूँ कि खेतों से तुम्हारी ५ हजार पौंड साल की आमदनी और मेरी लम्बी-चौड़ी तनख़ाह! किसान,

जो दिन-रात कड़ा परिश्रम करके भी ५० पौंड से अधिक लाभ नहीं उठा सकते और मेरा क्लर्क, जिसे-अधिक जानकार होने पर भी-मुझसे कहीं कम तनखाह मिलती है, यह पूरी बेइमानी है। क्योंकि इसी दृष्टि से तुमने मालथस की आमदनी को पाप का धन बतलाया है। वास्तव में बात यह है कि समाज को धारणा, इन विचारों के विरुद्ध हो गई है और बिना कारण—इसी धारणा के अनुसार-लोग जो मनमें आता है, बक जाते हैं। सच बात तो यह है कि उनकी बढ़ती से लोग जलते हैं।

वेलोस्की—आपका यह कहना संगत नहीं है। डाह का क्या कारण हो सकता है?

लेविन—तुम्हारा कहना है कि हमारा लाभ किसानों के मुकाबिले में अनुचित है। मैं इसे स्वीकार करता हूँ और इसका मुझे खेद है। इस चिन्ता में मैं जला करता हूँ।

वेलोस्की ने इस प्रश्न पर आज तक कभी भी विचार नहीं किया था। इन लोगों की बातें सुन कर उसने भी अपनी दृष्टि इस प्रश्न पर दौड़ाई। वह बोला—"वास्तव में हम लोग घोर अन्याय करते हैं, नहीं तो हमें क्या अधिकार है कि हम लोग तो अनेक तरह से गुलछर्रे उड़ावें और ये बेचारे किसान दिन भर खेतों में काम करें। न दिन को दिन समझें न रात को रात, न धूप को धूप और न बरसात को बरसात।

अब्लास्की—(जानबूझ कर लेविन को भड़काने के लिये) ठीक है, तुम्हें इस बात का खेद अवश्य है; पर क्या तुमने एक बार भी इस बात पर विचार किया है कि इन गरीब किसानों को भी अपने खेत में हिस्सा दे देना चाहिये।

इधर जब से लेविन ने किटी का पाणिग्रहण किया है, दोनों साढुओं

में एक तरह की प्रतियोगिता चल रही थीकि देखें कौन अपना जीवन अ
तरीकेसे निवाहता है। इस आक्षेप में उसका आभा प्रत्यक्ष मिलने लगा

लेविन—मैं नहीं देता, क्योंकि मुझसे कोई मांगनेवाला नहीं
और यदि देने भी जाऊँ तो कोई लेनेवाला नहीं है।

अब्लास्की—इसी किसान को दे दो। मेरी समझ में यह इन्का
नहीं करेगा।

लेविन—पर मैं उसे किस तरह दूं। क्या मैं उसके पास जाकर, उ
बखशीशनामा लिख दूं?

अब्लास्की—यह मैं नहीं जानता; पर यदि तुम्हारा विश्वास है कि
तुम्हारा अधिकार नहीं......।

लेविन—केवल विश्वास ही नहीं; बल्कि पक्का विश्वास है कि मुझे
इसे देने का कोई अधिकार नहीं। इसके प्रति तथा कुटुम्ब के प्रति मेर
कुछ कर्तव्य है।

अब्लास्की—जब तुम इस असमानता को अनुचित समझते हो त
इसके अनुरूप काम क्यों नहीं करते?

लेविन—दूसरी तरफ से मैं इसका प्रतीकार करता हूँ। मैं सदा यह
यत्न करता रहता हूँ कि यह असमानता बढ़ने न पावे।

अब्लास्की—यह सिर्फ गोटी की चाल है।

वेलोस्की—यह तो मुझे भी पसन्द नहीं है। इतने में किसान भी
वहीं आ पहुंचा, उसे देख कर वेलोस्की ने कहा—"अभी तक आप भी
नहीं सोये हैं।"

किसान—जब आप ही लोग नहीं सोये तो मैं कैसे सो सकता हूँ?

वेलोस्की—रात को आप लोग सोवेंगे कहां?

किसान—आज रात को हम लोग चौपायों को लेकर चराने जायंगे।

वेलोस्की—(चन्द्रमा की ओर देख कर) कैसी सुहावनी रात है। चन्द्रदेव कितने शुभ्र मालूम हो रहे हैं। आसमान पर सफेद चादर बिछा है। अप्सरायें गान कर रही हैं। (चौंक कर) कहीं से गाने का शब्द भी आ रहा है। कोई रमणी गा रही है, सुर भी खराब नहीं है। (किसान से) कौन गा रहा है मित्र ?

किसान—पास ही में वाड़ा है। वहीं ग्वालिन गा रही है।

वेलोस्की—चलो, जरा उसी तरफ टहल आवें। अभी अधिक रात नहीं गई है। जरा ठहर कर सोवेंगे। अब्लास्की, उठो भाई।

अब्लास्की—अगर इस जगह के सहित हम लोग वहां पहुँचा दिये जाते तो बड़ा आनन्द आता यहां पड़े रहने में ज्यादा मजा आ रहा है, यार।

वेलोस्की—अच्छी बात है। मैं अकेला ही जाता हूँ। (कपड़ा पहन कर) तुम लोगों के लिये भी थोड़ा आनन्द लेता आऊँगा।

वेलोस्की चला गया। किसान भी दरवाजा बन्द कर चला गया।

अब्लास्की—वेलोस्की भी मौजी जीव है।

लेविन—मौजी क्या, गजब का आदमी है। लेविन के ध्यान में बातचीत का सिलसिला अब तक जारी था। लेविन सोच रहा था कि उसने अपने हृदय की सच्ची बातें स्पष्ट शब्दों में कहीं, फिर भी लोगों ने यही कहा कि गोटी की चाल है। इससे उसको कष्ट हो रहा था।

अब्लास्की—प्रत्येक आदमी को दो बातों में से एक माननी पड़ेगी। या तो वह स्वीकार करे कि समाज की वर्तमान दशा ठीक है और उसके अनुसार चले और अपने अधिकारों और सत्ताओं की रक्षा करता रहे, अथवा स्वीकार करे कि मैं अनुचित लाभ उठा रहा हूँ। जैसा कि मेरा हाल है

और तब मौज करे।

लेविन—अगर यह अनुचित होता तो तुम इसका उपभोग कर, इस तरह सन्तुष्ट कभी न रहते। कम से कम मेरे लिये तो यह असम्भव था। मैं समझता हूँ कि इसमें मेरा कुछ भी दोष नहीं है।

अव्लास्की घबरा सा गया था। उसने बात का सिलसिला तोड़ने की गरज से कहा—"हम लोग यों सो भी नहीं सकते। चलो, वहीं क्यों न चलें। तुम्हारी क्या राय है?"

लेविन ने कुछ उत्तर नहीं दिया। उसका दिमाग उसी प्रश्न में उलझा हुआ था। उसने कहा—"क्या मैं विपरीत दृष्टि से भी न्याय कर सकता हूँ।"

अव्लास्की-(उठ कर) घास की महक इतनी तीखी है कि नींद आना कठिन है। वेलोस्की कहां गया है। कुछ न कुछ नया मजाक, वह तैयार कर रहा होगा। देखो, कह-कहा मार कर हंसने की आवाज आ रही है। चलो, हम लोग भी चलें।

लेविन—नहीं, मैं नहीं जा सकूंगा।

अव्लास्की—(अँधेरे में अपनी टोपी टटोलते हुए) पर इसमें तो सिद्धान्त का प्रश्न नहीं टांग अड़ाता।

लेविन—पर मैं क्यों जाऊँ?

अव्लास्की—तुम समझ नहीं रहे हो कि तुम अपने जीवन में क्या संकट उपस्थित कर रहे हो।

लेविन—कैसे?

अव्लास्की—तुम समझते हो कि मैं निरा उल्लू ही हूँ। किटी के साथ जिस मार्ग पर तुम चल रहे हो, मैं सब समझता हूँ। दो दिन की जुदाई

भी बरदाश्त नहीं। बिना आज्ञा आंख से ओझल नहीं हो सकते। दो चार दिन यह चल सकता है; पर क्या तुम समझते हो कि इससे तुम्हारा जीवन सुखमय हो सकता है। पुरुष की प्रकृति स्वतन्त्र होनी चाहिये। उसे संसार में अनेक काम करने हैं। यह कायरता किस काम की ?

लेविन—किस तरह ? दाइयों और मजूरनियों पर हाथ साफ करके···

अब्लास्की—भाई, इससे आनन्द मिलता है तो कोई हर्ज नहीं। इससे मेरी पत्नी का कुछ नहीं बिगड़ सकता और मुझे आनन्द मिलता है। केवल वंश-मर्यादा का ख्याल रखना चाहिये। घर में गन्दे वायु का प्रवेश न होने देना चाहिये। पर अपना हाथ-पांव बांध कर रहने की जरूरत नहीं।

लेविन—हो सकता है। कल सवेरे ही मैं बन्दूक उठा कर चल दूंगा, किसी को जगाऊंगा नहीं।

इतना कह कर उसने करवट बदली।

इतने में वेलोस्की की आवाज सुनाई दी। वह लौट आया। और बोला—"मैंने उससे दोस्ती कर ली, बड़ी ही मजेदार औरत है।"

लेविन ने सांस रोक ली मानों सो गया है। अब्लास्की वेलोस्की के साथ हो लिया और दोनों घर से बाहर हो गये।

बहुत देर तक लेविन को नींद नहीं आई। एक ओर से घोड़ों के घास खाने की आवाज आ रही थी। दूसरी ओर किसानों की चहल-पहल थी। एक तरफ सिपाही लोग अपना बिछौना बिछा रहे थे। किसान का लड़का, अपने चचा से कुत्तों के संबंध में अनेक तरह का प्रश्न कर रहा था। चचा उसे समझा रहा था कि—"बगल के कमरे में शिकारी सो रहे हैं। कल वे लोग शिकार खेलने

जायंगे। अपनी बन्दूकों और कुत्तों की सहायता से वे लोग बड़े-बड़े जानवरों को मारेंगे।" इतना कह कर चचा ने उसे सोने के लिये कहा थोड़ी देर में सब सो गये। चारों ओर सन्नाटा छा गया। केवल नाक के बजने की आवाज आ रही थी। पर लेविन की आखों में नींद नहीं थी। वह सोच रहा था—"क्या वास्तव में यह बातें केवल निषेधात्मक हैं। पर इसमें मेरा क्या दोष है ?"

धीरे-धीरे लेविन को नींद आने लगी। झपकी लेते हुए, उसने अब्लास्की और वेलोस्की को किसी छोकरी के बारे में बातें करते सुना। उसने कहा—"जनाब ! कल सवेरे सूर्योदय के पहले ही।"

इतना कह कर वह सो गया।

७

दो दिन तक शिकार खेलकर तीसरे दिन सदल-बल सब लोग घर लौटे। सबका हृदय प्रसन्न था। वेलोस्की की बातें सुन-सुन कर सब हँस रहे थे। अधिक रात गये सबलोग घर पहुँचे और अपने-अपने कमरे में जाकर सो रहे।

लेविन सदा की भांति सवेरे उठा और खेतों पर गया। दस बजे वह लौटा और सीधे वेलोस्की के द्वार पर गया। कमरे का दरवाजा बन्द था। लेविन ने दरवाजा खटखटाया।

वेलोस्की—(भीतर से) भाई क्षमा करना, अभी स्नान करके कपड़े भी नहीं पहन सका हूँ।

लेविन—कोई हर्ज की बात नहीं है ।

इतना कहकर वह खिड़की पर बैठ गया । उसने पूछा—"नींद तो खूब लगी ?"

वेलोस्की—मैं तो बे-तरह सो गया था ।

लेविन—चाय पीओगे कि कहवा ?

वेलोस्की—कुछ नहीं, औरतें उठ गई होंगी और मैं अभी तक ल... रहा था । कितनी शर्म की बात है । समय तो टहलने लायक है । चलो, मुझे अपने घोड़ों को दिखला दो ।

दोनों आदमी घर से बाहर हो गये । घोड़ों को देखकर बाग में इधर-उधर घूमकर लौटे तो सीधे बंठक में चले गये । किटी कोचपर बैठी थी । ...लोस्की ने उसके पास जाकर कहा—"इस दौरे में बड़ा आनन्द आया । खूब शिकार खेला । बेचारी औरतों को यह आनन्द नसीब नहीं !"

लेविन ने अपने मन में कहा उचित ही है कि वह किटी से शिकार का वर्णन करे । फिर भी उसकी बात-चीत का ढंग, आंखों की मटक, और मुस्कराहट, उसे खटकी ।

किटी की मां दूसरी ओर बैठी थीं । उन्होंने लेविन को अपने पास बुलाकर कहा—"मेरी राय है कि किटी को मास्को ले चला जाय और प्रसव वहीं कराया जाय । अभी से कमरा वगैरह ठीक कर देना होगा ।"

लेविन इसके एक दम प्रतिकूल था । शादी के समय भी उसने धूम-धाम के लिये आपत्ति की थी । इस समय उसकी आपत्ति और भी अधिक थी । वह इन बातों पर विशेष महत्त्व नहीं देना चाहता था । ज्योतिषी ने बतलाया था कि पुत्र होगा, पर अनिश्चित के लिये व्यस्त रहना, फजूल की तैयारी करना, इसे प्रिय नहीं था । पर किटी की मां को इन

बातों का कब ख्याल था कि लेविन क्या सोच रहा है । उसे तो आ
धुन सवार थी ।

लेविन—मैं कुछ नहीं जानता । जो आपको अच्छा लगे, करिये ।

किटी की मां—तुम्हें यह तो तै करना ही होगा कि तुम लोग यहां
कब कूंच करोगे !

लेविन—मैं कुछ नहीं कह सकता । सूसमर के लड़के मास्को में
नहीं पैदा होते । पर जैसी किटी की इच्छा हो ।

किटी की मां—मैं किटी का दिल दहलाना नहीं चाहती । अ
इसी साल डाक्टर की भूल से गोलिजिन को प्राणों से हाथ धोना पड़

लेविन—(उदासीनता से) जो आप कहेंगी, मैं करूँगा ।

किटी की मां बोलती गई; पर लेविन के कानों में उसकी ब
नहीं गई । किटी की मां की बातें उसे पसन्द नहीं थी; पर उससे उ
उतना दुःख नहीं था; बल्कि उस दिनवाले ईर्ष्या के भाव आज फि
उदय हो रहे थे और उसका हृदय जल रहा था । वेलोस्की और कि
जिस ढंग से बातें कर रहे थे, उसे पसन्द नहीं था ।

किटी की मां को लक्ष्य करके उसने फिर वही बात कही—"आपको ज
अच्छा समझ पड़े, करिये । इस सम्बन्ध में मुझे कुछ नहीं कहना है ।

अब्लास्की ने लेविन की परीशानी देखी । उसका कारण भी ता
गया, वह बोला—"दाह बुरी बला···" इतने में डाली ने कमरे
प्रवेश किया । (डाली से) "तुम्हें आज बड़ी देर हुई ।"

सब लोगों ने डाली का अभिवादन किया; पर वेलोस्की उसक
ओर एक दफा देख कर, फिर किटी से हंस-हंस कर बातें करने लगा ।

डाली—माशा को रात भर नींद नहीं आयी ।

वेलोस्की ने आज भी वही सिलसिला छेड़ा था, जो उस दिन रात को चल रहा था। अन्ना का प्रसंग लेकर विवाद था कि प्रेम को सबसे ऊँचा स्थान देना उचित है या नहीं। किटी को यह प्रसंग पसन्द नहीं था। वेलोस्की के बात करने का तरीका भी, उसे पसन्द नहीं था और वह दुखी भी थी कि कहीं लेविन को आज भी डाह न होने लगे। पर वह यह नहीं जानती थी कि इस प्रसंग को किस प्रकार बन्द करे, या वेलोस्की की बातें सुन कर गंभीर बनी रहे। वह डरती थी कि लेविन उसकी तरफ गौर से देखता होगा और बुरी धारणा कर रहा होगा। और डाली से जब उसने माशा का हाल पूछा तो लेविन को उसकी बात में अस्वाभाविकता प्रतीत हुई।

डाली—क्या आज भी फूलों की खोज में चक्कर मारा जायगा।

किटी—जरूर, और आज तो मैं भी चलूँगी।

वह वेलोस्की से चलने के लिये आग्रह करना चाहती थी; पर शर्म के मारे उसका चेहरा लाल हो गया और वह नहीं पूछ सकी। उसने लेविन से कहा—"आप भी चलियेगा।" उसका चेहरा अपराधी की भांति हो रहा था।

लेविन ने उसकी आकृति देखी। उसका सन्देह दृढ़ हो गया।

लेविन—मुझे इञ्जीनियर से मिलना जरूरी है। मैं नहीं चल सकूंगा।

इतना कह कर वह नीचे उतर गया। किटी भी उसके पीछे-पीछे गई।

लेविन—क्या है ?

किटी—(इंजीनियर से) मुझे कुछ गुप्त बातें करनी हैं।

इंजीनियर कमरे से बाहर जा रहा था। पर लेविन ने उसे रोक कर कहा—"तुम अपना हर्ज क्यों करते हो ?"

इतना कह कर लेविन किटी को लिये कमरे से बाहर चला गया। व बोला–"कहो, क्या कहना है ?"

लेविन ने किटी की ओर आंख उठा कर देखा भी नहीं। किटी व शरीर कांप रहा था। उसके चेहरे पर परीशानी छा रही थी। वह बोली "इस तरह काम नहीं चल सकता। यह यातना मुझे सह्य नहीं।"

लेविन–बगल में नौकर-चाकर हैं। तमाशा न करो।"

किटी–यहां से दूसरे कमरे में चलो।

दोनों बाग में चले गये। किटी ने कहा–"इस तरह कब तक च सकता है ? तुम भी यातना भोगते हो और मुझे भी परीशान करते ह और किस लिये ?"

लेविन–मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ। उसकी बातों ऐसी कोई बात थी, जो अनुचित, घृणित या असाधारण थी ?

किटी–जरूर थी। पर इसके लिये मैं दोषी नहीं हो सकती मैं नहीं मानती कि वह क्यों आया। हम लोग कितने सुखी थे

इतना कह कर वह रोने लगी।

लेविन की शंका दूर हो गई। उसने किटी के आंसू पोछे। जि समय बाग से लौटे, लेविन और किटी का चेहरा प्रसन्न और शान्त था

८

किटी को ऊपर पहुंचा कर लेविन डाली के पास गया। इस संबं में वह डाली की सलाह लेना चाहता था। डाली उस समय मार पर बेतरह बिगड़ रही थी।

लेविन—क्या बात है ?

डाली—यह बड़ी दुष्ट हो गई है। इसकी शरारतों का अन्त नहीं। न जाने किस सायत में इसने जन्म लिया है।

इतना कह कर उसने माशा की शरारत का विवरण दिया।

लेविन—बच्चे हैं, ऐसा हो ही जाता है।

डाली—पर तुम्हारा चेहरा क्यों उतरा है, क्या मामला है, वहां या हो रहा है ?

उसने जिस तरह यह सब प्रश्न किया, लेविन को अपना प्रस्ताव खने का अवसर मिल गया। वह बोला—"परसों की घटना आज फिर हो ई। मैं किटी के साथ बाग में समझौता कर रहा था। सीधे वहीं े आ रहा हूँ।"

डाली—पर इसमें किटी का कुछ दोष नहीं है। पुरुष होकर वेलोस्की ें इतनी बेहयाई है। उसे इतनी तमीज नहीं कि दूसरों की पत्नी के साथ केस तरह बात-चीत करनी चाहिये। वह समझता है कि संसार इस समय सौन्दर्य पर जिस तरह लट्टू होकर वह पागलों की तरह चल रहा है, उसी तरह मुझे भी चलना चाहिये। पति को इस बात के लिये र्प मनाना चाहिये कि मेरी पत्नी के इतने चाहनेवाले हैं।

लेविन—तुमने भी इसे देखा न !

डाली—मैं ही नहीं, अब्लास्की ने भी देखा। उन्हें भी बुरा मालूम हुआ। जलपान के बाद ही उन्होंने मुझसे कहा।

लेविन—ठीक है। अब मैं इन्हें एक क्षण भी यहाँ ठहरने नहीं दूँगा। कल ही इन्हें यहां से धता करूँगा।

डाली—देखो, कहीं पागलपन न कर बैठना। मैं अब्लास्की से

इतना कह कर लेविन किटी को लिये कमरे से बाहर चला गया। वह बोला—"कहो, क्या कहना है?"

लेविन ने किटी की ओर आंख उठा कर देखा भी नहीं। किटी का शरीर कांप रहा था। उसके चेहरे पर परीशानी छा रही थी। वह बोली—"इस तरह काम नहीं चल सकता। यह यातना मुझे सह्य नहीं।"

लेविन—बगल में नौकर-चाकर हैं। तमाशा न करो।"

किटी—यहां से दूसरे कमरे में चलो।

दोनों बाग में चले गये। किटी ने कहा—"इस तरह कब तक चल सकता है? तुम भी यातना भोगते हो और मुझे भी परीशान करते हो और किस लिये?"

लेविन—मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ। उसकी बातों में ऐसी कोई बात थी, जो अनुचित, घृणित या असाधारण थी?

किटी—जरूर थी। पर इसके लिये मैं दोषी नहीं हो सकती मैं नहीं मानती कि वह क्यों आया। हम लोग कितने सुखी थे

इतना कह कर वह रोने लगी।

लेविन की शंका दूर हो गई। उसने किटी के आंसू पोछे। जिस समय बाग से लौटे, लेविन और किटी का चेहरा प्रसन्न और शान्त था

८

किटी को ऊपर पहुंचा कर लेविन डाली के पास गया। इस संबंध में वह डाली की सलाह लेना चाहता था। डाली उस समय माशा पर बेतरह बिगड़ रही थी।

लेविन—क्या बात है ?

डाली—यह बड़ी दुष्ट हो गई है। इसकी शरारतों का अन्त नहीं है। न जाने किस सायत में इसने जन्म लिया है।

इतना कह कर उसने माशा की शरारत का विवरण दिया।

लेविन—बच्चे हैं, ऐसा हो ही जाता है।

डाली—पर तुम्हारा चेहरा क्यों उतरा है, क्या मामला है, वहां क्या हो रहा है ?

उसने जिस तरह यह सब प्रश्न किया, लेविन को अपना प्रस्ताव रखने का अवसर मिल गया। वह बोला—"परसों की घटना आज फिर हो गई। मैं किटी के साथ बाग में समझौता कर रहा था। सीधे वहीं से आ रहा हूँ।"

डाली—पर इसमें किटी का कुछ दोष नहीं है। पुरुष होकर वेलोस्की में इतनी वेहयाई है। उसे इतनी तमीज नहीं कि दूसरों की पत्नी के साथ किस तरह बात-चीत करनी चाहिये। वह समझता है कि संसार इस समय सौन्दर्य पर जिस तरह लट्टू होकर वह पागलों की तरह चल रहा है, उसी तरह मुझे भी चलना चाहिये। पति को इस बात के लिये हर्ष मनाना चाहिये कि मेरी पत्नी के इतने चाहनेवाले हैं।

लेविन—तुमने भी इसे देखा न !

डाली—मैं ही नहीं, अब्लास्की ने भी देखा। उन्हें भी बुरा मालूम हुआ। जलपान के बाद ही उन्होंने मुझसे कहा।

लेविन—ठीक है। अब मैं इन्हें एक क्षण भी यहाँ ठहरने नहीं दूँगा। कल ही इन्हें यहां से धता करूँगा।

डाली—देखो, कहीं पागलपन न कर बैठना। मैं अब्लास्की से

कह दूंगी कि इस शख्स का यहां रहना ठीक नहीं है और वह किसी बहाने, उसे यहां से लेजाय। लेकिन तुम उससे लड़ पड़ोगे।

लेविन—नहीं, मैं बड़े तरीके से कहूँगा। अच्छा, माशा को क्षमा कर दो। उसकी आँखें कब से अधीर होकर ताक रही हैं।

इतना कह कर वह वेलोस्की के पास गया। स्टेशन के लिये गाड़ी तैयार कराता गया। वेलोस्की अपने कमरे में कपड़ा पहन कर सवारी करने की तैयारी कर रहा था। उसे देखकर एक बार तो लेविन को शर्म आई। पर जी कड़ा करके उसने कहा—"मैंने तुम्हारे वास्ते गाड़ी जुतवाई है। ट्रेन का समय भी होता है।"

वेलोस्की—(विस्मय के साथ) क्या मामला है ?

लेविन—कई मेहमान आने वाले हैं·········नहीं नहीं, मेहमान वगैरह कोई नहीं आने वाले हैं। मेरी विनीत प्रार्थना है कि आप बराय मेहरबानी यहां से अपनी तशरीफ ले जाइये। मेरी इस धृष्टता और उजड्डपन का जो चाहे अर्थ लगाइयेगा।

वेलोस्की—क्या मामला है, साफ-साफ क्यों नहीं कह देते ?

लेविन—मैं इस सम्बन्ध में इससे अधिक कुछ नहीं कह सकता। और आप पूछिये भी नहीं।

वेलोस्की—क्या मैं अब्लास्को से मिल सकता हूँ ?

लेविन ने अब्लास्क को बुला दिया और आप बाग में चला गया।

अब्लास्को ने सब बातें सुनीं। वह लेविन के पास गया और बोला—"क्या पागलपन है ! अगर कोई युवक·········"

लेविन का चेहरा फिर उदास हो गया। उसने अब्लास्की को और आगे नहीं बोलने दिया। बीच ही में रोक कर कहा—"उस प्रसंग को मत

छेड़ो। मैं लाचार हूं। तुम नहीं समझ सकते कि तुम लोगों के साथ इस तरह पेश आने में मुझे कितनी यातना हो रही है। पर मैं समझता हूँ कि जाने में उन्हें जितना दुःख होगा, उनके रहने से मुझे और मेरी स्त्री को उससे कहीं अधिक कष्ट है।"

अब्लास्की—उसका कितना अपमान हो रहा है?

लेविन—मैं तो दोनों ही तरह से मारा जाता हूँ। अपमान का अपमान और विषम यातना। मेरा किसी प्रकार भी दोष नहीं है और मैं इतनी विषम वेदना नहीं सह सकता।

अब्लास्की—तुमसे ऐसी आशा नहीं थी।

लेविन ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। वहां से हट कर, दूसरी तरफ चला गया और टहलने लगा। थोड़ी देर के बाद उसने देखा कि वेलोस्की गाड़ी पर सवार स्टेशन की तरफ जा रहा है।

लेविन के इस व्यवहार से किटी की मां और अब्लास्की को बड़ा विस्मय हुआ। लेविन को कम शर्म नहीं थी। उसका चेहरा भी अपराधी की भांति पीला पड़ गया था। पर किटी की और अपनी यातना का स्मरण कर, उसने अपने मन में कहा—"सिवा इसके दूसरा मार्ग ही नहीं था। मैंने उचित ही किया।"

शाम होते-होते वेलोस्की सब के ध्यान से उतर गया। दोपहर की इस असाधारण घटना का किसी ने नाम तक नहीं लिया। केवल किटी की मां का क्रोध शान्त नहीं हुआ था, वह किसी भी तरह लेविन को क्षमा नहीं कर सकती थी।

डाली ने तो इस घटना का इस तरह मजाक उड़ायी कि लोग हंसते-हंसते लोट पड़ते थे।

———

९

लेविन तथा किटी दो में से किसी को भी पसन्द नहीं था कि डाल अन्ना से मिलने जाय। पर डाली ने जाना उचित समझा। अन्न से वह इतना प्रेम रखती थी कि इस अवस्था में भी वह, उससे नात नहीं तोड़ना चाहती थी। लेविन पर इस यात्रा का लेशमात्र भी भार न देने के लिये, उसने किराये की गाड़ी ठीक की, लेविन को पता लगा तो उसने जाकर कहा—"यह आपसे किसने कहा कि आपका वहां जाना मुझे पसन्द नहीं है। थोड़ी देर के लिये मान भी लीजिये कि यह मुझे पसन्द नहीं है तो क्या आपको किराये की सवारी लेने में, मुझे उससे अधिक कष्ट नहीं होगा। आपने मुझसे निश्चित दिन कभी नहीं बतलाया। आपको मेरा ख्याल हो तो आप मेरी सवारी पर जाइये, किराये की गाड़ी न लीजिये।"

डाली को लेविन की बात माननी पड़ी। नियत तिथि को, ठीक समय पर लेविन ने डाली के लिये चार घोड़े की गाड़ी तैयार करा दी। इस काम में लेविन को थोड़ी कठिनाई उठानी पड़ी, क्योंकि उसी दिन किटी की मां जा रही थी और दाई बुलाने के लिये भी गाड़ी भेजना था। फिर भी लेविन ने डाली को चार घोड़ों की गाड़ी पर भेजना ही उचित समझा। एक तो उसे डाली के आराम का ख्याल, दूसरे किराये की गाड़ी में डाली के २० पौंड खर्च हो जाते। उसकी आर्थिक दुरवस्था का लेविन को सदा ध्यान रहता था और उनकी तकलीफों को, वह सदा अपना समझता था। लेविन ने अपने गुमाते को भी डाली के ...थ कर दिया।

सूर्योदय के पहले ही गाड़ी रवाना हुई। डाली आराम से गाड़ी में बैठ गई। रास्ते के लिये आवश्यक भोज्य पदार्थ रख दिये गये। अकेली डाली गाड़ी पर बैठी चली जा रही थी। उस समय उसके मन में अनेक तरह के ख्याल उठने और विलीन होने लगे। उसने अपने सारे जीवन की समालोचना कर डाली—"मैं क्या थी और क्या हो गई? कितना भीषण परिवर्तन! इतने बाल-बच्चे और मैं। सब का खर्च कैसे चलेगा? मां ने बच्चों की देख-भाल करने के लिये कहा है; पर कौन जाने क्या होगा। किटी ने भी तसल्ली दिया है। देखें क्या होता है। लड़कियां पराये की चीज़ हैं। आज नहीं तो कल चली जायँगी; पर लड़कों का क्या होगा? उन्हें पढ़ाना-लिखाना और फिर संसार में प्रवेश कराना होगा। मान लो, इस समय मुझे फुरसत है, ग्रीशा को पढ़ाये देती हूँ। अब्लास्की से कोई आशा ही नहीं करनी चाहिये। थोड़ी देर के लिये मान लेती हूँ कि मैं इतने लड़कों की देख-भाल कर सकती हूँ; पर अभी तो उम्मीद नहीं गई है। बच्चे पैदा करने में तो कोई कठिनाई नहीं है। आफत है, उन्हें पालना और शिक्षा देना।" इस समय उसे अपनी नन्हीं बच्ची की याद आई, जिसे उसने अभी हाल में ही खोया था। सराय में घोड़े बदलते समय, उससे किसान की लड़की से जो बात-चीत हुई थी, उसका भी उसे स्मरण हो आया। डाली ने उससे पूछा था—"तुम्हें कोई लड़का-वाला है?"

औरत—एक कन्या हुई थी; पर ईश्वर ने मुझे मुक्त कर दिया। हाल में ही मैंने उसका अन्तिम संस्कार किया है।

डाली—तुम्हें तो बड़ा दुःख हुआ होगा।

औरत—दुःख! किस लिये। बाबा को अनेक नाती-पोते हैं। यह भी

एक यातना थी। इससे मुक्त हो गई।

उस समय डाली को उसकी बातें न रुचीं; पर इस समय उनका स्मरण कर उसने कहा—"उसका कहना भी ठीक ही था। ठीक है, शुरू से अन्त तक कष्ट ही कष्ट तो है। नौ महीने तक पेट में रख कर बोझा ढोना और, प्राण संकट में डाल कर बच्चा उत्पन्न करना पड़ता है। फिर पालन पोषण की चिन्ता, कहीं से भी छुटकारा नहीं है। गर्भवती का रूप कितना खराब हो जाता है। किटी का चेहरा कितना विरूप हो गया है।

डाली को प्रसव की वेदना का एकाएक स्मरण हो आया और वह काँप उठी। उसने फिर मन-ही-मन कहा—"इन सब यातनाओं का परिणाम क्या है? आजीवन चिन्ता और अशान्ति इस जीवन में एक क्षण भी सुख और शान्ति से नहीं बीतता। रुपये-पैसे की हर वक्त चिन्ता रहती है। मेरी ही दशा क्या है? अगर यह गर्मी लेविन के साथ न बिताती तो न जाने क्या हालत होती। लेविन और किटी इतनी कृपा रखते हैं और इस तरह सब बातें करते हैं कि हम लोगों को पता नहीं लगता; पर इस तरह कब तक चल सकता है? उन्हें भी बाल-बच्चे होंगे। वे बेचारे कितना खर्च कर सकेंगे। बाबा के पास भी इतनी सम्पत्ति नहीं है कि वे हमारी सहायता कर सकें। न तो मेरे पास ही उनकी शिक्षा के लिये उचित साधन है और न दूसरे से ही आशा की जा सकती है। बहुत यत्न से काम करने पर भी उन्हें मैं बहुत योग्य नहीं बना सकती। केवल इतने के लिये मुझे आजन्म विपत्ति उठानी पड़ती है। किसान की छोकरी ने ठीक कहा था। उसकी बातें बेतुकी भले ही हों, पर सच थीं।"

[illegible] अपनी धुन से चली जा रही थी। डाली ने गुमाश्ते से पूछा—

"मिहल! अब कितना दूर होगा?" वह अपने चित्त को फेरना चाहती थी।
मिहल—सामने जो गाँव दिखाई देता है, वहां से केवल पाँच मील है।
गांव के दूसरी तरफ एक नदी थी। नदी पर पुल था। पुल पर
गाँव की बहुत सी स्त्रियाँ जमा थीं। वे हँस-हँस कर आपस में बातें कर
रही थीं। गाड़ी आते देख, सबकी सब चुप हो गईं। विस्मय के साथ
डाली की ओर देखने लगीं। डाली ने उन्हें देखा। सब की सब तन्दुरुस्त
थीं। गाड़ी उनके पास से आगे बढ़ी; पर डाली का ध्यान उन्हीं पर था।
उसने सोचा—"कैसा स्वच्छन्द और सुखमय जीवन है। सबकी सब प्रसन्न
हैं। आनन्द से जीवन बिताती हैं। आह! मैं आज चार घोड़े की गाड़ी
पर जारही हूँ; पर मेरे और इनके जीवन में कितना अन्तर है।"
वह फिर विचार करने लगी—"अन्ना को लोग दोषी समझते हैं।
उसमें क्या दोष है? यही न कि उसने अपने पति से प्रेम
नहीं किया। पर यही संसार की गति है। क्या मैं भी अपने
पति से उतना स्नेह रखती हूँ, जितना रखना चाहिये। उसने
बुरा नहीं किया। मैं भी उस अवस्था में यही कर सकती थी।
सभी औरतें ऐसा कर सकती हैं। मेरा चित्त अब भी स्थिर नहीं है
मैंने अन्ना की बात मान कर अच्छा किया या बुरा। मुझे भी उस समय
इनसे संबंध तोड़कर नयी तरह से जीवन आरम्भ करना था। मेरा यह
नया प्रेम अवश्य दृढ़ होता। क्या वर्तमान अवस्था सन्तोषजनक है?
मेरी दृष्टि में उसके लिये कोई प्रतिष्ठा नहीं रह गई है। आवश्यक
समझ कर मैं उसके साथ हूँ। क्या इसे अच्छा कह सकते हैं? उस
समय मुझमें सौन्दर्य था। कितने लोग मुझे ग्रहण करने को तैयार हो
जाते।" डाली को अपना चेहरा देखने की प्रबल उत्कण्ठा हो उठी; पर

गुमाश्ता और कोचवान का ख्याल कर उसने ऐसा करना उचित नहीं समझा।

उसने मनही मन कहा—"आज भी क्या बिगड़ा है ?" इस समय उसका ध्यान कोनिशे, अब्ज़ास्की के मित्र तुरोसिन और एक अन्य युवक पर गया। तीनों अच्छे हैं और मेरे सौन्दर्य की प्रशंसा करते हैं। इस समय डाली के चित्त में विचित्र तरह के भाव उठ रहे थे। उसका मन विक्षिप्त हो गया था। उसने कहा—"अन्ना ने कुछ अनुचित नहीं किया। इसके लिये मैं उसे कुछ दोष नहीं दूँगा और न कुछ कहूँगा। वह सुखी है। उसकी बदौलत रंस्की भी सुखी है। उसके ऊपर इतना भार भी नहीं है।" डाली के चेहरे पर मुस्कराहट आ गई। अन्ना की प्रेम-कहानी का स्मरण कर, उसने अपना भविष्य जीवन भी उसी प्रणाली पर बना लिया था।

इसी प्रकार की कल्पना में व्यस्त वह अन्ना के गांव के नजदीक पहुँची। एक किसान से रंस्की का पता पूछ कर वे आगे बढ़े ही थे कि एक किसान ने चिल्ला कर कहा "—ठहरिये-ठहरिये, वे लोग इधर से ही आ रहे हैं।" गाड़ी रुक गई, डाली ने देखा कि अन्ना, रंस्की, वेळोस्की, वरवारा सभी घोड़े पर सवार उधर ही चले आ रहे हैं। डाली को देखते ही अन्ना ने अपना घोड़ा तेज किया और गाड़ी के पास आकर घोड़े से कूद कर डाली के गले से लग गई। तब तक रंस्की भी आ पहुँचा। वह बोला—"आपके आने से हम लोगों को जितनी खुशी है, नहीं कह सकता।" अन्ना की खुशी का ठिकाना नहीं था। वह प्रसन्न हो रही थी। वेळोस्की ने घोड़े से उतरना उचित नहीं समझा। उसने वहीं से डाली का [illegible] त किया। अन्ना ने वरवारा का परिचय कराया।

वरवारा का सारा कच्चा चिट्ठा डाली जानती थी। अव्लास्की की चाची होने पर भी, इसके लिये डाली के हृदय में श्रद्धा नहीं थी। इस समय रंस्की के सिर पर खेलते देख, डाली का हृदय घृणा से भर गया। अन्ना ने डाली के हृदय का भाव ताड़ लिया; पर कुछ कहा नहीं।

स्विस्की को भी डाली जानती थी। उसने पूछा—"कहिये, दम्पत्ति सकुशल तो हैं।"

१०

अन्ना घोड़े से उतर कर डाली के साथ गाड़ी में बैठ गई। उसने देखा कि डाली का शरीर सूख कर दुबला हो गया है, चेहरा सूख गया है। वह कुछ कहना ही चाहती थी, उसी समय उसे स्मरण हो आया कि इन दिनों मैं तैयार होकर खूबसूरत हो गई हूँ और डाली की आंखें भी यही कह रही हैं। इसलिये इस प्रसंग को छेड़ना उचित नहीं। निदान उसने अपनी कहानी प्रारम्भ की।

अन्ना–डाली! तुम विस्मय के साथ मुझे देख रही हो। तुम अपने मनमें समझती होगी कि इस अवस्था में मैं कैसे सुखी हूँ। चाहे तुम इसे निर्लज्जता समझो; पर मैं साफ स्वीकार करती हूँ कि मैं अत्यन्त सुखी हूँ। मानों अब तक मैं भयानक स्वप्न देख रही थी और नींद खुली तो देखती हूँ कि पलंग पर मुलायम गद्दा बिछा है और मैं आराम से सो रही हूँ। वह मेरी सुप्तावस्था थी। यह मेरी जागृतावस्था है। जबसे मैं यहां आई हूँ परम सुखी हूँ।

डाली–मेरा चित्त शान्त हुआ। पर तुमने मुझे सूचना तक न दी।

अन्ना–डाली ! क्या उस समय मुझे इतना साहस हो सकता था ? तुम्हीं विचार कर देखो !

डाली–मेरे पास लिखने के लिये......अगर तुम यह जानतीं कि मेरा क्या ख्याल है।

डाली अपने हृदय का भाव कह देना चाहती थी; पर न जाने क्या सोच कर चुप हो रही। वह बोली–"इस संबंध में फिर बातें होंगी। (बात बदलने के लिये) यह इमारतें कैसी हैं ?"

अन्ना ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने पूछा–"नहीं, पहले तुम्हें यह बतलाना होगा कि तुम्हारी क्या राय है ? तुम मेरे बारे में क्या समझती हो ?"

डाली अपने हृदयगत भावों को व्यक्त कर देना चाहती थी; पर गाड़ी में उसने यह सब कहना उपयुक्त नहीं समझा, वह बोली–"मैंने इस पर विचार नहीं किया है। मैं तुम्हें स्नेह करती हूँ। मेरा अनुराग बदल नहीं सकता।"

अन्ना की आंखों से आंसू आ रहे थे। अन्ना का हाथ अपने हाथमें लेकर डाली ने पूछा–"ये मकानात कैसे हैं ?"

अन्ना—ये सब नौकरों के मकान हैं, बखार है, अस्तबल है। यह सब गिर गया था। पर रंस्की ने मरम्मत करवाई है। यह जगह उसे बहुत पसन्द है। सामने अस्पताल की इमारत है। उसने अभी बनवाई है। कैसे सुन्दर मकान हैं !

डाली और अन्ना, इसी तरह से बातें कर रही थीं। रंस्की ने पास जाकर पूछा–"इन्हें किस कमरे में ठहराओगी। नजदीक ही कमरा ठीक है, जिसमें मिलने-जुलने की सुविधा हो।"

अन्ना (डाली से) तुम एक ही दिन में नहीं जाने पाओगी।

डाली–लड़के शोर-गुल मचावेंगे। मैंने एक दिन में लौट आने के लिये कह दिया है।

अन्ना–अच्छा देखा जायगा।

इतना कह कर अन्ना ने डाली को गाड़ी से उतारा और लेकर आगे बढ़ी।

कमरे में आकर दोनों बैठ गईं। कमरा खूब सजाया गया था। वह विलासिता का सजीव मूर्ति था। अन्ना ने लड़कों का कुशल समाचार पूछा, भाई की बातें पूछीं और कहा–"टन्या तो बढ़ गई होगी ?"

डाली–सब मजे में है। टन्या बहुत लम्बी हो गई है। आज कल हम लोग लेविन के साथ हैं।

अन्ना–आह ! अगर मुझे पहले ही मालूम हो गया होता कि तुम लोग मुझसे घृणा नहीं करते।······तुम सब लोग क्यों नहीं आये ? अब्लास्की से रंस्की की घनी मित्रता है।

इतना कहते-कहते उसका चेहरा शर्म से लाल हो गया।

डाली—(घबरा कर) पर हम सब·········

अन्ना–खुशी में मैं पागल हो गई हूँ। न जाने क्या बक रही हूँ। बहिन डाली ! तुमसे मिल कर मेरा हृदय प्रफुल्लित हो उठा है। तुम ने मेरे संबंध में कुछ नहीं कहा कि तुम मेरी इस नई अवस्था को किस दृष्टि से देखती हो ? मैं जानने के लिये उत्सुक हो रही हूँ। तुम मुझ में किसी तरह का परिवर्तन नहीं पाओगी। मैं अपना जीवन सुख से बिताना चाहती हूँ। मैं किसी को सताना या दुःख देना नहीं चाहती। अपना सुख देखने का मुझे पूरा हक है। इस विषय पर फिर बातें

होंगी। इस समय उठ कर मुंह-हाथ धोओ।

११

अन्ना कमरे से चली गई। डाली अकेली रह गई। वह घूम-घूम कर कमरे को देखने लगी। कमरे की सजावट रंस्की की अतुल सम्पत्ति का परिचय दे रही थी। यूरोपीय विलासिता की कहानियां उसने उप न्यासों में पढ़ी थीं। आँखों देखने का उसे अवसर नहीं मिला था। आज उसने सब कुछ अपनी आँखों देखा। फ्रांस की बनी मुलायम शतरंजी फर्श पर बिछी थी। पलंग पर स्प्रिंगदार गद्दा बिछा था। तकियों प नये फैशन का झालरदार रेशमी गिलाफ चढ़ा था। सभी चीज़ मूल्यवान् और अत्यन्त सुन्दर थीं।

अन्ना की दासी के बदन पर भी साधारण पोशाक नहीं थी। उ की सफाई, उसकी आज्ञाकारिता और उसकी नम्रता पर डाली मुग्ध थी पर मन ही मन वह कुढ़ रही थी। उसके कपड़े उस दासी के बराब भी नहीं थे।

अन्ना की पुरानी दासी अनुस्का अन्ना के साथ थी, उसे देख क डाली को तसल्ली हुई। वह दासी चली गई। अनुस्का डाली की सेव करने लगी।

अनुस्का डाली को देखकर अतिशय प्रसन्न थी। वह अन्ना के बा में कुछ कहना चाहती थी। रंस्की की आज्ञाकारिता की प्रशंसा करन चाहती थी। पर डाली उसे अवसर न देती। उसे बीच में ही रोक देती

इतने पर भी अनुस्का कुछ न कुछ कहती ही जाती थी। इतने मे

अन्ना आ गई। अनुरक्ता का मुँह आप से आप बन्द हो गया। इससे डाली को बड़ी शान्ति मिली।

अन्ना सफेद साड़ी पहने थी। डाली ने गौर से देखा। वह साड़ी कितने मूल्य की थी, यह डाली से छिपा न रहा।

अन्ना की परीशानी गायब थी। डाली को देखकर उसके चेहरे पर जिस तरह की हवाइयां उड़ने लग गई थीं, वह इस समय नहीं थी। उसने पूछा—"छोटी बच्ची कैसी है?"

अन्ना—मजे में है। चन्द्रमा की तरह बढ़ रही है। देखोगी? चलो तुम्हें दिखलावें। बड़ी शैतान है। इटाली से जिस दाई को साथ लाये थे, उसे विदा करना चाहते थे। पर उससे वह इतनी हिल-मिल गई है कि एक मिनट के लिये भी उसका पिण्ड नहीं छोड़ना चाहती। मजबूरन उसे रखना ही पड़ा है।

डाली पूछना चाहती थी कि तुमने उसका नाम क्या रखा है? पर न जाने क्या समझ कर चुप रही।

अन्ना उसका मतलब समझ गई। वह बोली "हम दोनों परीशान हैं। रंस्की उसी वंश का है, जिस वंश का अलक्सं है। समझ में नहीं आता कि क्या नाम रखा जाय......देखा जायगा। चलो, इस समय तुम्हें बच्ची को दिखलावेंगे।"

जिस कमरे में लड़की थी, उसकी विलासिता और भी बढ़-चढ़ कर थी। बच्चों के घूमने-फिरने के लिये इङ्गलैण्ड से कई छोटी-छोटी गाड़ियां मंगाई गई थीं। उठना, खड़ा होना, चलना सीखने के लिये अनेक यन्त्र थे। एक से एक अच्छी और कीमती चीजें सजा कर रखी थीं। कमरा जितना बड़ा था, उतना ही खुला भी था।

बच्ची एक छोटी कुर्सी पर बैठी खा रही थी और अपना सारा कपड़ा भोजन से लपेट रही थी।

बच्ची का स्वास्थ्य बहुत ही अच्छा था; पर दास दासियां एक भी सुडौल नहीं थीं। डाली ने इस कारण यह समझा कि अभी इसका जीवन अस्थिर है। इसी लिये किसी दास-दासी ने इनके यहां रहना स्वीकार नहीं किया। लाचार इन्हें उसी को रखना पड़ा। डाली ने यह भी देखा कि अन्ना अपनी बच्ची के पास कम आती-जाती है और उसकी देख-रेख स्वयं बहुत कम करती है। क्योंकि उसके रहन-सहन के संबंध में उसे बहुत कम जानकारी थी।

डाली ने पूछा–कितने दांत निकल आये हैं?

अन्ना को यह भी मालूम नहीं था। वह बोली "मैं इसके प्रति कुछ लापरवाह सी रहती हूँ। पहले लड़के के समय यह बात नहीं थी।"

डाली–मैंने इसके एक दम प्रतिकूल धारणा कर ली थी।

अन्ना–नहीं, हां! एक बात तो तुमसे कहना भूल ही गई थी। मैं शिरोजा को देखने गई थी। पर इसके बारे में फिर कहूँगी। भाभी, मेरी दशा इस समय ठीक उस मनुष्य की तरह हो रही है, जो कई दिन से भूखा हो और एकाएक उसके सामने बढ़िया२ पदार्थ रख दिये गये हों और वह इस चिन्ता में पड़ा हो कि पहले क्या खाऊँ। मैं भूखा आदमी हूँ। तुम और मेरे पेट की सब बातें भोजन के पदार्थ हैं। मैं इसी चिन्ता में हूँ कि कहां से आरम्भ करूँ। आज अपने पेट की सभी बातें तुम्हारे सामने खोल कर कह दूँगी और अपना भार हलका करूँगी।

पहिले मैं अपने संगी-साथियों का परिचय दे दूँ। वरवारा को तुम [illegible] हो। इसने पीटर्सबर्ग में मेरी लाज रखी, इससे उसके दुर्गुणों पर

ख्याल रख कर भी मैंने उसे अपने साथ रखा है। स्विस्की यहाँ का मार्शल है। रंस्की का प्रभाव इधर अधिक है। उससे वह कुछ वसूल करना चाहता है। इसी से मेल-जोल रखता है। टशविच को वेत्सी ने छोड़ दिया। इसीलिये वह यहाँ आया। वेलोस्की को तुम जानती ही होगी। लेविन से क्या बातें हुईं। रंस्की से वह शिकायत कर रहा था। पर हम लोगों को विश्वास नहीं हुआ। इन लोगों के रहने से हम लोगों की तबीयत उदास नहीं होती। शहर के जीवन की चिन्ता नहीं होती। इनके अलावा एक इन्जीनियर, एक डाक्टर और एक शिल्पी भी साथ है।

१२

श्रीमती वरवारा बाग में एक पेड़ की छाया के नीचे बैठी कुछ सी रही थीं। डाली को लिये अन्ना उसके नजदीक पहुँच कर बोली—"लीजिये यही आपकी डाली है, जिसके लिये आप इतनी व्याकुल हो रही थीं। आप इनके जलपान का प्रबन्ध कीजिये, मैं रंस्की को बुलाने जा रही हूँ।"

वरवारा ने डाली को आदर के साथ बैठाया। कुशल-समाचार पूछा। वह बोली—"अन्ना को मैंने ही पाला-पोसा था। इस संकट के समय उसका दूसरा कोई सहायक नहीं था। मैंने अपना कर्तव्य समझा कि उसका साथ दूँ। सुना है, अलक्से तलाक देने की तैयारी कर रहा है। तब मैं अपने घर चली जाऊँगी। पर इस समय इसके पास मेरा रहना आवश्यक है। इसलिये समाज की परवा न कर, मैंने इसके साथ रहना निश्चय किया। तुमने भी ठीक ही किया······यही एक घटना

तो ऐसी है नहीं, अनेकों देखने में आई हैं। मैं तुम्हें कितनों का ना
गिना सकती हूँ; पर क्या किसी ने चूं तक किया। समाज ने उसप
धूल डाल दिया। अव्लास्की ने तुम्हें भेज कर अच्छा ही किया। उ
इनकी सहायता की आवश्यकता पड़ेगी।"

इतने में अन्ना रंस्की आदि को साथ लिये वहां आ पहुंची। सम
बड़ा ही सुहावना था। इससे किश्ती की सैर करना तै हुआ। वेलोस
और टशविच नाव लेने के लिये आगे भेज दिये गये और अन्ना, स्विस
तथा रंस्की ने डाली को साथ लिया और घाटकी ओर चले। इस नय
दुनियां में आकर डाली बेतरह घबड़ा रही थी। उस दिन रास्ते में उस
मन ही मन अनेक तरह की कल्पनायें कर डाली थीं। यहां तक कि अन्ना
इस आचरण को भी युक्तिसंगत बताया था। असाधुशीला स्त्रियों की भां
उसने इसे संगत ही नहीं मान लिया था, बल्कि उसे इस अवस्था से ए
प्रकार की डाह हो गई थी; पर अन्ना की रहन-सहन और संगी-साथि
को देख कर उसे खेद हुआ। जिस आदमी के लिये अन्ना ने अपना पत
किया था, उसका स्मरण कर भी डाली को खेद ही हुआ। रंस्की से व
सदा घृणा करती थी। उसे वह धन के मद में सदा चूर देखती थी
इसके अतिरिक्त उसमें कोई गुण भी वह नहीं देखती थी। रंस्की की प
छाईं से भी वह घबड़ाती थी।

दोनों चुपचाप चले जाते थे। डाली परीशान सी थी, वह बात
चीत का सिलसिला जारी करना चाहती थी। पर उसकी समझ में कु
नहीं आया कि क्या कहे। अन्त में उसने रंस्की के मकानों और बाग
की प्रशंसा आरम्भ कर दी।

रंस्की फूल कर कुप्पा हो गया। अपनी बड़ाई करने में उसने ए

बात भी न छोड़ी। उसने कहा–"यह गिर-पड़ रहा था, दिन-दहाड़े सियारों का अड्डा था। मैंने इसे ठीक किया। सामने अस्पताल बनवाया। उसके बगल में डाक्टर वगैरह के रहने के लिये घर बनवाया। एक से एक देखने लायक हैं। आप का चित्त प्रसन्न हो जायगा।"

सब लोग अस्पताल की ओर घूम पड़े। काम तेजी से चल रहा था। रंस्की एक तरफ जाकर कारीगर से कुछ कहने लगा।

अन्ना–क्या मामला है ?

रंस्की–सामने का चबूतरा नीचा रह गया है।

अन्ना–मैंने तो इनसे ऊँचा करने के लिये कहा था।

कारीगर–पर अब क्या हो सकता है ?

इसके बाद रंस्की सब को अस्पताल के भीतर ले गया और हरेक कमरा दिखला-दिखला कर बतलाने लगा कि किसमें क्या रहेगा। उसने यह कह दिया कि–"यह अव्वल दर्जे का अस्पताल होगा। डाक्टरी चिकित्सा संबंधी जितने सामान और औजार आज तक निकले हैं, सब मंगाकर इसमें रखे जायंगे और रूस में इसके सानी कोई अन्य अस्पताल नहीं होगा।"

डाली को यह सब बहुत पसन्द आया। रंस्की पर उसकी श्रद्धा बढ़ गई। वह मनही मन इसकी प्रशंसा करने लगी।

डाली थक सी गई। स्विस्की नया अस्तबल देखना चाहता था। इससे अन्ना और स्विस्की अस्तबल की ओर चले और डाली तथा रंस्की घर की ओर गये।

अवसर मिलते ही रंस्की ने कहा–"मैं आपसे कुछ बातें कहना चाहता हूँ। इसके लिये मैं अवसर ढूंढ रहा था। आप अन्ना को बेहद चाहती हैं।"

डाली चुप थी। आँखें फाड़-फाड़ कर वह रंस्की को देख रही थी। रंस्की के साथ इस निस्सहायावस्था में न जाने क्यों वह डर रही थी। उसका चेहरा उतरता जा रहा था। डाली को समझने में देर नहीं लगी कि रंस्की क्या कहना चाहता है। डाली ने सोचा—"वह मुझसे कहेगा कि या तो आप यहीं आकर रहिये या मास्को में अन्ना के रहने की सुविधा कर दीजिये। पर मैं अस्वीकार करूंगी।"

रंस्की—आप का अन्ना पर बहुत दबाव है। आप मेरी रक्षा कीजिये।

डाली ने रंस्की के चेहरे की ओर देखा। रंस्की बोलता गया—"अन्ना के मित्रों में से केवल आपने ही, उससे मिलने का साहस किया है। हम लोगों की अवस्था का अनुभव कर भी आपने प्रेम के सामने सब तुच्छ समझा।"

डाली—आप का अनुमान ठीक है और मैं अन्ना के लिये सब कुछ करने को तैयार हूँ। लेकिन......

रंस्की—अन्ना के अपमान का कारण मैं ही हूँ। इसीलिये मुझे दिन-रात इस बात की चिन्ता लगी रहती है।

डाली ने मन ही मन रंस्की की प्रशंसा की। वह बोली—"मैं सब समझती हूँ।"

रंस्की—यह संसार नरक के समान हो रहा है। पीटर्सबर्ग का अपमान कभी नहीं भूलेगा।

डाली—यहाँ आप लोग सुख से रह सकते हैं। अन्ना सुखी है। कहने को तो डाली कह गई; पर उसने हृदय में विश्वास नहीं किया कि सच-मुच वह सुखी है।

रंस्की—इस समय तो वह सुखी है। पर भविष्य का भी तो विचार

करना है।

इतने में दोनों बाग में पहुंच गये। एक बेंच पर डाली बैठ गई; पर रंस्की उसके सामने खड़ा ही रहा। वह बोला—"इस समय वह सुखी अवश्य है। पर यह सुख स्थायी नहीं रह सकता। हम लोगों ने बुरा किया या भला, अब इस प्रश्न पर विचार करना फिजूल है। हम लोगों ने अपनी जीवन-नौका तूफान में छोड़ दी। हम लोग प्रेम के एक सूत्र में बँध गये और उसे हम लोग परम पवित्र समझते हैं। हम लोगों को एक कन्या है और भी लड़के हो सकते हैं। पर हम लोगों की अवस्था बड़ी ही नाजुक है, हजारों विपत्तियाँ उठ सकती हैं, पर अन्ना इन्हें न समझती है और न समझने का यत्न ही करती है। कानूनन इस लड़की पर मेरा कोई अधिकार नहीं है। इस तरह का मिथ्याचार मुझे सह्य नहीं।"

इतना कह कर उसने डाली पर सभेद दृष्टि डाली।

डाली चुप थी। उसने कुछ नहीं कहा। रंस्की ने फिर आरम्भ किया—"कल ही हम लोगों को पुत्र हो सकता है; पर कानून वह न हम लोगों का कहा ही जायगा और न हमारी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी ही हो सकता है। क्या यह हमें सुख दे सकता है। क्या इसे हम सुखमय जीवन कह सकते हैं। मेरा शरीर इस चिन्ता में भस्म होता जा रहा है; पर अन्ना को इसकी परवा नहीं और मैं भी स्पष्ट सब बातें उससे नहीं कह सकता। केवल प्रेम से ही तो मेरा जीवन नहीं चल सकता है। हमें काम भी चाहिये। ईश्वर की कृपा से हमने अच्छा ही काम उठाया है। इसी तरह चलने देंगे। पर इसके प्रतिकूल······"

डाली ने देखा कि रंस्की किसी उलझन में फँसा जा रहा है; पर वह

कुछ समझ नहीं सकी। उसने समझा कि शायद वह अपने हृदय की सब बातें इस समय कह कर बोझ हलका कर रहा है, इसीसे उसकी यह दशा है और प्रसंगवश उसने गाँव की बातें भी छेड़ दी हैं।

रंस्की—मुझे इस बात की सदा चिन्ता लगी रहती है कि यदि यह सब काम मेरे ही दम तक रहा तो क्या होगा। अगर मेरे बाद भी इसे देखने और सम्भालनेवाला कोई हो, तभी हमें सुख और शान्ति मिल सकती है। आप ही विचार कीजिये कि आप की क्या अवस्था होगी अगर आप-समझती हैं कि आपके लड़कों पर आप का कोई हक नहीं है?

डाली—मैं सब समझती हूँ; पर अन्ना क्या कर सकती है?

रंस्की—मैं यही बात आप से कहने जा रहा हूँ।······अन्ना को उचित है कि वह जार के पास प्रार्थना पत्र भेज कर अलक्से से तलाक दिलवा ले। अलक्से तलाक के लिये तैयार है। लिखने से ही सब काम हो सकता है!। उन्होंने अब्लास्की से यही कहा भी था कि अगर अन्ना चाहती है, तो मैं तैयार हूँ। मैं जानता हूँ कि इससे अन्ना को पीड़ा होगी। पर क्या किया जाय। मैं यह बात अन्ना से कह नहीं सकता। यही कारण है कि मैं आप की शरण आया हूँ कि किसी प्रकार आप मेरा उद्धार कीजिये।

डाली—मैं यथा साध्य चेष्टा करूँगी।

रंस्की—अपना प्रभाव डाल कर पत्र लिखवा दो। मैं अपने मुँह से यह बात उससे नहीं कह सकता।

डाली—मैं उसे समझाऊँगी। पर मुझे आश्चर्य है कि उसे अपना जरा भी ख्याल नहीं है।

इसके बाद दोनों वहां से उठे और मकान के भीतर चले गये।

१३

अन्ना के पेट में चूहा कूद रहा था। वह इसी चिन्ता में थी कि कब डाली से मुलाकात हो और पूँछू कि क्या बातें हुईं ?

भोजन के समय डाली से मुलाकात हुई सही; पर वह पूछने का अवसर नहीं था। भोजन के समय तरह-तरह की बातें होती रहीं। लेविन का भी प्रसंग छिड़ गया। स्विस्की ने कहा—"लेविन की बातें विचित्र होती हैं। उनका मत है कि रूस की खेती के लिये मशीन आदि हानि-कर होंगी।"

रंस्की—मेरा लेविन से कभी का परिचय नहीं। मैं समझता हूँ कि उन्होंने मशीन आदि देखा ही नहीं है, इसीसे इतनी निन्दा करते हैं। या उन्होंने रूस की बनी नकली मशीनों से काम लेकर यह परिणाम निकाला होगा। इङ्गलैण्ड आदि देशों की बनी मशीनें उन्होंने नहीं देखी होंगी।

वेलोस्की—गंवारों की सी बाते हैं।

डाली—इस संबंध में मैं कुछ नहीं कह कसती। आप लोग की बातों का समुचित उत्तर वही दे सकते थे। मैं केवल इतना ही कह सकती हूँ कि लेविन पढ़ा-लिखा योग्य आदमी है।

स्विस्की—मुझसे बड़ी घनिष्ठता है। मैं उसे हृदय से चाहता हूँ। उसके मत में जिला-सभा और पंचायतों से कोई लाभ नहीं है। वह उनमें शामिल होना भी पसन्द नहीं करता।

रंस्की—हम रूसी यही उदासीनता दिखा कर तो अपना नाश कर रहे हैं। हमें अधिकार के सामने कर्तव्य का ज्ञान नहीं, तो सिवा इनकार

के और क्या करेंगे ?

रंस्की का यह कटाक्ष डाली को नहीं भाया। उसने उत्तेजित होकर कहा—"कर्तव्य-पालन में इतना कट्टर आदमी तो मैंने दूसरा नहीं देखा।"

रंस्की—मैं तो इन लोगों का अतिशय कृतज्ञ हूँ कि इन लोगों ने मुझे भी एक पद दिया है। न्यायाधीश के पद पर बैठकर मैं झगड़ों पर विचार करता हूं और उसका फैसला करता हूँ, अगर जिला सभा में मेरा निर्वाचन हुआ तो मैं अपनी प्रतिष्ठा समझूंगा। इसी तरह की सेवाओं द्वारा मैं जमींदार होने का बदला चुका सकता हूं। अभाग्यवश उनकी समझ में अभी तक यह नहीं आया है कि राज-काज का जमींदारों पर कितना भार होना चाहिये।

डाली को रंस्की की बातों पर विस्मय हुआ। अपने मुंह अपनी इतनी प्रशंसा ! पर लेविन भी तो अपने मन का इतना ही दृढ़ है ?

स्विस्की—आगामी निर्वाचन में आपके लिये अवश्य यत्न किया जायगा। पर आपको जरा पहले ही आजाना होगा।

अन्ना-आजकल एक ही आदमी अपने सिर पर अनेक सार्वजनिक काम उठा लेता है और फिर उसे निभा नहीं सकता। केवल नाम मात्रको अधिकारी रह जाता है। काम कुछ नहीं करता।

अन्ना ने यह बातें चिढ़कर कही थीं। वे रंस्की को नहीं जचीं। डाली ने दोनों का चेहरा देखा। उसे रंस्की की बातें याद आ गईं। उसने अपने मनमें कहा—"ठीक है। इस संबंध में अन्ना और रंस्की में घोर मतभेद मालूम होता है।"

दरबारा ने प्रसंग बदल कर यह झगड़ा खतम किया।

[illegible]न के उपरान्त अवसर पाते ही अन्ना डाली के पास आई और

ोनों बातें करने लगीं।

अन्ना–किटी का क्या हाल है, वह मुझसे अवश्य नाराज होगी?

डाली–(हँसकर) क्यों?

अन्ना–तब मुझसे घृणा करती होगी?

डाली–यह भी नहीं। पर इतना तो तुम्हें स्वीकार करना ही होगा के ऐसी बातें सहज में भूल नहीं जातीं।

अन्ना–तुम्हारा कहना ठीक है। इसमें मेरा दोष ही क्या है? तब भाग्य के आधीन था।...रंस्की से क्या बातें हो रही थीं। तुमसे मैंने अपने संबंध में भी कई बार पूछा। पर तुमने कोई उत्तर नहीं दिया।

डाली–मैं क्या कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता। मैंने इस प्रश्न पर विचार ही नहीं किया।

अन्ना–एक बात तुम्हें विचार में रखकर परीक्षा करनी होगी कि यह गरमी का दिन है और मेहमान लोग आते हैं। नहीं तो जाड़े में हम लोग पूर्ण शान्ति से रहे और रहेंगे।

डाली–इन बातों से मतलब ही क्या?

अन्ना–अच्छा, रंस्की से क्या बातें हुईं, बतलाओ।

डाली–इन्होंने मुझसे कहा कि तुम अन्ना से समझा कर कहो कि क्या किसी तरह......क्या तुम......अपने को इस यातना से उबारना नहीं चाहती। तुम जानती हो कि मैं इसे किस दृष्टि से देखती हूँ।... पर मेरी भी यही राय है कि जहां तक सम्भव हो शादी कर डालो।

अन्ना–तुम्हारा कहने का अभिप्राय है कि मैं तिलाक के लिये यत्न करूं। तुम्हें मालूम होगा कि पीटर्सबर्ग में केवल बेत्सी मुझसे मिलने आई थी। उसके आचरण की बातें तुमसे छिपी न होंगी और उसने मुझसे कहा

कि "जब तक तुम्हारी स्थिति ठीक नहीं हो जाती, मैं तुमसे संबंध न
रख सकती।" मैं उससे तुम्हारी तुलना नहीं कर सकती। हां तो उन्हों
क्या कहा ?

डाली—तुम्हारे लिये उन्हें बड़ी चिन्ता है। इसे मिटाने के लिये
सब बातें ठीक कर डालना चाहते हैं। जिससे तुम्हारा और उन
संबंध जायज हो जाय। तुम्हारी भावना मिटाने के लिये ही वे ऐ
करना चाहते हैं।

अन्ना—यह असम्भव है।

डाली-वे अपनी सन्तति को जायज बनाना चाहते हैं।

अन्ना—क्या सन्तति! कौन सन्तति!!

डाली-यह लड़की और लड़के।

अन्ना—उसे निश्चिन्त रहना चाहिये। अब मुझे लड़कों की अ
लाषा नहीं रही। बाल-बच्चे अब होही नहीं सकते। डाक्टर ने भी सौ
में मुझसे यही बात कही थी।

डाली थोड़ी देर तक विस्मय के साथ अन्ना के चेहरे की ओर देख
रही। वह यहां सोच रही थी कि यह जटिल समस्या इतनी आसानी
हल हो गई, वह बोली—"उन्होंने मुझसे यही बातें कही थीं।"

अन्ना—मैंने यह क्यों कहा। मेरे सामने दो ही बातें हैं। या तो
नौरी वर सेऊं या अपने पति के साथ रहूँ।

डाली—ठीक है।

अन्ना—तुम लोगों को मेरी अवस्था की तुलना, अपनी अवस्था
नहीं करनी चाहिये। मैं इसकी विवाहिता पत्नी नहीं। यह मुझे तब
अपने साथ रख सकता है, जब तक यह मुझसे प्रेम करता है औ

तुम सहज में ही समझ सकती हो कि यह मुझे कब तक प्रेम कर सकता है।

इतना कह कर उसने अपना दाहिना हाथ बड़े जोर से घुमाया। वह उत्तेजित प्रतीत होती थी। डाली को इसी समय अब्लास्की की बातें याद आ गईं। उसे स्मरण कर वह चिन्ता में पड़ गई। उसके मुंह से कोई उत्तर नहीं निकला। उसने ठंढी सांस ली। अन्ना से डाली की अवस्था छिपी नहीं रही। उसने कहा—"तुम इसे अनुचित समझती हो। पर जरा विचार कर देखो। मैं सन्तान की कामना कैसे कर सकती हूँ? मैं प्रसव वेदना से डरती नहीं हूँ। पर मेरी सन्तति की क्या गति होगी। समाज से बहिष्कृत होकर वे मारे-मारे फिरेंगे। उनकी कहीं पूछ नहीं होगी। अपनी माँ की नीच वृत्ति पर, उन्हें समाज से मुंह छिपाना पड़ेगा—समाज के सामने लज्जित होना पड़ेगा।

डाली—इसीलिये तो तलाक की आवश्यकता प्रतीत होती है।

पर अन्ना ने डाली की बातें नहीं सुनीं। वह अपने पक्ष की सभी बातें कह जाना चाहती थी। वह बोली—"उनकी यातना का स्मरण कर मेरी आत्मा को दुःख होगा कि मैंने ही इन्हें इतना नीचे गिराया। मैं ही इनके सर्वनाश का कारण हूँ। पर इनके न रहने पर कोई चिन्ता नहीं।"

यही बातें डाली ने भी सोची थीं। पर इस समय उसकी समझ में ये बातें न आईं। उसने कहा—"आपकी बातें मुझे नहीं जंचीं।"

अन्ना—पर हमारी तुलना अपने से नहीं करना।

डाली ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने देखा कि इस प्रसंग पर बात-चीत न करना ही उचित होगा। इसलिये बातों को बदलते हुए वह बोली—"इससे तो यही प्रतीत होता है कि तुम्हें अपनी इस अवस्था

को कानूनन जायज करा लेना चाहिये।"

अन्ना-(उदासीनता के साथ) अगर सम्भव हो।

डाली-मैंने सुना है कि अलक्से तलाक देने के लिये तैयार हैं।

अन्ना-उस संबंध में मुझसे कुछ मत कहो।

डाली ने देखा कि अन्ना का चेहरा उदास हो गया। वह बोली "जाने दो उन बातों को। मैं इतना कह देना चाहती हूँ कि तुम सब बातें को निराशा भरी दृष्टि से देखती हो।"

अन्ना—नहीं तुम्हारा अनुमान ठीक नहीं। मैं सदा सुखी औ निश्चिन्त रहने की चेष्टा करती हूँ। पर वेलोस्की?

डाली-उसकी बातें मुझे पसन्द नहीं।

अन्ना-उसकी कौन परवाह करता है। उसकी बातों से रंस्की खुश रहता है, इसीसे कोई कुछ कहता नहीं। पर उसकी नकेल तो हमारे हाथ में है। (प्रसंग बदल कर) तुम मुझे दोषी बना रही हो। पर क्या करूँ? मैं तो उन बातों को एकदम से भुला देना चाहती हूँ।

डाली—पर इससे काम कैसे चलेगा?

अन्ना-तो तुम्हीं बतलाओ मैं क्या करूँ। तुम कहती हो रंस्की से विवाह कर लो। पर मैं उसकी चिन्ता नहीं करती। उसको सोचते ही मैं पागल हो जाती हूँ।......लोग कहते हैं तलाक की चेष्टा करो। पर यह भी संभव नहीं। कौण्टेस लीडिया जैसा कहती है, वही वे करते हैं। वे तलाक कभी नहीं देंगे।

अन्ना की शोचनीय अवस्था पर डाली विचार कर रही थी। धीरे से उसने कहा—"तब भी यत्न करके देख तो लेना चाहिये।"

अन्ना-मान लो कि मैंने यत्न किया। मान लो कि उसने मेरी प्रार्थना

स्वीकार भी करली; पर वह शिरोजा को कभी भी मुझे नहीं देगा। शिरोजा मेरा प्राण है। वह अपने पिता के पास पलेगा और मुझे घृणा से देखेगा। मैं दोनों में से एक को भी नहीं त्याग सकती। अगर मुझे एक भी मिलता तो मैं दूसरे की चिन्ता नहीं करती। जो भाग्य में लिखा होगा, वही होगा। यही कारण है कि मैं उस प्रसंग की चर्चा नहीं करती। तुम मुझे दोष नहीं दे सकतीं। तुम मेरी अवस्था की कल्पना सहज में कर सकती हो।

इतना कह कर अन्ना कमरे से बाहर हो गई।

डाली उठी। उसने प्रार्थना की और बिछौने पर जाकर लेट रही। उस समय उसका सारा विचार अन्ना में तल्लीन था। बिछौने पर पड़ते ही, उसे घर की चिन्ता ने आ घेरा। लड़कों का ख्याल, किटी और लेविन की बातें, उसके चित्त में इतनी प्रबल हो उठीं कि उसे रात काटनी मुश्किल प्रतीत हुई। उसने कहा—"अब मैं यहाँ नहीं ठहर सकती। कल ही रवाना हो जाऊँगी।"

डाली से विदा होकर अन्ना अपने कमरे में गई। उसने शराब की बोतल उठाई। एक ग्लास शराब ढाल कर, उसने उसमें कुछ दवा डाली और पी गई। उस समय उसका चित्त शान्त था।

रंस्की ने दोनों को बातें करते देखा था। वह अन्ना की आकृति से समझने लगा कि डाली की बातों का अन्ना पर कैसा प्रभाव पड़ा है। पर उसे कुछ पता न लगा। अन्ना के चेहरे पर इस समय भी वही सौन्दर्य प्रधान था, जिसे देख कर वह सदा पागल हो जाता था। जिसका जादू सदा उसके सिर पर सवार रहता था। उसने अन्ना से पूछना चाहा; पर यह सोच कर चुप रहा कि अन्ना स्वयं बतलावेगी। उसने

अन्ना का हाथ अपने हाथ में लेकर सभेद दृष्टि से उसकी ओर देखा।

अन्ना ने केवल मुस्करा दिया, मानों उसने कुछ नहीं समझा।

दूसरे दिन डाली ने लौटने का प्रस्ताव किया। रंस्की और अन्न के बहुत आग्रह करने पर भी डाली ने रहना स्वीकार नहीं किया अन्ना के दुःख का ठिकाना नहीं था। डाली के चले जाने से उस दुःख का वेग उमड़ आया। डाली ने वरवारा तथा अन्य लोगों मिलना पसन्द नहीं किया। रंस्की तथा अन्ना से हाथ मिलाकर व गाड़ी पर बैठ गई।

इस समाज से अलग होकर डाली स्वस्थ हुई। उसने नौकरों पूछना चाहा कि रंस्की के संबंध में उनकी क्या राय है? इतने कोचवान फिलिप बोल उठा—"चाहे इनके घर में अटल सम्पत्ति क्यों न भरी हो; पर मुझे तो पेट भर भोजन नहीं मिला। ऐसी दरिद्रता मैंने कहीं नहीं देखी।"

शाम होते-होते गाड़ी घर पहुँची। डाली ने सब से मिल कर देखा, सब मजे में हैं! निश्चिन्त होकर उसने अपनी यात्रा का विवरण देना आरम्भ किया। उसने सब बातें बड़ी प्रशंसा के साथ कहीं। अपनी असुविधाओं का उसने नाम तक नहीं लिया।

१८

अन्ना और रंस्की ने गर्मी और आधा जाड़ा वहीं काटा। तलाक लिये कोई यत्न नहीं किया गया। दोनों ने तै किया था कि गांव में

बाहर कहीं नहीं जाया जायगा; पर दो ही महीने में दोनों ने देखा कि इस तरह रहना असह्य है।

उनका जीवन परम सन्तोष के साथ बीतता था। किसी बात की कमी नहीं थी। दिल बहलाने के लिये ईश्वर की दी हुई एक कन्या भी थी। अन्ना अपना अधिकांश समय पढ़ने-लिखने में बिताती। रंस्की भी अपने इच्छानुकूल पुस्तकें मंगाता और उन्हें पढ़ता।

अस्पताल से भी अन्ना का प्रेम था। पर उसे सदा अपनी चिन्ता बनी रहती। अन्ना उसकी यथा साध्य सेवा-सुश्रूषा करती और प्रसन्न रखने का यत्न करती; पर रंस्की उसके प्रेम बन्धन को नहीं पसन्द करता; क्योंकि उसकी स्वतन्त्रता में बाधा पड़ती थी। एक तो वह इस बन्धन से छूटना चाहता था, दूसरे सभा सोसायटियों में जाते समय, अन्ना सदा बाधा उपस्थित करती, इससे रंस्की को सदा असन्तोष रहा। जमींदारी का प्रबन्ध उसे सन्तोषजनक प्रतीत हुआ। रुपया उसका अधिक व्यय होता था; पर उसके लिये उसे पछतावा नहीं था। जंगल आदि बेचने में रंस्की बड़ा ही ठस रहा। एक कौड़ी भी कम नहीं लेता था। उसका जनरल मैनेजर उसे सदा धोखा देना चाहता था। रंस्की के सामने उसकी एक न चलती। इस प्रकार वह अपना एक पैसा भी फालतू न जाने देता।

अक्टूबर 'प्रान्तीय सभा' का चुनाव था। केशिस्की प्रान्त से रंस्की खड़ा हुआ था। इसमें रंस्की, स्विस्की, अब्लास्की और लेविन की जमींदारियां थीं।

इस चुनाव में लोगों में बड़ा उत्साह था। जनता बड़े उत्साह से भाग ले रही थी। बड़ी जोरों की तैयारियां हो रही थीं। जिन लोगों ने

आज तक कभी भी चुनाव में भाग नहीं लिया था, वे भी आज मास्को पीटर्सवर्ग तथा अन्य नगरों से आरहे थे। चुनाव के पहले ही स्विरस्कि रंस्की को लाने गया। इसके एक दिन पहले इसी प्रसंग को लेकर अन्ना और रंस्की से कहा-सुनी हुई थी। समय बड़ा खराब था, चारों ओर उदासी छाई थी, रंस्की ने इस निर्वाचन में खड़ा होना निश्चय कर अन्ना को सूचित किया। अन्ना ने कुछ नहीं कहा। केवल इतना ही पूछा कि कब तक लौट आवेंगे। रंस्की ने गौर से उसकी ओर देखा अन्ना की यह अवस्था उसकी समझ में नहीं आई। अन्ना ने उसे इस तरह देखते देखा। उसने हंस दिया। रंस्की जानता था कि अन्ना के व्यवहार में यह बात तभी आती है, जब वह कोई काम बिना उससे कहे करना चाहती है। वह डर गया। पर यह शंका कर कि कुछ कहने सुनने में कलह की संभावना है, चुप रह गया। वह बोला—"तुम उदास तो नहीं होगी?"

अन्ना—कोई कारण नहीं है। कल कुछ नई किताबें आई हैं। मैं इन्हें ही पढ़ूंगी।

और कुछ न कह कर रंस्की रवाना हो गया। यह पहला अवसर था कि रंस्की अन्ना के पास से इस तरह विदा हुआ था। एक ख्याल से तो उसे इसका खेद था; पर दूसरे ख्याल से वह सन्तुष्ट था। उसने मन ही मन कहा—"जो कुछ हो, मैं अपना सर्वस्व त्याग सकता हूँ; पर अपनी स्वतन्त्रता नहीं त्याग सकता।

१५

किटी के प्रसव के दिन नजदीक आ रहे थे। सितम्बर में लेविन ने मास्को में डेरा डाला। एक महीना बेकार बिताकर वह कोनिशे के साथ निर्वाचन के लिये रवाना हुआ। अपनी वहिन की जमींदारी का भी कुछ आवश्यक काम काशीन में था। इसलिये लेविन को जाना और भी आवश्यक हो गया।

लेविन नहीं जाना चाहता था। पर किटी ने देखा कि मास्को में उन्हें कष्ट हो रहा है, इसलिये उसने जाने पर जोर दिया। उसने जबर्दस्ती दरबार लायक कपड़ा बनवा दिया। लाचार लेविन को जाना पड़ा।

वहिन के काम से वह लगातार ६ दिन तक अदालत में चक्कर काटता रहा। जिले के सभी अधिकारी निर्वाचन में फंसे थे। इससे मामूली काम निपटाना भी कठिन था। जो रुपया मिलनेवाला था, उसमें भी साधारण बाधा नहीं थी। खजानची ने मुंह बना कर कहा—"अध्यक्ष के हस्ताक्षर बिना, मैं रुपया देने के लिये लाचार हूं।" इस परेशानी से लेविन तंग आ गया था। दौड़ते-दौड़ते उसकी नाकों दम हो गया था, लोगों की खुशामदें करते-करते वह थक गया था। लेविन का वकील अपनी शक्तिभर चेष्टा करता था; पर बेचारा हताश होकर लौट आता था। बातें तो सभी बनाते, सभी चिकनी-चुपड़ी कहते; पर काम एक भी न बनता। लेविन की समझ में यह बात न समाती थी कि—"यह सब किसके लाभ के लिये हो रहा है। उसके काम के न होने में किसे लाभ पहुंच रहा है?" इसका कोई भी उत्तर वह नहीं दे सकता था।

विवाह के बाद से लेविन में बहुत कुछ परिवर्तन आ गया था। सहन-

शीलता उसमें बहुत अधिक आ गई थी। उसने इतनी परीशानी उठाकर भी क्रोध या क्षोभ नहीं किया। चुपचाप सब कुछ बरदाश्त करता गया।

चुनाव में भी उसने भाग लिया। इस समय उसमें पहले की सी उच्छृंखलता नहीं रह गई थी। अब उसे सार्वजनिक कामों में बुराई ही बुराई देखने में नहीं आती थी। वह सब बातों पर गौर से विचारता था और दूर तक सोचता था। शादी के बाद से उसे जीवन के नये-नये उद्देश्य दिखाई देने लगे थे। जिसे पहले वह निरर्थक और सारहीन समझता था, उस निर्वाचन को भी अब उसने सारहीन नहीं समझा।

कोनिशे ने उसे समझाया कि इस वर्ष निर्वाचन में आन्दोलन क्यों हो रहा है। उसने बतलाया कि—"जिस व्यक्ति के हाथ में इस जिले का अधिकार दिया गया था, वह भला आदमी, ईमानदार और सज्जन तो अवश्य था; पर साथ ही पुरानी लकीर का फकीर था। हर बात में वह कुलीनवर्ग का पक्ष लेता था। सार्वजनिक शिक्षा का वह विरोधी है। 'जिला-सभा' में उसने पक्षपात से कुलीनवर्ग को ही भर दिया है। इसलिये यह आवश्यक हो गया है कि उसके स्थान पर कोई ऐसा व्यक्ति चुना जाय, जो वर्तमान युग के अनुकूल उदार विचार वाला हो। केशिन्स्की प्रान्त रूस में सबसे प्रधान प्रान्त है। इसीकी रीति के अनुसार रूस के सभी प्रान्त चलेंगे। इसलिये इसको ही ठीक करना आवश्यक है। इसीलिये यहां इतना आन्दोलन है। हम लोगों की राय है कि इस व्यक्ति की जगह पर हम लोग स्विआस्की या दूसरे व्यक्ति को चुनें।"

सभा का कार्य आरम्भ हुआ। गवर्नर ने सभा का कार्य आरम्भ करते कहा—"आप लोगों को इस प्रान्त के लिये मार्शल चुनना है'

किसी व्यक्ति विशेष के ख्याल से चुनाव नहीं होना चाहिये। आप लोगों को उचित है कि कोई ऐसा व्यक्ति चुनें, जो नितान्त तत्परता के साथ सार्वजनिक सेवा कर सकता हो।"

इतना कह कर गवर्नर साहब हाल से बाहर निकले। उस प्रान्त के आये हुए सभी रईस, उन्हें घेर कर खड़े हो गये और बातें करने लगे। लेविन भी सबके साथ खड़ा गवर्नर की बातें सुन रहा था। उसने गवर्नर को कहते सुना—"मेरिया इवानोना से कह दीजिये कि मेरी पत्नी को खेद है कि वे उस दिन दावत में नहीं आ सकीं।" इसके बाद सब लोग वहां से गिरजे की तरफ रवाना हुए।

गिरजे में जाकर सबों ने शपथ खाई कि सब लोग निर्वाचन में ईमानदारी से काम करेंगे। लेविन ने भी शपथ ली। प्रार्थना होते देख, लेविन का हृदय क्षुब्ध हो जाता था। सभी बड़े-बूढ़ों और जवानों को गवर्नर की आज्ञा के अनुसार काम करने की शपथ खाते देख कर उसका हृदय विचलित होगया।

दूसरे तथा तीसरे दिन साधारण बातें हुईं। लेविन भी अपने काम में लगा रहा। निर्वाचन में नहीं गया। चौथे दिन मार्शल के हिसाब की जांच होनेवाली थी। यहीं पर नये तथा पुराने दल में दो-दो चोटें हो गईं। हिसाब की जांच करने के लिये जो कमेटी नियुक्त थी, उसकी रिपोर्ट था कि हिसाब सही है। इसपर मार्शल साहब उठे, कमेटी को धन्यवाद दिया। उनकी आंखों से आनन्द के आंसू निकल रहे थे। उमरावों ने उनका स्वागत किया। इतने में कोनिशे के दल का एक व्यक्ति उठा और बोला—"मैंने सुना है कि उक्त कमेटी ने हिसाब की जांच नहीं की। यह करना उसने मार्शल के लिये अपमान-जनक समझा।"

शीलता उसमें बहुत अधिक आ गई थी। उसने इतनी परीशानी उठाकर भी क्रोध या क्षोभ नहीं किया। चुपचाप सब कुछ बरदाश्त करता गया।

चुनाव में भी उसने भाग लिया। इस समय उसमें पहले की सी उच्छृंखलता नहीं रह गई थी। अब उसे सार्वजनिक कामों में बुराई ही बुराई देखने में नहीं आती थी। वह सब बातों पर गौर से विचारता था और दूर तक सोचता था। शादी के बाद से उसे जीवन के नये-नये उद्देश्य दिखाई देने लगे थे। जिसे पहले वह निरर्थक और सारहीन समझता था, उस निर्वाचन को भी अब उसने सारहीन नहीं समझा।

कोनिशे ने उसे समझाया कि इस वर्ष निर्वाचन में आन्दोलन क्यों हो रहा है। उसने बतलाया कि—"जिस व्यक्ति के हाथ में इन जिलों का अधिकार दिया गया था, वह भला आदमी, ईमानदार और सज्जन तो अवश्य था; पर साथ ही पुरानी लकीर का फकीर था। हर बात में वह कुलीनवर्ग का पक्ष लेता था। सार्वजनिक शिक्षा का वह विरोधी है। 'जिला-सभा' में उसने पक्षपात से कुलीनवर्ग को ही भर दिया है। इसलिये यह आवश्यक हो गया है कि उसके स्थान पर कोई ऐसा व्यक्ति चुना जाय, जो वर्तमान युग के अनुकूल उदार विचार वाला हो। केशिस्की प्रान्त रूस में सबसे प्रधान प्रान्त है। इसीकी रीति के अनुसार रूस के सभी प्रान्त चलेंगे। इसलिये इसको ही ठीक करना आवश्यक है। इसीलिये यहां इतना आन्दोलन है। हम लोगों की राय है कि इस व्यक्ति की जगह पर हम लोग स्विस्की या सूने दोस्की को चुनें।"

सभा का कार्य आरम्भ हुआ। गवर्नर ने सभा का कार्य आरम्भ करते हुये कहा—"आप लोगों को इस प्रान्त के लिये मार्शल चुनना है।

किसी व्यक्ति विशेष के ख्याल से चुनाव नहीं होना चाहिये। आप लोगों को उचित है कि कोई ऐसा व्यक्ति चुनें, जो नितान्त तत्परता के साथ सार्वजनिक सेवा कर सकता हो।"

इतना कह कर गवर्नर साहब हाल से बाहर निकले। उस प्रान्त के आये हुए सभी रईस, उन्हें घेर कर खड़े हो गये और बातें करने लगे। लेविन भी सबके साथ खड़ा गवर्नर की बातें सुन रहा था। उसने गवर्नर को कहते सुना—"मेरिया इवानोना से कह दीजिये कि मेरी पत्नी को खेद है कि वे उस दिन दावत में नहीं आ सकीं।" इसके बाद सब लोग वहां से गिरजे की तरफ रवाना हुए।

गिरजे में जाकर सबों ने शपथ खाई कि सब लोग निर्वाचन में ईमानदारी से काम करेंगे। लेविन ने भी शपथ ली। प्रार्थना होते देख, लेविन का हृदय क्षुब्ध हो जाता था। सभी बड़े-बूढ़ों और जवानों को गवर्नर की आज्ञा के अनुसार काम करने की शपथ खाते देख कर उसका हृदय विचलित होगया।

दूसरे तथा तीसरे दिन साधारण बातें हुईं। लेविन भी अपने काम में लगा रहा। निर्वाचन में नहीं गया। चौथे दिन मार्शल के हिसाब की जांच होनेवाली थी। यहीं पर नये तथा पुराने दल में दो-दो चोटें हो गईं। हिसाब की जांच करने के लिये जो कमेटी नियुक्त थी, उसकी रिपोर्ट था कि हिसाब सही है। इसपर मार्शल साहब उठे, कमेटी को धन्यवाद दिया। उनकी आंखों से आनन्द के आंसू निकल रहे थे। उमरावों ने उनका स्वागत किया। इतने में कोनिशे के दल का एक व्यक्ति उठा और बोला—"मैंने सुना है कि उक्त कमेटी ने हिसाब की जांच नहीं की। यह करना उसने मार्शल के लिये अपमान-जनक समझा।"

कमेटी के एक सदस्य ने यह बात स्वीकार भी कर ली। इतने में एक सदस्य उठा। उसने कहा—"अच्छा तो यही होगा कि मार्शल साहब स्वयं आय-व्यय का ब्यौरा समझावें, क्योंकि कमेटी के सदस्यों की इस कायरता के कारण उनके चरित्र में धब्बा लगना चाहता है।" इसपर कमेटी के सदस्य अपनी बात वापस लेने लगे। इसपर कोनिशे ने कहा-"यों काम नहीं चल सकता। कमेटी के सदस्यों को स्वीकार करना पड़ेगा कि उन्होंने हिसाब की जांच की है, अथवा नहीं।" दूसरे दल से कोनिशे के इस प्रश्न का उत्तर मिला। इसके बाद स्विस्की का भाषण हुआ। उसके बाद फिर उस नाटे आदमी से देर तक वाद-विवाद होता रहा; पर परिणाम कुछ नहीं निकला। लेविन को विस्मय हुआ कि इस विषय को लेकर इस तरह विवाद हुआ। उसका विस्मय और भी बढ़ गया; जब उसने कोनिशे से पूछा कि—"क्या इसने सचमुच गबन किया है?"

कोनिशे—कभी नहीं, बड़ा ही ईमानदार आदमी है। पर वह पुराना तरीका तो तोड़ना होगा। सार्वजनिक रकम को बाप का माल समझ कर खर्च करने से कैसे काम चल सकता है।

पांचवें दिन जिला मार्शल का चुनाव हुआ। अनेक जिलों में धूम-धाम थी। सेलेनेस्की जिले से बिना विरोध के स्विस्की का निर्वाचन हो गया। इस खुशी में उसने उसी दिन प्रीति भोज भी दिया।

छठे दिन प्रान्तीय मार्शल का चुनाव था। छोटे-बड़े सभी कमरे, उमरा और सरदारों से भरे थे। कितने तो केवल उसी दिन के लिये आये थे। सभी उमरा और सरदार दो दलों में विभक्त थे। एक दल परिवर्तनवादी था और दूसरा उसका विरोधी था।

लेविन अपने साथियों के साथ एक छोटे कमरे में बैठा उनकी बातें

सुन रहा था। इस दल का नेता कोनिशे था। स्विस्की और हिस्लो दो जिलों के मार्शल थे। हिस्लो कहता था कि मैं स्नेको से जाकर यह नहीं कह सकता कि आप उम्मेदवार खड़े होइये और स्विस्की तथा कोनिशे इसे जोर देकर भेजना चाहते थे। लेविन की समझ में नहीं आया कि जिसे वे लोग हराना चाहते हैं, उसे उम्मीदवार बनाने के लिये इतने अधीर क्यों हो रहे हैं।

इसी समय अब्लास्की वहां आया। वह बोला—"हमलोग अपनी पूर्ण चेष्टा कर रहे हैं।"

उसने भी इन लोगों की बहस सुनी। उसने भी स्विस्की की बात का समर्थन किया।

उसने कहा—"एक जिला काफी है। और स्विस्की विरोधी दलका है। इस बात को सिवा लेविन के सब समझ गये।

लेविन को देखकर उसे विस्मय हुआ। वह बोला—"तुम यहां कैसे ? यह विचित्र परिवर्तन !" लेविन को इस परिवर्तन से खुशी होती; पर उसकी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। उसने अब्लास्की से पूछा—"जब मार्शल का विरोध होरहा है, तब उसे भी उम्मेदवारी के लिये क्यों कहा जा रहा है ?"

अब्लास्की ने सब बातें उसे समझाईं। अगर वह खड़ा नहीं होगा तो उसके पक्षवाले किसी ऐसे उम्मेदवार को मत दे देंगे, जो हम लोगों के मुकाबिले में खड़ा होगा। इससे हमारी हार हो सकती है। उसे खड़ा कराने से उसके पक्ष वाले तो उसे मत अवश्य ही देंगे। इस तरह हमारे विरोधियों का मत बट जायगा और हमारी सफलता निश्चित हो जायगी। आठ जिलों के लिये यह निर्वाचन होगा। अगर आठों जिले, एक मत से

इसे उम्मेदवार खड़े होने के लिये कहें तो इसका निर्वाचन सर्वसम्मति से हो जायगा। वोट लेनेकी जरूरत नहीं पड़ेगी। अगर दो जिले इसके वशमें न हों तो सम्भव है, वह खड़ा न हो। पर एक ही जिले के विरोध करने पर, वह खड़ा हो सकता है। इसी लिये हमलोग हिस्लो से कह रहे हैं कि मार्शल के पक्ष का समर्थन करें।

लेविन की समझ में कुछ-कुछ यह बातें आईं। वह और प्रश्न करना चाहता था; पर इसी समय चारों ओर से शोर-गुल मचने लगा और सब कोई बड़े हाल की तरफ बढ़े।

लेविन सबके साथ उस बड़े कमरे में गया। उसने देखा कि स्विस्की, उस प्रान्त का मार्शल तथा अन्य नेता लोग किसी विषय पर विवाद कर रहे थे और चारों ओर से तरह-तरह की आवाज़ें निकल रही थीं। कोई कह रहा था—"क्या मामला है? किसे? कोई भरोसा नहीं? किस का? क्या? वे लोग उसका समर्थन कभी नहीं करेंगे?............"

१६

एक तो लेविन टेबुल से दूर पर था; दूसरे उसके अगल-बगल के दो उमरा इस तरह हांफ रहे और अपना जूता चरमरा रहे थे कि उसे कुछ साफ़ नहीं सुनाई दे रहा था। उसने देखा कि पहले मार्शल ने कुछ कहा, उसके बाद वह मोटा आदमी और अन्त में स्विस्की। उसने इतना ही सुन पाया कि ऐक्ट में लिखा है कि उसपर विचार किया जा सकता है।

इतने में कोनिशो आगे बढ़ा। सबों ने उसके लिये रास्ता कर दिया। के पास पहुंचकर उसने कहा—"इस तरह विवाद करने से क्या

लाभ। उस कानून को उठा कर ही क्यों न देख लिया जाय। उसमें जो लिखा होगा, उसी के अनुसार किया जायगा।" पुस्तक के पन्ने उलट कर देखे गये। उसमें लिखा था कि—"विवाद-ग्रस्त विषयों पर चिट्ठी छोड़ी जानी चाहिये।"

कोनिशे इस धारा का मतलब समझा रहा था। इसी समय एक मोटा-ताजा उमरा, जिसकी सफेद दाढ़ी रंगी थीं, आगे बढ़ा और कोनिशे को रोक कर बोला—"चिट्ठी क्यों छोड़ी जाय। मत ले लिया जाय।" इस र चारों ओर से शोर-गुल होने लगा। मोटा आदमी चिल्लाकर लोगोंको ोकना चाहता था; पर उसकी कौन सुनता था। शोर-गुल इतना बढ़ गया के किसी की समझ में कुछ नहीं आता था कि क्या हो रहा है।

जिसे देखिये वही कुछ कह रहा है। कोई मार्शल के पक्ष में वल्ला रहा है और कोई उसके विरोध में। प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे को खने से स्पष्ट था कि प्रत्येक विरोधी व्यक्ति को घृणा की दृष्टि से खता है। लेविन की समझ में नहीं आया कि इस सबका क्या भिप्राय है। वह यह बात देखकर दंग था कि केवल इतनी साधारण त पर कि हफेरोंको मत देने का अधिकार है या नहीं, इस पर नी जोशीली बहस हो रही हैं। इस समय उसे इस बात का ख्याल ों रहा कि कोनिशे ने उसे समझाया था कि सार्वजनिक हित के लिये ।सान मार्शल को हटाना होगा। इसके लिये अधिक मत बिना र नहीं चल सकता था। और अधिक मत अपने पक्षमें करने के लिये ो को मत देने का अधिकार दिलाना जरूरी है। बिना कानून को किये यह काम संभव नहीं।

एक मत पर सारा दार-मदार रहता है। पर इस समय लेविन सब

भूल गया था। इस समय इन माननीय पुरुषों को इस तरह झगड़ते देख, उसे बड़ी ग्लानि आई। वह इसे बरदाश्त नहीं कर सका और दूसरे कमरे में चला गया। उस कमरे से बाहर निकल कर उसे कुछ शान्ति मिली। लेविन दरबान से बातें कर अपनी तबियत बहलाने की चेष्टा में था, उसी समय कोर्ट का सेक्रेटरी वहां आकर बोला—"चलिये, आपके भाई साहब आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। दूसरा मत लिया जा रहा है।"

लेविन अपने भाई के पास गया, देखा स्विस्की मतवाले हाथी की तरह दाढ़ी पर हाथ रखे पास ही खड़ा है। कोनिशे ने आगे बढ़कर गोली सन्दूक में डाल दी। लेविन की बारी आई। लेविन आगे बढ़ा; पर परीशानी में भूल गया कि क्या करना चाहिये। उसने फिर कोनिशे से धीरे से पूछा—"किसमें डालूं?" यह बात उसने इतने धीरे से पूछी कि कोई दूसरा नहीं सुन रहा था; पर उसका अनुमान गलत निकला। कोनिशे ने रुखाई से उत्तर दिया—"यह अपनी इच्छा और विवेक पर निर्भर है?"

लेविन घबड़ा गया। उसने दाहिना हाथ दाहिनी सन्दूक में डाला। पर उसी समय उसे स्मरण आया कि बायीं में भी डालना चाहिये था। इसलिये उसने बायां हाथ बायीं सन्दूक में डाला; पर देर हो गई थी। लोग हँस पड़े, किसी तरह यह क्रिया समाप्त कर वह बाहर आया।

चिट्टो गिनी गई। हिसाब मिलाकर देखा गया तो पक्ष में १२६ और विरोध में ९८ मत आये। नये दल की जीत हुई।

पर पुराना दल हताश नहीं हुआ। वह मार्शल को उम्मेदवार

खड़ा होने के लिये बराबर दबा रहा था। लेविन ने देखा कि मार्शल के चारो ओर उमरा लोग खड़े होकर, उससे कुछ कह रहे हैं। लेविन पास गया। मार्शल अपने काम का वर्णन करके उमरावों को धन्यवाद दे रहा था। कहते-कहते उसकी आंखों से आंसू निकल आये और वह अधिक नहीं बोल सका। वह कमरे से बाहर हो गया। चाहे जिस लिये उसकी आंखों से आंसू आये हों, इसका असर सब पर पड़ा।

रास्ते में लेविन से मार्शल टकरा गया। पहले तो उसने अजनबी समझ कर केवल क्षमा मांगी; पर लेविन को पहचान कर उसने मुस्करा दिया। लेविन ने देखा कि मार्शल कुछ कहना चाहता है पर परीशानी के कारण उसके मुँह से आवाज नहीं निकली। कल ही लेविन से उसकी मुलाकात हुई थी। कल से और आज में उसमें घोर अन्तर था। कल बड़ी कुर्सी पर बैठा-बैठा हंस रहा था और आज दीनों की भांति रो-रो कर इधर से उधर जा रहा है। लेविन का हृदय भर गया। उसने उसके सन्तोष के लिये कहा—"इस साल भी आप हम लोगों के मार्शल हो जायँगे।"

मार्शल—आशा कम ही है। काम करते-करते मैं थक गया, बुढ़ौती भी आ गई। किसी योग्य नवजवान को ही मार्शल बनाना ठीक होगा।

इतना कह कर वह कमरे से बाहर हो गया।

इसीके बाद निर्वाचन का समय था। दोनों दल के नेता पक्ष और विरुद्ध मत की गणना कर रहे थे।

फ्लेरो को अधिकार दिलाकर नये दल को तीन वोट और मिलने की आशा हो गई थी। दो उमरा शराब में इतने चूर थे कि उन्हें उठने की

भी शक्ति नहीं थी। किसी न किसी तरह उन्हें सभा-भवन में लाया गया। विरोधी दलवालों ने इन्हें शराब पिला कर मतवाला बना दिया था।

संग्राम की पूरी तैयारी हो चुकी थी। दोनों दल के नेताओं के चेहरे पर परीशानी दिखाई दे रही थी। मतदाता लोग इधर-उधर घूम रहे थे। लेविन अपने मित्रों से भी अलग होकर टहल रहा था। उसने कुछ खाया-पिया नहीं और न मुँह में सिगरेट ही लगाया उसने दूर से देखा कि रंस्की उसके मित्रों के साथ हंस-हंस कर बातें कर रहा है। लेविन उसके साथ मिलना-जुलना नहीं चाहता था। वह खिड़की के पास जाकर बैठ रहा और दोनों दलकी बातें सुनने लगा। वह देख रहा था कि सिवा उसके और उसके साथ बैठे इस उमरा के, सभी इस निर्वाचन के लिये व्यस्त और उत्सुक दिखाई देते हैं।

दल के दल उमरा आते और जाते थे तथा अनेक तरह की बातें आपस में करते थे। लेविन चुपचाप बैठा उनकी बातें सुन रहा था। इतने में एक दल और आया। लेविन ने देखा कि उसमें वह जागीरदार भी है, जिसके साथ लेविन ने स्विस्की के घर बातें की थी। चार आंखे होते ही दोनों ने एक दूसरे को पहचान कर अभिवादन किया।

लेविन—आपकी जमींदारी का क्या हाल है ?

जमींदार—वही हालत है। बराबर घाटा लग रहा है।

उसने इस तरह से कहा मानों यही अवस्था सदा रहेगी। उसने पूछा—"आपने यहां तक आने का कष्ट क्यों उठाया। आज तो रूस के सभी उमरा यहां इकट्ठा हैं।"

लेविन—इसी चुनाव की गरज से आया हूँ। पर इस चुनाव का

तरीका मेरी समझ में नहीं आया ।

जमींदार—क्या कठिनाई है ? जो काम मजे में चल रहा था, उसका नाश किया जा रहा है । क्या इस समाज को देखकर कोई कह सकता है कि ये रूसके उमरा हैं ।

लेविन—आप क्यों आये तब ?

जमींदार—आदत पड़ गई है । इसके अलावा विरक्त होकर तो रहना नहीं है, नाता रखना ही पड़ता है । अपना स्वार्थ भी है । मेरा दमाद स्थायी सदस्य के लिये खड़ा हो रहा है । उसके पास इतना धन नहीं है । उसको किसी तरह आगे ठेलना है । ये लोग कौन हैं ?

लेविन—नये युगके उमरा ।

जमींदार—इन्हें उमरा नहीं कहना चाहिये ।

लेविन—आपने अभी कहा है कि इस संस्था की सेवा समय के अनुसार होती है ?

जमींदार—ठीक है पर आपही समझिये । क्या बाग में पेड़ लगाकर किसी खूबसूरत फूल के पौधे के लिये उसे काट दीजियेगा ? ऐसा तो नहीं हो सकता खैर, आपकी जमींदारी की क्या हालत है ?

लेविन—बहुत सन्तोषजनक नहीं । पांच रुपया सैकड़े लाभ है ।

जमींदार—आप स्वयं भी तो काम करते हैं । उसकी मजूरी भी तो होनी चाहिये । जमींदारी का काम देखने के पहले मैं २५००) मासिक पाता था । इतना परिश्रम भी नहीं करता था । इस समय जो काम है, वह इसी के बदौलत है ।

लेविन—तब आप क्यों काम करते हैं । इससे तो साफ-साफ नुकसान हो रहा है ।

जमींदार–पर किया ही क्या जाय। करना ही पड़ता है।······मेरे लड़के की इस ओर जरा भी रुचि नहीं है। वह विज्ञान में रुचि रखता है। भविष्य में जमींदारी का काम देखने वाला कोई नहीं है, फिर भी मैं उसे बढ़ाता ही जाता हूँ। इस वर्ष मैंने एक बाग लगाया है।

लेविन–आपका कहना ठीक है। परिश्रम के अनुसार लाभ कुछ नहीं है क्या किया जाय, कर्तव्य बाध्य करता है।

जमींदार–मेरे पास एक सौदागर रहता है। वह मेरे साथ मेरे खेतों और बगीचों को देखने गया। उसने कहा–"सब तो ठीक है, पर आपका बाग संवारा नहीं जाता। पेड़ों को काट कर बेंच दिया कीजिये।"

लेविन–उनसे बचे रहना। वे इसी तरह रुपया कमाते हैं। इतना ही क्या कम है, अगर हम लोग इसीको बचा कर अपने लड़कों को दे सकें।

जमींदार–सुना है आपने शादी कर ली।

लेविन–(पूर्ण सन्तोष के साथ) हां।

जमींदार–कुछ लोग जमींदारी को कारखाना समझ कर उसमें रुपया लगाते जाते हैं।

दोनों में इसी तरह की बातें हो रही थीं, उसी समय स्विस्की आया और लेविन को पकड़कर ले गया। अब रंस्की से पिण्ड छुड़ाना कठिन था। अव्लास्की के साथ वह खड़ा बातें कर रहा था। उसने लेविन से हाथ मिलाकर कहा–"आपसे मिल कर बड़ी खुशी हुई। बहुत दिनों के बाद आप से मुलाकात हुई।"

लेविन ने उससे हाथ मिलाया और मुंह फेर कर अपने भाई से बातें करने लगा।

रंस्की ने हंस कर मुह फेर लिया और स्विस्की से बातें करने लगा।

लेविन से बातें करने की उसे भी उत्कण्ठा नहीं थी। पर लेविन भाई से बातें करता जाता था और रंस्की की ओर देखता जाता था। वह कुछ बोलना चाहता था।

उसने घूम कर कहा—हमलोग अब किस लिये ठहरे हैं?

स्विस्की—स्नेको के लिये। उसे खड़ा होना पड़ेगा या हट जाना पड़ेगा।

लेविन—उसने क्या किया? सहमत हुआ या नहीं।

रंस्की—अभी तक उसने कुछ नहीं किया है?

लेविन—अगर उसने अस्वीकार किया, तब कौन खड़ा होगा?

स्विस्की—जिसकी इच्छा हो।

लेविन—(स्विस्की से) तुम खड़े होगे?

स्विस्की ने घबड़ा कर घृणा की दृष्टि से उस नाटे आदमी को देखा, जो उस समय कोनिशे के पास खड़ा था। वह बोला—"नहीं।"

लेविन—तब कौन नेदोस्की?

उस नाटे आदमी ने जवाब दिया—नहीं! मैं भी नहीं खड़ा होऊँगा।

इसी नाटे आदमी का नाम नेदोस्की था। स्विस्की ने लेविन से उसका परिचय कराया।

अब्लास्की—(रंस्की से) देखते हैं, तुम भी उत्सुक हो। यह भी एक तरह का घुड़दौड़ है।

रंस्की—बड़ी उत्सुकता बढ़ जाती है। हाथ देने के बाद बिना अन्त देखे चैन नहीं। यह भी संग्राम है।

लेविन—स्विस्की बड़ा ही होशियार और योग्य है। सब बातें उसे साफ साफ दिखाई देती हैं।

रंस्की—(लापरवाही से) हां!

दोनों चुप हो गये। रंस्की ने लेविन की ओर देखा। उसने पूछा- "आप देहातों में रहकर भी न्यायाधीश का काम क्यों नहीं करते?"

लेविन—मैं उस पदको उचित नहीं समझता।

लेविन रंस्की से बातचीत करके अपनी पहले की रुखाई को मिटा देना चाहता था। इसके लिए वह अवसर ढूंढ़ रहा था।

रंस्की—पर मेरा ख्याल तो आपके एकदम प्रतिकूल है।

लेविन—एक तरह का खेलवाड़ है। उस पद को आवश्यकता ही नहीं रही। आठ वर्ष में मुझे एक बार भी उनसे काम नहीं पड़ा और छावनी से तीस मील पर न्यायाधीश का इजलास है। दो रुपये के काम के लिये वकील भेजें तो पन्द्रह खाली फीस चाहिये।

इतना कहकर लेविन ने एक घटना का वर्णन करके कहा कि—"वहां केवल तमाशा होता है।"

उसी समय अब्लास्की आया और बोला—"वोट दिये जा रहे हैं।" सब कोई उधर ही चले गये।

कोनिशे ने लेविन को देखकर कहा—"मुझे आश्चर्य होता है कि मनुष्य में राजनीतिक शक्ति का अभाव कैसे होता है? हम लोग इतने अयोग्य हैं। मार्शल हम लोगों का दुश्मन है और तुम उससे बातें करते हो। कौन रंस्की········मैं उसे अपना साथी नहीं बना सकता। उसने निमन्त्रित किया है। पर मैं कभी नहीं जाऊंगा। लेकिन वह मेरी तरफ है। उससे दुश्मनी भी नहीं कर सकता। तुमने नेदोस्की से पूछा—"क्या आप खड़े होइयेगा।" क्या यह बात भी पूछने की है?"

लेविन—मैं यह सब कुछ नहीं समझता। सब बेवकूफी की बातें हैं।

कोनिशे—तुम कहते ही यह हो; पर जब कुछ करना पड़ता है तो न

कर देते हो।

लेविन ने कुछ उत्तर नहीं दिया। दोनों भाई बड़े कमरे की ओर बढ़े।

मार्शल को यह बात भली-भांति विदित थी कि उसे फँसाने के लिये फन्दा तैयार किया गया है, सभी जिलों ने उसे खड़ा होने के लिये नहीं कहा है, फिर भी वह खड़ा हो रहा है। कमरे में सन्नाटा था। सेक्रेटरी ने सूचना दी कि पुराने मार्शल के लिये पहले वोट दिया जायगा।

मार्शल वोट मांगने के लिये उठे। सब लोग गोलियां डालने लगे। लेविन की बारी आई। अब्लास्की ने धीरे से कहा—"दाहिनी ओर गोली डालना।" पर लेविन ने समझा कि अब्लास्की भूल कर रहा है। उसने बायीं ओर गोली डाल दी।

गोली गिनी जाने लगी। मार्शल को बहुत अधिक वोट मिले थे। दूसरा लोग उसे बधाई देने लगे।

लेविन—(कोनिशे से) चुनाव हो गया तो ?

स्विस्की—अभी तो आरम्भ हुआ है। दूसरा उम्मेदवार इससे भी अधिक मत पा सकता है।

लेविन को इस बात का एकदम स्मरण नहीं था। उसने इसे चाल समझी। उसकी समझ में कुछ नहीं आया। वह परीशान भी था। किसी तरह बाहर निकल जाना चाहता था।

उसने देखा कि उसकी आवश्यकता वहां नहीं प्रतीत होती। वह धीरे से निकल कर बाहर हो गया और एक छोटे कमरे में जाकर जलपान करने के लिये बैठ गया। जलपान समाप्त कर वह बरामदे में टहलने लगा। उस कमरे में उसे जाने की इच्छा न हुई। बरामदे में बड़ी भीड़ थी। लोग तरह-तरह की बातें कर रहे थे। लेविन ने एक रमणी के मुंह से अपने

भाई की प्रशंसा सुनी।

लेविन, रेलिंग के सहारे झुककर उसकी बातें सुनने लगा। नीचे शोर-गुल सुनाई दी। लेविन से न रहा गया, वह नीचे उतरा। उसने जाकर देखा, नेदोस्की थाली लिये वोट माँग रहा है। लेविन दरवाजे पर गया। दरवाजा बन्द था। सेक्रेटरी ने खटखटाया। दरवाजा खुला। लेविन ने देखा, सामने दो तगड़े आदमी खड़े हैं।

इसी समय मार्शल ने वहां आकर उन्हें डांटते हुए कहा—"हमने मना किया था कि किसी को बाहर मत जाने देना।"

दोनों आदमी—हमने केवल भीतर आने दिया है, हुजूर! मार्शल चला गया। उसका शरीर कांप रहा था।

वोट गिना गया। नेदोस्की को मार्शल से अधिक मत मिले। वह नया मार्शल बनाया गया। पुराने मार्शल के चेहरे पर निराशा की झलक थी। वह किसी तरह छिपा न सका। नेदोस्की कमरे से बाहर निकला। उमराओं की भीड़ ने उसे चारों ओर से घेर लिया था।

१७

शाम को रंस्की के घर दावत थी। नेदोस्की तथा उसके पक्ष के कितने ही लोग उस दावत में शामिल थे।

रंस्की इस निर्वाचन में भाग लेने आया था। एक तो देहात में रहते-रहते वह व्याकुल हो उठा था, दूसरे वह अन्ना को दिखलाना चाहता था कि मैं तुम्हारे वश में दास की तरह नहीं रह सकता। तीसरे की सभा के चुनाव में स्विस्की ने रंस्की की सहायता की थी और

इस समय बदला चुकाने का अवसर था। चौथे उसने जमींदारी का काम अपने हाथ में लिया था। उमराओं के अधिकार को प्रगट करने के लिये भी आकर शामिल होना जरूरी था। वह एकदम नया और अपरिचित था। फिर भी उसका प्रभाव पड़ा। उसे बहुत कुछ सफलता मिली। उसकी इस सफलता के अनेक कारण थे। एक तो उस पर लक्ष्मी की कृपा थी, दूसरे सरकारी दफ्तर के बड़े-बड़े लोगों से उसका सम्पर्क था। उनमें से कितने उसके ऋणी थे। तीसरे उसका व्यवहार इतना अच्छा होता था कि सब लोग मोहित हो जाते थे। उसने देखा कि लेविन के सिवा, जिस किसी उमरा से वह मिला, सब उसके साथी बन गये। सब लोग इस बात को समझते थे कि नेदोस्की की सफलता का बहुत कुछ भार रंस्की पर ही था। उसकी सफलता पर यह दावत देकर रंस्की कम खुशी नहीं मना रहा था। इस समय उसे इतनी प्रसन्नता थी कि वह सोच रहा था कि यदि तीन वर्ष के भीतर मेरा विवाह हो गया तो मैं ही उम्मेदवार खड़ा होऊंगा।

स्विस्की भी एक उम्मेदवार था। उसे मत कम मिले थे। पर इस असफलता पर उसे जरा भी सोच नहीं था। उसने कहा—"नेदोस्की के सामने मेरी कुछ गणना नहीं।" इस निर्वाचन पर सबको सन्तोष था।

अब्लास्की भी कम प्रसन्न नहीं था। चुनाव की ही बातें हो रहीं थीं। स्विस्की मार्शल की दैन्यावस्था का वर्णन कर, नेदोस्की से कह रहा था—"मार्शल की तरह आंसू बहाने से काम नहीं चलेगा। हिसाब की जांच के लिये आपको दूसरा तरीका अख्तियार करना पड़ेगा।"

बात-बात में लोग नेदोस्की की प्रशंसा करते। इस समय उसकी उसी तरह खातिरदारी हो रही थी, जिस तरह दूल्हे की होती है।

नेदोस्की उदासीन की भांति सब बातें देख और सुन रहा था। पर उसके चेहरे पर खुशी और सन्तोष के चिह्न प्रत्यक्ष थे। अपने हृदय के भाव को छिपाने के लिये उसे अनेक तरह के यत्न करने पड़ते थे।

भोजन समाप्त हुआ। चारों ओर तार दिये जाने लगे। अब्लास्की ने डाली को भी तार दिया। डाली तार पाकर कहने लगी—"अपनी साधारण दुर्बलता के कारण यह रुपया पानी में फेंका गया।"

आज रंस्की को बड़ा सन्तोष था। उसे इतनी सफलता की आशा नहीं थी। इसी समय दरबान ने एक पत्र लाकर रंस्की के हाथ पर रख दिया। रंस्की पत्र खोल कर पढ़ने लगा। अन्ना ने लिखा था—"बच्ची सख्त बीमार है। मैं अकेले परीशान हो गई हूँ। बरबारा से किसी तरह की सहायता नहीं मिलती, तुमने कहा था कि निर्वाचन के काम में पांच दिन लगेंगे। पांच दिन में लौट आऊँगा, पर कितने ही दिन बीत गये, कुछ पता न चला। आज मैं यह खत भेज रही हूँ। मैं स्वयं आना चाहती थी; पर यह समझ कर कि तुम्हें अभिप्रेत नहीं, मैं यह पत्र भेज रही हूँ। इसी आदमी के हाथ उत्तर भेज कर सूचित करना कि मैं क्या करूं?"

लड़की बीमार है, फिर भी आने की तैयारी और यह पत्र! रंस्की और न ठहर सका। उसे प्रेम के सामने सिर झुकाना पड़ा। रात की गाड़ी से वह रवाना हो गया।

१८

... की सभा-सोसायटियों में बहुत जाना, अन्ना को पसन्द नह...

था। जब कभी रंस्क इसी तरह बाहर जाने लगता, अन्ना बाधा डालने का यत्न करती। पर इस बार उसने रुकावट नहीं डाली। उसने देखा कि इस तरह से रंस्की का मन फिर सकता है। जिस समय रंस्की बेमन होकर, उसके पास अपनी यात्रा का समाचार देने आया था, अन्ना का जी बहुत दुखा। पर उसने अपने को सम्हाल कर कुछ कहा नहीं। रंस्की के चले जाने के बाद उसका धैर्य जाता रहा।

रंस्की के चले जाने के बाद, वह अकेली रह गई। अब उसने इस प्रश्न पर विचार करना आरम्भ किया। उसे रंस्की की आंखें स्मरण हो आईं। उसने कहा—"इन आंखों से क्या झलकता था, यही कि मैं अपनी स्वतन्त्रता नहीं बेच सकता। मेरा इतना अपमान! मैं इतनी हेठ हो गई! ठीक है, उन्हें स्वच्छन्द विचरने का हक है। वे मुझे छोड़ भी सकते हैं। उन्हें सब अधिकार है, पर मुझे कुछ भी नहीं! यह जान कर भी उन्हें इस तरह का व्यवहार नहीं करना चाहिये। उन्होंने क्या किया, यद्यपि......उन्होंने रूखी दृष्टि से मेरी ओर देखा। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। मैं उनका मतलब नहीं समझ सकी। इससे स्पष्ट है कि वे मेरी ओर से उदासीन होने लग गये हैं।"

उसने प्रत्यक्ष देखा कि रंस्की धीरे-धीरे उदासीन हो रहा था; पर वह उसका उपाय नहीं जानती थी। वह उस संबंध में किसी तरह का परिवर्तन नहीं ला सकती थी। केवल उसे मोहित कर, वह अपने वश में रख सकती थी। इस चिन्ता से अपनी रक्षा करने के लिये, वह दिन भर किसी न किसी काम में लगी रहती और रात को गहरा नशा चढ़ा लेती। एक उपाय और था, उसे अपने दबाव में नहीं रखना, उस पर अधिकार रखने का यत्न नहीं करना; पर उसकी अनुगामिनी बनी

रहना। सदा उसके पास रहने का यत्न करना। पर यह तलाक और शादी से साध्य था। उसने देखा कि बिना इसके काम नहीं चल सकता। वह तैयार हो गई कि अगर किसी ने इस संबंध में कुछ भी कहा तो मैं राजी हो जाऊँगी।

पांच दिन उसने किसी तरह काटे। इन दिनों में वह सब काम की देख-रेख करती और पुस्तकें पढ़ती। छठें दिन कोचवान खाली गाड़ी लेकर लौटा। उसकी चिन्ता बढ़ गई। इसी समय लड़की भी बीमार पड़ गई। बीमारी कड़ी नहीं थी। अन्ना उसकी सेवा-टहल में व्यस्त रहती, फिर भी उसकी परीशानी और चिन्ता दूर न हुई। शाम होते होते उसकी परीशानी बढ़ गई। उसने रवाना होना चाहा; पर दूसरे ही क्षण उसने यह पत्र लिखा। पत्र में विरोधी भाव भरे थे। उसने पत्र बिना पढ़े ही रवाना कर दिया था। दूसरे दिन रंस्की का पत्र मिला। अब उसे अपने पत्र पर चिन्ता होने लगी।

कमरे में बैठ कर वह एक उपन्यास पढ़ रही थी। प्रतिक्षण वह गाड़ी की आवाज सुनने की आशा करती थी। रह-रह कर वह पुस्तक से आंखे हटाती और सामने की ओर ताकती। अन्त में कोचवान की आवाज सुनाई दी। अन्ना आगे बढ़ना चाहती थी; पर रुक गई। उसे रंस्की से डर मालूम होने लगा। उसका सारा अभिमान इस समय तक चूर हो गया था। इतने में रंस्की की आवाज सुनाई दी। वह सब कुछ भूल गई। उसके पास दौड़ पड़ी।

रंस्की—बच्ची की तबीयत कैसी है ?

अन्ना—अब अच्छी है।

[illegible]—तुम।

अन्ना ने उसका दोनों हाथ अपने हाथों में ले कर। छाती से
गा लिया। और टकटकी लगा कर उसकी ओर देखने लगी।

रंस्की—मैं खुश हूँ। तुम तो अच्छी तरह रही हो?

इतना कह कर उसने अन्ना का आलिंगन किया।

अन्ना ने अपने मन में कहा—"बस, इतना काफी है, जब तक वे
े पास रहेंगे। मेरे प्रेमपाश में बंधे रहेंगे।"

सब खुश थे। वरवारा ने रंस्की से इस बात की शिकायत की
—"आप की अनुपस्थिति में अन्ना शराब अधिक पीती थीं।"

अन्ना—मुझे नींद नहीं आती थी। मैं लाचार थी। जब तुम यहां
ते हो तो मैं कभी नहीं पीती।

रंस्की ने निर्वाचन का सारा किस्सा कह सुनाया। इस सफलता
 अन्ना को बड़ी खुशी हुई।

रात को अवसर पाकर अन्ना ने उस दिन की बात कह कर अपने
दय से शूल निकाल डालना चाहा। वह बोली—"तुम्हें मेरा पत्र पाकर
ा मालूम हुआ होगा। और तुम्हें सहसा मेरी बातों पर विश्वास
हीं हुआ होगा?"

रंस्की—सचमुच! तुम्हारा पत्र विचित्र था। ऊपर तो तुमने बच्ची
ी बीमारी की बात लिखी, फिर नीचे लिखा था कि मैं आना चाहती हूँ।

अन्ना—बात सच थी।

रंस्की—इसमें सन्देह कौन करता है?

अन्ना—तुम सन्देह तो नहीं करते; पर तुम परीशान हो गये थे।

रंस्की—नहीं, कदापि नहीं। मुझे कभी-कभी परीशानी केवल इस
रण हो जाती है कि तुम यह बात स्वीकार नहीं करतीं कि मनुष्य के

कुछ कर्तव्य भी हैं।

अन्ना—नाच-गाने में जाने का कर्तव्य ?

रंस्की–पर हम लोग उसकी चर्चा क्यों करें।

अन्ना—क्यों, उसकी चर्चा क्यों नहीं ?

रंस्की—मेरे कहने का अभिप्राय यह था कि कभी-कभी सच-मुच आवश्यक काम आ पड़ते हैं। मुझे मकान ठीक करने के लिये मास्को जाना पड़ेगा······अन्ना ! तुम इस तरह चिड़-चिड़ी क्यों होती जा रही हो। तुम जानती हो कि तुम्हारे बिना मेरा जीवन व्यर्थ है।

अन्ना–(आवाज बदल कर) तब तो इस से स्पष्ट है कि आप इस ग्राम्य जीवन से तंग आ गये हैं। आप यहां से चले जायँगे और कभी-कभी आया करेंगे।

रंस्की–अन्ना ! यह तुम्हारी निर्दयता है। तुम्हारे लिये मैं अपना सर्वस्व खोने के लिये तैयार हूँ।

अन्ना ने रंस्की की बातें नहीं सुनीं। वह बोली–"अगर तुम मास्को जाकर रहना चाहते हो तो मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगी। या तो तुम मुझे त्याग दो या साथ रखो।"

रंस्की–तुम जानती हो कि मेरी भी यही प्रबल इच्छा है; पर इसके वास्ते······अन्ना···पहले तलाकनामा हासिल करना होगा। मैं उसे (अलक्से को) लिखूंगा। इस तरह नहीं चल सकता।

अन्ना–मैं तुम्हारे साथ मास्को चलूंगी।

रंस्की–तुम तो इस तरह बातें कर रही हो, मानों तुम मुझे धमका रही हो। पर मैं तुम्हारे पास रहना, सबसे पहले चाहता हूँ।

··· समय वह ये बातें कह रहा था, उसकी आखों में रुखाई के

साथ-साथ निघृणता और बदले की आग झलक रही थी। अन्ना ने देखा, और वह साफ-साफ समझ गई। उसने अपने मनमें कहा—"अगर उसने यही निश्चय किया है तो मेरा सर्वनाश हुआ समझना चाहिये।" वह उसे भूल न सकी।

अन्ना ने तलाक के लिये अलक्से के पास पत्र लिखा। नवम्बर के अन्त में वरवारा से विदा होकर—जो उस समय पीटर्सवर्ग जाना चाहती थी—रंस्की के साथ मास्को गई। मास्को में अन्ना प्रतिदिन अपने पत्र के उत्तर और उसके बाद तलाक की प्रतीक्षा कर रही थी। इस बीच में वे लोग पति-पत्नी की तरह रहने लगे थे।

सातवां खण्ड

१

मास्को आये तीन महीने हो गये। लोगों के कहने के अनुसार अब तक किटी को लड़का हो जाना चाहिये था। पर अभी तक प्रसव के लक्षण भी नहीं दिखलाई दिये। इससे सब को चिन्ता होने लगी। किटी को इसकी जरा भी फिकर नहीं थी।

लड़का पदा होने की कल्पना में, किटी इतना आगे बढ़ गई थी कि वह लड़का उत्पन्न हुआ ही समझती थी और उसका हृदय मातृप्रेम से भर गया था।

उसके सभी प्रियजन आज-कल यहीं थे, सब उस पर कृपालु थे। सब उसका सत्कार करते थे। मुंह से कोई बात निकली नहीं कि वह दूसरे ही क्षण पूरी कर दी जाती थी। किटी के लिये इससे अधिक सुख की बात क्या हो सकती थी; पर उसे एक दुःख था। लेविन मास्को में नहीं था। वह गांव लौट गया था।

किटी ने देखा था कि शहरों में रहने से लेविन घबड़ाता है। उसे सदा इस बात की डर लगी रहती है कि कहीं कोई मेरा या किटी का अपमान न कर दे, देहातों में वह बड़ा ही सुखी रहता है। गांव पर उसे जल्दीबाजी करते किसी ने नहीं देखा है। वह जानता है कि मैं बेठिकाने नहीं हूँ, इससे उसे किसी बात की चिन्ता नहीं रहती। एक मिनिट भी वह बेकार नहीं रहता। शहरों में वह सदा अस्थिर रहता है। निश्चिन्तता एकदम गायब हो जाती है, यद्यपि उसे कुछ भी काम नहीं रहता इससे किटी उसके लिये सदा चिन्तित रहती। सभा-सोसायटी में किटी उसमें यह कातरता नहीं पाती थी। उसे इस पर विस्मय होता था कि जिसकी दशा देख कर तर्स आनी चाहिये, उसीके सत्संग से लोग इतने आनन्दित हो रहे हैं, स्त्रियां अभिमान कर रही हैं। पर वह यही समझ कर सन्तोष करती थी कि लेविन लाचार होकर यह रूप प्रकट करता है; क्योंकि उसकी भीतरी दशा से वह पूर्ण परिचित थी। कभी-कभी वह यह ख्याल कर कुढ़ती कि लेविन को शहर में रहना पसन्द नहीं, पर वह तुरन्त ही यह समझ कर सन्तोष करती कि वह अपना प्रबन्ध इस तरह नहीं कर सकते कि इतने आनन्द से रह सकें।

वह अपने मन में कहती-"वास्तवमें वे यहां क्या करेंगे? तास खेलना उन्हें पसन्द नहीं, क्लबों में जाना उन्हें पसन्द नहीं। अब्लास्की के सदृश लोगों के साथ वे रह नहीं सकते; क्योंकि उनकी प्रकृति दूसरी ही ओर है। इस बात का स्मरण करके किटी एक बार व्याकुल हो गई। तब वे क्या करें? क्या दिन-रात यहीं मेरे पास बैठे रहें। पर यह कितने दिन चल सकता है। तब वे क्या करेंगे? दिन भर किताब के पीछे भी नहीं पड़े रह सकते थे। इसके अलावा अपने विषय पर उन्होंने इतना अधिक

विवाद किया है कि सब बातें खफ्त-सी हो गई हैं।"

यहां एक लाभ अवश्य था। प्रेमकलह की सम्भावना कम थी। चाहे इसका कारण उनकी उदासीनता हो, या समझदारी हो। पर यहाँ उस तरह के प्रेम कलह नहीं होते थे, जैसा गांव में रहते समय हुआ करते थे। यहां आने पर एक घटना ऐसी घटी थी, जिसका उल्लेख करना आवश्यक है। किटी से रंस्की की मुलाकात हुई थी। किटी एक दिन अपने पिता के साथ अपनी गुरुआनी से मिलने गई थी। वहीं रंस्की से मुलाकात हो गई। रंस्की को देख कर एक बार तो किटी के चेहरे का रंग उड़ गया, वह घबड़ा गई; पर दूसरे ही क्षण उसने अपने को सम्हाला और बिना किसी संकोच के उसकी तरफ देखने लगी। किटी के पिता जान-बूझ कर, रंस्की से जोर से बातें करने लगे। लेविन की अनुपस्थिति उस समय किटी को खली।

उसने रंस्की से केवल दो चार बातें की। उसके चुनाव के किस्से को बेमन होकर सुना और फिर मुंह फेर कर अपने गुरुआनी से बात-चीत करने लगी। जाते समय रंस्की ने अभिवादन किया। किटी ने सदाचार के ख्याल से उसका उत्तर दिया।

सौभाग्य से किटी के पिता ने इस संबंध में उससे कुछ नहीं कहा। पर किटी ने उनकी आकृति से देखा कि उन्हें मेरे व्यवहार से सन्तोष है। किटी को स्वयं इस बात पर सन्तोष था कि उसने इस तरह का व्यवहार किया।

जिस समय वह लेविन से इस मुलाकात की बात कहने लगी, उस का चेहरा शर्म से झुक गया। लेविन विस्मय से उसका मुंह देख रहा था। उसने सारा किस्सा कह डाला; पर लेविन की जबान से एक बात की

नहीं निकली। अन्त में उसने कहा-"उस समय मेरे पास तुम्हारा न रहन मुझे बहुत अधिक खला । पर मैं तुम्हारे सामने इतना गम्भीर न र सकती।" इतना कहते-कहते उसकी आंखों से आंसू निकलने लगा।

लेविन ने उसकी आकृति से देखा कि उसे अपने व्यवहार से सन्तो है। किटी को शर्म आ रही थी; पर लेविन ने उससे एक-एक बात पूछन आरम्भ किया। किटी हृदय से यही चाहती थी, उसने सब बातें व्यौरेवा कह डाला। उसने यह भी कह दिया कि प्रथम क्षण तो मुझे लज्जा बुरी तरह दबाया और मेरा चेहरा लाल होगया; पर दूसरे ही क्षण मैं अपने को सम्हाला। मेरी परीशानी एकदम से दूर होगई, मानों मैं किस साधारण परिचित व्यक्ति से बातें कर रही थी। लेविन की प्रसन्नता क कोई ठिकाना नहीं था, वह बोला-"मुझे इससे अतिशय सन्तोष और खुश है। मैं वचन देता हूँ कि निर्वाचन के समय मैंने जैसा व्यवहार किया वैसा कभी भी न करूंगा। रंस्की के साथ मैं मैत्री का व्यवहार करूंगा जिस समय हृदय में यह ख्याल आता है कि अमुक व्यक्ति मेरा दुश्मन है और उस समय उसका सामना करना पड़ेगा, चित्त को कितना खेद होता है। तुम्हारे व्यवहार से मैं अतिशय सन्तुष्ट हूँ।"

२

ग्यारह बजे दिनका समय था। लेविन कहीं बाहर जा रहा था। किटी से कहने के लिये वह भीतर आया। किटी ने कहा-"इधर ही मैं कौण्टेस वाल से भी मिलते आइयेगा। दावत में तो शामको जाना है। समय तो आपको फ़ुरसत होगी।"

लेविन—मैं इस समय कतासो के पास जा रहा हूँ। उसके साथ मेट्रो के पास जाऊंगा। वहाँ अपने खेतों के विषय में उनसे बातें करूंगा। इस विषय में उन्हें अच्छी जानकारी है।

किटी—क्या इन्हीं का वह लेख था, जिसकी आप बड़ी प्रशंसा कर रहे थे। उनसे मिलकर तो आप आ सकेंगे।

लेविन—उसके बाद बहिन के काम के लिये कचहरी जाना है।

किटी—और कंसर्टमें ?

लेविन-कंसर्ट में मैं नहीं जा सकूंगा।

किटी—आप जरूर जाइये। वहां कितनी नई बातें होंगी, जिनसे आपको बहुत दिलचस्पी है। मैं तो अवश्य जाती।

लेविन-(घड़ी देखकर) किसी अवस्था में भोजन के समय तक मैं घर आ जाऊंगा।

किटी—पर कौण्टेस बाल से मिलते आइयेगा।

लेविन-क्या उनके यहां जाना जरूरी है ?

किटी-बहुत जरूरी है। उनके पति हम लोगों के यहां तीन-तीन बार आ चुके। केवल दस मिनट रहकर इधर-उधर की बातें करके चले आइयेगा।

लेविन—तुम्हें शायद विश्वास नहीं होगा। पर मुझे इन सब बातों से बड़ी शर्म मालूम होती है। कितनी वाहियात बात है। मैं अजनबी की भांति उनके पास जाकर बैठ गया। व्यर्थ की बातें करने लगा। उनका समय व्यर्थ नष्ट किया और चला आया।

किटी हँस पड़ी और उसने कहा—"शादी के पहले भी तो आप लोगों से मिलने जाते ही रहे होंगे।"

लेविन—पहले भी यही हालत थी। अब और बढ़ गई है। द
दिन भूखों रहना मैं पसन्द करूंगा; पर इस तरह किसी से मिलने जान
मुझे पसन्द नहीं। मुझे शर्म मालूम होती है। ऐसा प्रतीत होत
है, मानों वे लोग अपने मन में कह रहे हैं–"यह क्यों यहां व्यर्थ आया
अब भी चला क्यों नहीं जाता।"

किटी—नहीं, कोई ऐसा नहीं सोचेगा। मैं इसका जवाब दे दूंगी

उसने हँसकर लेविन की ओर देखा और उसका हाथ अपने हाथों
लेकर कहा—"निश्चिन्त होकर जाइये।"

किटी का आलिंगन कर लेविन बाहर होना ही चाहता था कि उसने
रोक कर कहा–"मेरे पास रुपये थोड़े ही रह गये हैं।"

लेविन-आज ही बंक से ला देता हूँ। कितना रुपया ला दूं?

लेविन ने यह कह तो दिया; पर किटीने देखा कि लेविन के चेहरे
से असन्तोष टपक रहा है।

किटी-(लेविन का हाथ अपने हाथ में लेकर) जरा ठहरो। हम
लोगों को इस पर विचार कर लेना चाहिये। हम लोग एक पैसा भी व्यर्थ
नहीं खर्च करते। फिर भी इतना रुपया कहां चला जाता है? मालूम
होता है, हम लोग ठीक प्रबन्ध नहीं करते।

लेविन (खांस कर) देखा जायगा।

किटी उस खांसी का अभिप्राय समझती थी। लेविन जब किसी बात
से असन्तुष्ट होता और उसे छिपाना चाहता, तब वह इसी तरह खांसकर
टालता था। उसे इस बात से असन्तोष नहीं था कि खर्च ज्यादा हो रहा है;
पर उसे इस बात से असन्तोष था कि यह बात उसे बार-बार क्यों याद
[illegible] जाती है। यह अन्तर्यामी वह अच्छी तरह समझता था।

लेविन–मैंने सोकलो को लिख दिया है कि सब गेहूँ बेंच कर रुपया खड़ा कर लो और मिल के मध्ये भी मैंने कुछ पेशगी लेने का विचार किया है, इससे रुपया काफी आ जायगा। रुपये की चिन्ता मत करो।

किटी—मैं समझती हूँ कि सब मिला कर......

लेविन—यह सब फजूल की बातें हैं। देखा जायगा......इस समय जाने दो।

किटी–कभी-कभी मुझे इस बात का बड़ा दुःख होता है कि मैं मां की बातों में आ गई। गांव में आनन्द से रहते थे। यहां परीशानी भी अधिक हो रही है और रुपया भी बरबाद हो रहा है।

लेविन–फजूल की बातों में परीशान हो रही हो। शादी के बाद से जितना आराम इस समय है, पहले कभी नहीं था।

किटी ने लेविन की आंखों की ओर देख कर पूछा–"सचमुच ?"

उसने बिना विचार किये ही उसे सन्तोष देने के लिये ही यह बात कह दी थी। पर जब उसने देखा कि किटी की आंखें उसकी ओर टक-टकी लगाये देख रही हैं तो उसे याद आ गया कि मैं उसे एक दम भूल गया। उसे किटी के प्रसव की बात तुरन्त याद आ गई। उसने उसके दोनों हाथ अपने हाथों में ले लिये। फिर पूछा–"कैसी तबीयत रहती है, कब तक उम्मीद करती हो ?"

किटी–मुझे कुछ पता नहीं लगता और न मैं इस संबंध में कभी विचार ही करती हूँ।

लेविन–क्या इसका स्मरण कर तुम्हें डर नहीं लगता ?

किटी ने केवल हंस दिया।

उसने पसन्द भी किया था। कल सभा में कतासो ने लेविन से कहा था कि—"मेट्रो, जिनके लेखों को तुम बहुत पसन्द करते हो, आजकल यहाँ हैं। कल ११ बजे मेरे घर पर आवेंगे। इस समय अगर तुम आ सको तो तुम से परिचय करा दूँ।" तदनुसार लेविन आज ठीक समय पर कतासो से मिलने गया।

लेविन के प्रवेश करते ही कतासो ने कहा—"तुम में यह स्थिरता देख कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मुझे नहीं आशा थी कि तुम कभी भी ठीक समय पर आ सकोगे।" इसके बाद उसे लेजा कर मेट्रो से परिचय कराया। वह बोला—"इन्होंने खेत और मजूरी की दशा पर एक पुस्तक लिखी है। मैं इस विषय का विशेषज्ञ नहीं हूँ। तथापि इनका प्रयास मुझे सार्थक प्रतीत होता है। इन्होंने मनुष्य को कोई असाधारण व्यक्ति नहीं माना है। आस-पास की घटनाओं और अवस्थाओं का उस पर असर पड़ते देख कर, उसीसे उसकी उन्नति के साधन ढूंढ़ने का प्रयास किया है।"

मेट्रो—बड़ी अच्छी बात है। अनोखी भी मालूम होती है।

लेविन—मैंने कृषि पर एक पुस्तक लिखना आरम्भ किया। पहले इसके प्रधान साधन मजूर को उठाया। इसकी समीक्षा-परीक्षा में मुझे नये-नये परिणाम पर पहुंचने पड़े, जिनकी मैंने कल्पना तक नहीं की थी।

मेट्रो ने अर्थशास्त्र के प्रचलित सूत्रों की अपने लेख में निन्दा की थी। लेविन ने इस लेख को पढ़ा था। पर वह यह नहीं स्थिर कर सकता था कि वह मेरे मत से कहां तक सहमत होगा?

लेविन अपना मत कहता जा रहा था। मेट्रो ने पूछा—"आपने

रूस के मजूरों में किस तरह की विशेपता पाई। उनकी मानसिक दशा में अथवा उनकी सामाजिक दशा में ?"

जिस अभिप्राय से मेट्रो ने यह प्रश्न किया था, लेविन सहमत नहीं था। उसने अपना मत कहना शुरू किया कि रूस के मजूर भूमि को विचित्र भाव से देखते हैं। उन लोगों का मत जन साधारण के मत से एकदम भिन्न है। अपने मत के समर्थन में उसने जल्दी से कहा-"कि मुझे इसका कारण यह मालूम होता है कि पूर्व में उन्हें वहुत सा निर्जन क्षेत्र दिखलाई पड़ रहा था।"

मेट्रो – इस तरह की धारणा पर कोई सिद्धान्त निकालना भ्रमोत्पादक हो सकता है। मजूरी के प्रश्न को सदा भूमि और पूंजी के सामने रख कर देखना होगा।

लेविन अपना मत पूरी तरह नहीं प्रगट करने पाया। मेट्रो बीच में ही उसे रोक कर अपना मत सुनाने लगा।

मेट्रो की वातें लेविन की समझ में नहीं आईं क्योंकि उसने उन पर ध्यान नहीं दिया। लेविन ने देखा कि मेट्रो ने अपने लेख में जो मत प्रगट किया था, उसके प्रतिकूल वह और लोगों की तरह रूस के किसानों की अवस्था भी पूंजी और भूमि के अनुसार ही परख रहा है। पूर्वी रूस में मजूरी का कहीं नाम निशान नहीं है। मजूरों को मुश्किल से भोजन भर को मिल जाता है। पूजी की दशा भी वही है। सिवा साधारण औज़ारों के किसी तरह की पूंजी भी उनके पास नहीं है। इस पर भी वह इनकी वातों के आधार पर मजूरों की समस्या को हल करना चाहता है। उसके मत—जो उसने मुझे अभी सुनाया है—अन्य अर्थशास्त्रियों से एक दम भिन्न है।

लेविन बेमन होकर सुनता रहा। उसने कई प्रश्न भी किये। लेविन उसे रोक-कर अपना मत प्रगट कर देना चाहता था, क्योंकि उसकी समझ में मेट्रो के अनेक सिद्धान्त व्यर्थ थे। पर उसने आगे चल कर देखा कि दोनों के मत में इतना घोर मत भेद है कि समझौता हो ही नहीं सकता। निदान उसने रोकना उचित नहीं समझा। बीच-बीच में प्रश्न करना भी छोड़ दिया। केवल चुप-चाप सुनता रहा। मेट्रो की बातों में उसे जरा भी उत्सुकता नहीं थी, फिर भी उसे सुनने में उसे एक तरह का सन्तोष था और वह बराबर सुनता रहा। उसे इस बात का अभिमान हो रहा था कि मेट्रो सदृश विद्वान् मेरा आदर करके अपने सिद्धान्त को मुझे सुना रहा है।

ज्यों ही मेट्रो ने अपनी बातें खतम कीं। कतासो ने कहा–"बड़ी देर हो गई। अभी सभा में भी जाना है। चलो, तुम भी चलो न।"

मेट्रो–हां चलिये, आप भी हम लोगों के साथ चलिये। यदि अव-काश हो तो मेरे घर पर आने का कष्ट उठाइये। मैं आपकी पुस्तक सुनना चाहता हूँ।

लेविन–पुस्तक अभी अधूरी है। अभी सुनाने से क्या लाभ होगा सभा में चलने की तो मेरी भी इच्छा है।

कतासो दूसरे कमरे में कपड़ा पहन रहा था। वहीं से उसने कहा– "क्या आप लोगों ने कुछ सुना है, उसने अलग रिपोर्ट पेश की है।"

इतनी बात पर विश्वविद्यालय के संबंध की चर्चा छिड़ गई। कौंसिल के तीन पुराने प्रोफेसरों ने नये प्रोफेसरों का मत नहीं स्वीकार किया। निदान नये प्रोफेसरों ने अलग प्रस्ताव उपस्थित किया। इसे कुछ लोग तो बुरा समझते थे; पर कुछ लोगों का कहना था कि इसके

सिवा दूसरा मार्ग ही क्या था। प्रोफेसरों का दो दल हो गया था। कतासो के दल ने पुराने दल में बेईमानी और विश्वासघात देखा। पुराने दलने इनमें लड़कपन और अवज्ञा के भाव देखे। लेविन को विश्वविद्यालय से कोई प्रयोजन नहीं था, पर उसने इस विषय में बात-चीत की थी और इसे समझा था। इससे वह भी उनकी बात-चीत में शामिल हो सका।

सभा की कार्यवाही आरम्भ हो गई थी। जिस तरफ कतासो और मेट्रो बैठे थे, उस तरफ पांच छः व्यक्ति और बैठे थे और उनमें से एक झुक कर जोरों में कुछ पढ़ रहा था। लेविन भी पास ही बैठ गया और उसने एक छात्र से पूछा—"क्या पढ़ा जा रहा है।"

छात्र—जीवनचरित।

लेविन की जीवनचरित में रुचि नहीं थी। फिर भी उसने चाव से सुना और उसे उस वैज्ञानिक के संबंध में अनेक नई और अच्छी बातें मालूम हुईं।

उसका पाठ समाप्त हुआ। सभापति अपनी जगह से उठे। कविवर-मेण्ट की भेजी एक कविता उन्होंने पढ़ सुनाई और उन्हें धन्यवाद दिया। उनके बैठने के उपरान्त कतासो उठे। उन्होंने अपने गम्भीर शब्दों में उस वैज्ञानिक के कामों की प्रशंसा की, जिसकी तिथि मनाने के लिये यह जलसा हुआ था।

लेविन ने घड़ी निकाल कर देखा। एक बज गया था। उसने अपने मन में कहा—"कंसर्ट के पहले तो मेट्रो को पुस्तक का कुछ अंश सुनाना कठिन है। पर अब मैं उत्सुक भी नहीं हूँ। मेट्रो के साथ जो बात-चीत हुई थी, उस पर उसने विचार किया। उसने देखा कि मेट्रो के सिद्धान्त

भले ही उपयोगी हों; पर मेरे सिद्धान्त भी कम उपयोगी नहीं हैं। अगर हम लोग अपने-अपने मत के अनुसार स्वतन्त्र रूप से काम करके ही अपने सिद्धान्तों को स्पष्ट समझा सकते हैं। अगर हम लोग अपने मत को एक में मिला दें तो कोई लाभ नहीं हो सकता। इससे उसने स्थिर किया कि मैं मेट्रो के घर नहीं जाऊँगा। निदान सभा के अन्त में वह मेट्रो के पास गया। मेट्रो सभापति के साथ राजनैतिक स्थिति पर बात-चीत कर रहे थे। उनसे लेविन का परिचय कराया। मेट्रो सभापति से वही बात कह रहे थे, जो उन्होंने लेविन से कही थी। लेविन ने भी वही मत प्रगट किया; पर साथ ही उसने एक नई बात भी कही, जो उसे उस समय सूझ गई थी। इसके बाद विश्वविद्यालय का प्रश्न फिर छिड़ गया। लेविन सब बातें पहले ही से सुन चुका था। इससे उसने मेट्रो से यह कह कर बिदा ली कि—"मैं आपके पास आज नहीं आ सकूंगा।"

वहाँ से वह लो के पास गया।

४

किटी की मँझली बहन नटालिया की शादी लो से हुई थी। लो की शिक्षा-दीक्षा रूस से बाहर हुई थी और विदेशों में रूसका प्रतिनिधि होकर वह काम करता रहा। अभी हाल में ही उसकी बदली रूस में हुई थी। उसका स्वभाव इतना सरल था कि उससे मिलकर सभी खुश रहते थे। लेविन की उनसे घनिष्ट मैत्री थी।

लेविन बिना सूचना दिये ही घर में घुस गया। लो आराम कुर्सी पर लेटकर एक पुस्तक पढ़ रहा था

लेविन को देखते ही वह उठ खड़ा हुआ। वह बोला—"अच्छे आये। मैं अभी तुम्हारे पास आदमी भेजने वाला था। किटी की तबीयत कैसी है? क्या तुमने नयी सूचना पढ़ी है? अभी समाचार पत्रों में निकली है।"

लेविन ने उसे वह सब बातें कह सुनाईं, जो उस संबंध में उसने कतासो से सुनी थीं। फिर उसने मेट्रो से जो कुछ बातें हुई थीं, उसे भी कह सुनाया। सभा की चर्चा भी उसने की। लो बड़ी उत्सुकता से उसकी बातें सुनता रहा।

लो—इसी बात से तो मैं तुमसे डाह करता हूँ कि मुझे काम-काज तथा लड़कों से फुरसत नहीं मिलती कि सभा सोसायटियों में जाऊँ और तुम सब जगह पहुँचे रहते हो। इसके आलावा मेरी शिक्षा भी क्रमबद्ध नहीं हुई है।

लेविन---यह तो आपकी विशेषता है; पर इसपर विश्वास ही कौन करेगा।

लो—अपनी हालत देख कर ही तो मेरे कान खड़े हो गये और मैंने कोशिश कर अपनी बदली करवाई, जिससे लड़कों का भविष्य न बिगड़ने पावे। इसके लिये भी मुझे कड़ी मिहनत करनी पड़ती है, क्योंकि केवल शिक्षक से ही काम नहीं चलता। देखो मैं व्याकरण की पुस्तक लेकर माथा खपा रहा हूँ। लड़कों के लिये इतनी कठिन पुस्तकें पाठ्यक्रम में रखी गई हैं। भला ये बेचारे क्या समझेंगे। देखो, कहीं-कहीं तो मेरी ही समझ में नहीं आता।

लेविन ने लो को यह समझाना चाहा कि यह समझने की चीज नहीं है, इसे तो रटना होगा। पर लो ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। वह बोला—"तुम हँसी उड़ा रहे हो।"

लेविन—नहीं, मैं तुमसे अपना कर्तव्य सीख रहा हूँ कि मुझे भी लड़कों की देख-रेख करनी होगी।

लो—तुम तो पण्डित हो। तुम्हारे लिये कोई नई बात नहीं है।

लेविन—मैं तुम्हारे लड़कों को देखकर मुग्ध हो जाता हूँ। ऐसे शिष्ट लड़के मुझे देखने में नहीं आते। मैं तो यही कामना करता हूँ कि दयामय, मुझे भी ऐसी ही सन्तान उत्पन्न हो।

लो का हृदय प्रसन्नता से खिल उठा। उसने अपने हृदयस्थ भावों को छिपाना चाहा। इससे कुछ न कह कर उसने केवल मुस्करा दिया।

लो—मुझे तो इतने में ही परम सन्तोष होगा, अगर वे मुझसे अच्छे निकल गये। जिन लड़कों को मेरे लड़कों की तरह स्वच्छन्द रहने का अवसर मिल गया है, उन्हें ठीक करने में कम कठिनाई नहीं उपस्थित होती।

लेविन—तुम सब कुछ कर लोगे। लड़कों का सदाचार ठीक रहना चाहिये। तुम्हारे लड़कों में यह पूर्णतया वर्तमान है। लिखना-पढ़ना सीखते उन्हें क्या लगता है।

लो—सदाचार की शिक्षा कठिन है। एक आदत डालने का यत्न — अनेक बाधायें उपस्थित हो जाती हैं।

यह विषय लेविन को बड़ा ही रुचिकर था। वह घंटों बातें करता। पर उसी समय नटालिया ने कमरे में प्रवेश किया, वह बाहर जा रही थी।

लेविन को देखकर उसने मुस्करा दिया। वह बोली—"मुझे नहीं मालूम कि आप यहां तशरीफ रखते हैं। किटी की तबीयत कैसी है? मैं आपके घर जा रही हूँ। (लो से) गाड़ी में जाऊं?"

विकट प्रश्न उपस्थित हो गया। लोको भी कई जगह जाना आवश्यक

था, अन्त में यह स्थिर हुआ कि नटालिया पहले लेविन के साथ कंसर्ट में जायगी और वहां से लेविन के घर, तथा घरकी गाड़ी पर लो जायंगे।

लो – (नटालिया से) लेविन मुझे धोखे में डालना चाहते हैं। लड़के दिन पर दिन चौपट होते जा रहे हैं; पर इनका कहना है कि उनकी तरह दूसरे लड़के हैं ही नहीं।

नटालिया – (लेविन से) मैं सदा से यही बात कहती आ रही हूं कि लो सदा उच्चतम आदर्श पर ही चलना चाहते हैं। अगर आप सम्पूर्णता की विवेचना इस तरह करेंगे तो आपको कभी भी सन्तोष नहीं होगा। इनकी समझ में हम लोगों को अपनी फिकर एकदम से छोड़ कर लड़कों के पीछे ही प्राण दे देना चाहिये।

लो – मैं तो यही उचित समझता हूं। अगर कोई अजनबी तुम्हारी बातें सुने तो यही कहेगा–"मालूम होता है यह विमाता है।"

नटालिया – मैं तो किसी भी काम को अतिशय नहीं पसन्द करती।

इसी समय लो के दोनों लड़कों ने कमरे में प्रवेश किया। लेविन का अभिवादन कर वे लो के पास कुछ पूछने के लिये गये।

लेविन उन दोनों की बातें सुनना चाहता था। पर नटालिया उससे बातें करने लगी और इसी समय लो का साथी महोलिन भी आ गया। लो को लेकर उसे कहीं बाहर जाना था। उसके आते ही विविध प्रसंग पर बात-चीत होने लगी।

लेविन लो के घर किसी खास उद्देश्य से आया था; पर यहां आकर वह उसे एक दम भूल गया। उठते-उठते उसे याद आया, वह बोला–"किटी ने अब्लास्की के संबंध में तुमसे बातें करने के लिये कहा था।"

लो – किटी की मां की राय है कि हम लोग एक दिन उन्हें फटकारें।

पर मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्यों कुछ कहूँ ?

नटालिया – तब फिर मुझे ही यह काम करना पड़ेगा ।

लेविन नटालिया के साथ कंसर्ट में गया । वहां खूब चहल पहल थी । लोगों का उत्साह देखते ही बनता था । कंसर्ट सुन-सुन कर लोग तारीफ का पुल बांध रहे थे, उछल-उछल पड़ते थे । पर लेविन को जरा भी मजा नहीं आया । उसे थकावट मालूम होने लगी । वह उठ कर इधर-उधर घूमने लगा कि अगर कोई मिले तो उससे बातें करूं ।

लेविन इतना व्याकुल हो गया कि क्षण भर भी ठहरना उसे, कठिन जान पड़ने लगा । इतने में उसने कौण्ट वाल को वहां देखा । उन्हें देखते ही उसे कौण्टेस वाल से मिलने की बात याद आ गई । उसने नटालिया से कहा । नटालिया ने उत्तर दिया – "आप उनसे मिल कर सभा में आ जाइये । मैं यहीं रहूँगी । आपके लौट आने पर साथ ही चलूंगी ।"

५

जिस समय लेविन वहां पहुँचा कौण्टेस वाल नौकर पर बिगड़ रही थीं । कौण्टेसवाल ने हँसकर लेविन का स्वागत किया और उसे लेकर बैठक में गईं, जहां उनकी दोनों लड़कियां और लेविन के परिचित एक कर्नल बैठे थे । लेविन ने सब से हाथ मिलाया और एक कुर्सी पर बैठ गया ।

कौण्टेस वाल की लड़की ने लेविन से पूछा – "आपकी पत्नी की तबियत कैसी है ? क्या आप कंसर्ट में गये थे ? हमलोग नहीं जा सकीं । मास्को में एक मुर्दनी में जाना पड़ गया ।"

लेविन-हां, मैंने भी सुना······कैसी अचानक मृत्यु हो गई।

कौण्टेस वाल लेविन को पहुंचा कर बाहर चली गई थीं, तुरंत ही ाटकर आई और लेविन से कुशल-मंगल पूछने लगीं।

लेविन ने सब बातों का यथावत् उत्तर दिया और श्रीमती अप्रका-ान की मृत्यु की चर्चा छेड़ दी।

कौण्टेस वाल-वह सदा से इसी तरह बीमार रहती थीं।

इसके बाद और बातें होती रहीं। प्यूरिन की यात्रा की चर्चा ली। इसीके बाद कर्नल उठकर चलने लगा, तो लेविन भी उठा, पर ौण्टेस वाल का रुख देखकर, उसने समझ लिया कि अभी मुझे जाना चित नहीं। यह सोच कर वह बैठ गया। बहुत ढूंढने पर भी बात-ीत का कोई प्रसंग उसे सूझ नहीं पड़ा। वह चुपचाप बैठा रहा।

कौण्टेस-क्या आप सभा में नहीं जायंगे? लोग कहते हैं कि सभा बड़े समारोह से होगी।

लेविन--नहीं, सभा में तो मैं नहीं जा सकूँगा। वहां मैं किटी की बहिन को लेने अवश्य जाऊँगा।

फिर सन्नाटा छा गया। कौण्टेस ने अपनी एक लड़की की ओर देखा।

लेविन उठ खड़ा हुआ। लोगों ने हाथ मिलाया। लेविन उनके घर से बाहर हुआ।

दरवाजे पर दरवान ने झुक कर सलाम किया। उसने पूछा--"आप कहां ठहरे हैं?" लेविनके बतलाने पर उसने एक बड़े रजिस्टर में उसका पता लिख लिया।

कौण्टेस वाल के घर से लेविन सीधे सभा में गया। सभा में बड़ी

पर मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्यों कुछ कहूँ ?

नटालिया – तब फिर मुझे ही यह काम करना पड़ेगा।

लेविन नटालिया के साथ कंसर्ट में गया। वहां खूब चहल पहल थी। लोगों का उत्साह देखते ही बनता था। कंसर्ट सुन-सुन कर लोग तारीफ का पुल बांध रहे थे, उछल-उछल पड़ते थे। पर लेविन को जरा भी मजा नहीं आया। उसे थकावट मालूम होने लगी। वह उठ कर इधर-उधर घूमने लगा कि अगर कोई मिले तो उससे बातें करूं।

लेविन इतना व्याकुल हो गया कि क्षण भर भी ठहरना उसे, कठिन जान पड़ने लगा। इतने में उसने कौण्ट वाल को वहां देखा। उन्हें देखते ही उसे कौण्टेस वाल से मिलने की बात याद आ गई। उसने नटालिया से कहा। नटालिया ने उत्तर दिया – "आप उनसे मिल कर सभा में आ जाइये। मैं यहीं रहूँगी। आपके लौट आने पर साथ ही चलूंगी।"

५

जिस समय लेविन वहां पहुँचा कौण्टेस वाल नौकर पर बिगड़ रही थीं। कौण्टेसवाल ने हँसकर लेविन का स्वागत किया और उसे लेकर बैठक में गईं, जहां उनकी दोनों लड़कियां और लेविन के परिचित एक कर्नल बैठे थे। लेविन ने सब से हाथ मिलाया और एक कुर्सी पर बैठ गया।

कौण्टेस वाल की लड़की ने लेविन से पूछा – "आपकी पत्नी की तबियत कैसी है ? क्या आप कंसर्ट में गये थे ? हमलोग नहीं जा सकीं। मैं एक मुर्दनी में जाना पड़ गया।"

लेविन–हां, मैंने भी सुना······कैसी अचानक मृत्यु हो गई।

कौण्टेस वाल लेविन को पहुंचा कर बाहर चली गई थीं, तुरंत ही लौटकर आईं और लेविन से कुशल-मंगल पूछने लगीं।

लेविन ने सब बातों का यथावत् उत्तर दिया और श्रीमती अपका-सेन की मृत्यु की चर्चा छेड़ दी।

कौण्टेस वाल–वह सदा से इसी तरह बीमार रहती थीं।

इसके बाद और बातें होती रहीं। प्यूरिन की यात्रा की चर्चा चली। इसीके बाद कर्नल उठकर चलने लगा, तो लेविन भी उठा, पर कौण्टेस वाल का रुख देखकर, उसने समझ लिया कि अभी मुझे जाना उचित नहीं। यह सोच कर वह बैठ गया। बहुत ढूंढने पर भी बात-चीत का कोई प्रसंग उसे सूझ नहीं पड़ा। वह चुपचाप बैठा रहा।

कौण्टेस–क्या आप सभा में नहीं जायंगे? लोग कहते हैं कि सभा बड़े समारोह से होगी।

लेविन--नहीं, सभा में तो मैं नहीं जा सकूँगा। वहां मैं किटी की बहिन को लेने अवश्य जाऊँगा।

फिर सन्नाटा छा गया। कौण्टेस ने अपनी एक लड़की की ओर देखा।

लेविन उठ खड़ा हुआ। लोगों ने हाथ मिलाया। लेविन उनके घर से बाहर हुआ।

दरवाजे पर दरवान ने झुक कर सलाम किया। उसने पूछा–"आप कहां ठहरे हैं?" लेविनके बतलाने पर उसने एक बड़े रजिस्टर में उसका पता लिख लिया।

कौण्टेस वाल के घर से लेविन सीधे सभा में गया। सभा में बड़ी

भीड़ थी। प्रायः सभी विद्वान् और बड़े २ लोग वहां आये थे। लेविन भी समय पर पहुंच गया था। रिपोर्ट पढ़कर सुनाई गई। सब लोगों ने रिपोर्ट बड़े चाव से सुनी। रिपोर्ट समाप्त होने पर लोग इधर-उधर घूमने लगे। इसी बीच में स्विस्की से मुलाकात हो गई। स्विस्की ने कहा—"आज कृषिभवन में बहुत उत्तम व्याख्यान होनेवाला है, चलना चाहिये। अव्लास्की वगैरह भी आवेंगे।"

लेविन ने कुछ उत्तर नहीं दिया।

नटेलिया को लेकर वह घर आया। किटी से मिल कर वह क्लब चला गया।

बहुत दिनों के बाद लेविन इस क्लब में गया था। पोर्टर ने उसे पहचान कर सलाम किया और उसने कहा-"अभी तो अव्लास्की साहब नहीं आये हैं।"

उस दिन होटल में हर तरह के लोग इकट्ठे हुए थे। छोटे बड़े सभी उत्साह से भरे थे। किसी के चेहरे पर उदासी के चिह्न नहीं थे। मालूम होता था कि घर से चलते समय, उन लोगों ने चिन्ता और सोच को ताख पर रख दिया था। लेविन के सभी मित्र वहाँ उपस्थित थे।

किटी के पिता--देर क्यों हुई? किटी की तबीयत अच्छी तो है?

लेविन-सब कोई मजे में हैं। डाली और नटालिया भी आज वहीं गई हैं।

इतने में दूसरी ओर से किसी ने पुकार कर कहा-लेविन!

लेविन ने देखा कि तुरोसिन उसे बुला रहा है। तुरोसिन एक नव-जवान अफसर के साथ बैठा था। पास में दो कुर्सियां खाली थीं।

लेविन खुशी-खुशी जाकर तुरोसिन के पास बैठ गया। तुरोसिन के साथ से लेविन को बड़ा सुख मिलता था।

तुरोसिन—मैंने तुम्हारे और अव्लास्की के लिये पहले से ही जगह ठेक रखी थी। अव्लास्की भी अभी आवेगा।

तुरोसिन के पास जो अफसर बैठा था, उसका नाम गोगिन था। वह गर्दन ऊँची किये बैठा था। उसकी आँखें क्षण भर के लिये भी नहीं ठहरती थीं। तुरोसिन ने लेविन से उसका परिचय कराया।

इतने में अव्लास्की भी आ गया। उसने लेविन से पूछा-"क्या तुम भी अभी आये हो?"

भोजन आरम्भ हुआ। बात-चीत भी शुरू हुई। लेविन बड़ी देलचस्पी के साथ भोजन और बात-चीत में भाग लेता रहा।

गोगिन ने एक ऐसा किस्सा कहा कि सब लोग हँस पड़े। लेविन ने तो कहकहा लगाकर हँसना शुरू किया।

भोजन समाप्त हुआ। सब लोग कुर्सी छोड़ कर उठ खड़े हुए। लेविन गोगिन के साथ बातें करता चला जा रहा था। रास्ते में किटी के पिता ने उसे पकड़ लिया। थोड़ी देर तक उनसे बातें कर लेविन, अव्लास्की और तुरोसिन को खोजने लगा। उसने देखा कि बिलियर्डरूम में तुरोसिन मदिरा देवी की उपासना कर रहा है और अव्लास्की एक कोने में खड़ा [illegible] से बातें कर रहा है। लेविन ने अव्लास्की को कहते हुए सुना—"वह उदास नहीं है; पर यह अव्यवस्थित जीवन, यह अस्थिर अवस्था..."

लेविन आँख बचाकर भाग जाना चाहता था; पर अव्लास्की ने उसे देख लिया और उसने अपने पास बुलाया।

लेविन ने देखा कि अव्लास्की की आँखों में आँसू भरा है। लेविन

ऊपर जाकर अब्लास्की को मालूम हुआ कि अन्ना वरकेयो के साथ पुस्तकालय में बात-चीत कर रही है।

अब्लास्की लेविन को लिये हुए उसी तरफ चला। पुस्तकालय के भीतर रोशनी जल रही थी। सामने की दीवाल पर अन्ना की तस्वीर टँगी थी। इसी तस्वीर को इटाली में रंस्की ने मिहलो से बनवाया था। लेविन की दृष्टि उस तस्वीर पर गई। वह गौर से तस्वीर देखने लगा। उसकी आंखें तस्वीर पर जम सी गईं। लाख चेष्टा करने पर भी वह उन्हें वहां से हटा न सका। उसकी सुध-बुध जाती रही। उसके चारों ओर क्या हो रहा है, उसे कुछ पता नहीं। लेविन को प्रतीत होने लगा, मानों अन्ना की सजीव मूर्ति उसके सामने खड़ी है।

इतने में किसी की सरस और कोमल आवाज उसके कान में पड़ी—"आपको देख कर मैं अतिशय प्रसन्न हूँ।" वह चौंक पड़ा। उसने देखा, अन्ना उसके सामने खड़ी है।

लेविन ने शर्मा कर आंखें नीची कर लीं। अन्ना ने अपना हाथ आगे बढ़ाया। लेविन ने अपने हाथ में अन्ना का हाथ लेकर अभिवादन किया। वहां जो लोग उपस्थित थे, उनसे अन्ना ने लेविन का परिचय कराया। वह बोली—"बहुत दिनों से आपकी चर्चा सुनती आ रही थी। पर आपके दर्शन का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ था। किटी से मेरा पुराना परिचय है। उस समय किटी अधखिला फूल थी। इतने ही दिन में वह फूल कर, फल ले रही है।"

अन्ना की बोली बड़ी स्वाभाविक थी। लेविन ने देखा कि अन्ना के चित्त में किसी तरह की उत्कण्ठा नहीं है। लेविन सन्तोष के साथ उसकी बातें सुनने लगा।

अव्लास्की–तुम्हारी तबीयत आज कैसी है ?

अन्ना–वही हालत है। रह-रह कर तबीयत घबराती है।

अव्लास्की ने देखा कि लेविन रह-रह कर अन्ना की तस्वीर की ओर ध्यान से देखने लगा है। वह आंखें हटाता है; पर वे आप से आप उन पर जा गिरती हैं। वह बोला–"कैसी अच्छी तस्वीर है ?"

लेविन–मैंने ऐसी अच्छी तस्वीर पहले कभी नहीं देखी थी।

वरकेयो–असली सूरत से कितनी मिलती-जुलती है !

लेविन ने अन्ना की ओर देखा। अन्ना का चेहरा दमक रहा था। लेविन सकुचा गया। अपनी दशा छिपाने के लिये वह डाली की बात छेड़ देना चाहता था। वह बोला–"डाली से इधर मुलाकात हुई थी ?"

अन्ना–कल ही आई थीं। लेटिन भाषा के शिक्षक ने ग्रीशा के साथ अन्याय किया है। उसी के लिये परीशान थीं।

लेविन अनेक तरह की बातें अन्ना से करता, उसे उसके साथ बात करने में और उसकी बातें सुनने में बड़ा आनन्द आता।

बातों ही बातों में कला की चर्चा चल गई। अन्ना ने कहा कि एक फरांसीसी कारीगर बाइबिल को सचित्र बना रहा है। इस पर वरकेयो ने उसकी बड़ी निन्दा की।

लेविन–फ्रांस वाले भावनाओं से बहुत आगे बढ़ गये हैं। यही कारण है कि वास्तविकता के, वे दिन पर दिन उपासक बनते जा रहे हैं।

अपनी यह युक्ति लेविन को बहुत पसन्द आई। उसे बड़ा सन्तोष हुआ। उसकी विचार पूर्ण बातों से अन्ना को भी बड़ा सन्तोष हुआ। उसने हँस दिया।

कुछ देर तक उसी प्रसंग पर बातें होती रहीं। उसके बाद उसने

अब्लास्की से पूछा—"क्लब गये थे ?" इतना कह कर वह उसकी ओर झुक गई और धीरे-धीरे न जाने क्या कहने लगी। लेविन ने देखा कि वह गुलाब सा खिला चेहरा, दूसरे ही क्षण क्रोध से लाल हो गया। पर यह अवस्था देर तक नहीं रही। उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं। क्षण भर के बाद उसने चाय तैयार करने की आज्ञा दी।

पास ही एक लड़की बैठी थी। उसकी ओर लक्ष्यकर अन्ना ने कहा—"यह मेरी छात्री है।"

अब्लास्की—परीक्षा में इसने कैसा किया है ?

अन्ना—खूब अच्छा, जितनी तेज है, उतनी ही सदाचारिणी भी है।

अब्लास्की—तुम्हारा अनुराग इसकी ओर दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। कहीं तुम अपनी लड़की से अधिक स्नेह इससे न रखने लगो।

अन्ना—यह सब पुरुषों की बातें हैं। प्रेम में कम और बेशी कहां ? प्रेम सदा पूरा रहता है, केवल उसके प्रकार में भेद होता है।

वरकेयो—मैं अभी इनसे (अन्ना से) यही कह रहा था कि इस लड़की की शिक्षा में जितना श्रम आप उठाती हैं, उसका १०० वां हिस्सा भी यदि रूस का प्रारम्भिक शिक्षा में व्यय करें तो बड़ा उपकार हो।

अन्ना—पर मैं लाचार हूँ। मैं नहीं कर सकती। कौंएट अलक्से किरिलोविच ने कम जोर नहीं दिया। उन्होंने इस गांव के स्कूल का भार मुझ पर देना चाहा। मैं कई बार उसका निरीक्षण करने गई भी। सभी लड़के अच्छे हैं। पर मेरा दिल नहीं लगा। आप प्रयास की बातें कहते हैं। प्रयास का आधार प्रेम है। बेमन होकर प्रयास नहीं किया जा सकता, चाहे कितना भी जोर क्यों न मारा जाय। मैंने इस लड़की का अपने ऊपर क्यों लिया ? मैं खुद इसका कारण नहीं बता सकती।

इतना कह कर उसने लेविन की ओर देखा । उसकी आंखें साफ-साफ कह रही थीं—"आपकी वजह से ही मैं ये बातें कह रही हूँ । आप के विचारों पर मुझे बड़ी श्रद्धा है ।"

लेविन—मैं आपकी बातें भली-भांति समझता हूँ । सार्वजनिक संस्थाओं में इस तरह दत्त-चित्त होकर काम करना कठिन है । यही कारण है कि सार्वजनिक संस्थाओं की यह दशा होती है ।

वह कुछ क्षण तक चुप रही, फिर उसने लेविन की ओर देख कर मुस्करा दिया । वह बोली—"आपका कहना ठीक है । मुझसे वह काम नहीं हो सकता था । स्कूल की सभी लड़कियों के लिये मेरे हृदय में प्रेम का ज्वार कहां से आ सकता था ? मुझे मालूम है कि आप सार्वजनिक कामों से उत्साह नहीं रखते और मैंने अपनी शक्ति भर आपके मत का प्रतिपादन किया है ।"

लेविन—किस तरह ?

अन्ना—आपके ऊपर जितने आक्षेप किये जाते हैं, उनका मुंहतोड़ जवाब देकर ।

इतना कह कर, उसने आलमारी से एक कापी निकाली ।

उस कापी को देखते ही वरकेयो ने कहा—"यह कापी मुझे दे दीजिये । यह इसी योग्य है ।"

यह कापी अन्ना के लेखों से भरी थी । उसने प्रारम्भिक शिक्षा पर अपने विचार प्रकट किये थे ।

अन्ना—मैं इसे आपको कैसे दे सकती हूँ ? इस विपन्नावस्था में यही मेरे हृदय को तसल्ली देती है ।

लेविन ने देखा कि अन्ना अपनी हीनावस्था को किसी भी तरह

छिपाना नहीं चाहती।

चाय तैयार हो गई। उसने लेविन से कहा—"आप वरकेयो के साथ बैठक में चलें, मैं अभी आती हूँ।"

अव्लास्की के साथ अन्ना कमरे में रह गई। लेविन ने सोचा—"शायद अन्ना अपने तलाक के संबंध में, मेरे संबंध में और क्लब के संबंध में, अपने भाई से बात करना चाहती है। इस ध्यान में वह इतनी मग्न थी कि वरकेयो की बात उसने एक दम न सुनी। वरकेयो अन्ना की उस पुस्तक की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा कर रहा था।"

सब लोग चाय पीने बैठ गये। वही चहल-पहल रही। वही प्रसन्नता विराजमान थी। एक मिनट भी चुप रहने का अवसर नहीं मिलता था। एक की बात समाप्त भी नहीं होने पाती थी कि दूसरा बोल उठता था। लेविन की बातें अन्ना विशेष चाव से सुनती।

लेविन पर अन्ना का विचित्र प्रभाव पड़ा। आज तक उसने उसके संबंध में बुरा भाव हृदय में धारण किया था। आज उससे मिल कर, उससे बातें कर, उसकी मिलनसारी देख कर लेविन की आँखें खुल गईं।

इसी तरह रात को ग्यारह बज गये। लेविन को पता तक न लगा कि इतना समय कब बीत गया। अव्लास्की चलने के लिये उठा। लेविन भी उठा; पर उसका जी उठने को नहीं चाहता था।

तिरछी चितवन से उसकी ओर देख कर अन्ना ने उससे हाथ मिलाया। वह बोली—"अपनी पत्नी से कह दीजियेगा कि मेरा अनुराग उन पर पहले की तरह बना है। अगर वे मुझे क्षमा नहीं कर सकतीं तो मेरा भी उनसे यही अनुरोध है कि वे मुझे क्षमा न करें।"

लेविन—(शर्मा कर) मैं उससे आपका सन्देश अवश्य कह दूँगा।

७

लेविन अन्ना में तल्लीन था। क्या ही असाधारण, मधुर, सरस किन्तु, अभागी औरत है!

अव्लास्की ने देखा कि लेविन अन्ना के ख्याल में पूरी तरह से तल्लीन हो रहा है। अन्ना के व्यवहार का लेविन पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। वह बोला-"क्या मैंने पहले ही नहीं कह दिया था।"

लेविन-असाधारण औरत है। उसकी बुद्धिमानी पर नहीं, बल्कि उसके हृदय के अगाध भावों पर मैं निसार हूँ। उसकी इस दैन्यावस्था पर मुझे हृदय से खेद है।

अव्लास्की-यदि ईश्वर ने चाहा तो उसके दिन शीघ्र लौटेंगे। इस के बाद हो अव्लास्की ने गाड़ी रोकी और उतर कर बोला-"मुझे कहीं अन्यत्र जाना है।"

लेविन गाड़ी में अकेला रह गया। अन्ना का ख्याल उसकी स्मृति से क्षण भर के लिये भी नहीं उतरा था। वह अन्ना की प्रत्येक बातों पर विचार करता घर पहुँचा।

दरवाजे पर ही कोमा हाथ में दो पत्र लिए खड़ा था। वह बोला—"आपकी दोनों साली अभी गई हैं।"

लेविन पत्र खोल कर पढ़ने लगा। पहला पत्र गुमाश्ते का था। उसने लिखा था—"इस समय ५॥) मन से अधिक दाम गेहूँ का नहीं मिल रहा है।" दूसरा पत्र उसकी बहिन का था। उसने लिखा था—"हमारा काम अभी तक पूरा नहीं हुआ। ज्यों का त्यों पड़ा है।"

पहली चिट्ठी का उत्तर तो लेविन ने खड़े ही खड़े सोच लि

"कोई चारा नहीं है। ५॥) मन ही सही। इस समय तो बेचना ही पड़ेगा।" दूसरी चिट्ठी के संबंध में उसने कहा-"इसमें मेरा ही दोष है। मेरी ही सुस्ती से बहन का काम अभी तक नहीं हो सका। आज भी कचहरी नहीं जा सका। कल तो इसको निपटाना ही होगा।"

यह निश्चय कर वह किटी के कमरे की तरफ चला। दिन भर की बातें उसे याद आ गईं। आज दिन भर वह बातें ही करता रहा। जिन प्रसंगों की चर्चा आज दिन भर होती रही, उनमें एक भी ऐसा प्रसंग नहीं था, जिसकी चर्चा वह घर पर करता, पर वह सभी विषयों पर चाव से बातें करता रहा और लोगों के कथन को सुनता रहा। दो विषयों के अतिरिक्त उसने सभी को उचित समझा था।

कमरे में पहुँच कर उसने देखा, किटी उदास और सुस्त पड़ी है। भोजन के बाद तीनों बहनें लेविन की प्रतीक्षा कर रहीं थीं। जब वह नहीं आया तो दोनों उदास मन चली गईं और किटी तभी से उदास पड़ी है।

किटी-(लेविन की ओर घूर कर देख कर) आप कहां थे?

लेविन ने एक भी बात छिपानी नहीं चाही। उसने सिलसिलेवार सभी बातें कहना आरम्भ किया-"क्लब में रंस्की से मुलाकात हुई थी। मैंने पूरी इन्सानियत का बर्ताव किया। मेरे आचरण में कोई भी असाधारण बात नहीं थी। हम लोग शराबखोरी पर बहस कर रहे थे कि कौन अधिक शराब पीता है। हम लोग या किसान?"

लेकिन किटी को इसमें जरा भी उत्साह नहीं था। वह इन बातों के सुनने के लिये तैयार नहीं थी। किटी ने देखा था कि रंस्की की चर्चा समय लेविन सकुचा गया था और वह इस संकोच का कारण

जानने के लिये अधीर हो रही थी। वह बोली—"इसके बाद ?"

लेविन—अब्लास्की ने बहुत जोर दिया और मैं उसके साथ अन्ना से मिलने चला गया था।

इतना कहते-कहते लेविन का चेहरा शर्म से लाल हो गया। उसने अपने मन में कहा—"मुझे नहीं जाना चाहिये था। मैंने वहां जाकर अच्छा काम नहीं किया।"

अन्ना का नाम सुनते ही किटी चौंक पड़ी। पर उसने अपने को तुरत सम्हाला और अपने हृदय के भाव को प्रगट नहीं होने दिया। लेविन को भारी धोखा हुआ।

वह बोली—"ठीक है।"

लेविन—अब्लास्की ने बहुत जोर दिया। डाली ने भी कई बार कहा था, इससे मुझे मजबूर होकर जाना पड़ा। तुम खफा तो नहीं होगी ?

किटी—नहीं, खफा होने की कौन सी बात है ! लेकिन उसकी आंखें कुछ और ही कह रही थीं। लेविन ने देखा कि लक्षण अच्छे नहीं हैं।

लेविन—वह बड़ी ही मधुर और सरस औरत है; पर घोर विपद में पड़ी है। उसने तुम्हें भी सन्देश भेजा है।

इतना कह कर लेविन ने किटी को अन्ना का सन्देश सुना दिया।

किटी—उसकी अवस्था अवश्य शोचनीय है।......दोनो पत्र कहां से आये थे ?

लेविन के चित्त में किसी बात की आशंका नहीं रह गई। उसने दोनों पत्र किटी को दे दिये और आप कपड़ा बदलने चला गया। लौट कर देखा कि किटी आराम कुर्सी पर बैठी रो रही है।

लेविन घबरा कर उसके पास गया। उसने पूछा—"यह क्या है ?"

किटी-(सिसकती हुई) तुम उस पाजी औरत के फेर में पड़ गये हो। उसने तुम पर जादू डाल दिया है। तुम्हारी आंखें साफ-साफ बतला रही हैं। यही होना था। तुमने क्लब में शराब पिया, जुआ खेला और तब तुम उसके पास गये। बस, अब यहां रहना नहीं हो सकता। कल ही यहां से डेरा-डण्डा उठाना होगा।

लेविन उसे समझाने लगा। बड़ी कठिनाई से लेविन उसे शान्त कर सका। तीन बजे तक दोनों जागते रहे। लेविन ने अपना दोष कबूल किया और वादा किया कि भविष्य में वह अन्ना के पास कभी नहीं जायगा। उसने कहा—"मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि बिना काम का, मैं यहां दावत खाने और व्यर्थ की बातों में दिन काट कर अपना पतन कर रहा हूँ।"

V. good Novel

८

अव्लास्की और लेविन के चले जाने के बाद, अन्ना स्थिर नहीं रह सकी। वह उठकर टहलने लगी। उसने लेविन के हृदय में प्रेम उद्दीप्त करने का कम प्रयास नहीं किया था। उसे सफलता भी मिली थी। एक विवाहित युवक के हृदय में जितनी चंचलता उत्पन्न हो सकती थी, लेविन के हृदय में अन्ना ने उतनी चंचलता का आभास देखा। वह लेविन पर मुग्ध थी। लेविन के शरीर की गठन यद्यपि रंस्की से भिन्न है, फिर भी अनेक अंशों में वह रंस्की से एक दम [illegible]-जुलता है। यही कारण है कि अन्ना के हृदय में दोनों

बन गये थे। पर लेविन के जाने के बाद ही उसने उसे अपने ध्यान से उतार दिया।

इस समय रह-रह कर उसके हृदय में केवल एक ही भाव उठता था और वही उसे परीशान कर रहा था। लाख चेष्टा करने पर भी वह उसके चित्त से दूर नहीं होता था। वह सोच रही थी—"मेरा जादू सब पर चल जाता है। जो मुझसे मिला, वही फिदा हो गया। पर यह आदमी (रंस्की) पर मेरा जादू क्यों नहीं चलता? यह मुझसे इतना उदासीन क्यों रहता है? इसे उदासीन नहीं कह सकते। यह तो कह ही नहीं सकती कि वह मुझसे प्रेम नहीं करता। पर कोई नई घटना उपस्थित हो गई है, जो उसे मेरे पास से खींचे ले जा रही है। आज शाम से ही गायब हैं। अब्लास्की से कहला दिया है कि याशविन के साथ रहना अनिवार्य है। मानों याशविन दूध पीता बच्चा है। पर वह झूठ नहीं बोलता। अगर यह बात सच भी है तो कोई और कारण भी उसमें शामिल है। केवल इतनी ही बात नहीं हो सकती। वह मन ही मन खुश होता होगा कि उसने आज मुझे इस बात की चेतावनी दी है कि मेरा और भी कुछ कर्तव्य है। मैं खूब समझती हूँ। मैंने उसके सामने सिर भी झुका दिया है। लेकिन मेरे सामने इसे साबित करने से क्या लाभ? वह मुझे दिखलाना चाहता है कि मेरा प्रेम उसकी स्वतन्त्रता का बाधक नहीं हो सकता। किन्तु इससे क्या लाभ? मुझे तो केवल प्रेम से काम है। उसे यह बात समझनी चाहिये कि मास्को में हम लोगों का जीवन कितनी कठिनाई से बीत रहा है। क्या इस तरह का जीना भी कोई जीना है। मैं जी रही हूँ, केवल उसके निस्तारे के लिये। पर उधर से कुछ जवाब नहीं। अब्लास्की अलक्ले के

पास जाने के लिये तैयार नहीं है। मैं भी अब दूसरा पत्र नहीं लिख सकती। मेरे हाथमें कुछ नहीं है। अपने दिल को समझा कर मैं किसी तरह दिन काट रही हूँ। पर इस तरह कब तक चल सकता है? उसे मेरी चिन्ता होनी चाहिये।"

इतना सोचते-सोचते उसकी आँखों में आंसू आ गये। इतने में उसे रंस्की के पैरों की आहट लगी। चटपट आंसू पोछ कर, वह सम्हल बैठी और एक किताब खोल कर पढ़ने लगी। उसने रंस्की पर अपनी अप्रसन्नता प्रकट करनी चाही कि वादे के अनुसार तुम आये नहीं। पर साथ ही वह अपनी परीशानी और दैन्यता हर तरह से छिपाना चाहती थी। अपनी दशा पर वह चाहे जितना रोवे और झीखे, वह उसे तर्स खाने का अवसर नहीं देना चाहती थी। वह कलह नहीं करना चाहती थी; पर उसके मत्थे यह दोष मढ़ना चाहती थी कि तुम झगड़े का रास्ता ढूंढ़ रहे हो।

कमरे में प्रवेश करते ही रंस्की उसके पास गया, उसने प्रेम से कहा-"तुम उदास तो नहीं थीं। आह! जुआ भी क्या बुरी लत है।"

अन्ना-मैं उदास नहीं थी, मैंने उदासी मिटाना बहुत दिनों से सीख लिया है। अब्लास्की आये थे। लेविन को भी साथ लाये थे।

रंस्की—क्लब में ही यहां आने का निश्चय हो रहा था (पास बैठ कर) लेविन के बारे में तुम्हारी क्या राय है?

अन्ना—लेविन का स्वभाव बहुत ही अच्छा है। अभी तो वे लोग गये हैं? याशविन की हालत कैसी रही।

रंस्की-वह बराबर जीतता रहा। १७०००) रु० उसने जीता। मैंने उसे उठा दिया। वह घरके लिये रवाना हो गया था; पर वह फिर लौट

आया और खेलने लगा। अब वह हार रहा है।

अन्ना—(आंखें सामने करके) तब तुम वहाँ ठहरे क्यों रहे? अव्लास्की से तो तुमने कहला भेजा कि मैं याशविन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ, उसे घर पहुँचा कर आ जाऊँगा। पर उसे वहीं छोड़ कर चले आये।

रंस्को ने देखा कि अन्ना का चेहरा मलीन हो रहा है और उसकी बोली में रुखाई है। उसने उसी तरह उत्तर दिया—"पहली बात तो यह है कि मैंने अव्लास्की से तुम्हारे पास इस तरह का कोई सदेश नहीं भिजवाया, दूसरी बात यह है कि मैं कभी झूठ नहीं बोलता। मैं ठहरना चाहता था और मैं ठहर गया। (ठहर कर) अन्ना! इन बातों से तुम्हारा अभिप्राय क्या है?"

इतना कह कर उसने अपना हाथ फैलाया। उसे पूरी आशा थी कि अन्ना उसके हाथों पर हाथ रख देगी।

अन्ना पिघल गई। पर जाने किस अशुभ ख्याल ने उसे हाथ बढ़ाने से रोक दिया। वह बोली—"ठीक है! तुम ठहरना चाहते थे और ठहर गये। तुम्हारी इच्छा में जो कुछ आता है, तुम करते हो। पर इन सब बातों की याद मुझे दिलाने से क्या लाभ?"

इतना कहते-कहते वह और भी उत्तेजित हो गई। वह बोली—"क्या कोई तुम्हारे अधिकार में दखल देता है? तुम्हें पूरी स्वतन्त्रता है, जो जी में आवे कर सकते हो।"

रंस्की ने अपना हाथ खींच लिया। मुंह फेर लिया। उसके चेहरे पर हठ की काली रेखा छा रही थी।

अन्ना—(रंस्की के चेहरे की ओर गौर से देखती हुई) तुम्हारे लिये यह केवल हठ की बात हो रही है। तुम केवल यह देखना चाहते

कि तुम्हारा अधिकार मेरे ऊपर कितना है ? पर मेरे लिये... इतना कहते-कहते उसे अपनी दैन्यावस्था का स्मरण हो आया और उसकी आंखों से आंसू निकल पड़े। वह बोली—"अगर तुम मेरी अवस्था को समझ सकते ! जिस समय मुझे यह ख्याल होता है कि तुम मेरे प्रतिकूल हो रहे हो, उस समय मेरी क्या दशा होती है ? इसका यदि तुम अनुमान कर सकते और अगर तुम समझ सकते कि इस समय मेरे हृदय को कितनी यातना सहनी पड़ती है ! मुझे अपनी सूरत से भी भय लगता है।"

इतना कह कर वह रो पड़ी और अपना आंसू छिपाने के लिये उसने मुंह फेर लिया।

उसकी निराशा भरी बातें सुनकर रंस्की घबरा गया। वह बोला—"तुम क्या बक रही हो ? यह सब किस लिये है ? क्या मैं घर के बाहर कहीं आमोद करता हूँ ? क्या मैं जान-बूझ कर औरतों की संगति से दूर नहीं रहता ?

इतना कहते-कहते उसने अन्ना का मुंह चूम लिया।

अन्ना—अगर यहीं तक मामला होता !

रंस्की—अच्छा, तुम्हीं बतलाओ कि मैं क्या करूँ, जिससे तुम्हारे चित्त को शान्ति मिले। मैं हर तरह से तैयार हूँ।

अन्ना—मैं खुद नहीं समझती। दूर करो उन बातों को। घुड़-दौड़ में क्या हुआ ? तुमने उसके बारे में कुछ नहीं कहा।

अन्ना अपने इस विजय पर बड़ी प्रसन्न थी; पर वह उसे प्रगट नहीं करना चाहती थी।

रंस्की भोजन मंगा कर खाने बैठ गया और अन्ना से घुड़-दौड़ की बातें कहने लगा। उसकी आंखें, उसके चेहरे के भाव, उसकी बोली

साफ बतला रही थी कि तुम्हारे इस आचरण के लिये उसने तुम्हें क्षमा नहीं किया है। जिस हठ के लिये तुमने यह कलह उठाया था, उसने उसपर अपनी छाप कस कर जमा दी है। उसके प्रति वह और भी उदासीन हो गया, मानों उसे इस बात का पछतावा हो रहा था कि मैं इस तरह क्यों दब गया। अन्ना ने देखा कि जिन शब्दों के प्रयोग से आज मैंने विजय पाई है, उनका प्रयोग दोबारा नहीं हो सकता। उसने देखा कि जिस प्रेमपाश में वह लोग बंधे थे, उसका बन्धन ढीला हो रहा है और बीच में कलह-रूपी अग्नि उत्पन्न हो रही है। अन्ना उस बन्धन को जला कर दो टुकड़े कर देगी। पर वह उस कलह के भाव को न तो उसके हृदय से निकाल सकी और न अपने।

६

जो लेविन तीन महीने पहले, इस बात का विश्वास भी नहीं कर सकता था कि जिस अवस्था में मैं पड़ा हूँ, उस अवस्था में पड़ा हुआ आदमी कैसे सुख की नींद सो सकता है? वही लेविन आज सब बातें अपने सिर पर बीतती देख कर भी कुछ नहीं कह रहा था। मजे में खर्राटे ले रहा है। लेविन का पतन कहां तक हो गया है? इसका अनुमान सहज में ही किया जा सकता है। मास्को नगर में बेकार पड़ा, वह पेट भरने तथा बेकार गप्प-शप्प हांकने में दिन काट रहा है। उसका व्यय उसकी औकात के ऊपर हो रहा है। उसने ऐसे व्यक्ति से मैत्री जोड़ ली है, जो किसी समय उसकी पत्नी का चाहने वाला और उसका रकीब था, जिसकी वजह से, वह किटी से, एक बार हाथ धो

चुका था, वह उस औरत से मुलाकात करने गया, जिसका आचरण नितान्त पतित कहा जाता था, वह उसी पर मुग्ध होकर लौटा। अपने इस आचरण से उसने अपनी प्रियतमा और सरल हृदय पत्नी को कष्ट दिया। यह सब संगति का दोष था। उस संगति के कारण लेविन का दृष्टि-कोण बदल गया था। उसे नीच-ऊंच का विचार नहीं रह गया था।

थकावट का वेग, रात भर का जागरण, शराब की खुमारी ने उसे एकदम मुर्दा बना दिया था। बिस्तरे पर पड़ते ही वह सो गया। पांच बजे दरवाजे की खड़खड़ाहट से उसकी नींद टूटी। वह चौंक कर उठ पड़ा। देखता क्या है कि किटी चारपाई पर नहीं है और परदे के उस पार, वह रोशनी लेकर कोई वस्तु खोज रही है।

लेविन—(नींद में) क्या मामला है, किटी ?

किटी—(सामने आकर) कुछ नहीं। मुझे बेचैनी मालूम हो रही थी।

लेविन—(घबरा कर) क्या ! प्रसव वेदना तो नहीं है ? तब तो डाक्टर को अभी बुलाना चाहिये।

इतना कहते-कहते वह उछल कर अलग जा खड़ा हुआ और कपड़ा पहनने की तैयारी करने लगा।

किटी—(मुस्करा कर उसका हाथ अपने हाथ में लेकर) नहीं-नहीं, कुछ नहीं है। अब तबीयत बिल्कुल ठीक है।

इतना कह कर किटी चारपाई पर पड़ रही। रोशनी बुझा दिया और सो रही। लेविन का सन्देह दूर नहीं हुआ। अनेक तरह की आशंकायें आ-आ कर उसे घेरने लगीं। पर उसकी आंखें नींद से मा-

वाली हो रही थीं। वह अधिक देर तक जागता नहीं रह सका।

सात बजे उसे फिर किसी ने जगाया। देखा, किटी उसके बदन पर हाथ रख कर खड़ी मुस्करा रही है। लेविन ने आँखें खोल कर देखा कि किटी खड़ी हर्ष और विषाद के साथ द्वन्द कर रही है। वह बोली—"डरने की कोई बात नहीं है; पर मेरी समझ में पेट्रोना को बुला लेना चाहिये।"

लेविन घबराकर खड़ा हो गया। टक टकी लगाकर उसकी ओर देखने लगा। पेट्रोना को बुलाने के लिये जाना जरूरी था। पर इस समय उसके पास से हटने का उसका जी नहीं चाहता। किटी के नेत्रों में जो लबा-लब प्रेम इस समय भर गया था, उसका आभास लेविन ने पहले कभी नहीं पिया था। उसे कल की घटना याद आ गई। अपने किये पर वह पश्चात्ताप करने लगा।

यद्यपि किटी के चरित्र में बनावटी पन बहुत कम था तथापि लेविन पर आज जो असर पड़ा वह अभूतपूर्व था। लेविन ने देखा कि परदा हट गया है और किटी का निर्मल हृदय आँखों के सामने खुला पड़ा है। यही औरत है, जिसे उसने इतने दिनों से प्यार किया है; पर आज की छटा अलौकिक थी। इस सौन्दर्य का विकास अभूतपूर्व था। उसने मुस्करा कर उसकी ओर देखा; पर उसकी भौंहें सिकुड़ गईं। गर्दन घुमा कर वह उसके पास पहुंची और उसका दोनों हाथ पकड़ कर अपनी छाती से लगा लिया। प्रसव-वेदना आरम्भ हो गई थी। इस भाव द्वारा मानों वह अपनी व्यथा, लेविन से कह रही थी। लेविन का जैसा स्वभाव था, उसने अपने मन में कहा—"यह दोष मेरा है।" पर उसकी रसीली आँखें कह रही थीं कि—"अपने को दोषी मत समझो। इस समय मुझे जो अति-

शय आनन्द मिल रहा है वह तुम्हारी ही बदौलत है।" लेविन ने देखा कि वह विचित्र सुख का अनुभव कर रही है; पर वह क्या है, लेविन नहीं समझ सका।

किटी–मां को बुला भेजा है। पेट्रोना को बुला लो, चिन्ता की कोई बात नहीं है।

वह उसके पास से हट गई और उसने घंटी बजायी। वह बोली–"पाशा आ रही है। आप पेट्रोना को बुलाने जाइये। मैं अच्छी तरह हूँ।"

लेविन ने कपड़ा पहना और नीचे उतरा। जाने के पहले वह फिर एक बार किटी के पास गया। उसने देखा मजदूरिन सौरी घर की तैयारी कर रही है। किटी उन्हें सब चीजें ठीक करने के लिये बतला रही है–"लेविन ने पेट्रोना को बुलाने के लिये आदमी भेज दिया है। और क्या करना है! क्या डाली को भी बुला दूं?"

किटी–हां, फौरन जाइये।

लेविन बैठक में गया। उसी समय किटी के कमरे की ओर से चिल्लाने की आवाज आई। लेविन समझ गया। नीचे की ओर दौड़ पड़ा। वह अपने मन में कहता जाता था–"दयामय! तेरी दया का भरोसा है। हम पर रहम कर। हमारी सहायता कर।" लेविन का धार्मिक विश्वास शिथिल था; पर इस समय उसमें प्रगाढ़ श्रद्धा उत्पन्न हो गई थी। उसकी प्रार्थना अन्तस्तल से निकल रही थी। आज उसे मालूम हुआ कि वही हमारे दुख-सुख का साथी है। समय पड़े पर उसी का नाम लेकर पुकार सकते हैं।

घोड़ा तैयार नहीं था। वह पैदल चल पड़ा और कोमा से कहता गया–"घोड़ा कस कर मेरे पीछे चले आओ।"

रास्ते में पेट्रोना से मुलाकात हो गई। गाड़ी में बैठी वह आ रही थी। उसकी गाड़ी न रोकवा कर, वह आप ही उसके साथ दौड़ पड़ा।

पेट्रोना–दो घंटा लगेगा, अधिक तो नहीं? डिमरिच को खबर दे दीजिये; पर जल्दीबाजी मत कीजिये। अन्ना के यहां से अफीम लेते आइये।

लेविन–तुम समझती हो कि कोई चिन्ता नहीं है, तब ठीक है।

इतने में उसकी गाड़ी आ पहुँची। चलती गाड़ी पर वह कूद कर चढ़ गया और डाक्टर के यहां गाड़ी ले चलने को उसने कोचवान से कहा।

१०

डाक्टर साहब अभी सोकर नहीं उठे थे। दरबान लम्प की चिमनी साफ कर रहा था। वह बोला–"डाक्टर साहब रात को देर तक जागते रहे। जगाने के लिये मना करके सोने गये हैं। पर अब उठने में देर नहीं है।"

इतना कह कर उसने लेविन की ओर से मुँह फेर लिया और अपनी चिमनी सम्हालने लगा। लेविन ने अपने मनमें कहा–"देखो, वह कैसा दुष्ट है। मानो चिमनी साफ करना, सबसे भारी काम है कि उसे इस बात की जरा भी फिकर नहीं कि मेरे ऊपर क्या बीत रही है।" उसने यह सोच कर अपने चित्त में सन्तोष किया कि इसे मेरे हृदय की अवस्था का पता ही क्या? निदान उसने शान्त रहना ही उचित समझा।

लेविन सोचने लगा कि क्या करना चाहिये। बहुत देर तक सोचने

के बाद उसने तै किया कि कोमा को दूसरे डाक्टर के लिये भेज दूं और जब तक यह उठते हैं, तब तक मैं अफीम लेता आऊँ, अगर तब भी न उठे रहेंगे तो या दरवान को घूस देकर लड़ कर डाक्टर को जगाने का प्रयत्न करूँगा।

अत्तार ने अफीम देना अस्वीकार किया, तब लेविन ने उसे अपना अभिप्राय समझाया और किसी तरह अफीम लेकर फिर डाक्टर के दरवाजे पर लौटा। तब तक भी डाक्टर साहब नहीं उठे थे। दरवान ने जगाना अस्वीकार किया। निदान लेविन ने उसे १०) बख्शीश देकर कहा—"डाक्टर साहब से मेरा नाम कहना। वे नाराज नहीं होंगे क्योंकि उन्होंने कहा था कि जब भी सूचना मिलेगी तभी मैं चला चलूंगा।"

१०) पाकर दरवान डाक्टर को जगाने चला गया। लेविन नीचे बैठ कर उसकी प्रतीक्षा करने लगा। थोड़ी देर में ऊपर से डाक्टर के खांसने और हाथ मुँह धोने की आवाज सुनाई दी। वह दरवान से कुछ कह रहा था।

यह समय लेविन को युग के समान प्रतीत हुआ। एक क्षण का भी विलम्ब, उसे असह्य था। उसने वहीं से चिल्ला कर कहा— "डिमरिच, ईश्वर के नाम पर देर मत करो! दो घण्टे से प्रसव-वेदना उठ रही है।"

डाक्टर ने कहा—बस, एक मिनट में।

लेविन के विस्मय का ठिकाना नहीं रहा, जब उसने देखा कि डाक्टर मुस्करा रहा है।

लेविन—एक क्षण के लिये नीचे चले आइये

डाक्टर—बस, एक मिनट में।

इतना कह कर डाक्टर कपड़ा पहनने लगा। कपड़ा पहनने में उसे प्राय: चार मिनट लग गये।

यह चार मिनिट लेविन के लिये चार युग के समान थे। उसने अधीर होकर फिर चिल्लाना शुरू किया। उसी समय डाक्टर तैयार होकर कमरे में दाखिल हुये। उन्हें देख कर लेविन ने अपने मन में कहा–"इन लोगों के हृदय में जरा भी दया नहीं। किसी की जान जा रही है और इन्हें कंघी फेरने की पड़ी है।"

लेविन ने किटी की हालत का अक्षर-अक्षर वर्णन किया और चलने के लिये अनुरोध किया।

डाक्टर–आप घबराइये नहीं। कोई चिन्ता की बात नहीं हैं। मेरी वहां कोई आवश्यकता नहीं है। फिर भी मैंने कहा है, इसलिए चल सकता हूँ। पर जरा चाय-पानी तो कर लीजिये।

लेविन चकित नेत्रों से डाक्टर की ओर देखने लगा। उसकी आंखें पूछ रही थीं–"क्या आप मेरी हंसी उड़ा रहे हैं?" पर डाक्टर के हृदय में ऐसी कोई बात नहीं थी।

लेविन की दशा देख कर डाक्टर ने कहा—"मैं खूब समझता हूँ। मैं भी गृहस्थीवाला हूँ। ऐसे अवसरों पर हम पुरुष लोग बुरी तरह घबरा जाते हैं। मेरे एक मित्र हैं, वे इतने घबरा जाते हैं कि डर के मारे अस्तबल में जा छिपते हैं।"

लेविन—आपका क्या मत है? आप समझते हैं कि कोई संकट नहीं उपस्थित होगा।

डाक्टर–लक्षण सभी अच्छे हैं।

लेविन–तो आप फौरन चलियेगा?

डाक्टर—बस, चाय पीकर चला आऊंगा। एक घंटे से अधिक नहीं लगेगा।

इतना कह कर डाक्टर चाय पीने बैठ गया। एक घूंट पीकर बोला—"आपने कल के तारों को पढ़ा है? तुर्क लोग बुरी तरह पछाड़े जारहे हैं।"

लेविन—अब मैं एक क्षण भी नहीं ठहर सकता। आप कितनी देर में आ जावेंगे?

डाक्टर—कोई आधा घंटा लगेगा।

लेविन—दया कर जितनी जल्दी हो सके चले आइयेगा।

एक ओर से लेविन पहुंचा और दूसरी ओर से किरीया। उसके हाथ कांप रहे थे। आंखों में आंसू भरे थे। दोनों सौरी घर की ओर दौड़े। उनके पैरों की आहट पाकर पेट्रोना बाहर निकल आयी। वह बोली—"लक्षण अच्छे हैं, इन्हें सो जाने के लिए कहिये। सोने से आराम मिलेगा।"

सवेरे जिस समय किटी ने लेविन को उठाया था और लेविन ने किटी की दशा देखी थी, उसी समय उसने पूर्ण धैर्य से काम लेने का निश्चय किया था। पर डाक्टर के यहां से लौट कर किटी की दशा देख कर वह घबरा गया। उसका धैर्य जाता रहा। वह घबरा-घबरा कर चिल्लाने लगा—"प्रभो! दया करो। हम लोगों की रक्षा करो।"

इसी तरह पांच घंटे बीत गये; पर अभी तक फैसला नहीं हुआ। किटी की परीशानी और व्यथा बढ़ती गई।

लेविन की अवस्था विचित्र हो रही थी। उसे किसी बात का ज्ञान नहीं रह गया था कि क्या हो रहा है। उसके समझ में नहीं आता था कि लोग क्या कर रहे हैं। किटी की मां पेट्रोना तथा डाक्टर को इधर से उधर आने-जाने देख, उसकी परेशानी और भी बढ़ती जा रही थी।

तीसरा पहर बीत गया, पर अभी तक उसने मुंह भी नहीं धोया था। लोगों ने कई बार उसे भोजन के लिये कहा; पर उसे आज भूख नहीं थी। रह-रह कर उसे उस दिन की घटना याद आने लगी, जब उसका भाई निकोले होटल में बीमार पड़ा था और किटी मेरिया की सहायता से इसी तरह की क्रिया में व्यस्त थी। पर उस समय लेविन का हृदय विषाद से क्षुब्ध था। इस समय आनन्द से भरा था।

इस समय उसके मन की गति दो तरफ थी। क्षण भर के लिये तो उसका ध्यान जाकर डाली और किटी की माँ की ओर जाता, जो बगल के कमरे में बैठी अनेक तरह के वार्तालाप कर रही थीं और दूसरे ही क्षण किटी की दर्द भरी आवाज सुन कर, वह उसमें व्यस्त हो जाता। उसे अनेक तरह से धैर्य देता समझाता और सान्त्वना देता।

लेविन को समय का कुछ भी ज्ञान नहीं रह गया था। कमरे में रोशनी जल रही थी। वह बैठा डाक्टर की बातें सुन रहा था। इसी समय जोरों की चीख सुनाई दी। वह दौड़ा, सौरी घर में गया, देखा किटी की माँ और पेट्रोना परीशान है। किटी ने लेविन को अपने पास बुला कर सिरहाने बैठाया और उसका हाथ अपने हाथ में लेकर दबाने लगी। इतने में उसकी वेदना और बढ़ गई। उसने चिल्ला कर कहा—"हाय! मरी।" पेट्रोना घबरा कर उसे सम्हालने लगी। लेविन को उसने जबर्दस्ती कमरे से बाहर किया।

लेविन बगल के कमरे से सारी लीला देख रहा था। वह पागल सा हो रहा था, पुत्र की सारी इच्छा जाती रही। उसे किसी बात की कामना नहीं रह गई थी। बस, वह केवल इस यातनामय दृश्य का अन्त चाहता था। परीशान होकर वह डाक्टर के पास गया। उसने

पूछा—"यह सब क्या हो रहा है ?"

डाक्टर—बस, अब सब समाप्त होना चाहता है।

लेविन ने समझा कि डाक्टर कह रहे हैं कि किटी का जीवन समाप्त होना चाहता है।

घबराया हुआ वह सौरी घर में दौड़ा गया। उसने देखा पेट्रोना का चेहरा पहले से घबराया हुआ है। किटी का चेहरा उसने नहीं देखा। पर उसकी चीख धीरे-धीरे कम हो रही थी। उसने सुना—"बस, अब खतम हुआ।"

एकाएक लेविन ने देखा कि २२ घंटे की यह परीशानी न जाने कहां चली गई। फिर एकबार उसने उसी सुख का अनुभव किया। खुशी के मारे उसकी आँखों से आंसू निकल पड़े।

उसने किटी का हाथ अपने हाथ में ले लिया और चूमने लगा। उसने देखा कि चारपाई के पास ही पेट्रोना की गोद में एक जीव पड़ा है, जो एक क्षण पहले इस दुनिया में नहीं था।

पेट्रोना-(लेविन) सन्तोष करो, तुम्हें पुत्र उत्पन्न हुआ है। किटी की हालत भी अच्छी है।

अगर लेविन से कहा गया होता कि किटी के प्राण-पखेरू उड़ गये और उसीके साथ उसका भी अन्त हो गया और उनके लड़के फरिश्ते हैं तथा ईश्वर उनके सामने खड़ा है तो शायद उसे विस्मय भी हुआ होता; पर इस समय उसे यह समझने के लिये कि किटी जीवित है, उनकी संख्या बढ़ाने के लिये एक जीव ने और अवतार लिया है, उसे कठिन प्रयास करना पड़ा। किटी की अवस्था से उसे सन्तोष था। पर उसके बारे में उसके हृदय में अनेक तरह के प्रश्न उठ रहे थे। यह एक

नई समस्या उसके सामने उपस्थित थी, जिसे वह स्वयं नहीं हल कर सकता था।

११

दस बजने का समय था। किटी के पिता, कोनिशे और अब्लास्की लेविन के कमरे में बैठ कर बातें कर रहे हैं। लेविन उनकी बातें सुन अवश्य रहा था; पर उसका ध्यान इस समय कहीं और था। वह कल की घटनाओं के बीच भ्रमण कर रहा था। किटी की यातना, अपनी वेदना का स्मरण कर वह वर्तमान दशा से मिला रहा था। इस समय वह अपने को सातवें आसमान में समझता था। पर मेहमानों की इस तरह अधिक देर तक उपेक्षा करना अपमान-जनक होगा। इसलिये उनकी बात-चीत में शामिल होना, उसने उचित और आवश्यक समझा। पर ऐसा करने में उसे अपने को नीचे गिराना पड़ा। वह उन लोगों से बातें करने लगा; लेकिन उसका ध्यान किटी और अपने नवजात शिशु में लगा था। आज औरतों के लिये उसके हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो रही है, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। वे लोग तो क्लब के दावत की चर्चा कर रहे थे और लेविन सोच रहा था—"किटी की क्या हालत है? क्या उसे नींद आई? वह क्या कररही होगी? लड़का रो रहा होगा।" इन सब ख़यालों ने उसे इतना अभिभूत किया कि बात समाप्त भी न होने पाई थी कि वह उठ खड़ा हुआ और कमरे से बाहर हो गया।

उसे जाते देख किटी के पिता ने कहा—"अगर किटी के देखने का अवसर हो तो खबर देना।"

पूछा–"यह सब क्या हो रहा है ?"

डाक्टर–बस, अब सब समाप्त होना चाहता है।

लेविन ने समझा कि डाक्टर कह रहे हैं कि किटी का जीवन समाप्त होना चाहता है।

घबराया हुआ वह सौरी घर में दौड़ा गया। उसने देखा पेट्रोना का चेहरा पहले से घबराया हुआ है। किटी का चेहरा उसने नहीं देखा। पर उसकी चीख धीरे-धीरे कम हो रही थी। उसने सुना—"बस, अब ख़तम हुआ।"

एकाएक लेविन ने देखा कि २२ घंटे की यह परीशानी न जाने कहां चली गई। फिर एकबार उसने उसी सुख का अनुभव किया। ख़ुशी के मारे उसकी आँखों से आंसू निकल पड़े।

उसने किटी का हाथ अपने हाथ में ले लिया और चूमने लगा। उसने देखा कि चारपाई के पास ही पेट्रोना की गोद में एक जीव पड़ा है, जो एक क्षण पहले इस दुनियां में नहीं था।

पेट्रोना-(लेविन) सन्तोष करो, तुम्हें पुत्र उत्पन्न हुआ है। किटी की हालत भी अच्छी है।

अगर लेविन से कहा गया होता कि किटी के प्राण-पखेरू उड़ गये और उसीके साथ उसका भी अन्त हो गया और उनके लड़के फरिश्ते हैं तथा ईश्वर उनके सामने खड़ा है तो शायद उसे विस्मय भी हुआ होता; पर इस समय उसे यह समझने के लिये कि किटी जीवित है, उनकी संख्या बढ़ाने के लिये एक जीव ने और अवतार लिया है, उसे कठिन प्रयास करना पड़ा। किटी की अवस्था से उसे सन्तोष था। पर उनके बारे में उसके हृदय में अनेक तरह के प्रश्न उठ रहे थे। यह एक

नई समस्या उसके सामने उपस्थित थी, जिसे वह स्वयं नहीं हल कर सकता था।

११

दस बजने का समय था। किटी के पिता, कोनिशे और अब्लास्की लेविन के कमरे में बैठ कर बातें कर रहे हैं। लेविन उनकी बातें सुन अवश्य रहा था; पर उसका ध्यान इस समय कहीं और था। वह कल की घटनाओं के बीच भ्रमण कर रहा था। किटी की यातना, अपनी वेदना का स्मरण कर वह वर्तमान दशा से मिला रहा था। इस समय वह अपने को सातवें आसमान में समझता था। पर मेहमानों की इस तरह अधिक देर तक उपेक्षा करना अपमान-जनक होगा। इसलिये उनकी बात-चीत में शामिल होना, उसने उचित और आवश्यक समझा। पर ऐसा करने में उसे अपने को नीचे गिराना पड़ा। वह उन लोगों से बातें करने लगा; लेकिन उसका ध्यान किटी और अपने नवजात शिशु में लगा था। आज औरतों के लिये उसके हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो रही है, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। वे लोग तो क्लब के दावत की चर्चा कर रहे थे और लेविन सोच रहा था—"किटी की क्या हालत है? क्या उसे नींद आई? वह क्या कर रही होगी? लड़का रो रहा होगा।" इन सब ख़यालों ने उसे इतना अभिभूत किया कि बात समाप्त भी न होने पाई थी कि वह उठ खड़ा हुआ और कमरे से बाहर हो गया।

उसे जाते देख किटी के पिता ने कहा—"अगर किटी के देखने का अवसर हो तो खबर देना।"

सौरी घर में जाकर लेविन ने देखा कि किटी चारपाई पर लेटी अपनी मां से बातें कर रही है। लड़का बगल में पड़ा सो रहा है। लेविन ने गौर से लड़के की ओर देखा। किटी ने उसका हाथ पकड़ कर अपने पास बैठा कर कहा—"रात को नींद आई थी?"

लेविन—हां, थोड़ी। तुम्हारी तबीयत कैसी है?

किटी—मजे में हूँ। (पेट्रोना से) बच्चे को इनकी गोद में दो।

दाई ने बच्चे को उठा कर लेविन की गोद में रख दिया। बच्चा रो पड़ा! किटी ने कहा—"बच्चा मुझे दे दो।" इतना कह कर वह उठ कर बच्चे को ले लेना चाहती थी, पर दाई ने उसे उठने से रोक दिया। और अपने हाथ से बच्चे को उठा कर लेविन की गोद से किटी को दे दिया। किटी की गोद में जाते ही बच्चा सो गया।

लेविन की आंखों से आनन्द के आंसू निकल रहे थे। उसने किटी को चूमा और कमरे से बाहर हो गया। बच्चे के प्रति उसके हृदय में जो भाव उठ रहे थे, उसकी कल्पना के एक दम विपरीत थे। उसका मुख देख कर, उसकी हृदय की कलियां खिली नहीं, उलटे नई-नई आशंकाओं ने आ-आ कर उसे अपना शिकार बनाना आरम्भ किया। उसके मन में यही भाव उठते—"झंझटों का एक नम्बर और बढ़ा।"

१२

अब्लान्स्की की आर्थिक दशा दिन पर दिन बिगड़ती जा रही थी। जंगल की बिक्री की आमदनी की २ किश्त मिल चुकी थी। तीसरी किश्त भी उसने १०) सैकड़े सूद पर ले लिया था। डाली ने सिर्फ

किश्त की रसीद नहीं दी थी, इससे महाजन आगे रुपया देने के लिये भी तैयार नहीं था। जो कुछ तनखाह मिलती थी, गृहस्थी के खर्च में सट जाता था। इसके अलावा छोटे-मोटे कर्ज देने थे, जिनका देना अनिवार्य था।

यह अवस्था बड़ी शोचनीय थी। अब्लास्की के मत से यह अवस्था अधिक दिन तक नहीं चल सकती थी। इस दुरवस्था का कारण यह था कि उसे तनखाह कम मिलती थी। जिस पद पर वह काम करता था, वह पांच वर्ष पहले सन्तोषजनक था; पर आज उससे अब्लास्की को सन्तोष नहीं।

इस अवस्था को दूर करने के लिये उसने एक उपाय सोचा। हाल में ही एक कम्पनी खुली थी। उसके सेक्रटरी के लिये एक ईमानदार आदमी की आवश्यकता थी। अब्लास्की अपनी ईमानदारी के लिये मास्को में विख्यात था। सरकारी नौकरी करते हुए भी अब्लास्की वह काम कर सकता था और इस प्रकार दस हजार रुपया और बचा सकता था। इस काम के लिये उसे पीटर्सबर्ग जाना जरूरी था। उस कम्पनी के दोनों डायरेक्टर वहीं रहते थे। इसके अलावा अलक्ले से मिलकर अन्ना के भाग्य का निपटारा करना भी उसके लिये अत्यन्त आवश्यक था। डाली से ५०) रु० लेकर वह पीटर्सबर्ग के लिये रवाना हुआ।

वह सबसे पहले अलक्ले के पास गया। अलक्ले अपनी बैठक में बैठा रिपोर्ट पढ़ रहा था, जो उसने रूस की आर्थिक दुरवस्था पर लिखी थी। अब्लास्की चुप-चाप बैठा सुन रहा था और इस बात की प्रतीक्षा में था कि कब यह रिपोर्ट समाप्त हो और कब मैं अपना मतलब छेड़ूँ।

रिपोर्ट पढ़ते-पढ़ते अलक्ले ने अपना चश्मा उतार कर बगल में रख दिया और अब्लास्की की ओर देखने लगा !

अब्लास्की—कहीं-कहीं आपकी बातें बिलकुल ठीक हैं; पर आज-कल स्वतन्त्रता का युग है।

अलक्ले—मैंने जो सिद्धांत स्थिर किया है, उसमें स्वतंत्रता की हत्या नहीं की गई है।

इतना कह कर उसने वह अंश पढ़ना शुरू किया, जिसमें उसके सिद्धान्तों का समावेश था। उसने कहा—"मैं व्यक्तिगत लाभ के ख्याल से संरक्षण-नीति का प्रतिपादन नहीं करता। पर इसमें जन साधारण का लाभ है। छोटे-बड़े सभी लाभ उठा सकते हैं। पर उनकी समझ में यह बात नहीं आ सकती। क्योंकि व्यक्तिगत स्वार्थ का भूत उनके सिर पर सवार है और वे मनोहर शब्दालंकारों पर मरते हैं।

अब्लास्की जानता था कि अलक्ले जब अपनी कार्रवाई और समाज की अवस्था का वर्णन करने लगता, तब वह सदा उन लोगों को रूस के पतन का कारण बताता, जो उसके सिद्धान्तों के प्रतिपादक नहीं थे। इसलिये उसने स्वतन्त्र वाणिज्य की नीति त्याग दी और उससे पूरी तरह सहमत हो गया।

अलक्ले अपनी रिपोर्ट का पन्ना उलटने लगा।

अब्लास्की ने यह अवसर हाथ से जाने नहीं दिया। वह बोला—"अगर बेलस्की से मुलाकात हो तो कहना कि मेरा साला अब्लास्की अगर इस नयी कम्पनी का सेक्रेटरी बना दिया जाय तो बड़ी ईमानदारी से काम करेगा।"

अलक्ले—मैं उससे कह सकता हूँ। पर तुम उस पद के लिये उप

तरह उत्सुक क्यों हो ?

अब्लास्की—वेतन अच्छा मिलेगा और मेरी आर्थिक दशा......

"नौ हजार !" इतना कह कर अलक्ले क्षण भर के लिये गम्भीर हो गया। अपने मन में सोचने लगा—"मैंने सुधारों की जो व्यवस्था की है, उसके तो यह प्रतिकूल जायगा।" वह बोला—"मैंने इस रिपोर्ट में इस संबंध में भी लिखा है। मेरी समझ में वर्तमान आर्थिक दुरवस्था का एक कारण, इतना ऊँचा-ऊँचा वेतन भी है।"

अब्लास्की—पर इसमें धरा ही क्या है। अगर किसी बैंक का डायरेक्टर दस हजार मासिक पाता है, तो वह उसके योग्य है।

अलक्ले—तनख्वाह भी क्या है। मिहनतरूपी वस्तु का मूल्य है। मेरी समझ में "आमद और मांग" के नियम, इस पर भी उसी तरह लागू हो सकते हैं, जिस तरह अन्य वस्तु पर होते हैं। इसलिये वेतन भी इसी नियम के अनुसार मिलना चाहिये। जहां इस नियम का पालन नहीं होता, मैं समझता हूँ वहां मुंहदेखी की जाती है और अन्याय होता है। मेरी समझ में......

अब्लास्की ने बीच में ही रोक कर कहा—"आपका कहना ठीक है। पर आप यह तो मानेंगे कि यह नई संस्था बड़ी ही उपयोगी होगी। यह नई संस्था है। इसमें ईमानदार आदमी की सबसे अधिक जरूरत है।"

लेकिन अलक्ले के हृदय में मास्को के ईमानदार शब्द पर वह भरोसा नहीं रह गया था, जो किसी समय पहले था।

अब्लास्की—जो हो, अगर आप अवसर देख कर मेरे विषय में पोमस्की से दो शब्द कह देंगे तो मेरा बड़ा उपकार होगा।

अलक्ले–जहां तक मैं जानता हूँ, बलगेरिनो का हाथ इसमें सबसे अधिक है।

बलगेरिनो का नाम सुनते ही अब्लास्की का चेहरा लाल हो गया। आज सुबह वह उससे मिलने गया था और एक दुःख-जनक घटना हो गई थी। वह बोला–"जहां तक मैं जानता हूँ, इस संबंध में बलगेरिनो मेरे पक्ष में है।"

बात यह थी कि आज सवेरे अब्लास्की बलगेरिनो से इसी संबंध में मिलने गया था। उसने अन्य प्रार्थियों के साथ इसे भी दो घंटा बैठा रखा था। अब्लास्की को अपने वंश की मर्यादा का ख्याल कर बहुत ही वेदना हुई कि मुझे एक यहूदी के दरवाजे पर दो घंटे तक प्रतीक्षा करनी पड़ी।

इस समय इसी बात का उसे स्मरण आ गया और उसके स्मरण से ही अब्लास्की का चेहरा लाल हो गया।

अब्लास्की–अब मैं अन्ना के संबंध में तुम से कुछ कहना चाहता हूँ।

अन्ना का नाम सुनते ही अलक्ले का हरा-भरा चेहरा मुरझा गया। वह इतना फक पड़ गया, मानों उसमें जीवन रह ही नहीं गया है। वह मुंह फेर कर बोला—"कहो, क्या कहना है?"

अब्लास्की–उचित यह है कि कुछ निपटारा कर, उसकी स्थिति निश्चित कर दी जाय। मैं आपसे विनीत प्रार्थना करता हूँ कि सहृदय और उदार मनुष्य की भांति सच्चे ईसाई के हृदय से उस पर दया कीजिये।

अलक्ले-मैं क्या करूं?

अब्लास्की–अगर आप उसको देखते तो आपका हृदय फट जाता कि कितनी यातना सह रही है। जाड़े भर मैं उसके साथ रहा हूँ।

अलक्ले—(कड़ी आवाज में) मैंने तो सोच रखा था कि अन्ना को जीवन के सभी सुख प्राप्त होते होंगे। केवल जबान हिलाने भर की देर रहती होगी।

अब्लास्की-इन फजूल की ताना-जनी को जाने दीजिये। जो बीत गई, उसे भूल जाइये और उचित उपाय कीजिये। आप जानते ही हैं कि वह कितने दिनों से तलाक की प्रतीक्षा कर रही है।

अलक्ले-पर शिरोजा के विना वह तलाक शायद स्वीकार न करे। मैंने यही बात उसके पत्र के उत्तर में लिख दी थी और मैंने समझा था कि मामला साफ हो गया।

अलक्ले का मिजाज गर्म हो रहा था। अब्लास्की ने उन्हें सचेत करते हुए कहा—"ईश्वर के लिये क्रोध मत करो। अभी अन्त नहीं हो गया है, बात यों है, जिस समय वह तुमसे अलग हुई, तुम अपनी उदारता का परिचय देकर उसे त्यागने तथा स्वतन्त्र करने, सब के लिये तैयार थे। वह भी राजी थी। लेकिन तुम यह बात मत सोचो। तुम्हारे साथ उसने जो अत्याचार किया था, उसका स्मरण कर वह कुछ भी न मांग सकी। उसने सब कुछ छोड़ दिया। पर ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, उसकी दशा बिगड़ती गई। इस समय वह प्रत्यक्ष देख रही है कि इस अवस्था में रहना असम्भव है।"

अलक्ले-(भौंहें चढ़ा कर) उसके लिये मेरे हृदय में किसी तरह का ख्याल नहीं रह गया है।

अब्लास्की-(विनम्र होकर) ऐसी बात मुंह से न निकालो। वह असह्य वेदना सह रही है और उसका जीना इस अवस्था में निष्प्रयोजन है। शायद तुम यह कहो कि जो पेड़ उसने अपने हाथसे लगाया,

उसका फल उसे अवश्य भोगना पड़ेगा। वह तुमसे कुछ चाहती नहीं। और न उसे साहस है। पर मैं अपनी ओर से, उसके सगे सम्बन्धियों की ओर से, तुमसे प्रार्थना करता हूँ। अगर उसको इस तरह सताने मे किसी को लाभ नहीं होता तो वह क्यों इस यन्त्रणा की शिकार बनायी जाय।

अलक्से-मैं देखता हूँ कि तुम मुझे दोषी समझ रहे हो।

अब्लास्की-कदापि नहीं। मेरा अभिप्राय यह है कि उसकी स्थिति यातनामय है। तुम उसका उद्धार कर सकते हो। इससे तुम्हें किसी तरह की हानि नहीं होगी। मैं ऐसी व्यवस्था कर दूँगा कि तुम्हें किसी तरह का कष्ट भी नहीं होगा। तुम्हें स्मरण होगा कि तुमने इस बात का वचन दिया था।

इतना कह कर अब्लास्की ने अलक्से का हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसे पूरी आशा थी कि इस स्पर्श से अलक्से अवश्य नरम हो जायगा।

अलक्से-(मुँह बना कर) उस समय दूसरी बात थी। मैंने समझ लिया था कि शिरोजा के प्रश्न ने इस समस्या को हल कर दिया है इसके अतिरिक्त मुझे आशा थी कि अन्ना के हृदय में भी उदारता का लेश है।

अब्लास्की—उसने सभी बातें आपही उदारता पर छोड़ दी हैं उसकी केवल यही प्रार्थना है कि उसे इस अवस्था से उबार लीजिये उसे शिरोजा से कोई मतलब नहीं। आप समझदार आदमी हैं। आप को इसी स्थिति में डाल कर देखिए। तलाक का प्रश्न उसके लिये जान [illegible] का प्रश्न है। अगर आपने आशा न दी होती तो मुमकिन है, व

अपनी वर्तमान अवस्था से ही सन्तोष करती और देहातों में अपना दिन काटती। पर आपने वचन दिया, उसने आपके पास पत्र लिखा और आशान्वित होकर मास्को चली आई। यहां वह आपके इन्तजार में बैठी है। अगर संयोगवश किसी परिचित से मुलाकात हो जाती है तो वह शर्म के मारे जमीन में गड़ जाती है। इस तरह संदिग्धावस्था में किसी को छोड़ना उचित नहीं है। उस पर रहम कीजिये और आज्ञा दीजिये, मैं सब कुछ कर दूँगा।

अलक्से—मैं उस संबंध में कोई बात नहीं कहना-सुनना चाहता। मैंने जिस बात का वचन दिया, उसका मुझे कोई अधिकार नहीं था।

अब्लास्की—तब आप अपना वचन तोड़ते हैं।

अलक्से-जो कुछ साध्य है, उसे करने के लिये मैं पीछे नहीं हटता; पर मैं इस बात पर अच्छी तरह विचार कर लेना चाहता हूँ कि जो कुछ मैंने कहा था, वह कहां तक संभव है ?

अब्लास्की-नहीं अलक्से ! अब ऐसी बातें मत कहो। उसे विषम यन्त्रणा सहनी पड़ रही है और इस अवस्था में तुम्हें अस्वीकार नहीं करना चाहिये।

अलक्से-मैंने जो कुछ कहा है, उसमें जितना साध्य है, उतना करने के लिये मैं आज भी तैयार हूँ। पर मैं धर्म के प्रतिकूल आचरण नहीं कर सकता।

अब्लास्की—जहां तक मैं जानता हूँ, ईसाई धर्म तलाक को जायज ठहराता है।

अलक्से—जायज तो है; पर इस अभिप्राय में नहीं कि......

अब्लास्की—(रुक कर) अलक्से! तुम अब वह नहीं रहे। तुम्हों-

उसका फल उसे अवश्य भोगना पड़ेगा। वह तुमसे कुछ चाहती नहीं। और न उसे साहस है। पर मैं अपनी ओर से, उसके सगे सम्बन्धियों की ओर से, तुमसे प्रार्थना करता हूँ। अगर उसको इस तरह सताने मे किसी को लाभ नहीं होता तो वह क्यों इस यन्त्रणा की शिकार बनायी जाय।

अलक्ज़े-मैं देखता हूँ कि तुम मुझे दोषी समझ रहे हो।

अब्लास्की-कदापि नहीं। मेरा अभिप्राय यह है कि उसकी स्थिति यातनामय है। तुम उसका उद्धार कर सकते हो। इससे तुम्हें किस तरह की हानि नहीं होगी। मैं ऐसी व्यवस्था कर दूँगा कि तुम्हें किसी तरह का कष्ट भी नहीं होगा। तुम्हें स्मरण होगा कि तुमने इस बात का वचन दिया था।

इतना कह कर अब्लास्की ने अलक्ज़े का हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसे पूरी आशा थी कि इस स्पर्श से अलक्ज़े अवश्य नरम हो जायगा।

अलक्ज़े--(मुँह बना कर) उस समय दूसरी बात थी। मैंने समझ लिया था कि शिरोजा के प्रश्न ने इस समस्या को हल कर दिया है इसके अतिरिक्त मुझे आशा थी कि अन्ना के हृदय में भी उदार का लेश है।

अब्लास्की—उसने सभी बातें आपकी उदारता पर छोड़ दी हैं उसकी केवल यही प्रार्थना है कि उसे इस अवस्था से उबार लीजिये उसे शिरोजा से कोई मतलब नहीं। आप समझदार आदमी हैं। अ को उसी स्थिति में डाल कर देखिए। तलाक का प्रश्न उसके लिये जीव मरण का प्रश्न है। अगर आपने आशा न दी होती तो मुमकिन है,

अपनी वर्तमान अवस्था से ही सन्तोष करती और देहातों में अपना दिन काटती। पर आपने वचन दिया, उसने आपके पास पत्र लिखा और आशान्वित होकर मास्को चली आई। यहां वह आपके इन्तजार में बैठी है। अगर संयोगवश किसी परिचित से मुलाकात हो जाती है तो वह शर्म के मारे जमीन में गड़ जाती है। इस तरह संदिग्धावस्था में किसी को छोड़ना उचित नहीं है। उस पर रहम कीजिये और आज्ञा दीजिये, मैं सब कुछ कर दूँगा।

अलक्से—मैं उस संबंध में कोई बात नहीं कहना-सुनना चाहता। मैंने जिस बात का वचन दिया, उसका मुझे कोई अधिकार नहीं था।

अब्लास्की—तब आप अपना वचन तोड़ते हैं।

अलक्से—जो कुछ साध्य है, उसे करने के लिये मैं पीछे नहीं हटता; पर मैं इस बात पर अच्छी तरह विचार कर लेना चाहता हूँ कि जो कुछ मैंने कहा था, वह कहां तक संभव है?

अब्लास्की—नहीं अलक्से! अब ऐसी बातें मत कहो। उसे विषम यन्त्रणा सहनी पड़ रही है और इस अवस्था में तुम्हें अस्वीकार नहीं करना चाहिये।

अलक्से—मैंने जो कुछ कहा है, उसमें जितना साध्य है, उतना करने के लिये मैं आज भी तैयार हूँ। पर मैं धर्म के प्रतिकूल आचरण नहीं कर सकता।

अब्लास्की—जहां तक मैं जानता हूँ, ईसाई धर्म तलाक को जायज ठहराता है।

अलक्से—जायज तो है; पर इस अभिप्राय में नहीं कि......

अब्लास्की—(रुक कर) अलक्से! तुम अब वह नहीं रहे। तुम्हीं-

ने एक बार उसे क्षमा किया और सब कुछ करने के लिये तैयार थे। उस समय तुमने कहा था—"अगर कोई मेरा चदरा छीन लेता है तो मैं उसे अपना कोट भी उतार कर दे सकता हूँ। पर अब ?"

अलक्ले का चेहरा फक हो रहा था। होठों को चबाते हुए उसने खड़े होकर कहा—"ईश्वर के नाम पर यह बातें बन्द करो।"

अब्लास्की—(उसका हाथ पकड़ कर) अगर इतना कह कर मैंने तुम्हें दुःख पहुंचाया है तो मुझे क्षमा करो। मैंने तो दूत की भांति तुमसे सब बातें कह दीं।

अलक्ले—(कुछ सोच कर) मैं सोच विचार कर उत्तर दूंगा। परसों तक मैं पक्का जवाब दे दूंगा।

अब्लास्की जाना ही चाहता था कि उसका भानजा शिरोजा आकर सामने खड़ा हो गया। बच्चे को देखते ही अब्लास्की को अन्ना की बात याद आ गई। अन्ना ने उससे कहा था—"जिस तरह हो, शिरोजा की खबर लेते आना और यदि संभव हो तो ऐसा बन्दोबस्त करना, जिससे शिरोजा मुझसे न छीना जाय।"

अलक्ले ने अब्लास्की के कान में कहा—"इसकी मां की चर्चा हम लोग इसके सामने कभी नहीं करते। इसलिये उस प्रसंग को न छेड़ना। अन्ना एक बार इसे देखने आई थी। उसी दिन से वह बीमार पड़ गया और महीनों झेलता रहा। बचना ही संशयमय था।"

शिरोजा ने कमरे में आकर अपने मामा को प्रणाम किया। उसकी सूरत देख कर शर्म के मारे उसका चेहरा लाल हो गया। उसने मुंह फेर लिया, मानों उसके हृदय को कड़ी व्यथा पहुँची हो। शिरोजा ने अपने [illegible] के पास जाकर एक पत्र दिया। उस पत्र में उसकी परीक्षा का फल था।

अलक्ले—ठीक है। तुम जा सकते हो।

अव्लास्की-(उसे पकड़ कर) तुम मुझे भूल गये ?

शिरोजा अव्लास्की का चेहरा देखने लगा। वह बोला-"नहीं मामा।"

इतना कह कर उसने सिर नीचा कर लिया।

अव्लास्की-कैसी पढ़ाई-लिखाई होती है ?

अव्लास्की उससे बातें करना चाहता था; पर उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहें ?

शिरोजा कुछ उत्तर नहीं दे सका। उसने अपना हाथ खींच लिया और एक वार अपने पिता की ओर देखकर वह कमरे से बाहर हो गया।

एक वर्ष पहले शिरोजा ने अपनी माता का दर्शन किया था। तब से उसने उसके बारे में कुछ नहीं सुना। इस बीच में वह स्कूल जाने लग गया था। लड़कों के प्रेम में वह इस तरह फँस गया था कि मां का ख्याल भी उसे नहीं रहा। अगर कभी ख्याल आ भी जाता तो उसे नापाक समझ कर, वह उसे तुरंत दूर कर देता था। उसने इतना समझ रखा था कि किसी कारण वश पिताजी से मां अलग रहती है। मुझे पिताजी के साथ रहना है और उसी के अनुसार उसने अपनी रहन-सहन भी ठीक कर ली थी।

मामा की सूरत से उसे नफरत थी। क्योंकि उसे मां का ख्याल आ जाता था और मां के बारे में सोचना ही वह हीन समझता था। पिता और मामा की बातें सुन कर तथा चेहरा देख कर ही उसने ताड़ लिया था कि मां की चर्चा हो रही थी। इससे वह अपने मामा से और भी मिलना नहीं चाहता था। उसके मन की शान्ति भंग होने की संभावना थी।

अब्लास्की अलवले से विदा होकर नीचे उतरा। रास्ते में शिरोजा मिल गया। वहां पर उसने बड़ी स्वतंत्रता से उससे बातें कीं। उसने उसे अपने स्कूल की सभी बातें बतलाईं।

एकाएक अब्लास्की ने पूछा—"तुम्हें अपनी मां की याद है?"

शिरोजा-(तुरंत) नहीं!

उसका चेहरा लाल हो गया।

मामा भानजे में इतनी ही बात हो पाई। अब्लास्की चला गया। शिरोजा वहीं सीढी पर ही खड़ा रह गया। आध घंटे बाद उसके अभिभावक ने उसी अवस्था में उसे सीढ़ियों पर पाया। उसकी जो दशा थी, उससे नहीं कहा जा सकता था कि वह बीमार है, या गुस्से में है। उसने पूछा—"क्या हुआ। क्या चोट लग गई। तुमसे मना किया था कि वहां मत खेलो।"

शिरोजा ने उसकी बातें नहीं सुनी। वह अपने आप कहता रहा—"मुझे तंग मत करो। मुझे याद है या नहीं, इससे तुम्हें क्या प्रयोजन? मेरे हृदय की शान्ति मत भंग करो। मैं क्यों उसका स्मरण करूं?"

१३

अब्लास्की पीटर्सबर्ग में अपना समय नष्ट हुआ नहीं समझता था। नौकरी तथा अन्ना के त्याग के अतिरिक्त वह मास्को की परेशानी और झंझट से मुक्ति लाभ कर, दो चार दिन आराम करना चाहता था। [illegible] का आगार होने पर भी मास्को नगर उसे मरुभूमि होना था। परिवार के साथ इतने दिनों तक मास्को में रह कर

वह घबरा गया था। उसका जोश घट रहा था। इतने दिनों तक मास्को में अनवरत रहने से वह घबरा गया था। हर एक बात की चिन्ता, उसके सिर पर सवार होकर उसे सता रही थी। डाली की डाट-डपट, झाड़-फटकार, लड़कों की शिक्षा-दीक्षा और कर्ज की परीशानी एक ही साथ खोपड़ी पर सवार हो गई थी। पर पीटर्सबर्ग पहुंचते ही उसकी सारी चिन्ता और परीशानी इस तरह दूर हो गई, जैसे आग में पड़ते ही मोम गल कर गायब हो जाती है।

पहली चिन्ता उसे डाली की थी। इसी संबंध की चर्चा, उसी दिन प्रिंस चेचस्की ने उठायी थी। चेचस्की के लड़के-वाले सब हैं। फिर भी उन्होंने एक रखनी रख ली है और उससे भी वाल-बच्चे हैं। उनकी पहली पत्नी बड़ी सुशील थी। फिर भी रखनी से उन्हें कम सुख नहीं है। बातों ही बातों में उन्होंने कहा—"मैं अपने लड़कों को संकुचित विचार का नहीं बनाना चाहता।" भला मास्को में इस पर लोग क्या कहते ?

दूसरा ख्याल उसे लड़कों का था। पीटर्सबर्ग में बाल-बच्चे माता-पिता के आमोद-प्रमोद में बाधक नहीं होते। यहां लड़कों के पठन-पाठन और देख-रेख का सारा भार स्कूलों पर है। मास्को नगर की भांति यहां पिता-माता यह नहीं समझते कि उनका सारा आमोद-प्रमोद और विलास लड़कों की अच्छी शिक्षा की व्यवस्था करनी ही है। बैलों की तरह पीसने और लड़कों के लिये प्राण देने के अतिरिक्त माता-पिता को और कुछ नहीं करना है। पीटर्सबर्ग के लोग विलासिता में रहना जीवन का कर्तव्य समझते हैं।

तीसरी चिन्ता उसे दफ्तर की थी। मास्को नगर की भांति दफ्तर

का काम यहां भारस्वरूप नहीं हो जाता। यहां दफ्तर के काम में भी दिल लगता है। रुपये-पैसे का मामला यहां और भी सन्तोषजनक था। इस संबंध में वनेस्की का कथन बहुत ही उपयुक्त था। भोजन के समय अब्लास्की भी उससे बातें कर रहा था। वह बोला–"मैंने सुना है, मरडिस्की से तुम्हारी मैत्री है। मेरी शिफारिश उससे कर दो। उसे अपनी एजेंसी के लिये एक सेक्रेटरी की आवश्यकता है।"

उसके उत्तर में वनेस्की ने कहा–"इतनी बातें स्मरण रखने का मुझे अवसर कहां? पर तुम उस यहूदी के पीछे क्यों पड़े हो। यहूदी की नौकरी करना तो बड़ी नीचता है।"

अब्लास्की–क्या करूँ, मुझे रुपयों की आवश्यकता है। रुपये विना मेरा काम चल नहीं सकता।

वनेस्की—लेकिन तुम चला तो रहे हो।

अब्लास्की–कर्ज के बोझ से लदा हुआ हूँ। बीस हजार रुपये कर्ज हो चुके हैं।

वनेस्की–बस, केवल बीस हजार! तब तो मैं कहूँगा कि तुम बड़े ही भाग्यवान् हो। मेरे ऊपर १५ लाख का कर्ज है। मेरे पास निज की कोई सम्पत्ति नहीं, फिर भी मैं चैन से रहता हूँ।

अब्लास्की ने गौर कर देखा तो वनेस्की का कहना, उसे अनेक स्थानों पर चरितार्थ होना दिखलाई दिया। मास्को में अनेक ऐसे व्यक्ति थे, जिनके पास भूंजी-भांग नहीं थी; पर रोजाना गुलछर्रे उड़ा रहे थे।

पीटर्सबर्ग में उसे वह आनन्द मिलता था कि वह अपनी अवस्था भूल जाता था। उसे प्रतीत होता था, मानों वह अभी जवानी के

जोश में आ रहा है। मास्को में उसकी इन्द्रियां शिथिल पड़ जाती थीं, उसका जोश ठंढा हो जाता था, चलना-फिरना उसे कठिन प्रतीत होता था।

बेत्सी, तरस्कोई और अव्लास्की का परस्पर संबंध रहस्यमय था। अव्लास्की सदा बेत्सी के साथ भद्दी मजाकें किया करता। बेत्सी भी इससे अतिशय प्रसन्न रहती थी। अलक्से से मिलकर अव्लास्की बेत्सी से मिलने गया। मजाक की मात्रा इस तरह बढ़ गई कि अव्लास्की संकट में फंस गया। उसके भाग्य से उसी समय प्रिंसेज मेकी आ गई और अव्लास्की की मर्यादा बच गई।

प्रिंसेज मेकी—भला, आज यहाँ आने से आप के दर्शन तो हुए। अन्ना की क्या हालत है? आज संसार अन्ना को बुरा कह रहा है। जो उससे भी नीचे गिरे हैं, वे उसकी ओर अंगुली उठा रहे हैं; पर मेरी समझ में उसने ठीक ही किया। रंस्की से मुझे शिकायत है। जिस समय अन्ना को लेकर वह यहां रहता था, उसने मुझे सूचित नहीं किया; नहीं तो मैं अन्ना से मिलने अवश्य जाती। हां, तो उसकी क्या हालत है?

अव्लास्की कुछ कहना ही चाहता था कि प्रिंसेज मेकी फिर बोल उठीं—"उसने वही किया है, जो सब लोग कर रही हैं। हां, लोगों की तरह उसने परदे की आड़ में कोई बात नहीं रखी। अलक्से को ठुकरा कर उसने अच्छा ही किया। लोग कहते हैं, वह बड़ा चतुर है। लेकिन मैं शुरू से ही कहती आरही हूं कि वह सब से बड़ा पागल है, खब्त है। आज कल जब लीडिया और लाण्डुआ से उसकी दोस्ती हो गई है तो लोग उसे पागल समझने लगे हैं।"

अब्लास्की–मेरी समझ में भी कुछ नहीं आया कि उन्हें क्या हो गया है। कल मैं उनसे मिलने गया और अन्ना के संबंध में स्पष्ट उत्तर मांगा। उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया। उन्होंने कहा–"सोच कर उत्तर देंगे।" आज उत्तर की एवज में लीडिया का निमन्त्रण मिला है। शाम को दावत खाने जाना है।

मेकी–ठीक है, लाण्डुआ से परामर्श लेकर उत्तर देंगे।

अब्लास्की–यह लाण्डुआ कौन है?

मेकी–क्या कहा? तुम लाण्डुआ को नहीं जानते। वह भी पागल है, पर तुम्हारी बहिन का भाग्य उसी पर निर्भर करता है। प्रांतों में रहने का यही फल है। तुम लाण्डुआ को नहीं जानते। लाण्डुआ की कथा विचित्र है। पेरिस में किसी दूकान पर वह माल बेचता था। डाक्टर से दवा लेने गया, वहीं सो गया। नींद में ही उसने लोगों को सलाह देना आरम्भ किया। वह सलाह विचित्र थी। मेलडिस्की की पत्नी ने अपने पति को उसके पास भेजा। लाण्डुआ ने उसे अच्छा किया। वह पंगुल था। उन लोगों का विश्वास उस पर ऐसा जमा कि वे लोग उसे रूस ले आये। तब से हजारों की भीड़ उसके यहां जमी रहती है। कौण्टेस बेजवो को उसने अच्छा किया। बेजवो उस पर ऐसी मोहित हुई कि उसे गोद ले लिया?

अब्लास्की–गोद ले लिया।

मेकी–हां, गोद ले लिया। अब उसे कोई लाण्डुआ नहीं कहता। सब उसे काउण्ट बेजवो कहते हैं। लीडिया भी इस पर मुग्ध है। अलक्से और लीडिया दोनों बिना इसकी सलाह से एक पैर भी नहीं उठा सकते। इसलिये मैं कहती हूँ कि तुम्हारी बहिन का भाग्य इन्हीं दोनों के हाथ में है।

१४

बनेस्की के साथ गुलछर्रें उड़ाकर अव्लास्की जब सन्तुष्ट हुआ, तब उसे लीडिया की फिकर पड़ी। उसने देखा तो नियत समय से कुछ देर हो गई थी। झट-पट उठा, उसने अपना कपड़ा सम्हाला और चल पड़ा। लीडिया के मकान पर पहुँच कर दरवान से उसने पूछा—"और कौन आया है?"

दरवान—अलक्ले और कौण्ट बेजवो।

अव्लास्की—(अपने मन में) प्रिंसेज मेकी ने ठीक ही कहा था। यह विचित्र औरत है। इसका प्रभाव तो विचित्र है। अगर यह दो शब्द पोयस्की से कह देगी तो बड़ा काम होगा।

अन्धेरा नहीं हुआ था। फिर भी लीडिया का कमरा रोशनी के प्रकाश में जगमगा रहा था। लीडिया और अलक्ले आस-पास ैठ कर बातें कर रहे थे। कमरे के दूसरे कोने में एक दुवला-पतला सुन्दर आदमी-जिसका चेहरा औरतों से अधिक मिलता-जुलता था-वैठा था। लीडिया और अलक्ले को अभिवादन कर अव्लास्की ने उस अपरिचित व्यक्ति को एक वार पुनः घूर कर देखा।

लीडिया ने दोनों का परिचय कराया। दोनों ने परस्पर हाथ मिलाया और अपनी-अपनी जगह पर वैठ गये।

लीडिया—आज तो आपसे मिलकर वड़ी प्रसन्नता हुई (लाण्डुआ की ओर इशारा करके) आपसे लाण्डुआ से परिचय भी कराया। आप को तो विदित ही होगा कि अब ये कौण्ट वेजवो है। हां, यह उपाधि इन्हें पसन्द नहीं है।

अब्लास्की–मैंने सब किस्सा सुना है। लोग कहते हैं कि इन्होंने कौण्टेस बेजवो को आराम किया।

लीडिया–(अलक्जे से) वह आज ही यहां आई थीं। यह जुदाई बेचारी को अखर रही है।

अलक्जे–आप क्या निश्चय जा रहे हैं ?

लीडिया–हां, ये पेरिस जा रहे हैं। (अब्लास्की की ओर देख कर) कल इन्हें स्वप्न हुआ है।

अब्लास्की–स्वप्न !

इसके बाद सन्नाटा छा गया। क्षण भर के बाद लीडिया ने इस मुलाकात का प्रधान विषय उठाया। वह बोली–"मैं आपको बहुत दिनों से जानती हूँ। और आपसे घनिष्टता प्राप्त कर मुझे और भी अधिक प्रसन्नता हुई। सच्ची दोस्ती के माने यह है कि मित्र के हृदय तक पहुँचा जाय; पर अलक्जे के साथ आप ऐसा नहीं कर रहे हैं। आप मेरा अभिप्राय समझ रहे हैं तो ?

अब्लास्की–हां, कुछ-कुछ समझता हूँ।

इतने में अलक्जे वहां से उठ कर लाण्डुआ की तरफ चला। लीडिया ने स्नेह भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा। वह बोली–"इनमें कोई बाहरी परिवर्तन नहीं आया है; पर इनका हृदय बदल गया है और मैं समझती हूँ, आपने उसका अनुमान नहीं किया है।"

अब्लास्की–थोड़ा बहुत तो समझता ही हूँ। हम लोगों में असाधारण घनिष्टता रही है।"

लीडिया–इस परिवर्तन के कारण हृदय से प्रेम उठ नहीं गया है, बल्कि और भी गहरा हो गया है। मुझे भय है कि आप मेरा कहना

भली-भाँति नहीं समझ रहे हैं।

अब्लास्की—आपका सोचना ठीक है। उनकी विपत्तियाँ......।

लीडिया—पर यह दुर्भाग्य भी परम सौभाग्य होकर आया। इस घटना से जो परिवर्तन हुआ उसने सुख का आगार इन्हें सौंप दिया।

अब्लास्की—आपका कहना ठीक हो सकता है। पर ये बातें ऐसी हैं कि घनिष्ट मित्र भी इनका भेद नहीं कह सकते हैं।

लीडिया—इसके प्रतिकूल हम लोगों को स्पष्ट-वादिता से काम लेना चाहिये।

अब्लास्की—पर इसमें एक बाधा विश्वास की है।

लीडिया—सचाई के सामने फिर भेद-भाव कहाँ ?

अब्लास्की—नहीं यह बात नहीं। पर......वह एका-एक चुप हो गया। उसकी समझ में अब तक नहीं आया था कि इन लोगों ने इस बात में भी धर्म की टाँग क्यों अड़ा दी है।

अलक्ले—(लीडिया के पास जाकर कान में) मैं समझता हूँ, इन्हे अभी गहरी नींद आना चाहती है।

अब्लास्की ने दृष्टि फेरी—देखा, लाण्डुआ कुर्सी पर बैठा है; पर सिर उसका खिड़की की ओर लटक रहा है। उसने देखा कि सभी उसकी ओर देख रहे हैं। उसने भी ताक कर हँस दिया।

लीडिया—(अलक्ले को पास ही बैठने का इशारा करके) उनका ध्यान छोड़ दो। मैंने देखा है......

इसके बाद ही दरवान ने एक पत्र लाकर दिया। लीडिया ने पत्र ले लिया, उसने पढ़ा और उसी पर जवाब लिख कर उसे दे दिया। वह बोली—"मैंने देखा है कि मास्को के लोग धर्म के प्रति प्रायः उदा-

मौन रहते हैं।"

अव्लास्की–नहीं, आप भ्रम में हैं। मेरा तो यही अनुमान है कि मास्को के लोग बड़े ही कट्टर होते हैं?

अलक्ले–(सूखी हँसी हँस कर) पर आपको तो मैं नितान्त उदासीन पाता हूँ।

लीडिया–उदासीनता के क्या लक्षण हैं?

अव्लास्की–मैं उस विषय में उदासीन नहीं हूँ। पर मैं संशय में पड़ा हूँ और समझता हूँ कि अभी उसका समय नहीं आया है।

अलक्ले और लीडिया ने एक दूसरे को देखा।

अलक्ले–यह कैसे कहा जा सकता है कि समय आया है या नहीं। हमें कभी भी यह विचार मन में नहीं लाना चाहिये कि हम तैयार हैं या नहीं। ईश्वर की कृपा मनुष्य की गणनानुसार नहीं होती। न जाने कब, किस पर, उसकी कृपा हो जाय।

लीडिया–मेरी समझ में वह अभी नहीं हो सकती।

इतने में लाण्डुआ उठा और लीडिया की ओर आया। वह बोला–"क्या मैं भी आप लोगों की बातें सुन सकता हूँ?"

लीडिया–बड़े शौक से। मैं तुम्हें जगाना नहीं चाहती थी। बैठो, इतना कह कर उसने पास ही एक कुर्सी पर लाण्डुआ को बैठाया।

अलक्ले–उसका प्रकाश पाने के लिये आँखें बन्द कर नहीं रखनी चाहिये।

लीडिया–यह मान कर कि हमारे हृदय में वह विराजमान है। जो आनन्द मिलता है; उसका अनुमान आप नहीं कर सकते।

अव्लास्की–पर कभी-कभी आदमी अपने को इतना ऊँचे उठा

नहीं समझता।

अब्लास्की यह प्रकट कर देना चाहता था कि-"यह सब फजूल की तें धर्म के नाम पर मैं स्वीकार करने को तैयार नहीं हूँ।" पर साथ ही सने स्पष्ट कुछ कहना नहीं चाहा। क्योंकि उसे ख्याल था कि अगर ीडिया प्रसन्न रही तो एक शब्द में ही पोयस्की को मेरे अनुकूल कर ह नौकरी दिला देगी।

लीडिया-आपका अभिप्राय है कि पाप उसका पैर थाम लेता ै और वह आगे नहीं बढ़ सकता। पर यह गलत विचार है जो प्रभु ईसा मसीह में विश्वास करते हैं, उनका पाप तो सब धुल जाता है। उनके लिये पाप रह ही कहां जाता है?

इसी समय दरवान ने दूसरा पत्र लाकर दिया। लीडिया ने पत्र पढ़ा और जबानी जवाब दे दिया।

अब्लास्की-पर बिना कर्म के विश्वास तो मृतक सा है।

अलक्ले-इसीने तो हमारा नाश किया है। इसका अर्थ किसी ने समझा नहीं और मनमाना प्रयोग कर दिया। कर्म न किया जाय तो विश्वास भी उठा लिया जाय।

लीडिया-महन्तों और पादरियों का कहना है कि दूसरे की आत्मा की रक्षा करना, उपवास आदि से आत्मा को उन्नत करना, सच्चा धर्म है; पर वह कहीं भी लिखा नहीं है। धर्माचरण तो बड़ा ही सरल है।

अलक्ले—ईसामसीह ने केवल विश्वास पर हम लोगों को बचाया। उन्होंने हमारे लिये क्या नहीं सहा।

इसके बाद लीडिया ने आलमारी से एक धर्म-पुस्तक निकाली और पढ़ कर अब्लास्की को सुनाने लगी। उसमें विश्वास उत्पन्न करने के

संबंध में कुछ लिखा था। साथ ही अनेक उदाहरण भी दिये गये थे।

अब्लास्की ने अपने मन में कहा-"यह अवसर अच्छा है। ये अभी पढ़ते जायंगे। मुझे अपनी शक्ति-संग्रह कर लेना चाहिये। पर मेरी समझ में आज वह प्रसंग छेड़ना उचित है। अगर आज यहां से बेदाग निकल चलूं, सो ही गनीमत है।"

लीडिया-(बीच में रुक कर लाण्डुआ से) आप अंग्रेजी नहीं जानते। इससे आपको नहीं रुचता होगा। पर अब थोड़ा ही रह गया है।

लाण्डुआ-(हंस कर) मैं बड़े मजे में समझता हूँ।

इतना कह कर उसने आंखें बन्द कर लीं। अलक्ले और लीडिया ने मर्म भरी दृष्टि एक दूसरे पर डाली।

अब्लास्की के जीवन में इस तरह की नीरस बातों के सुनने का पहला अवसर था। पीटर्सबर्ग के समाज की विलासिता पर वह मुग्ध था। पर वह आकर्षण इस तरह की संगति में नहीं प्राप्त था। उसकी परीशानी और भी बढ़ गई, जब उसने देखा कि लाण्डुआ आंखें गड़ा कर उसकी तरफ देख रहा है।

उसके दिमाग में चक्कर आ रहा था। विचित्र तरह के भाव आ-आ कर उसके दिमाग में प्रवृष्ट होते थे। वह सोच रहाथा-"मेरीसिन खुश है, क्योंकि उनका लड़का मर गया......इस समय सिगरेट पीने में बड़ा मजा आवेगा......अगर कोई अपनी आत्मा की रक्षा करना चाहता है तो उसे धार्मिक विश्वास दृढ़ करना चाहिये; पर इस विश्वास को दृढ़ किस तरह करना चाहिये इसका ज्ञान जितना लीडिया को है, इन पुरोहितों को नहीं है।......पर मेरा सिर भारी क्यों है। संभवतः इन विचित्रताओं

ारण हो। पर जो कुछ हो, मैंने कोई अनुचित काम तो नहीं किया है।
र उससे पूछना भी ठीक नहीं होगा। लोग कहते हैं कि वे लोगों से
धंना कराते हैं। ईश्वर करे, मैं इनसे बच जाऊं। अगर मुझे ऐसा
ना पड़ा तो मैं अपने को निरीह समझूंगा। वह क्या पढ़ रही है!
ारण बहुत ही शुद्ध है। लाण्डुआ बेजवो ने किस लाभ में पड़ कर
ह पदवी स्वीकार की।" अब्लास्की को जम्हाई आने लगी। उसने
ाना चाहा। हाथ-पैर हिला कर सचेत हो बैठा। पर आलस्य उस
र अधिकार करता गया। उसे निद्रा आने लगी। रह-रह कर लीडिया
हती—"वह सो गया है।" उस समय अब्लास्की सचेत हो उठता और
र्मा जाता। पर उसे सन्तोष हो जाता कि उनका लक्ष्य लाण्डुआ पर
ा, न कि उस पर। सोते दोनों थे; पर अब्लास्की का इस तरह नींद के
श होना, उन्हें अनुचित प्रतीत होता। लेकिन लाण्डुआ का सो जाना
ोनों को विशेष कर लीडिया को बेहद खुशी देता था।

लाण्डुआ कुर्सी पर सो रहा था। उसके भीगे-भीगे हाथ इस तरह
हिल रहे थे, मानों वह कुछ पकड़ना चाहता था। अलक्ले उठा, बड़ी
सावधानी से वह आगे बढ़ना चाहता था; पर टेबुल से टक्कर खा गया,
फिर भी वह आगे बढ़ा और लाण्डुआ के हाथ पर उसने अपना हाथ रख
दिया। अब्लास्की भी अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ और आंखें
फाड़-फाड़ कर उनकी ओर देखने लगा। सब बातें उसे स्पष्ट दिखाई दीं;
उसका सिर चक्कर खाने लगा।

इन लोगों में कुछ बातें होने लगीं। अब्लास्की घबराया हुआ था
ही वह और भी घबड़ा गया और उसने वहां से जाने की इच्छा प्रगट की।
छुट्टी पाते ही अब्लास्की ऐसा भागा कि वह एकदम सड़क पर

आकर रुका। मानों कोई शूली पर से उतार दिया गया हो। उस समय न तो अन्ना की उसने चिन्ता की और न अपनी नौकरी की। जिनके संबंध में वह लीडिया से दो शब्द कहना चाहता था। मन बहलाने के लिये वह थोड़ी देर तक कोचवान से ही बातें करता रहा।

उसने अपने को प्रसन्न करने का यथासाध्य यत्न किया; पर उसकी वह उदासी न गई। निदान वह डेरे पर गया। बेत्सी का पत्र वहां रक्खा था। उसने लिखा था कि—"आज बात अधूरी ही रह गई थी, कल अवश्य आइयेगा।" उसने पत्र समाप्त भी न किया था कि उसने देखा कि पीटर नशे में चूर है और नौकर उसे उठा कर; लिये आ रहे हैं। किसी तरह कमरे में लेजा कर उसे सुलाया।

अब्लास्की आज बहुत उदास था। देर तक उसे नींद नहीं आई। आज की प्रत्येक घटना उसके चित्त को घृणा से भरे देती थी। उसे लीडिया की मुलाकात सब से घृणित प्रतीत होती थी।

दूसरे दिन उसे अलक्ले का पत्र मिला। अलक्ले ने तलाक देना अस्वीकार कर दिया था। अब्लास्की समझ गया कि यह लाण्डुआ के माया-जाल का परिणाम है।

१५

गृहस्थी का काम मिल-सिलेवार तभी चल सकता है, जब कि पति-पत्नी में या तो मेल हो या पूरा मतभेद हो। इससे भिन्न अवस्था में कुछ नहीं हो सकता।

इस अन्तर के कारण, कितने परिवार सब कुछ जानते हुए भी,

घोर यातना मय जीवन विताते हैं।

रंस्की और अन्ना की ठीक यही अवस्था थी। दोनों का परस्पर संबंध पेचीदा हो रहा था। इसका परिणाम यह हुआ कि मास्को के जीवन से घबराकर देहात में लौट जाने का पूर्ण निश्चय कर भी वे लोग अब तक देहात नहीं जा सके थे।

उन लोगों की इस अव्यवस्था का कोई बाहरी कारण नहीं था। जैसे इसके सुलझाने का जितना प्रयत्न किया जाता, उलझन बढ़ती ही जाती। अन्ना समझती थी कि रंस्की के हृदय में वह स्नेह अब नहीं रहा। रंस्की समझता था कि—"देखो, जिसके लिये मैंने अपना सर्वस्व गंवाया, अपनी मर्यादा विगाड़ी, वही मेरे रास्ते में ईंट-पत्थर फेंक रही है।" यही कलह का असली कारण था। एक दूसरे को दोषी समझता था और किसी न किसी वहाने यह दोष एक दूसरे के सिर ठोकना चाहता था।

अन्ना का ख्याल था कि—"पुरुष का एक मात्र काम स्त्रियों पर अनुराग रखना है और वह अनुराग अभेद्य होना चाहिये।" पर रंस्की में यह बात वह नहीं देखती थी। इससे उसे सन्देह था कि—"कदाचित् वह किसी दूसरी रमणी को जाल में फँस गया है।" इसीका उसे डाह था। पर कोई प्रत्यक्ष प्रमाण न पाने से वह सदा उसकी खोज में थी। जरा सी वात पर वह जल उठती थी। रंस्की ने एक बार वातों ही में उससे कह दिया था कि—"मेरी मां का अनुरोध है कि मैं मिसेज सरोकिन से शादी कर लूँ।" यह उसकी डाह का विशेष कारण था।

इसका परिणाम यह हुआ कि अन्ना उससे कुढ़ा करती थी और सदा कुढ़ने का कारण ढूंढ़ा करती थी। उसके मार्ग में जो कुछ बाधायें

थीं, सब का कारण वह रंस्की को बतलाती। मास्को में उस पर जो कुछ बीत रहा था, उसके लिये वह रंस्की को दोषी ठहराती। देहात न चलने का और शिरोजा से अलग किये जाने का दोष भी वह उसीके सिर मढ़ती।

उसे किसी तरह शान्ति नहीं मिलती थी। शाम का वक्त था। रंस्की कहीं जलसे में गया था। अन्ना घर में अकेली उसकी प्रतीक्षा में कुछ सोच रही थी। कल दो-चार बातें कड़ी हो गई थीं, उन्हीं पर वह बिचार कर रही थी। झगड़े का कारण यह था कि रंस्की ने स्त्री-शिक्षा की हँसी उड़ाई थी। अन्ना को यह बुरा लगा था। बस, इसी पर दो-चार बातें दोनों तरफ से हुईं और कहा-सुनी हो गई।

कल शाम को जब रंस्की लौट कर आया तो झगड़े की चर्चा नहीं हुई। इससे दोनों ने समझ लिया था कि वह झगड़ा वहीं तक था अब उसकी चर्चा नहीं होगी; पर उसका अन्त नहीं हुआ था।

आज दिन भर रंस्की घर से गायब था। अन्ना की तबीयत इतनी घबरा गई थी कि वह सब कुछ भूल जाना चाहती थी, किसी तरह उससे मेल कर लेना चाहती थी। सारा दोष वह अपने सिर मढ़ना चाहती थी। उसने अपने मन में कहा—"सब दोष मेरा ही है। मेरा मिजाज चिड़चिड़ा हो गया है। मुझमें डाह बढ़ गयी है। मैं आज ही उससे सुलह कर, कल देहात चली जाऊँगी, वहां हम लोग सुख और शान्ति से रहेंगे।"

इतने में उसे रंस्की का "अस्वाभाविक" शब्द याद आ गया। झगड़े की सभी बातें वह भूल गई थी, पर यह शब्द ज्यों का त्यों उसकी स्मृति में बना रहा। उसने मनमें कहा—"मैं भली भांति समझती हूँ, उसने इस शब्द

प्रयोग क्यों किया ? वह इसीलिये न कि मैं अपनी लड़की पर
उतना स्नेह नहीं रखती, उससे अधिक इस अंग्रेज लड़की पर रखती
हूं। पर वह मेरे अगाध प्रेम का थाह कहां से पा सकता है। बच्चों
के लिये मेरे हृदयमें कितना अनुराग है, वह क्या जानता है ? जिस
शिरोजा को मैंने उसके लिये छोड़ दिया है, उसे मैं कितना चाहती हूँ,
वह क्या जानता है। वह तो मुझे जलाना चाहता था। वह अवश्य
किसी दूसरी रमणी के फेर में पड़ा है।"

अन्ना भावों के आवेग में सोचती रही—"मैं चली थी, अपनी आत्मा
को शान्ति देने; पर मैंने गोल रास्ता पकड़ लिया और फिर उसी जगह
आ पहुँची, जहां से रवाना हुई थी।" वह विकल हो उठी। क्या यह
असम्भव है ? क्या वह अपने पर काबू नहीं रख सकती ? इतना सोच
कर उसने आरम्भ से पुनः विचार करना आरम्भ किया—"वह सच्चा है,
ईमानदार है। वह मुझे चाहता है। मैं उसे चाहती हूँ। दो-चार दिन
में तलाक मिल जायगा। बस, इससे अधिक मुझे और क्या चाहिये।
मैं आत्मा की शान्ति चाहती हूँ और विश्वास चाहती हूँ। मैं सारा दोष
अपने सिर ओढ़ लूंगी। झगड़ा खतम हो जायगा। उसके आने पर मैं
अपनी भूल स्वीकार कर लूंगी और हम दोनों कल ही यहां से चल देंगे।"

विचारों के माया-जाल से बचने के लिए और चिड़-चिड़ाहट दूर रखने
के लिये, उसने नौकर से सन्दूक मंगायी और असबाब ठीक करने लगी।

दस बजे रात को रंस्की घर लौटा। अन्ना आगे बढ़ कर उससे
मिली और उसने पूछा—"जलसा अच्छा था ?"

अन्ना का चेहरा देखते ही रंस्की ताड़ गया कि इसमें विचित्र परि-
वर्तन हो गया है। अब उदासी और डाह के चिन्ह नहीं हैं। वह बोला—

"साधारण था। कोई विशेषता नहीं थी (सन्दूकों की ओर देख कर) यह क्या हो रहा है? चलने की तैयारी! ठीक है।"

अन्ना—अब यहां से देहात में चलना चाहिये। यहां तबीयत नहीं लगती। तुम्हें कोई खास काम तो नहीं है?

रंस्की—बस, केवल कोट बदलना है। मैं अभी आता हूँ। चाय तैयार रखो।

इतना कहकर वह अपने कमरे में चला गया।

रंस्की के शब्दों को अन्ना ने व्यंग्य समझा। उसके हृदय में फि पहले जैसे भाव आने लगे, पर उसने अपने को सम्हाला और किसी तरह का राग-द्वेष नहीं प्रगट किया।

रंस्की के लौटने पर उसने दिन भरकी घटना और अपनी मानसि अवस्था कह सुनाई। उसने पूछा—"कब रवाना होना चाहिये?"

रंस्की—परसों……(ठहरकर) लेकिन परसों तो रविवार है मुझे एक बार मां के पास जाना है।

मां का नाम लेते ही उसे अन्ना की डाह भरी आखों का ख्या आ गया।

अन्ना—(हृदय के भाव को दूर करती हुई) क्या आप कल न जा सकते?

रंस्की—जिस काम के लिये मैं जा रहा हूँ, वह कल तक पूरा न हो सकता।

अन्ना के लिये यह असह्य था। उसका सबेरे का सारा सन्तो नष्ट होगया। वह लड़ पड़ी। जो मन में आया बक गई।

दोनों में वाद-विवाद बढ़ गया। अन्त में अन्ना ने कहा—"अगर तु

मुझे नहीं चाहते तो जाने दो ।

इतना कहकर वह घरसे बाहर होने लगी । रंस्की ने उसका हाथ पकड़ लिया । वह बोला—"इसमें कौन सी ऐसी बात थी कि तुमने मुझे बेईमान, दगाबाज और विश्वासघाती कह डाला ।"

अन्ना—मैं फिर भी इन शब्दों को दोहराती हूँ और हजार बार दोहराऊंगी ।

अन्ना के ये शब्द रंस्की को असह्य थे । उसने अन्ना का हाथ छोड़ दिया । अन्ना कमरे से बाहर हो गई । वह अपने मन में कहने लगी—"वह मुझसे नफरत करता है और किसी दूसरी रमणी पर रीझा हुआ है । मैं प्रेम की भिखारिनी हूँ, पर यहां प्रेम का नाम नहीं । इस संबंध का यहीं अन्त होगा । पर किस तरह ?"

वह अपने कमरे में जाकर बैठ गई और सोचने लगी—"अब मुझे क्या करना चाहिये ? किसके पास जाना चाहिये । इसका साथ भी छोड़ देने पर लोग मुझे क्या कहेंगे ।"

इतना सोचते-सोचते उसे दूसरे प्रसव का ख्याल आ गया—"हां, उस समय मैं मर क्यों न गई । वही मेरे लिये सबसे उत्तम मार्ग था । अब भी समय है । अलक्से की चिन्ता मिट जायगी । शिरोजा के सिर पर कलंक नहीं लगेगा, मैं भी अपना काला मुँह किसीको नहीं दिखला ऊंगी ।" उसके हृदय का भार हलका हो गया इतने में उसने किसी के पैरों की आहट सुनी, पर अपनी जगह से न उठी । रंस्की आया और उसके पास जाकर बोला—"अन्ना, मैं परसों चलने के लिये तैयार हूँ । मैं सब बातें मंजूर करता हूँ ।"

अन्ना चुप रही ।

रंस्की–इसका क्या मतलब है ?

अन्ना–तुम स्वयं जानते हो।

इससे अधिक वह कुछ न कह सकी। उसकी आखों में आसूँ भर आये। रोते-रोते उसने कहा–"मुझे छोड़ दो। मैं कल यहां से चली जाऊँगी। मैं पापिनी हूँ। मैं भ्रष्ट हूँ। तुम्हारे लिये भार हूँ। मैं तुम्हें दुखी नहीं करना चाहती। कल ही मैं तुम्हें मुक्त कर दूँगी। तुम उससे प्रेम करने के लिये स्वतन्त्र हो।"

रंस्की ने उसे समझाया, शान्त करना चाहा, कसम खाया, अपने को निरपराध साबित किया और कहते-कहते रंस्की की आँखों से आंसू निकल आये।

इन दो बूंद आँसुओं ने अन्ना पर विजय प्राप्त कर लिया। उसका सारा रोष गायब हो गया। वह उठी और रंस्की के गले से लग गई।

१६

सुलह हो गई। अन्ना पहलेकी तरह असबाब ठीक करने लगी। इतने में रंस्की कपड़ा पहन कर आया। वह बोला–"कल चलना है, इससे आज ही माँ से मिल आऊं। कह दूँगा कि रुपया किसी आदमी के हाथ भेज देना।"

माँ के पास जाने की चर्चा से ही अन्ना के हृदय में व्यथा उत्पन्न हो गई। वह बोली–"पर कल तक तो मैं ही तैयार नहीं हो सकती। (जरा ठहर कर) जैसा तुमने ठीक किया है, उसी तरह चलने दो। तुम चलो, जलपान करो, मैं अभी आती हूँ।

रंस्की जलपान करने चला गया। अन्ना ने बाहर निकले कपड़ों [illegible]र सामानों को सजा कर रखा और उसके पास गई। वह बोली—"तुम [illegible]नुमान नहीं कर सकते कि मुझे यहां कितनी यन्त्रणा है। इस [illegible]कान को प्रत्येक वस्तु मुझे खाने दौड़ती हैं।......पर अभी तक [illegible]मने घोड़ा नहीं भेजा।"

रंस्की–घोड़े हम लोगों के बाद रवाना होगे। तुम्हें कहां जाना है ?

अन्ना—विल्सन कम्पनी की दूकान से उसके लिये (लड़की के [illegible]लये) कुछ कपड़े लाना है। कल प्रस्थान करना स्थिर रहा।

इसी समय दरवान एक तार लिए पहुंचा। तार का आना साधारण [illegible]ात थी। पर रंस्की तार लेकर वहां से उठ गया और यह कहते कमरे की [illegible]ओर बढ़ा कि–"यहां रसीद पर हस्ताक्षर करने का सामान नहीं है।"

अन्ना ने समझा, रंस्की मुझसे छिपाना चाहता है। उसके लौट कर आने पर वह बोली—"कहां से तार आया है ? तुमने मुझे दिखलाया [illegible]यों नहीं ?"

रंस्की–अब्लास्की ने भेजा है, कोई विशेष समाचार नहीं है, तलाकके [illegible]संबंध में लिखा है कि अभी साफ-साफ उत्तर नहीं मिला। परसों का [illegible]ादा है।

इतना कह कर उसने नौकर से तार मँगाकर अन्ना के हाथ पर रख दिया।

अन्ना का शरीर कांप रहा था। उसने बड़ी कठिनाई से तार पढ़ा। [illegible]ायः वही बातें थी, जो रंस्की ने लिखा था। अन्त में इतना और [illegible]था–"आशा बहुत ही कम है; पर मैं सम्भव-असम्भव हर तरह की [illegible]चेष्टा करूँगा।"

अन्ना-(अपने मनमें) मैंने अभी कलही कह दिया है कि मुझे इसकी परवा नहीं रह गई कि मुझे वह तलाक देता है, या नहीं। फिर भी इसने मुझसे यह तार छिपाया। क्या इसी तरह यह दूसरी औरतों के साथ पत्र व्यवहार करता और मुझसे छिपाता न होगा।

रंस्की-याशिन आज आने वाला था, उसने इस बार प्राय ६० हजार जीता है। इससे कुल कर्ज चुका देगा।

रंस्की के इस विषय-परिवर्तन से अन्ना और भी चिढ़ गई। वह बोली-"तुमने यह क्यों कर मान लिया कि इस समाचार से मुझे दुःख होगा और मुझसे छिपाना चाहा। मैंने तो तुमसे कह दिया था कि अब उसकी मुझे परवा नहीं रही। तुम भी चिन्ता छोड़ दो।"

रंस्की-मैं चिन्ता नहीं छोड़ सकता, क्यों कि मैं यह अस्थिरता नहीं पसन्द करता।

अन्ना-(और चिढ़ कर) स्थिरता प्रेम में चाहिये। वहां सच्ची स्थिरता है और सब तो दिखलाने का है। स्थिरता लेकर क्या करना है?

प्रेम का नाम सुनते ही रंस्की घबरा गया था, वह बोला-"तुम्हारे लिये और तुम्हारी सन्तति के लिये।

अन्ना अपने धुन में इतनी लगी थी कि रंस्की की पूरी बात उसने सुनी ही नहीं। वह बोली-"बस, तुम्हें सदा बच्चों का ध्यान रहता है। मेरी तो तुम्हें परवाह तक नहीं है।"

सन्तति के इस प्रश्न को लेकर कई बार कलह हो चुका था। सन्तति का नाम सुनते ही वह चिढ़ जाती थी। सन्तान के प्रति रंस्की की इच्छाओं को वह अपना अपमान और तिरस्कार समझती थी।

रंस्की—तुम्हारा नाम तो मैंने सबसे पहले लिया था। मुझे अब

स्पष्ट हो गया है कि तुम्हारा क्रोध अस्थिरता के कारण होता है।

अन्ना ने रंस्की की बातें सुनने की परवाह नहीं की। उसके सूखे चेहरे की ओर देखकर उसने अपने मनमें कहा—"अब तो साफ है कि यह मुझे बना रहा है।" वह बोली—"मेरी समझ में यह कारण नहीं है। मेरी अवस्था में कोई अस्थिरता नहीं है।"

रंस्की—(बीच में ही रोककर) यही तो कठिनाई है कि तुम दूसरों की बातें नहीं सुनना चाहतीं।

अन्ना ने कुछ उत्तर नहीं दिया। चायका प्याला मुँहमें लगाकर पीने लगी। एक प्याला खतम कर बोली—"मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं है कि तुम्हारी मां क्या चाहती हैं और तुम्हारी शादी किससे करना चाहती हैं।"

रंस्की—पर उस विषय में तो कोई बात नहीं हो रही है?

अन्ना—दूसरी बात हम लोग क्या कर रहे हैं? मैं तुम से साफ-साफ कह देना चाहती हूँ कि मुझे उस हृदयहीन महिला की कोई चिन्ता नहीं है और न मैं उसे जानना ही चाहती हूँ।

रंस्की—(विनीत भाव से) अन्ना! मां के लिये अपमान-सूचक शब्द क्यों निकालती हो?

अन्ना—जिस माता को अपने पुत्रके दुःख-सुख का ज्ञान नहीं, उसे हृदयहीन कहना अनुचित नहीं है।

रंस्की—(कड़ककर) मैं फिर तुमसे कहता हूँ कि मेरे हृदय में मांके लिये बड़ा सम्मान है। उसका अपमान मैं नहीं सुनना चाहता।

अन्ना—तुम्हारे हृदय में प्रेम कहां है, जो अपनी मां का आदर करोगे! यह सब झूठी बातें हैं।

रंस्की–यही सही। फिर भी तुम्हें......

अन्ना–मैंने अपना निश्चय कर लिया है। अब क्या निश्चय करना है ?

इतना कह कर वह वहां से चली जाना चाहती थी। पर उसी समय याशिन ने प्रवेश किया।

अन्ना ने अपना रूपक तुरन्त बदला। वह याशिन से हंस-हंस करबातें करने लगी। वह बोली–"कहिये क्या हालचाल है, कर्ज अदाकर दिया ?"

याशिन–कुछ दे दिया है। कुल का पार पाना तो कठिन है।

इतना कह कर उसने रंस्की की ओर देखा। तुरंत ताड़ गया कि झगड़ा अवश्य हुआ है। उसने पूछा–"कब की तैयारी है।"

रंस्की–परसों की उम्मीद है।

याशिन–बड़े दिनों से तैयारी कर रहे हो।

अन्ना–पर अब निश्चय है।

इतना कह कर उसने रंस्की की ओर देखा, उसकी आखें साफ कह रही थीं कि अब सुलह सम्भव नहीं है। (याशिन से) तुम्हें विचार किसी के ऊपर दया आती है, या नहीं।

याशिन–मैंने इस पर कभी भी विचार नहीं किया है। जुआ की यही गति है। खेलनेवाले कमीज तक जीत लेने की चिन्ता में रहते हैं। मैंने कुछ अनुचित नहीं किया है।

याशिन ने रिस्की से ही साठ हजार की बाजी मारी थी।

अन्ना–अगर तुम्हारी शादी हो गई होती तो तुम्हारी पत्नी की क्या दशा होती ?

याशिन–यही कारण है कि मैं विवाह से इतनी दूर भागता हूँ।

रंस्की बीच में बोल उठा–और हेसिंगकर ?

अन्ना–क्या तुमने कभी प्रेम किया है ?

याशिन–एक बार !

अन्ना–मेरा वह मतलब नहीं था।

अन्ना हेसिंगकर को जान लेना चाहती थी; पर यह स्मरण कर कि यह शब्द रंस्की के मुंह से निकले हैं, वह चुप हो रही।

इसी समय वोटो ने कमरे में प्रवेश किया। वोटो रंस्की का घोड़ा ख़रीदना चाहता था। अन्ना कमरे से चली गई।

बात-चीत तै हो जाने पर रंस्की याशिन के साथ बाहर जाने लगा। वह अन्ना के कमरे में आया। अन्ना ने मुंह फेर लेना चाहा; पर न जाने क्या समझ कर उसने उसकी ओर घूर कर ताका। उसने पूछा—"क्या कहना चाहते हो ?"

रंस्की–मैंने घोड़ा बेच दिया। तुमसे कुछ पूछने आया हूँ। बहस करने का मेरे पास समय नहीं है और न इससे लाभ है।

अन्ना ने कोई उत्तर नहीं दिया।

रंस्की अपने मनमें सोचने लगा–"मेरा रत्ती भर भी दोष नहीं है। अगर वह अपने पैरों पर आप कुल्हाड़ी चलाना चाहती है तो मैं क्या कर सकता हूँ।" वह लौटने लगा। उसी समय उसे मालूम हुआ कि अन्ना कुछ कहना चाहती है। उसका दिल दया से भर गया। उसने कहा—"अन्ना, क्या है ?"

अन्ना—(उसी रुखाई के साथ) मैंने कुछ नहीं कहा है।

रंस्की–कुछ नहीं !

उसका हृदय फिर पत्थर हो गया। वह कमरे से बाहर हो गया।

कमरे से बाहर होते समय उसने शीशे में अन्ना की परछाईं देखी। उसका चेहरा पीला पड़ गया था और उसके होठ कांप रहे थे।

रंस्की रुक जाना चाहता था, वह उसे शांत कर देना चाहता था; पर उसके पैर शत्रु हो गये। उसे मकान से बाहर खींच ले गये।

रंस्की दिन भर गायब रहा। रात को लौटा। दासी ने कहा—"अन्ना के सिर में भीषण दर्द है। उन्होंने मना कर दिया है कि कोई भी मेरे पास न आवे।"

१७

इस तरह के झगड़े कई बार हुए। पर वह गुबार २४ घंटे तक कभी न रहा। किंतु आज का झगड़ा केवल झगड़ा ही नहीं था। आज का व्यवहार साफ बतला रहा था कि—"अब तुमसे-मुझसे कोई वास्ता नहीं।" वह कमरे में आया, उसने देखा—"मेरा दिल फट रहा है। पर उसने रुखाई से मेरी ओर देखा और बिना कुछ कहे चलता बना। उसके चेहरे पर केवल रुखाई ही नहीं, पूर्ण घृणा के भाव थे। क्या अब भी तुममें सन्देह रह गया है कि वह दूसरी रमणी को चाहता है?"

मैं समझती हूँ कि वह मुझसे क्या कहने आया था। उसने कहना चाहा था—"तुम्हारी खुशी, चाहे जहां जाओ। तुम्हें तलाक की परवाह नहीं है, तो तुम अलक्से से जा मिलो। अगर तुम्हें रुपये की जरूरत है तो मुझ से लेलो। कितने रुपयों से तुम्हारा काम चल जायगा?"

......पर अभी परसों उसने शपथ पूर्वक कहा था—"मैं तुम्हें हृदय से चाहता हूँ। वह कभी झूठ नहीं बोलता। इसके अतिरिक्त कई बार

मैं इसी तरह बिना कारण धोखा खा चुकी हूँ।"

उस दिन अन्ना दिन भर इसी परीशानी में पड़ी रही कि—"क्या करना चाहिये। उससे एक बार मिल लें अथवा अभी निकल कर चल दें।" दिन भर वह उस की बाट जोहती रही। शाम को सिर दर्द का बहाना करके जब वह सोने गई, उस समय भी उसको वही चिन्ता सता रही थी। उसने अपने मन में कहा—"यदि इतने पर भी वह मेरे पास आया तो मैं निश्चय जानूंगी कि वह मुझे चाहता है, नहीं तो मैं समझ लूंगी कि उसे मेरी परवाह नहीं और तब मैं अपना कर्तव्य निश्चय करूंगी।"

रात को रंस्की आया। अन्ना ने उसके पैरों की आवाज सुनी। दासी ने अन्ना की हालत उससे कह दी। अन्ना ने उसे कहते सुना। पर रंस्की को उसने अपने सामने नहीं पाया। उसका विश्वास दृढ़ हो गया।

अन्ना ने मन ही मन सोचा—"अब मेरे लिये केवल एक मार्ग रह गया है। वह है, मृत्यु! मृत्यु का आलिंगन ही मेरी सारी विपत्तियां दूर करेगा। उसका दर्प चूर करेगा और मेरी यन्त्रणा मिटावेगा।"

उसने जहर की शीशी उतारी और फिर सोचने लगी—"मेरे मर जाने पर उसकी क्या गति होगी, मेरे नाम पर रोवेगा, अपने किये पर पछतायेगा और हाथ मल कर रह जायगा। वह मेरी सब बातें स्मरण कर रोवेगा, अपने को धिक्कारेगा।" इसके बाद उसने मृत्यु की कल्पना की। उसका सारा शरीर कांप उठा—"उफ! यह भीषण मूर्ति मुझसे नहीं देखी जायगी। मैं सब कुछ खो सकती हूँ; पर यह जीवन नहीं। क्यों कि वह मुझे चाहता है और मैं उसे चाहती हूँ।" वह भय से कांप रही थी। वह बिछौने से कूद कर अलग खड़ी हो गई

श्रौर सीधे उसके कमरे में दौड़ी चली गई।

रंस्की खर्राटे ले रहा था। हाथ में रोशनी लिये वह देर तक उसका चेहरा देखती रही। पर उसने उसे जगाना नहीं चाहा। वह अपने मन में बोली—'यदि जगाती हूँ तो पराजय स्वीकार करना पड़ेगा। वह समझेगा कि जो कुछ मैं करता हूँ, ठीक करता हूँ।"

वह फौरन अपने कमरे में चली आई और एक ग्लास शराब और चढ़ा कर सो रही। रात भर उसे शान्ति की नींद नहीं आई।

नींद में अन्ना ने भयानक स्वप्न देखा। कई बार उसने वह स्वप्न देखा था। वह जग गई। उसका सारा शरीर पसीने से तर था। उसका दिल धड़क रहा था।

होश सम्हालते ही उसे कल की सारी घटना याद आने लगी। उसने मन में कहा-"मेरे सिर में दर्द था। उसे मालूम हुआ; पर वह आया नहीं। कल रवाना होना है। उससे मिल कर तै करना चाहिये।" यह सोच कर वह उसकी बैठक की ओर चली। वह बरामदे में ही थी कि बंगले में किसी की गाड़ी के पहिये की आवाज सुनाई दी। खिड़की से झुक कर उसने देखा कि सोलह वर्ष की एक युवती एक पैर पायदान पर धरे दरबान से कुछ कह रही है। दूसरे ही क्षण उसने रंस्की को नीचे जाते देखा। वह खिड़की पर खड़ी होकर तमाशा देखने लगी।

वह युवती नंगे सिर रंस्की के पास आई, उसके हाथ में एक बण्डल दे कर लौट गई। रंस्की अपने बैठक में चला गया।

कल की घटना एक बार फिर ताजी हो गई। उसने फिर मन ही मन कहा-"आह! इस नीच और पतित के घर में मैं क्यों एक रात और रह गई।" अपना अन्तिम निर्णय सुनाने के लिये वह उसके कमरे में गई।

उसके प्रवेश करते ही रंस्की ने कहा—"श्रीमती सरोकिन अपनी लड़की को लेकर आयी थीं। मां ने रुपया और दस्तावेज़ भेज दिया है। कल तुमसे नहीं मिल सका था। अब तुम्हारी तबीयत कैसी है?"

अन्ना बीचो-बीच कमरे में खड़ी थी। वह चुप-चाप गौर से उसके चेहरे की ओर देख रही थी। रंस्की ने एक बार उसे देखा और पत्र पढ़ने लगा। अन्ना वहां से अपने कमरे में चली आई। रंस्की उसे लौटा सकता था। वह कमरे के दरवाजे तक पहुंच गई; लेकिन सिवा नोटों के खड़खड़ाने के और किसी तरह की आवाज उसे न सुनाई दी।

इतने में रंस्की ने कहा—"हां, कल हम लोग रवाना हो जायंगे?"

अन्ना—(फिर कर) तुम जा सकते हो। मैं नहीं जाऊँगी।

रंस्की—अन्ना! इस तरह अधिक दिन तक नहीं चल सकता।

अन्ना—तुम, मैं नहीं।

रंस्की—अब असह्य होता चला जा रहा है।

अन्ना—तुम······तुम अपनी करनी पर पछताओगे।

इतना कह कर वह कमरे से बाहर हो गई।

जिस निराशापूर्ण भाव से ये शब्द अन्ना ने कहे थे, रंस्की उससे डर गया। वह कुर्सी से कूद कर उसे पकड़ लेना चाहता था। पर दूसरे ही क्षण न जाने क्या समझ कर रुक गया। उसने मन ही मन कहा—"मैंने सब-कुछ कर देखा। मेरी समझ में इसकी एक ही दवा है। वह है, उपेक्षा-उपेक्षा उसे सीधा कर देगी।

इतना कह कर वह शहर में अपनी मां के पास जाकर दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर कराने की तैयारी करने लगा।

अन्ना ने उसके पैर की आहट सुनी। वह उसके कमरे के पास आकर

ठहरा; पर भीतर न जाकर नीचे उतर गया। वह खिड़की से झांक कर देखने लगी। रंस्की गाड़ी पर बैठ गया और बिना इधर-उधर देखे ही दरवान से कहने लगा—"अगर मेरी गैर हाजिरी में वोटो आवे तो उसे घोड़ा दे देना।"

इतना कह कर उसने गाड़ी आगे बढ़ाने के लिये कोचवान को इशारा किया।

१८

"वह चला गया। उसने मेरी जरा भी परवाही नहीं की। आज सब का अन्त हो गया।" अन्ना खिड़की पर खड़ी इसी तरह बक-झक रही थी। इसके साथ ही साथ उसे रात का स्वप्न याद आ गया; वह कांप उठी। वहां से दौड़ कर वह कमरे में आई और उसने घंटी बजाई। नौकर आकर उपस्थित हो गये।

अन्ना—रंस्की कहां गये हैं?

नौकर—अस्तबल में। गाड़ी अभी लौट आयेगी। क्या आपको कहीं जाना है?

अन्ना—फौरन दौड़ो और उन्हें यह पत्र दो।

पत्र में लिखा था—"मैं गलती पर थी। तुम फौरन लौट आओ, मैं तुम्हें सब बातें समझा दूँगी।"

नौकर पत्र लेकर चला गया। लेकिन वह इतनी डर गई थी कि अकेले कमरे में ठहर नहीं सकी। नौकर के साथ ही कमरे से निकली और उस कमरे में गई, जहां उसकी लड़की थी। क्षण भर के लिये वह उसके

पास बैठ गई और उसकी सूरत में रंस्की की प्रतिमा देख कर वह वहां क्षण भर भी नहीं ठहर सकी। वहां से उठ कर वह अपने सोने वाले कमरे में गई। अनुस्का कमरा साफ कर रही थी। अन्ना बोली-"अनुस्का ! मैं क्या करूं। मेरी तबीयत बेतरह घबरा रही है।"

अनुस्का सब बातें जानती और समझती थी। वह बोली-"क्या आप डाली के यहां जाने वाली थीं ?"

अन्ना-ठीक है। मैं अभी जाऊँगी……(अपने मनमें) पन्द्रह मिनिट जाने में लगेगा और पन्द्रह मिनिट आने में। अब वे आते हो होंगे। मेरा पत्र पाकर बिना आये नहीं रह सकते।

इतने में गाड़ी की आवाज सुनाई दी। उसने झांक कर देखा। गाड़ी खाली थी। नौकर ने आकर कहा—"मेरे पहुँचने के पहले ही वे चले गये थे।"

अन्ना-इस पत्र को लेकर उनके पास जाओ और फौरन जवाब ले आओ।……पर मैं……मैं क्या करूँ……क्यों ? मुझे डाली के यहाँ जाना है। ठीक……मैं डाली के यहाँ जाऊँगी। उन्हें तार ही क्यों न दे दूं। उसने लिखा……"आप से बात करना नितान्त आवश्यक है, फौरन चले आइये।" तार भेज दिया।……कपड़ा पहन कर चलने को तैयार हुई। अनुस्का से पूछा—"मेरी अवस्था बिगड़ी जा रही है, मेरी समझ में नहीं आता कि क्या करूँ।"

अनुस्का-आप इतना परीशान मत होइये। डाली से मिल आइये। आपकी तबीयत ठीक हो जायगी।

अन्ना-ठीक है, मैं जा रही हूँ। अगर मेरे नाम कोई तार आवे तो हिफाजत से रखना। मैं अभी लौट आऊँगी।

इतना कह कर अन्ना नीचे उतरी और गाड़ी पर सवार होकर चल पड़ी।

समय बड़ा ही सुहावना था। सुबह पानी बरस गया था। अभी थोड़ी देर पहले आकाश बादलों से घिरा था। इस समय सूर्य की किरणें प्रत्येक वस्तु को आलोकित कर रही थीं। अन्ना की गाड़ी भी सूर्य की रोशनी में चमक रही थी।

अन्ना गाड़ी में बैठी चली जा रही थी। वह अपनी वर्तमान अवस्था की समालोचना करने लगी। उसने पिछले कई दिन की घटनाओं का स्मरण किया, तो उसे मालूम हुआ कि वह, उससे कहीं अधिक गिर गई है, जितना वह समझती है। अब न तो मृत्यु से उसे उतना भय रहा और न मृत्यु उसे असम्भावित जँची। उसने सोचा—"मैंने कितना बुरा काम किया। मैं उससे क्षमा मांग रही हूँ। मैंने अपने को दोषी कबूल कर लिया है। किस लिये? क्या मैं उसके बिना रह सकती हूँ?" मनने इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया। आंखें उठा कर सड़कों पर टँगे साइन बोर्डों को पढ़ने लगी। वह फिर सोचने लगी—"......मैं डाली से सब बातें कह दूँगी। मैं रंस्की को नहीं पसन्द करती। इससे मुझे नीचा देखना पड़ेगा लेकिन मैं कोई बात नहीं छिपाऊँगी। उसका मुझ पर सहज स्नेह है, वह मुझे उचित सलाह देगी। पर मैं उसकी (रंस्की की) दासी होकर नहीं रह सकती। उसके इशारे पर मैं नहीं चल सकती।"

उसे एक पुरानी सोलह वर्ष की घटना याद आई "जब मैं युवती थी, तब एक दिन मैं अपने पति के साथ घोड़े पर घूमने गई थी। क्या उस समय मैंने स्वप्न में भी यह अनुमान किया था कि मेरा इस तरह पतन होगा। मेरा पत्र पाकर वह मारे अभिमान के फूल उठेगा। पर मैं

उसे सिखा दूँगी।"

इसी तरह सोचती-विचारती अन्ना डाली के घर पहुँची। दरवान ने सलाम किया। अन्ना ने पूछा—"और कौन है?"

दरवान—किटी।

किटी का नाम सुनते ही अन्ना मन ही मन कहने लगी—"किटी! रेंस्की किटी पर मरता था। उसे इस बात का दुःख है कि उसने उससे विवाह नहीं किया। पर मेरी उसे परवा नहीं। मुझे कूड़ा समझता है।"

डाली और किटी कुछ सलाह कर रही थीं। डाली उठ कर अन्ना से मिलने गई। वह बोली—"तुम लोगों ने अभी तक प्रस्थान नहीं किया? अब्लास्की का पत्र आया है। मैं तुम्हारे पास आनेवाली थी।"

अन्ना—हम लोगों के पास तार भी आया है।

डाली—उन्होंने लिखा है कि अलक्से साफ-साफ कुछ नहीं कहता! पर मैं इस बार फैसला किये बिना नहीं टलता।

अन्ना—तुम्हारे पास कोई और था।...... पत्र देखें।

डाली—(घबरा कर) किटी है! वह बहुत बीमार थी।

इतना कह कर डाली पत्र लेने चली गई।

अन्ना अपने मन में सोचने लगी—"क्या बात है? क्या मुझसे मिलना किटी मर्यादा के विरुद्ध समझती है। क्या उसका अपमान होगा? कदाचित् उसका विचार ठीक हो। पर किटी के लिये यह कभी भी उचित नहीं है। रेंस्की पर मरती थी, उसे मुझसे मिलने में परहेज नहीं होना चाहिये। मैंने सब कुछ सोच-समझ कर ही उसके ऊपर अपने को निछावर किया था और मुझे उसका यह फल मिल गया। मैं डाली से

क्या कहूँगी ? कुछ नहीं ।"

इतने में डाली खत लेकर लौट आई। अन्ना खत पढ़ने लगी। पढ़ कर वह बोली—"यह सब मैं पहले ही से जानती थी। जो हो, मुझे इसकी परवा नहीं रह गई है।"

डाली– मुझे तो अब भी आशा है।

डाली ने गौर से देखा। अन्ना का चेहरा उतरा था। वह उसका कारण नहीं समझ सकी। उसने पूछा—"तुम कब जा रही हो?"

अन्ना ने कुछ उत्तर नहीं दिया। थोड़ी देर ठहर कर वह बोली—" किटी को मुझ से इतनी नफरत क्यों है!"

इतना कहते-कहते शर्म से उसका चेहरा लाल हो गया।

डाली-क्या पागलपन की बात है। मैंने कहा कि उसकी तबीयत खराब थी। वह बच्चे को ठीक कर रही है। अभी आती है।

किटी की इच्छा अन्ना से मिलने की नहीं थी। पर डाली के आग्रह करने पर उसे लाचार होकर आना पड़ा। वह शर्माते-शर्माते सामने आई और अन्ना से उसने हाथ मिलाया। वह बोली—"आपसे मिल कर मुझको बड़ी प्रसन्नता हुई।"

किटी के हृदय में अन्ना के प्रति घृणा के भाव भरे थे। पर उसे देखते ही उसका हृदय सरल हो गया।

अन्ना-यदि आप मुझसे मिलने न भी आई होतीं तो मुझे न विस्मय होता, न दुःख होता, मुझे सब बातों की सहन पड़ गई है। आप बीमार रही हैं। आपका चेहरा पीला पड़ गया है।

अन्ना की दशा पर किटी को बड़ी दया आई।

देर तक-बातें होती रहीं। पर अन्ना की तबीयत नहीं लगी।

अन्ना ने उठते-उठते कहा—"मैं तुम लोगों से अन्तिम वार मिलने आई थी।

डाली—"तुम कब जाओगी?"

अन्ना ने इसका कुछ भी उत्तर नहीं दिया। वह किटी की ओर फिर कर बोली—"मैं आपसे मिल कर बड़ी प्रसन्न हुई। सब लोग, आपके पति लेविन भी आपकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। मुझसे वे भी मिलने गये थे। उनसे बात-चीत कर मुझे बड़ा सुख मिला। इस समय वे कहां हैं?"

किटी—(शर्मा कर) इलाके पर गये हैं।

अन्ना—उन्हें मेरा अभिवादन कह देना।

किटी—(दयापूर्ण नेत्रों से) अवश्य!

इतना कह कर अन्ना ने डाली और किटी से हाथ मिलाया और वह चली गई।

अन्ना के चले जाने पर किटी ने अपनी वहिन से कहा—"इसमें वह मधुरता अभी तक विद्यमान है। लेकिन इस समय वह किसी भीषण संकट में है।"

डाली—मैं भी यही सोच रही हूँ। जिस समय मैं उसे आगे बढ़ कर लेने गई। मैंने देखा कि वह रो रही थी।

१६

अन्ना ने डाली से विदा ली। उसकी वेदना पहले से कहीं अधिक भीषण हो रही थी। किटी से मिल कर उसे जो अनुभव हुआ, वह उसके

लिये असह्य था। वह सोचने लगी—"आह! वे लोग मुझे इस तरह देख रहे थे, मानों मैं अचम्भे की चीज़ थी। मैं डाली से सब बातें कहने जा रही थी। अच्छा हुआ जो नहीं कहा। वह मेरी दुरवस्था पर हंसती। वह खुल कर कुछ भी नहीं कहती। पर मन ही मन प्रसन्न होती कि कैसे गुलछर्रे उड़ रहे थे। उसका यही परिणाम होना था। किटी और अधिक हंसती। वह जानती है कि लेविन को मैंने मोह लिया था। वह मुझे देख कर जलती है और मुझसे डाह करती है। वह मुझे भ्रष्टा समझती है। अगर मैं इसी तरह की होती तो अब तक कभी मैं उसके पति को जाल में फँसा चुकी होती। किटी मुझसे नफरत करती है। पर वह अपने को देखे। लेविन को दुतकार दिया और रंस्की को चाहने लगी। जब रंस्की ने दुतकार दिया तो लेविन के पल्ले पड़ी। संसार की यही माया है। सब लोग उत्तम से उत्तम वस्तु चाहते हैं। जिस तरह किटी मुझ से घृणा करती है, उसी तरह मैं भी उससे घृणा करती हूँ। घर चल कर मैं उनसे कह दूंगी,···पर अब मेरा कौन है, जिससे मैं कुछ कह सकूंगी।"

अन्ना इसी तरह सोचती-विचारती गाड़ी पर चली जा रही थी। वह अपने ध्यान में इस तरह मग्न थी कि उसे दीन-दुनियां की खबर नहीं थी।

गाड़ी दरवाजे पर जाकर खड़ी हो गई। दरवान आकर सामने खड़ा हो गया। अब अन्ना की निद्रा टूटी। इतने में दरवान ने तार का लिफाफा उसके हाथ में दिया। अन्ना ने उसे खोल कर पढ़ा, उसमें लिखा था—"मैं दस बजे के पहले नहीं आ सकता।"

—रंस्की।

अन्ना–चपरासी कुछ जवाब लेकर लौटा ?

दरवान—अभी नहीं।

अन्ना–(आप ही आप) मेरा कर्तव्य स्पष्ट है। मैं स्वयं उसके पास जाऊंगी। एक बार मैं उससे सारी बातें कह देना चाहती हूँ। मैंने आज तक किसी से घृणा नहीं की; पर मैं उससे घृणा करती हूँ।

कमरे में खूँटी पर रंस्की की टोपी टंगी थी। उसे देखकर वह काँप उठी। उसे यह ख्याल नहीं था कि–"यह तार मेरे तार का उत्तर नहीं है। मेरा पत्र अभी तक उसे नहीं मिला है।" वह अपने मन में कल्पना करने लगी–"वह अपनी मां के पास बैठा सरोकिन से प्रेमालाप कर रहा है और मेरी विपन्नावस्था पर हँस रहा है। ठीक है, मुझे तुरत जाना चाहिये।" उसे यह पता नहीं था कि उसे कहां जाना चाहिये, वह केवल उस घर में से निकल जाना चाहती थी।

पहले मैं स्टेशन जाऊँगी। अगर वहां वह नहीं मिला तो उससे वहां मिलूँगी। उसने चट-पट सामान ठीक किया और गाड़ी जुतवायी। उसने तै किया कि रंस्की के पास से होकर वह किसी गांव में जाकर टिक रहेगी।

अन्ना गाड़ी पर सवार होकर स्टेशन के लिये रवाना हुई। दरवान साथ गया। गाड़ी पर बैठते ही अन्ना फिर सोचने लगी–"तो वह किस चीज पर फिदा था। मेरे अनुराग पर ? नहीं, मुझे पथ-भ्रष्ट करने में वह अपना गौरव समझता था। उसी गौरव की वृद्धि के लिये उसने यह लीला की।... उसमें प्रेम था; पर प्रधान बात यही थी। उसे सफलता मिली। मुझे पाकर वह अपनी सराहना करके भी नहीं थकता था। पर वह दिन गया। अब तो अभिमान करने की कोई बात नहीं रह

गई। अब तो शर्मिन्दा होने के दिन आये हैं। उसने रस-रस चूस लिया है। केवल सीठी रह गई है। अब उसका सारा प्रेम शिथिल हो गया। पर वह मर्यादा की रक्षा करना चाहता है। अब उसके हृदय में मेरे लिये वह तृष्णा नहीं रही। अगर मैं आज उसे छोड़ कर चली जाऊँ तो उसे लेश मात्र भी क्षोभ नहीं होगा।"

उसके हृदय में भावों के वेग उमड़ रहे थे। उसने फिर मन ही मन कहा—"मेरा अनुराग दिन-दिन बढ़ता जा रहा है और उसका शिथिल होता जा रहा है। इस मनमेटाव का यही कारण है। इसमें मैं लाचार हूँ। मेरे लिये वह सब कुछ है। मैं उस पर अधिकाधिक अधिकार जमाना चाहती हूँ और वह मुझसे दूर-दूर रहना चाहता है। वह कहता है कि—"मैं डाह में जल रही हूँ।" पर यह सत्य नहीं है। मैं सन्तुष्ट नहीं हूँ।......वह मुझे अपनी प्रेयसी बना कर रखना चाहता है। पर मैं उस तरह नहीं रह सकती। यही हम लोगों के झगड़े का कारण है। मैं जानती हूँ कि वह किसी अन्य रमणी को नहीं चाहता। पर इससे क्या? मैं प्रेम की भूखी हूँ। यदि प्रेम नहीं तो मुझे कुछ नहीं चाहिये। वह नरक की यन्त्रणा से भी खराब है। जहां प्रेम का अन्त हुआ, वहीं घृणा पैदा होती है।......इस बात को जाने दो। मैं सुखी किस तरह हो सकती हूं। मान लो, अलक्ले तलाक के साथ ही साथ शिरोजा को मुझे दे देता है और मैं रंस्की के साथ विवाह कर लेती हूँ। लेकिन इससे क्या होगा? क्या किटी इस तरह मुझे देखना छोड़ देगी? नहीं, और शिरोजा? क्या मुझे दो पति के सहवास में देख कर उसे विस्मय नहीं होगा? क्या रंस्की के हृदय में मैं कोई दूसरा भाव जगा सकूंगी? क्या इन बातों से मुझे शान्ति मिल जायगी?

असम्भव है! हम लोगों में मेल नहीं हो सकता। एक दूसरे को सुख नहीं दे सकते। हर तरह की कोशिश करके देख लिया। ऐंठन दिन-दिन बढ़ती जा रही है।"

अन्ना चिन्ता में इतनी मग्न थी कि उसे कुछ पता नहीं कि वह स्टेशन कब पहुंची। दरवान कोचबक्स से कूद कर नीचे आया। उसने पूछा—"कहां का टिकट लूँ ?"

अन्ना की निद्रा भंग हुई। वह बोली—"अधिरा लोका।"

२०

घंटी बजी! लोग तेजी से इधर-उधर दौड़ने लगे। दरवान ने अन्ना का सामान उठा कर गाड़ी में रख दिया। अन्ना गाड़ी में बैठने के लिए चली। एक आदमी ने उसे देख कर अपने साथी के कान में कुछ कहा। अन्ना कुल बात तो सुन नहीं सकी; लेकिन उसे इतना जरूर मालूम हुआ कि इसने मुझे गाली दी।

दूसरी घंटी बजी। लोग सतर्क होकर गाड़ी से अलग खड़े होकर हंसी ठट्टा करने लगे। अन्ना के विषय में कोई बात नहीं थी; पर उनकी हंसी उसे तीर के समान लग रही थी। उसी समय तीसरी घंटी बजी। गाड़ी धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगी। देखते-देखते गाड़ी स्टेशन की भीड़ छोड़ कर आगे बढ़ गई। अन्ना पुनः चिन्ता सागर में डूब गई। उसने अपने मन में कहा—"मैंने बहुत सोचा-विचारा; पर मुझे कोई भी ऐसी अवस्था नहीं दिखलाई दी। जिसमें रह कर मैं सुख और शान्ति

से दिन काट सकूंगी। हम लोग दुःख और यातना सहने के लिए ही पैदा हुए हैं। हम लोग सदा एक दूसरे को ठगने और धोखा देने की फ़िक्र में लगे रहते हैं।"

अन्ना के साथ एक दूसरी रमणी भी यात्रा कर रही थी। उसने उसी समय कहा—"इसीलिये तो मनुष्य को यह कल्पना-शक्ति दी गई है कि वह यातना से सदा दूर भागता रहे।"

अन्ना ने समझा कि यह मेरी भावनाओं का उत्तर दे रही है।

अन्ना ने उसके शब्दों पर गौर किया—"जिस बात से उसे यन्त्रणा होती हो, उससे अपनी रक्षा करने के लिये।" उसने उस युगल-दम्पती की ओर देखा। उसे मालूम हुआ कि बीमार पत्नी को पति ने गलत समझ लिया है और पति ने उसके उस भाव के निवारण का यत्न नहीं किया है। अन्ना ने क्षण भर में उनके जीवन की सारी कथा जान ली। उसने देखा कि इनके जीवन में किसी तरह का सुख नहीं है। वह अपने ध्यान में पुनः निमग्न हो गई।

अन्ना फिर मन ही-मन कहने लगी—"सचमुच! मेरी यन्त्रणाओं का अन्त नहीं है। इसीसे बचने के लिये मुझे कल्पना-शक्ति दी गई है। तब भी मैं इससे रक्षा पाने का यत्न क्यों नहीं करती।...... अब तो बाहर का कुछ दिखाई नहीं देता, फिर रोशनी से क्या लाभ! इसे बुझा क्यों न दिया जाय। पर किस तरह? वे लोग क्यों चीख रहे हैं? वे लोग क्यों बातें कर रहे हैं। वे क्यों हँस रहे हैं? क्या यह सब झूठ है? सब विडम्बना है?......"

इतने में गाड़ी स्टेशन पहुँची। गाड़ी से उतर कर अन्ना सब से अलग जा खड़ी हुई। वह सोचने लगी—'मैं यहां क्यों आई हूँ?" इसका

कुली आ-आ कर उससे पूछने लगे—"मेम साहव कहां चलियेगा।" वह कुछ देर तक वहीं खड़ी सोचती रही। एका-एक उसे ख्याल हो आया, उसे और भी आगे जाना है। उसने एक कुली से पूछा—"क्या कौण्ट रंस्की की गाड़ी स्टेशन पर आई है ?"

अन्ना कुली से बात ही कर रही थी कि सामने से मिहल दौड़ा हुआ आया। उसके हाथ में रंस्की का पत्र था। उसने पत्र अन्ना को दे दिया। अन्ना पत्र खोल कर पढ़ने लगी। उसमें लिखा था—"खेद है कि तुम्हारा पत्र पहले नहीं मिला। मैं दस बजे तक घर आ जाऊँगा।" पत्र बड़ी ही लापरवाही से लिखा गया था। पत्र पढ़ कर अन्ना ने अपने मन में कहा—"ठीक है। (मिहल से) तुम घर लौट जाओ।"

इतना कह कर वह प्लेटफार्म पर टहलने लगी।

दो दासियाँ प्लेटफार्म पर जा रही थीं। अन्ना का पोशाक देख का दोनों आपस में बातें करने लगीं। इतने में स्टेशनमास्टर उसके पास आकर पूछने लगा—"क्या आपको गाड़ी से जाना है ?" एक लड़का—जो कुछ सौदा वेच रहा था—रह-रह कर उसी की ओर देख रहा था। अन्ना घबरा उठी उसने सोचा—"ईश्वर ! मैं कहां जाऊँ।" वह धीरे-धीरे प्लेटफार्म की तरफ बढ़ती गई। गाड़ी आ रही थी। प्लेटफार्म यात्रियों से भरने लगा, उसने समझा कि वह फिर गाड़ी में वैठ गई।

उसी समय उसे उस आदमी की याद आ गई, जो उस दिन गाड़ी के नीचे दब गया था। जिस दिन उसने पहले-पहल रंस्की को देखा था। उसने उसी क्षण निश्चय किया कि उसे क्या करना चाहिये। वह जल्दी से आगे बढ़ी और गाड़ी की प्रतीक्षा में खड़ी हो गई।

वहीं खड़ी-खड़ी वह न जाने क्या-क्या सोचती रही। अन्त में

उसने कहा—"बस, इसी तरह मैं उसे अपने किये का मजा चखा सकूंगी और अपनी यन्त्रणा का अन्त कर दूँगी।"

उसने पहली गाड़ी में ही अपना अन्त कर डालना चाहा था; पर वेग में उसका हाथ फँस गया और वह कूद नहीं सकी। उसे दूसरी गाड़ी की प्रतीक्षा करनी पड़ी।

वह उसी तरह खड़ी रही। दूसरी गाड़ी आयी। वह निशाना ठीक करके कूद पड़ी। गाड़ी का इञ्जन सीटी देता, उसके ऊपर से चला गया। उसकी जीवन-लीला का अन्त हो गया। वह केवल इतना कह सकी—"ईश्वर, मुझे क्षमा कर।"

आठवां खण्ड

१

कोनिशे को पाठक भूले न होंगे। आज बहुत दिनों के बाद हमें इनके स्मरण का अवसर पड़ा। इस बीच में उनके संबंध में कोई ऐसी मार्के की घटना नहीं हुई, जिसकी हम चर्चा करते। ६ वर्षों से वे–"यूरोप तथा रूस के शासन का स्वरूप शीर्षक।" पुस्तक लिख रहे थे। इसके कुछ अंश समय-समय पर समाचार-पत्रों में निकल चुके थे। कोनिशे ने अपने मित्रों को इसका कुछ अंश पढ़ कर भी सुनाया था। गतवर्ष यह एक बार पुस्तकाकार निकल गई। कोनिशे को आशा थी कि इस पुस्तक से समाज में एक बार हल-चल तो अवश्य मच जायगी।

पुस्तक को छपे दो तीन सप्ताह हो गये; पर किसी ने उसकी चर्चा न की। समाचार-पत्रों में भी उसकी समालोचना नहीं निकली। तीसरे महीने में एक मासिकपत्र में समालोचना दिखाई दी। लेखक ने पुस्तक और लेखक दोनों की पूरी तरह से भद्द उड़ाई थी। ऐसे-ऐसे

अवतरण उठाकर दे दिये थे कि जिसने पुस्तक को नहीं पढ़ा है और जो रूस की जनता को नहीं जानता था—"वह यही समझ लेगा कि इस पुस्तक का लेखक इस विषय से सर्वथा अनभिज्ञ है।"

कोनिशे की समझ में यह बात नहीं आई कि इस लेखक ने ऐसी समालोचना क्यों की। एका-एक उसे स्मरण हो आया। एक बार यही समालोचक, जो कि उमर में कोनिशे से कहीं कम था। इनसे मिलने आया था। किसी प्रसंग पर बात चीत हो रही थी। उसने कुछ भूल की थी। कोनिशे ने उसे सुधारते हुए हंसी उड़ाई थी। उसीका यह बदला था।

यही प्रथम और अन्तिम समालोचना थी। इसके बाद फिर किसी ने कोनिशे की पुस्तक का नाम तक नहीं लिया। ६ वर्ष का कठिन परि-श्रम मिट्टी में मिल गया।

इधर जब से यह पुस्तक समाप्त हो गई थी, कोनिशे के हाथ में कोई दूसरा साहित्यिक काम नहीं था। इससे उसे समय काटना कठिन हो गया था।

कोनिशे बुद्धिमान्, शिक्षित, स्वस्थ और कार्यकर्ता था। वह नहीं समझ सकता था कि वह अपनी शक्ति का प्रयोग किस तरह करे। सभा-सोसायटियों में वह जाया करता था, पर दिन-रात उसीमें लिप्त रहना, उसकी प्रकृति के विपरीत था।

भाग्य वश इसी समय राजनीतिक क्षेत्र में नया आतंक फैला। अनेक समस्यायें उपस्थित हो गईं, जिन पर विचार करना तथा उन्हें हल करने के लिये आन्दोलन करना आवश्यक हो गया। इन समस्याओं में अमेरिका के साथ मैत्री, समारा का अकाल, प्रदर्शिनी आदि प्रश्न बड़े ही गम्भीर थे। कोनिशे इस में तन-मन से लग गया।

कोनिशे के दलवालों का सारा ध्यान इस समय सर्विया के युद्ध की ओर लगा था। इसके सिवा उन्हें कुछ सूझता ही नहीं था। स्लाव वालों का प्रश्न, इस समय सबसे प्रधान प्रश्न हो रहा था; पर कोनिशे ने देखा कि लोग सच्चे हृदयसे इसके पीछे नहीं पड़ गये हैं। उसने देखा कि नाम के लिये ही स्वार्थ से प्रेरित होकर लोग इसमें आ पड़े हैं। अखबार वाले केवल अपनी बिक्री बढ़ाने के लिये बढ़ा-बढ़ा कर बातें लिखते हैं। उसने यह भी देखा कि इस आन्दोलन में जो सबसे आगे बढ़ गये हैं और बढ़-बढ़ कर बातें कर रहे हैं, उन्हें भीषण हार खानी पड़ी है और उनकी अवस्था बेकस हो रही है। उसने देखा कि इस आन्दोलन में कितनी बातें झूठी और व्यर्थ हैं। लेकिन इससे जो संगठन हो रहा था, उसमें योग न देना अनुचित था। स्लाव के निवासी ईसाई थे। उनकी इस निर्दयता से हत्या, प्रत्येक रूसी के हृदय को घृणा से भर रही थी। सर्विया वाले जिस वीरता से लड़ रहे थे, उसे देख कर सब का दिल फड़क रहा था और हर-तरह से लोग उनकी सहायता के लिये तैयार थे।

जन साधारण की सहानुभूति देख कर कोनिशे का उत्साह और भी अधिक बढ़ा। उसने साफ देखा कि जनता स्लाव वालों के साथ है, उनके पक्ष में है। इसलिये वह और भी दत्त-चित्त होकर उसमें लग गया।

अब उसे किसी बात की चिन्ता नहीं रही। पुस्तक तो उसके ध्यान से एक दम उतर गई। दिन-रात वह स्लाव के प्रश्न की मीमांसा करता रहता। यहां तक कि उसे चिट्ठी-पत्री लिखने तक के लिये भी समय नहीं मिलता था। जुलाई तक वह इसी तरह अनवरत परिश्रम से काम करता रहा। जुलाई के बाद क्षणिक विश्राम लेने के लिये, उसने लेविन के पास जाना चाहा। कतासो ने भी लेविन के पास जाने का वचन

दिया था। इससे दोनों एक साथ रवाना हुए।

कोनिशे और कतासो स्टेशन पहुँचे। स्टेशन पर उस दिन बेशुमार-भीड़ थी। उन लोगों ने देखा कि स्वयंसेवक-सैनिकों का एक दल युद्ध-क्षेत्र के लिये जा रहा है और बहुत से औरत-मर्द उन्हें पहुंचाने-के लिये आये हैं।

कोनिशे को देख कर उस भीड़में से एक रमणी ने पास आकर पूछा—"क्या आप भी इन्हें विदा करने आये हैं?"

कोनिशे—नहीं, मैं तो अपने काम से जा रहा हूँ। क्या आप रोज आती हैं?

रमणी-नहीं। रोज आना असम्भव है। मैंने सुना है कि यहां से अब तक ८०० सैनिक जा चुके हैं। क्या यह सच है? मालविस्की इसे स्वीकार नहीं करता।

कोनिशे-इससे भी ज्यादा। मास्को के बाहर से जो भेजे गये हैं, उनकी संख्या मिला कर तो १००० से भी ऊपर हो जाती है।

रमणी-यही मैं भी कहती हूँ। करीब १० लाख रुपया भी दिया जा चुका है।

कोनिशे—हां।

रमणी—आज के तार के बारे में आपकी क्या राय है। तुर्कों का फिर पछाड़ा है?

कोनिशे-यही समाचार मैंने भी पढ़ा है। अखबारवाले कहते हैं कि तीन दिन से लगातार तुर्क हार रहे हैं। प्रायः सभी स्थानों पर उन्हें हार खानी पड़ी है। कल भीषण संग्राम की संभावना है।

रमणी—हां, एक बात तो आपसे कहना भूल ही गई। एक नौजवा

सैनिक छुट्टी चाहता था; पर नहीं मिली। कौण्टेस लोडिया का वह भेजा हुआ है। आप एक पत्र लिख दीजिये। मैं उसे जानती हूँ।

कोनिशे ने उस रमणी से उसके बारे में पूरी जांच की। उसने फिर छुट्टी देने वाले अफसर के नाम एक पत्र लिख दिया।

रमणी-(पत्र लेकर) आपने रंस्की का नाम तो सुना ही होगा। वह भी इसी ट्रेन से जा रहा है। उसकी मां के अतिरिक्त उसे विदा करने कोई भी नहीं आया है।

कोनिशे-मैंने सुना था कि वह भी जाने वाला है; पर यह नहीं जानता कि कब ?

गाड़ी आने का समय हो गया। लोग सैनिकों को अनेक तरह से उत्साहित करने लगे। चारों तरफ से भीड़ उमड़ आई। उसी भीड़ में अब्लास्की भी था। उसने कोनिशे को देखा। वह बोला-"आपको भी कुछ कहना चाहिये, आप उत्साहित करना खूब जानते हैं।"

कोनिशे-नहीं, इस समय मैं यात्रा में हूँ।

अब्लास्की-कहां ?

कोनिशे—लेविन के गाँव पर।

अब्लास्की—डाली भी आज-कल वहीं है। आप उससे मेरा इतना सन्देश कह दीजियेगा कि उन लोगों से मुलाकात हुई थी। यह बात सच है कि मैं सेक्रेटरी के पद पर नियुक्त हो गया। वह समझ जायगी। श्रीमती मेकी भी १००० तोपें और १० दाइयां अपनी ओर से भेज रही हैं।......पर आप आज जा रहे हैं। कल हम लोग अपने दो मित्रों की विदाई में दावत दे रहे हैं। विलोस्की की अभी हाल में ही शादी हुई है। बड़ा ही अच्छा आदमी है।

उस रमणी ने कोनिशे की ओर देखा। दोनों इससे पिण्ड छुड़ाना चाहते थे। पर इसकी उसे कुछ भी परवा हीं थी। उसी समय चन्दा माँगने वाली एक रमणी उधर से आ निकली। अल्लास्की ने उसे पास बुलाया और पाँच रुपया दे दिया। वह बोला—"आज का तार तो आप लोगों ने पढ़ा ही होगा। वीर माण्टेनेग्रो वालों ने खूब काम किया।"

इतने में उस रमणी ने कहा—"रंस्की भी इसी गाड़ी से जा रहा है।"

रंस्की का नाम लेते ही उसे अन्ना का स्मरण हो आया। वह क्षण भर के लिये उदास हो गया। पर दूसरे ही क्षण उसने होश सम्हाला और रंस्की के पास पहुँचा। सच्चे मित्र की हैसियत से वह रंस्की से मिला।

अल्लास्की के चले जाने पर उस रमणी ने कहा—"जो हो, इसमें एक बड़ा भारी गुण है। रूसी जातीयता उसमें कूट-कूट कर भर दी गई है। उससे मिल कर रंस्की प्रसन्न नहीं होगा। आप जो चाहें कहें, मुझे इस (रंस्की) पर तर्स आता है। गाड़ी में उससे दो-चार बातें कीजियेगा।"

कोनिशे—अगर मौका मिला।

रमणी—मैं उसे सदा घृणा की दृष्टि से देखती थी। पर उसका यह त्याग उसके सब पापों को धो देता है। वह अकेला नहीं जा रहा है; बल्कि अपने खर्च से सैनिकों की एक टोली भी लिये जा रहा है।

कोनिशे—मैंने भी सुना है।

इतने में घंटी बजी। सब लोग दरवाजे पर जमा हो गये। उस रमणी ने रंस्की की ओर लक्ष्य किया। वह अपनी मां के साथ जा रहा था और अल्लास्की बगल में था और वह उससे कुछ कह रहा था। रंस्की की आकृति से मालूम होता था कि वह अल्लास्की की बातें

नहीं सुनना चाहता और उस तरफ ध्यान नहीं दे रहा है।

अल्लास्की के इशारा करने पर उसने कोनिशे और उस रमणी को देखा और अपनी टोपी उठाकर अभिवादन किया। उसके चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गई थीं।

एक-एक करके सब लोग गाड़ी में जाकर बैठ गये। एक बार हुर्रे की आवाज हुई। फिर गगनभेदी शब्द में प्लेटफार्म पर के लोग चिल्ला उठे—"ज़ार की जय।"

तीसरी घंटी बजी। गाड़ी धीरे-धीरे स्टेशन से आगे बढ़ी।

२

गाड़ी अगले स्टेशन पर आकर रुकी। अब वहां भी खासी भीड़ इकट्ठी थी। सैनिकों का बड़ी धूम-धाम से स्वागत किया गया। गाड़ी में जितने लोग सवार थे, बाहर निकल कर देखने लगे। पर कोनिशे अपनी जगह से नहीं हटा। वह चार महीने से निरन्तर यही लीला देखता चला आ रहा था। उसे उसमें उत्साह नहीं था। कतासो वैज्ञानिक आदमी था। उसे इतनी फुरसत नहीं थी कि वह इन झंझटों में पड़ता। आज उसे इसमें नया आनन्द मिलने लगा। वह कोनिशे से प्रश्न पर प्रश्न करने लगा।

कोनिशे—बेहतर होगा कि तुम उन्हीं सैनिकों से बात-चीत करके अपनी उत्सुकता मिटा लो।

अगले स्टेशन पर गाड़ी रुकते ही, वह अपने डब्बे से उतर करीब उस डब्बे की ओर चला, जिसमें सैनिक बैठे थे। पहले डब्बे

दस सैनिक बैठे थे। कुछ जग रहे थे और कुछ सो रहे थे। दर्शकों और यात्रियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने के लिये एकाध जोरों से बातें कर रहे थे।

कतासो डब्बे में जाकर बैठ गया और उनसे बातें करने लगा। दो से बातें कर, उसे बड़ा असन्तोष हुआ। उनकी डींग हाँकने वाली बातें सुन-सुन कर कतासो को बड़ा असन्तोष होता था। बगल में एक घुड़सवार बैठा था। निदान कतासो उससे बातें करने लगा। उसने पूछा—"आप क्यों लड़ाई में जा रहे हैं?"

सवार—सब लोग जा रहे हैं। सर्विया वालों को सहायता की जरूरत है। मुझे उनकी अवस्था पर खेद भी है।

कतासो—घुड़सवार सेना का वहाँ विशेषता अभाव है।

सवार—मैं सवारों में बहुत दिन तक नहीं रहा हूँ। संभव है वे मुझे पैदल सेना में ही रखें।

कतासो—जब उन्हें सवार सेना की इतनी अधिक जरूरत है तो तुम्हें पैदल सेना में क्यों रखेंगे।

कतासो को विश्वास था कि यह पुराना सिपाही है।

सवार—मैं सवार सेना में बहुत दिनों तक नहीं था। मैं सिर संरक्षक सेना में था।

इन सबों की राम कहानी से कतासो को जरा भी सन्तोष नहीं हुआ। अगले स्टेशन पर सैनिक गाड़ी से निकल कर बाहर गये। कतासो इस धुन में था कि इस संबंध में किसी से बातें करके अपने मन का [illegible] करूँ। उसने देखा कि एक कोने में एक बुड्ढा आदमी सो रहा [illegible]। [illegible] कतासो की बातें गौर से सुन रहा था। सैनिकों के चले जाने

पर कतासो ने उसकी ओर फिर कर कहा—"प्रत्येक की कहानी विचित्र है। कोई सौदागर था, कोई मास्टर था, कोई क्लर्क था और अब ये लड़ने जा रहे हैं।

कतासो ने यह बात इस तरह से कही, जिससे उसने अपना स्थिर मत नहीं प्रकाशित किया और उस बुड्ढे आदमी की राय जान लेनी चाही।

वह बुड्ढा आदमी दो लड़ाइयों में बतौर अफसर के शरीक हो चुका था। वह सैनिक का लक्षण जानता था। उन लोगों की बातें और रहन-सहन देखकर, उसने समझ लिया था कि सब के सब निकम्मे हैं। वह अपने गांव का किस्सा कहना चाहता था कि वे ही सेना में भर्ती होते हैं, जिन्हें कोई नहीं पूछता; पर स्वयंसेवक सेना के विरुद्ध कुछ कहना उचित न समझ कर वह चुप रह गया। उसने हंस कर केवल इतना ही कहा—"क्या किया जाय। आदमियों की खींच पड़ती है, तब यही होता है।"

इसके बाद युद्ध-क्षेत्र के समाचार की आलोचना होने लगी। भावी भीषण युद्ध के लिये दोनों चिन्तित थे। पर किसी ने जबान नहीं हिलाई।

अगले स्टेशन पर कतासो अपने डब्बे में गया और बात बना कर उसने कहा—"सैनिक बड़े वीर मालूम होते हैं।"

आगे प्रान्तीय नगर का स्टेशन था। यहां गाड़ी देर तक ठहरती है। कोनिशी प्लेटफार्म पर टहलने लगा। टहलते-टहलते वह रंस्की के डब्बे की ओर गया। रंस्की की मां खिड़की पर खड़ी थीं। उन्होंने इशारे से कोनिशी को अपने पास बुलाया। वह बोली—"मैं भी इसके

साथ जा रही हूँ। क्या करूं।"

कोनिशे–मैंने सुना है। बड़ा उपकार का काम है।

रंस्की—उस दुर्घटना के बाद दूसरा उपाय ही क्या रह गया था?

कोनिशे–इससे बढ़ कर अभाग्य की बात ही क्या हो सकती थी।

रंस्की की मां–मुझे कितनी भीषण यातना सहनी पड़ती है। तुम
अनुमान नहीं कर सकते। डेढ़ मास तक इसने किसी से बात तक नहीं
की। मुश्किल से भोजन करता था। मैं एक मिनट के लिये भी इससे
अलग नहीं होती थी। रंस्की ने अपने शरीर को हर तरह की यातना दी
वह जमीन पर सोता था। प्राण देने के लिये तैयार था। तुम्हें मालूम
ही होगा कि उसी दुष्टा के लिये इसने एक बार गोली मारी थी।·····

कोनिशे–यह बात आप मत कहिये। पर आपको बड़ी विपत्ति
झेलनी पड़ी।

रंस्की की मां–उस दिन मैं घर पर ही थी। यह भी आया था
नौकर उसका पत्र लेकर आया। इसने उत्तर लिखकर दे दिया। हम लोगों
को क्या मालूम कि वह दुष्टा यहीं स्टेशन पर मौजूद है। शाम को इस
दुर्घटना का समाचार मिला। वह दौड़ा स्टेशन गया। स्टेशन
पर क्या हुआ, मुझे नहीं मालूम। वहां से यह उठा कर लाया गया
जीने की बिल्कुल आशा नहीं थी। बड़ी परेशानी उठानी पड़ी...प
इस बात की आज चर्चा क्यों? आप जो चाहे कहें, लेकिन मैं तो यही
कहूँगी कि वह बड़ी ही बदजात औरत थी। इस दुःसाहस का क्या
मतलब था? वह अपना दबदबा दिखाना चाहती थी। उसने उसी जोश
से यह किया। अपना तो उसने नाश किया सो किया, साथ ही अपने
पति और मेरे प्यारे बेटे का भी सर्वनाश करना चाहती थी।

कोनिशे-उसके पति ने क्या किया ?

रंस्की की मां—वह अपनी लड़की को ले गया। रंस्की उस समय सब कुछ करने को तैयार था। इस समय उसे दुःख है कि उसने अपनी लड़की को उसे क्यों दे दिया। पर अब क्या हो सकता है ? उसके पति का क्या बिगड़ा। वह तो उससे मुक्त हो गया था। मेरा प्यारा रंस्की उसकी जाल में फंसा था। इसने उस पर सब कुछ निछावर कर दिया था। पर उसे दया नहीं थी। उसने जान बूझ कर इसका सर्वनाश किया। आप जो चाहे कहें, पर उसकी मृत्यु ही कहती है कि वह बदकार औरत थी। धर्म का उसे जरा भी डर नहीं था। ईश्वर मुझे क्षमा करे। उसका स्मरण आते ही मेरे रोम-रोम से घृणा टपकने लगती है।

कोनिशे-अब उनकी क्या हालत है ?

रंस्की की मां-यह युद्ध वरदान हो गया। इस युद्ध ने उसे कुछ उत्साहित किया है। उसका मित्र याशिन जा रहा था। विदा लेने आया और उसने कहा-"तुम भी चलो।" वह तैयार हो गया। आज उसके दांत में दर्द है, वह उस तरफ टहल रहा है। उससे दो बातें कर लो। उसे शांति मिलेगी।

कोनिशे रंस्की की माँ से विदा होकर रंस्की की ओर बढ़ा। रंस्की दूसरी तरफ टहल रहा था। रंस्की ने कोनिशे को देख कर भी उसकी उपेक्षा की; पर कोनिशे ने इसकी परवाह नहीं की। क्योंकि वह रंस्की की दशा से भलीभांति परिचित था। वह उसके पास गया।

कोनिशे को अपनी ओर आते देख कर रंस्की ठहर गया। गौर से देखते हुए, पहचान कर, वह आगे बढ़ा और उसने हाथ मिलाया।

कोनिशे-आप मुझसे आंख बचा जाना चाहते थे। क्या मैं आप-

की कुछ सेवा कर सकता हूँ ?

रंस्की–आप क्षमा करेंगे। मुझे इन्सान की सूरत से ही नफरत हो गई, अब इस जीवन में मुझे कोई सार नहीं दिखाई देता।

कोनिशे—मैं अच्छी तरह समझता हूं। मैंने आपको केवल इस लिये कष्ट दिया कि आप विदेश जा रहे हैं। कदाचित् मुझसे आपकी किसी तरह की सेवा बन पड़े। अगर आप कहें तो मिलन के नाम एक पत्र लिख दूं।

रंस्की–नहीं, क्यों कष्ट कीजियेगा। क्या मृत्यु के पास भी परिचय की आवश्यकता पड़ेगी ?

इतना कह कर उसने रूखी हँसी हँस दी।

कोनिशे–दो चार आदमियों से जान-पहचान रहने में सुविधा होती है।...पर आपकी जैसी इच्छा हो। आपकी तैयारी का समाचार सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। इस समय स्वयंसेवक सेना का संचालन आप जैसे योग्य व्यक्ति के हाथ में ही होना चाहिये। उन पर कई आक्रमण हो चुके।

रंस्की–इस जीवन का, मेरी दृष्टि में कोई मूल्य नहीं रह गया है। हां, मेरी भुजाओं में इतना बल अवश्य है कि मैं शत्रुओं की गर्दन धड़ से अलग कर दूंगा। मुझे इतना ही सन्तोष है कि इस अन्त समय में भी इस शरीर का उपयोग हो जायगा। मैं व्यर्थ जान देने के पाप का भागी नहीं बनूंगा।

कोनिशे–मैं दृढ़ता से कह सकता हूँ कि यह युद्ध आपके लिये कल्याणकर होगा। आप एक दम से दूसरे ही व्यक्ति होकर लौटेंगे। अपने भाई को गुलामी से छुड़ाने के उद्योग में जी-जान की परवाह न

करना ही सच्ची वीरता है। ईश्वर आपकी सहायता करे और आपकी आत्मा को शान्ति दे।

इतना कह कर कोनिशे ने अपना हाथ बढ़ाया। रंस्की (उसके हाथ को अपने हाथ में लेकर) इस काम में मैं किसी उपयोग का हो सकता हूँ; पर मनुष्य के नाते तो मुझमें कुछ तत्त्व नहीं रह गया है।

उसके दाँतों का दर्द बढ़ रहा था। वह कठिनाई से बोल सकता था। इसी समय उसके हृदय में ऐसी ज्वाला उठी कि क्षण भर के लिये वह अपना सारा दुःख भूल गया। जिस समय वह कोनिशे से बातें कर रहा था, उसकी निगाह सामने की गाड़ी पर पड़ी। उसे अन्ना का स्मरण हो आया। उसे मालूम हुआ मानों इन्जन के नीचे से अन्ना कह रही है—"तुम्हें अपने किये पर पछताना पड़ेगा।" वेदना के उसी वेग में वह दो कदम और आगे बढ़ा। उसने पूछा—"कल से फिर कोई समाचार युद्ध क्षेत्र से नहीं आया?"

इतने में दूसरी घंटी बजी और उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही सब के सब गाड़ी में घुस गये।

३

कोनिशे ने अपने आगमन की सूचना तक नहीं दी थी। स्टेशन से किराये की गाड़ी पर सवार होकर, वह कतासो को साथ लिये पहुंच गया। लेविन घर पर मौजूद नहीं था। किटी बाहर बरामदे में बैठी, अपनी माँ और बाबा से बातें कर रही थी। उसने दूर से ही कोनिशे को पहचान लिया और उनका स्वागत करने के लिये वह दौड़ी। अभिवादन

की कुछ सेवा कर सकता हूँ ?

रंस्की-आप क्षमा करेंगे। मुझे इन्सान की सूरत से ही नफरत हो गई, अब इस जीवन में मुझे कोई सार नहीं दिखाई देता।

कोमिशे—मैं अच्छी तरह समझता हूं। मैंने आपको केवल इस लिये कष्ट दिया कि आप विदेश जा रहे हैं। कदाचित् मुझसे आपकी किसी तरह की सेवा बन पड़े। अगर आप कहें तो मिलन के नाम एक पत्र लिख दूं।

रंस्की-नहीं, क्यों कष्ट कीजियेगा। क्या मृत्यु के पास भी परिचय की आवश्यकता पड़ेगी ?

इतना कह कर उसने रूखी हँसी हँस दी।

कोनिशे-दो चार आदमियों से जान-पहचान रहने में सुविधा होती है।...पर आपकी जैसी इच्छा हो। आपकी तैयारी का समाचार सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। इस समय स्वयंसेवक सेना का संचालन आप जैसे योग्य व्यक्ति के हाथ में ही होना चाहिये। उन पर कई आक्रमण हो चुके।

रंस्की-इस जीवन का, मेरी दृष्टि में कोई मूल्य नहीं रह गया है। हां, मेरी भुजाओं में इतना बल अवश्य है कि मैं शत्रुओं की गर्दन धड़ से अलग कर दूंगा। मुझे इतना ही सन्तोप है कि इस अन्त समय में भी इस शरीर का उपयोग हो जायगा। मैं व्यर्थ जान देने के पाप का भागी नहीं बनूंगा।

कोनिशे-मैं दृढ़ता से कह सकता हूँ कि यह युद्ध आपके लिये कल्याणकर होगा। आप एक दम से दूसरे ही व्यक्ति होकर लौटेंगे। धर्मी भाई को गुलामी से छुड़ाने के उद्योग में जी-जान की परवाह न

करना ही सच्ची वीरता है। ईश्वर आपकी सहायता करे और आपकी आत्मा को शान्ति दे।

इतना कह कर कोनिशे ने अपना हाथ बढ़ाया। रंस्की (उसके हाथ को अपने हाथ में लेकर) इस काम में मैं किसी उपयोग का हो सकता हूँ; पर मनुष्य के नाते तो मुझमें कुछ तत्त्व नहीं रह गया है।

उसके दाँतों का दर्द बढ़ रहा था। वह कठिनाई से बोल सकता था। इसी समय उसके हृदय में ऐसी ज्वाला उठी कि क्षण भर के लिये वह अपना सारा दुःख भूल गया। जिस समय वह कोनिशे से बातें कर रहा था, उसकी निगाह सामने की गाड़ी पर पड़ी। उसे अन्ना का स्मरण हो आया। उसे मालूम हुआ मानों इञ्जन के नीचे से अन्ना कह रही है—"तुम्हें अपने किये पर पछताना पड़ेगा।" वेदना के उसी वेग में वह दो कदम और आगे बढ़ा। उसने पूछा—"कल से फिर कोई समाचार युद्ध क्षेत्र से नहीं आया?"

इतने में दूसरी घंटी बजी और उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही सब के सब गाड़ी में घुस गये।

३

कोनिशे ने अपने आगमन की सूचना तक नहीं दी थी। स्टेशन से किराये की गाड़ी पर सवार होकर, वह कतासो को साथ लिये पहुंच गया। लेविन घर पर मौजूद नहीं था। किटी बाहर बरामदे में बैठी, अपनी माँ और बाबा से बातें कर रही थी। उसने दूर से ही कोनिशे को पहचान लिया और उनका स्वागत करने के लिये वह दौड़ी। अभिवादन

किटी के पिता की आवाज सुनाई दी।

किटी – मालूम होता है, बाबा मेरे विषय में बातें करने लगे।······पर अभी तक वे नहीं आये। मालूम होता है, शहर की मक्खियों का छोता देखने फिर गये हैं। उनकी तबीयत वहां खूब लगती है। पिछले वसन्त में उनकी जो अवस्था थी, उससे तो अच्छी है। उस समय तो वास्तव में मुझे उनके लिये चिन्ता हो गई थी। वे भी विचित्र जीव हैं।

किटी से यह बात छिपी नहीं थी कि लेविन की परीशानी का क्या कारण है? लेविन नास्तिक था। उसका ईसाई-धर्म में विश्वास नहीं था। पर इससे किटी को दुःख नहीं था। वह ईसाई-धर्म में पक्का विश्वास रखती थी। वह जानती थी कि नास्तिक की मुक्ति नहीं है और इसीलिए उसने कहा था—"वे भी विचित्र जीव हैं।"

किटी सोचने लगी—"साल भर से वे दर्शन-शास्त्र के पीछे क्यों पड़े हैं? अगर इन पुस्तकों में इस बात का खुलासा है, तो वे मजे में समझ सकते हैं, अगर नहीं है तो वे क्यों पढ़ने का प्रयास करते हैं। वे कहते हैं कि मैं चाहता हूँ कि धर्म में मेरी भक्ति हो; पर उनका झुकाव क्यों नहीं होता? मेरी समझ में तो यही आता है कि वे सोचते बहुत हैं, उनकी इस चिन्ता में निमग्न रहने का कारण यह है कि उनका कोई साथी नहीं है। उस तरह की बातें तो हम लोगों से अधिक हो नहीं सकतीं। अब इन लोगों के आने से उनकी तबीयत अवश्य खुश होगी। कतासो से बात-चीत करने में उनकी तबीयत खूब लगती है·········पर श्रीमती स्टाल ने जिस तरह का ढोंग रच रखा था, उससे तो नास्तिक ही अच्छा है। ढोंग रचना तो उन्हें पसन्द नहीं।"

इसी समय उसकी उदारता की एक बात उसे याद आ गई।

करने के बाद उसने कहा—"आपने खबर तक नहीं दी। गाड़ी भेज दी गई होती।"

कोनिशे—किसी तरह की तकलीफ नहीं हुई। मेरे कपड़े बड़े गन्दे हैं। तुमसे हाथ मिलाते भी शर्म मालूम होती है। इधर तो हमें मरने की भी फुरसत नहीं रही। देखें कब उद्धार होता है।

किटी—आपके भाई साहब गांवों का दौरा कर रहे हैं। सौजाबन्दी का समय है।

कतासे—हमारे लेविन साहब को खेतों से कभी भी फुरसत नहीं मिलती। शहर में सर्विया युद्ध की धूम मची हुई है। मैं समझता हूँ वे अभी इसकी चर्चा भी नहीं करते होंगे।

किटी—(खिन्न होकर) मैं कुछ नहीं कह सकती।......अभी उन्हें बुलाने के लिये आदमी भेजे देती हूँ। पिताजी यात्रा से हाल में ही लौटे हैं। आज-कल यहीं हैं।

लेविन को बुलाने के लिये आदमी भेज कर मेहमानों के रहने का, नहाने धोने का तथा भोजन आदि का प्रबन्ध कर किटी बरामदे में लौट आई और बोली-"उनके भाई साहब हैं और कतासे है। कतासे मास्को के बड़े भारी अध्यापक हैं।

किटी के पिता—वह तो उनकी टोपी ही बतला देती है।

किटी—बड़े ही अच्छे आदमी हैं बाबा, बहिन डाली, जरा तुम उनके खाने-पीने का प्रबन्ध करो, मैं बच्चे को दूध पिलाती आऊँ। उठ कर रो रहा होगा। स्टेशन पर जीजाजी से भी मुलाकात हुई थी, मजे में हैं।

इतना कह कर किटी बच्चे के कमरे में गई। बच्चा रो रहा था। किटी बच्चे को सुलाने लगी। इतने में बगल के कमरे में कतासे और

करने के बाद उसने कहा—"आपने खबर तक नहीं दी। गाड़ी भेज दी गई होती।"

कोनिशे—किसी तरह की तकलीफ नहीं हुई। मेरे कपड़े बड़े गन्दे हैं। तुमसे हाथ मिलाते भी शर्म मालूम होती है। इधर तो हमे मरने की भी फुरसत नहीं रही। देखें कब उद्धार होता है।

किटी—आपके भाई साहब गांवों का दौरा कर रहे हैं। सौजाबन्दी का समय है।

कतासो—हमारे लेविन साहब को खेतों से कभी भी फुरसत नहीं मिलती। शहर में सर्बिया युद्ध की धूम मची हुई है। मैं समझता हूँ वे अभी इसकी चर्चा भी नहीं करते होंगे।

किटी—(खिन्न होकर) मैं कुछ नहीं कह सकती।......अभी उन्हें बुलाने के लिये आदमी भेजे देती हूँ। पिताजी यात्रा से हाल में ही लौटे हैं। आज-कल यहीं हैं।

लेविन को बुलाने के लिये आदमी भेज कर. मेहमानों के रहने का, नहाने धोने का तथा भोजन आदि का प्रबन्ध कर किटी बरामदे में लौट आई और बोली-"उनके भाई साहब हैं और कतासो है। कतासो मास्को के बड़े भारी अध्यापक हैं।

किटी के पिता—वह तो उनकी टोपी ही बतला देती है।

किटी—बड़े ही अच्छे आदमी हैं बाबा, बहिन डाली, जरा तुम उनके खाने-पीने का प्रबन्ध करो, मैं बच्चे को दूध पिलाती आऊँ। उठ कर रो रहा होगा। स्टेशन पर जीजाजी से भी मुलाकात हुई थी, मजे में हैं।

इतना कह कर किटी बच्चे के कमरे में गई। बच्चा रो रहा था। किटी बच्चे को सुलाने लगी। इतने में बगल के कमरे में कतासो और

किटी के पिता की आवाज सुनाई दी।

किटी – मालूम होता है, बाबा मेरे विषय में बातें करने लगे।...... पर अभी तक वे नहीं आये। मालूम होता है, शहर की मक्खियों का छोता देखने फिर गये हैं। उनकी तबीयत वहां खूब लगती है। पिछले वसन्त में उनकी जो अवस्था थी, उससे तो अच्छी है। उस समय तो वास्तव में मुझे उनके लिये चिन्ता हो गई थी। वे भी विचित्र जीव हैं।

किटी से यह बात छिपी नहीं थी कि लेविन की परीशानी का क्या कारण है? लेविन नास्तिक था। उसका ईसाई-धर्म में विश्वास नहीं था। पर इससे किटी को दुःख नहीं था। वह ईसाई-धर्म में पक्का विश्वास रखती थी। वह जानती थी कि नास्तिक की मुक्ति नहीं है और इसीलिए उसने कहा था–"वे भी विचित्र जीव हैं।"

किटी सोचने लगी–"साल भर से वे दर्शन-शास्त्र के पीछे क्यों पड़े हैं? अगर इन पुस्तकों में इस बात का खुलासा है, तो वे मजे में समझ सकते हैं, अगर नहीं है तो वे क्यों पढ़ने का प्रयास करते हैं। वे कहते हैं कि मैं चाहता हूँ कि धर्म में मेरी भक्ति हो; पर उनका झुकाव क्यों नहीं होता? मेरी समझ में तो यही आता है कि वे सोचते बहुत हैं, उनकी इस चिन्ता में निमग्न रहने का कारण यह है कि उनका कोई साथी नहीं है। उस तरह की बातें तो हम लोगों से अधिक हो नहीं सकतीं। अब इन लोगों के आने से उनकी तबीयत अवश्य खुश होगी। कतासो से बात-चीत करने में उनकी तबीयत खूब लगती है.........पर श्रीमती स्टाल ने जिस तरह का ढोंग रच रखा था, उससे तो नास्तिक ही अच्छा है। ढोंग रचना तो इन्हें पसन्द नहीं।"

इसी समय उसकी उदारता की एक बात उसे याद आ गई।

करीब पन्द्रह दिन हुए, अब्लास्की ने डाली के पास बड़ी नम्रता से लिखा था—"अगर तुम अपनी सम्पति बेचने के लिये राजी नहीं होगी तो मेरा मर्यादा चली जायगी। कर्ज के बोझ से मैं दबा जा रहा हूँ।" डाली निराशा में पागल हो रही थी। अब्लास्की की अकर्मण्यता पर उसे क्रोध और क्षोभ हो रहा था। डालीने पहले तो उसे साफ इन्कार कर उनसे संबंध ही तोड़ डालना चाहा; पर पीछे कुछ समझ बूझ कर उसने एक हिस्सा बेच डालना स्वीकार किया।

लेविन डाली की सहायता करना चाहता था। पर कुछ कहने का उसे साहस नहीं होता था। क्योंकि वह डरता था कि कहीं डाली को इससे दुःख न हो। अन्त में उसे एक उपाय सूझो। उसने किटी से कहा—"तुम अपना हिस्सा—जो तुम्हारे बाप से मिला है—डाली को दे दो। इससे दोनों बात बनी रह जायगी। डाली की तकलीफ भी मिट जायगी। उसे दुःख भी नहीं होगा।" इस घटना का स्मरण कर किटी की आंखों में प्रेम और आनन्द के आंसू आ गये। किटी ने मन ही मन कहा—"नास्तिक ही सही। पर इस तरह का हृदय किसने पाया है, एक बच्चे तक का जी वह नहीं दुखाना चाहते। दूसरों के लिये अपना सर्वस्व निछावर करने के लिये तैयार हैं। अपनी कुछ भी फिकर नहीं करते। कोनिशे और उनकी बहिन भी उन्हें अपना नौकर समझती हैं। उन्होंने डाली और उनके बच्चों को अपनी देख-रेख में ले लिया है। किसान लोग रोज उनके यहां पहुंचे रहते हैं, मानों उन्हें नौकर रख लिया है?"

बच्चा गहरी नींद में सो गया। किटी ने उसे बिस्तरे पर सुलाते हुए उससे कहा—"अपने पिता का अनुकरण हर तरह से करना।"

४

निकोले की मृत्यु के बाद ही लेविन में एक विचित्र परिवर्तन आ गया था। उसके बाल्यकाल की धार्मिक धारणा लुप्त होकर उसके स्थान पर नये विचारों का उद्गम होने लग गया था और वह उन्हीं विचारों की सार्थकता पर गौर करता-फिरता था। उसे अब मृत्यु की चिन्ता नहीं सताती थी। मृत्यु तो उसे साधारण बात या घटना प्रतीत होती थी; पर जीवन को ही वह विस्मय से देखता था। उसे यही देख कर आश्चर्य होता था कि—"इतने विघ्नों और बाधाओं के रहते भी मनुष्य कैसे जीता है।" ये विचार उस के हृदय में कहां से उठते थे, क्यों उठते थे, कैसे उठते थे, वह नहीं जानता था; पर इनको वह अपने सामने सदा वर्तमान पाता था।

जब से लेविन के मन में यह नवीन धारणा उत्पन्न हुई थी, उसने उस पर गम्भीरता पूर्ण विचार नहीं किया था। पर उसे इस बात का खेद था कि उसके पूर्ण महत्त्व को समझने की उसमें योग्यता नहीं है।

विवाह के नये समारोह में कुछ दिन के लिये ये बातें वह भूल गया था; पर इधर प्रसव-काल में मास्को में बेकार बैठे रहने के कारण उसे फिर उस प्रश्न ने परीशान करना आरम्भ किया। उसके मन में रह-रह कर यह प्रश्न उठता—"ईसाई धर्म में जो कुछ इस के संबंध में कहा गया है, अगर उस पर मेरा विश्वास नहीं तो मुझे क्या करना चाहिये।" जो कुछ वह पढ़ता, जिस किसी से वह बातें करता, वह सदा इसी प्रश्न का उत्तर खोजता। एक बात उसे और भी खलती थी। उसने देखा कि उसके साथी सभी लोग—जिनका विश्वास उसी के

समान था—अपने पुराने मत को छोड़ कर भी उदास नहीं हैं। इस अवस्था में भी उन्हें उतना ही सन्तोष है, जितना पहले था। इस से रह-रह कर उसके मन में यह प्रश्न उठता—"क्या ये लोग अपने मत के सच्चे नहीं थे? क्या ये लोग केवल खेलवाड़ कर रहे थे? क्या इन लोगों ने इस प्रश्न को मुझसे साफ समझा या इन्हें किसी बात की चिन्ता नहीं है।" इस लिये वह दत्तचित्त होकर इनका मत और इस विषय की पुस्तकें, दोनों का अध्ययन करने लगा।

इधर एक बात उसे नई मालूम हुई थी। स्कूल के दिनों में उसका विश्वास था कि—"अब धर्म का जमाना नहीं रहा। धर्म अपना प्रभुत्व खो चुका।" विचारपरिवर्तन के बाद अध्ययन करने से उसे विदित हुआ कि उसकी धारणा गलत थी। उसने देखा कि जिन लोगों पर उसकी विशेष श्रद्धा है, सभी धार्मिक हैं। किटी के पिता लो, कोनिशे, उसकी पत्नी तथा रूस के ९९ निवासी—जिनके लिये वह अपना प्राण तक निछावर कर सकता था—ईसाई धर्म को मानते हैं। दूसरी बात उसने देखा कि लोग पुराने विश्वास वाले हैं, वे इन प्रश्नों का कोई ठीक-ठीक उत्तर नहीं देते। केवल मुख्य प्रश्न को टाल देते हैं। तीसरे किटी के प्रसव के समय में एकाएक उसके हृदय से ईश-वन्दना के शब्द निकल पड़े थे।

इस प्रकार वह एक विचित्र दुविधा में पड़ गया था। वह किसी एक तरफ अपना चित्त स्थिर नहीं कर सकता था। किसी एक निर्णय पर पहुँचने के लिये वह बराबर पुस्तकों का अध्ययन करता और मनन करता; पर वह कभी भी किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सकता था। इस तरह उसने इस विषय पर प्रायः सभी प्रधान पुस्तकें पढ़ डालीं। जिस समय

इन पुस्तकों को वह पढ़ रहा था, उसे प्रतीत हुआ कि उसे कुछ सारयुक्त बातें विदित हो रही हैं; पर जब वह उन पर विचार करने लगता तो वही संशय, फिर उसके सामने आ उपस्थित होता।

इससे उसका चित्त स्थिर नहीं रहता था। उसके मनको शान्ति नहीं मिलती थी और वह सदा उदास रहा करता था। उसने एक दिन नैराश होकर कहा—"मैं क्या हूँ और मैं यहाँ किसलिये आया हूँ, इसे जाने बिना, इस जीवन को एक दिन के लिये भी चलाना व्यर्थ है। मैंने अपनी सारी चेष्टा करके देख लिया कि मुझे इसका पता नहीं लग सकता, इसलिये मेरा जीना ही निरर्थक है। यह जीवन एक पानी का बुलबुला है, जो न जाने कब पैदा होता है और कब विलीन हो जाता है।"

इस धारणा से लेविन को आन्तरिक यातना हुई; फिर भी वह इतने परिश्रम के बाद इसी परिणाम पर पहुंचा।

किंतु इससे भी उसे सन्तोष नहीं था। वह सदा यही सोचता रहा—"मनुष्य को इस मुक्ति-धारणा से पिण्ड छुड़ाना चाहिये और उसका एक मात्र उपाय मृत्यु ही है।"

इस ख्याल से उसे इतनी पीड़ा हुई कि उसने कई बार आत्म-हत्या की तैयारी तक कर ली; पर भाग्यवश उसने यह दुस्साहस नहीं किया।

जब कभी उसके मन में यह धारणा आती कि वह क्या है और वह क्यों आया है तो उसे कुछ भी उत्तर नहीं मिलता था और वह निराश हो जाता था। इसलिये उसने इस तरह के प्रश्न करने छोड़ दिये। इसके बाद उसने इस तरह का आचरण आरम्भ किया, मानों वह सब कुछ समझता-बूझता है।

जून में वह देहातों में दौरा करने गया। वह अपना सब काम पहले-

की तरह करने लगा। पर इन कामों में उसे वह सन्तोष नहीं था, जो उस आदमी को होता है, जो किसी काम को कर्तव्य समझ कर करता है। इन सब से उसमें एक विचित्र परिवर्तन आ गया था। जो काम किसी दिन वह सार्वजनिक लाभ के ख्याल से करता था, वही काम आज वह अपने निजी लाभ के ख्याल से करने लगा। उसने देखा कि सार्वजनिक लाभ के ख्याल से, वह जो काम करता था, उसमें उसका भाव सर्वथा विशुद्ध होते हुए भी, आदि से अन्त तक एक तरह का उत्साह नहीं रहता था; पर अपने निजी लाभ के ख्याल से वह जो काम करने लगता, उसमें उसे पूरा संतोष मिलता और वह उसे हर तरह आवश्यक समझता।

यह विचार जितना अधिक उसके हृदय पर अधिकार करता गया, लेविन को उतनी ही अधिक आवयश्कता, इस बात की प्रतीत हुई कि वह अपनी सम्पत्ति की रक्षा और वृद्धि के लिये उतना ही तत्पर और दत्तचित्त होकर काम करे। उसने कहा—"मेरा यह कर्तव्य है कि मैं इस सम्पत्ति को सम्हाल कर रखूं। जिससे मैं अपने पुत्र को, इसे उसी अवस्था में दे सकूं, जिस अवस्था में मैंने अपने पिता से प्राप्त की थी।"

इसके साथ ही कोनिशे और अपने बहिन की जमींदारी की देख-रेख भी उसे करनी पड़ती थी। जो किसान उसके पास सलाह लेने के लिये आते थे। उन्हें वह सलाह भी देता था। डाली और उसके बच्चों की भी देख-रेख वह करता था, अपनी स्त्री और पुत्र को भी वह सम्हाल रखता था। इन सब कामों में कुछ समय व्यतीत न करना, वह कर्तव्य से गिरना समझता था। इधर उसने शहद की मक्खी भी पालना प्रारम्भ कर दिया था। इस तरह उसका सारा दिन कट जाता था।

लेविन यह भी भली-भांति समझता था कि इन सब कामों को फलता पूर्वक चलाने के लिये, उसे क्या करना चाहिये? सस्ते से त्ते दर पर, मजूर पाना आवश्यक था, पर वह किसी से शर्त लिखाना हीं चाहता था और प्रचलित दर से कम भी नहीं देना चाहता था। लेकिन चारे की कमी के समय किसानों का पुआल बेचना, जंगल से लकड़ी काटनेवाले को दण्ड देना वह अनुचित नहीं समझता था; पर अगर किसी की गाय उसके के खेत में पड़ जाय तो वह दण्ड-देना अनुचित समझता था।

वोटिपर किसी महाजन का कर्जदार था। उस महाजन को वह दस रुपये सैकड़े सूद देता था। लेविन ने रुपया देकर उसे मुक्त करना, अपना कर्तव्य समझा था। पर वह किसी रैयत के यहां बाकी नहीं छोड़ता था और कौड़ी-कौड़ी माल गुजारी चुका लेता था। अगर काम की भीड़ के समय, कोई मजूर गैर हाजिर हो जाता है, तो वह किसी भी अवस्था में उसे क्षमा करने के लिये तैयार नहीं होता और उसको तनखाह में से गैरहाजिरी के दिन की मजूरी काट लेता। वह बूढ़े नौकरों को पेंशन देने में कभी भी नहीं हिचकता था।

यह सब काम उचित है कि अनुचित, वह कुछ परवाह नहीं करता था और न उस पर कभी विचार करता था। उसने देखा था कि जब कभी वह किसी बात पर विचार करने बैठता है, तो वह मिथ्या संशय का शिकार बन जाता था। लेकिन जिस समय वह स्वयं विचार करना छोड़ देता था तो उसकी आत्मा उसके कार्यों का निरीक्षण करती थी और जब कोई गलत काम वह करता था, तो उसे उसी समय पता लग जाता था।

इस लिये लेविन ने इस बात की चिन्ता छोड़ दी थी कि यह जीवन क्या है और हम किस लिये पैदा हुए हैं। इस अज्ञानता से उसे बड़ा दुख था और कभी-कभी तो उसकी वेदना इतनी अधिक बढ़ जाती थी कि वह आत्म-हत्या तक के लिये उतारू हो जाया करता था; पर उसने आज तक ऐसा दुस्साहस नहीं किया और सारा काम उसी तरह चलाता रहा।

५

जुलाई का महीना, लेविन की कठिन परीक्षा का समय है। इसी पर उसका पूरा वर्ष निर्भर करता है। यदि इस समय थोड़ी भी असावधानी दिखाई गई तो परिणाम हानिकर होता है। बड़े-बूढ़े, औरत-मर्द, बालक-बालिका सभी इस समय दूने और चौगुने परिश्रम से काम करते हैं। जो कभी भी कुछ नहीं करता, वह भी इस समय हाथ चलाये बिना नहीं रह सकता।

सवेरे नाश्ता-पानी करके वह खेत पर चला जाता था और बोआई का काम देखता था। उस दिन भी वह सदा की भाँति, घोड़े पर सवार होकर, खेत पर आया और डांड़पर खड़ा होकर काम देख रहा था। देखते-देखते वह विचार-सागर में डूब गया—"यह सब काम किस लिये हो रहा है? मैं यहां खड़ा-खड़ा क्यों प्राण दे रहा हूँ और उन बेचारे मजूरों का क्यों प्राण ले रहा हूँ? वे सब क्यों इस तरह जान देकर काम कर रहे हैं? बुड्ढा मेट्रोना क्यों इतना परिश्रम कर रहा है? एक न एक दिन सब को मरना है। आज सभी अपना-अपना जोश दिखला र

है, पर इसका अन्तिम परिणाम क्या है ?......"

इधर तो वह यह सब सोच रहा था, उधर घड़ी निकाल कर देखता जाता था कि घंटे भर में कितना काम होता है, क्योंकि उसी हिसाब से उसे सारे काम का अन्दाज़ लगाना था। लेविन ने घड़ी देखी। एक बज रहा था। उसने कहा—"एक बज रहा है और अभी तीसरी पैंठी आरम्भ हुई है।" वह हलवाहे के पास गया और बोला—"ठीक तरह से बीज छोड़ो। देख नहीं रहे हो कि ज्यादा छोड़ने से छेद भर जाता है और दाना बाहर नहीं निकलता।"

हलवाह पसीने से तर था। उसने उत्तर में कुछ कहा। लेकिन दाना उसी तरह डालता गया। लेविन उसके हाथ से छीन कर आप बोने लगा। इसी तरह भोजन के समय तक वह स्वयं काम करता था। भोजन के समय, जब सब मजूर खाने लगे तो वह उस हलवाहे के साथ बातें करने लगा। उसने पूछा—"क्यों, प्लेटन यह खेत लेगा ?"

प्लेटन उसी गांव का खुशहाल किसान था।

हलवाह—उसे परता नहीं पड़ता। वह नहीं लेगा। मालगुजारी अधिक है।

लेविन—फिर दूसरे लोगों को कैसे परता पड़ता है ?

हलवाह—दूसरे लोगों को परता पड़ सकता है। उन्हें किसी पर जरा भी रहम नहीं है। वे पीस कर अपनी कौड़ी-कौड़ी चुका लेते हैं। पर प्लेटन ऐसा नहीं करता। वह भी इन्सान है। किसी को संकट में देख कर उसका दिल पसीज जाता है। वह मालगुजारी तक छोड़ देता है।

लेविन—कोई ऐसा क्यों करे ?

हलवाह—अपना-अपना दिल ही तो है। कोई अपने सामने किसी

की परवाह नहीं करता। उसे दीन दुनिया की फिकर नहीं। पर प्लेट ईश्वर-भक्त है।

लेविन–ईश्वर-भक्त होने से क्या हुआ? आत्मा के लिये जीना तो क्या?

हलवाह–जरूरी है। आप अपनी ही बात लीजिये। क्या आ किसी को वृथा सताना पसन्द करेंगे?

लेविन उत्तेजित हो उठा था। वह बोला—"हां-हां, तुम्हारा कहन ठीक है।" इतना कह कर उसने अपनी छड़ी उठाई और इधर-उध टहलने लगा।

हलवाहे के अन्तिम शब्द उसके मस्तिष्क में गूंजने लगे। उरे मालूम होने लगा, मानों कोई नई बात, जो अब तक कहीं अन्धेरे में बन्द थी, उसके सामने चली आ रही है।

आज लेविन के सामने पुनः धर्म संबंधी नई समस्या उपस्थित होने लगी और उसी विचार में वह मग्न हो गया।

उसके हलवाह के मुँह से जो शब्द निकले थे, उनमें बिजली का असर था। उनके प्रभाव से लेविन के मन में विचित्र स्फूर्ति पैदा होगई थी। इस समय उसके समस्त छिन्न-भिन्न विचार एकत्रित होगये थे। इस समय उसकी आत्मा एक नये आनन्द का अनुभव कर रही थी, पर उसे उसका ज्ञान नहीं था। वह सोचने लगा–"यह कहता है कि केवल अपने लिये नहीं; बल्कि ईश्वर के लिये? क्या ही बेवकूफी भरी बातें हैं। मनुष्य को अपने लिये नहीं जीना चाहिये अर्थात् जो हम समझते-बूझते हैं, जिसे हम प्रत्यक्ष देखते हैं, उसकी तो हम परवाह न करें और उस ईश्वर की चिन्ता करें, जिसे न किसी ने देखा है और न जिसका कोई

वर्णन कर सकता है। पर इससे क्या? क्या मैंने इसकी बातें समझीं नहीं? क्या उन्हें समझ कर, मैंने किसी तरह का सन्देह किया? क्या मैंने उसकी बातों को प्रगल्भ, निरर्थक और वाहियात समझा। नहीं, मैंने भी उन्हें उसी तरह समझा, जिस तरह वह समझता है। जीवन के सब से सारगर्भित प्रश्न को मैं जिस तरह समझता हूँ, उससे भी अच्छी तरह मैंने इन्हें समझा है। केवल मैं ही नहीं, सारा विश्व समझता है और यही एक प्रसंग है, जिसमें किसी का मतभेद नहीं है।"

वह फिर मन ही मन कहने लगा—"मैं सदा यही कहता रहा कि जब तक कोई असाधारण या चमत्कार नहीं दिखलाई देता, तब तक मैं ईश्वर पर विश्वास करने के लिये तैयार नहीं हूँ। पर मैं तो अन्धा था, मेरे चारों ओर चमत्कार ही चमत्कार तो दिखाई देता है; पर मुझे देखने की दृष्टि ही नहीं थी। हलवाहा कहता है कि किरलो केवल अपने पेटका ख्याल करता है। यह उचित भी है। हमलोग सभी इससे अधिक क्या कर सकते हैं। लेकिन साथ ही वह यह भी कहता है कि-"यह उचित नहीं है। हम लोगों को ईश्वर और न्याय का सदा ध्यान रखना चाहिये।" और मेरी समझ में उसका कहना ठीक है। इस संबंध में भी किसी का मत भेद नहीं है। पर उसके बारे में कोई भी स्पष्ट, बात नहीं कह सकता।"

भावों का वेग बड़ी तीव्र गति से लेविन के हृदय में उठ रहा था—"क्या मेरी समस्या आज हल हो गई! क्या आज मेरी यातनाओं का अन्त होता है?" वह एक पेड़ के नीचे बैठ गया और आप ही आप कहने लगा—"मुझे आज फैसला कर लेना चाहिये। अभी मुझे क्या बात मालूम हुई है? मैं खुश क्यों हूँ? आज मैंने क्या हासिल किया है? मुझे कोई नई बात नहीं मालूम हुई है? यह तो मैं पहले से ही जानता था। यही

शक्ति मुझे पहले भी जीवन प्रदान करती थी और आज भी जीवन-प्रदान कर रही है। पर आज मेरे हृदय से अन्धकार का परदा उठा है और आज मुझे ईश्वर का सच्चा प्रकाश मिला है।'

"मैं कहा करता था कि शारीरिक, वैज्ञानिक, रासायनिक और मानसिक नियमों द्वारा समस्त जीवधारी के शरीर में—चाहे वह प्राणीवर्गका हो, चाहे वनस्पति वर्गका हो,—लगातार परिवर्तन हुआ करता है। और क्रमबद्ध विकास हुआ करता है। पर यह विकास कहां से कहां होता है? अनन्त विकास और संघर्ष, मानों अनन्त की यही प्रकृति है। लाख यत्न करने पर भी मैं कुछ समझ नहीं सका। पर आज मुझे एकाएक इसका पता लग गया। मेरा जीवन ईश्वर के लिये उत्सर्ग है। इसका अर्थ स्पष्ट है कि इसमें एक विचित्र तरह का भेद प्रतीत होता है। संसार की प्रत्येक वस्तु का यही रहस्य है। कोई भी इस रहस्य से अलग नहीं है।"

इतना कह कर वह अपनी पूर्वावस्था पर विचार करने लगा कि इन दो वर्षों में उसे किन-किन यातनाओं का सामना करना पड़ा था, तथा क्या-क्या संकट भुगतना पड़ा था और उसने क्या-क्या संकल्प किया था। उन सब का क्या अभिप्राय था। यही कि हम भ्रम में थे। हमारा विचार गलत था। पर हमारा जीवन ठीक रास्ते पर था।

उसने यही निश्चय किया कि आज से, वह उन्हीं विचारों के अनुसार अपनी जीवन-यात्रा चलावेगा, जो उसने अपनी मां के दूध के साथ ग्रहण किया है। उसने सोचा—"अगर मैंने आज तक इसका अनुसरण नहीं किया होता तो मेरा जीवन कितना पापमय हो गया होता। मैं दूसरों को लूटना, खसोटना, मेरे जीवन में सुखका आभास तक नहीं रह गया

होता। मैं पशुवत् रहता। मैंने इतना सोचा-विचारा; पर मेरे प्रश्नों का कहीं से उत्तर नहीं मिला। मुझे किसी प्रकार भी सन्तोष नहीं हुआ। आज उसका उत्तर मुझे अपने जीवन से ही मिल गया। विचार में कदाचित् वह आशंका, वह कलह, बराबर बनी रहती।"

उसी समय उसे एक दृश्य याद आ गया। एक दिन की बात है, डाली के लड़के खीर पकाने लगे और बर्तन से दूध निकाल-निकाल कर फेंकने लगे। डाली ने उन्हें यह तमाशा देख कर डांटा। वह बोली—"इससे अगर प्याला फूटा तो चाय किसमें पियोगे और अगर दूध गिर गया तो चाय किसमें बनेगी? सब के सब भूखों मर जाओगे।"

लेकिन मांकी बात लड़कों को नहीं अच्छी लगी। उनके खेल में मां की यह बाधा नहीं जँची। उन्हें इस बात का विश्वास भी नहीं हुआ कि जिस चीज़ को वे इस तरह नाश कर रहे हैं, वह उनके जीवन के लिये इतनी उपयोगी है। उन्होंने सोचा—"यह सब बातें ऐसे ही हुआ करती हैं। इसलिये इस पर सोचना-विचारना भी उचित नहीं। हम लोग नई बात निकालना चाहते हैं और उसके लिये हमें काम करना चाहिये, इस-लिये हम लोगों ने प्याले में दूध रखकर पकाना शुरू किया और इस तरह छिड़कने लगे। क्या यह तमाशा कम है?"

लेविन उन्हीं से अपनी तुलना कर रहा। वह मन में कहने लगा—"क्या मेरी ठीक यही अवस्था नहीं थी? क्या मैं नई बात के पता लगाने में अपने जीवन के सार का नाश नहीं कर रहा था? क्या दर्शन-शास्त्र के सिद्धान्त यही नहीं कर रहे हैं? वे ऐसी-ऐसी बातें सामने लाकर रख देते हैं, जिन्हें हम किसी भी तरह प्राकृत नहीं कह सकते। और वे कोई नई बात नहीं सिखलाते। यह ज्ञान इतना प्राकृत है कि

इसके बिना हम एक मिनिट भी नहीं चल सकते ।

लेविन अपने प्रश्नो का आपही उत्तर दे रहा था—"लड़कों को उसी तरह आनन्द मनाने के लिये छोड़ दो और गाय का ताजा दूध दुह कर लाओ । क्या उस समय भी वे शरारत करेंगे ? क्यों वे भूखे मर जायँगे ! इसी तरह हम लोगों को ईश्वर के ख्याल बिना उचित-अनुचित के ज्ञान के छोड़ दीजिये ।"

"अब कोशिश करके देखिये कि आप क्या करते हैं ।"

"अब हम लोग हाथ लगाकर उसका नाश कर देंगे, ठीक लड़कों की तरह ।"

लेविन ने सोचा—"यह भाव मुझे कहां से मिला, जो मुझे इतनी शान्ति दे रहा है ।" जिस ईश्वर ने मुझे पैदा किया, जो मेरा सर्वस्व है, जिसकी बदौलत मैं जी रहा हूँ, उसीका मैं नाश कर रहा था । क्या यह लड़कों की-सी लीला नहीं थी और लड़कों की तरह भूख लगते ही मैं चिल्ला उठा और देखा कि मेरे जीवन का स्रोत उलटे मार्ग से बह रहा है । जो कुछ हम जानते हैं, विचार और धारणा से नहीं; बल्कि ईश्वर ने यह समझ मुझे जन्म के साथ दिया है और यह सदा मेरे साथ रहेगी । तो क्या मैं धर्म के सभी सूत्रों पर विश्वास कर सकूँगा ?

इतना कह कर उसने धर्म के सूत्रों की आवृत्ति आरम्भ की । उसने देखा कि एक भी सूत्र ऐसे नहीं हैं, जिनसे उसके धर्म के विश्वास पर ज़रा भी आघात पहुंचे ।

उसे मालूम होने लगा कि प्रत्येक सूत्र ईश्वर में आस्था को दृढ़ करता है; सदिच्छा के लिये प्रेरणा करता है । उसे मालूम होने लगा कि इस विस्मय को पूरा करने के लिये । प्रत्येक सूत्र आवश्यक और

निवार्य है। इसी सिद्धान्त पर सब चलते हैं और सब के चलने का
द्धान्त एक है। इसी के सहारे लोग अपनी आत्मा का मनन करते हैं
ौर वही सब से अधिक मूल्यवान् है।

वह वहीं लेट गया और आसमान की ओर देख कर बोला—"क्या मैं
ह नहीं जानता कि यह शून्य है, जो कि एक गोलाकार है। पर जहां तक
दृष्टि दौड़ाइये, यही देखने में आता है कि आसमान गोल है और
क्षितिज के बाहर उसकी दौड़ान नहीं है। इसी पर मैं लाल, काला,
नीला, टुकड़ा देखता हूँ। उस समय भी मेरा यही विश्वास रहता है;
और उसकी शून्यता का स्मरण कर उसके आगे दृष्टि दौड़ाने का
प्रयास करता हूँ। उस समय भी मेरी यही अवस्था रहती है।"

वह स्थिर हो कर बैठ गया। उसे मालूम हुआ मानों उसके हृदय
के भीतर कोई हँस-हँस कर बातें कर रहा है।

उसे इस खुशी पर विश्वास नहीं हुआ। उसने आशंका भरे शब्दों
में कहा—"क्या यह विश्वास की बदौलत है? दयामय! मैं तुम्हें सौ
बार प्रणाम करता हूँ।"

इतना कहते-कहते लेविन आंखों से आंसू निकल आये और वह
घुटने टेक कर दोनों हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगा।

६

लेविन उसी तरह वहां बैठा था। इसी समय सईस घोड़े पर सवार
वहां पहुँचा। वह बोला—"आपके भाई साहब और एक मेहमान आये
हैं। आपको बुलाने के लिये मालकिन ने भेजा है।"

लेविन फौरन उठ बैठा और घोड़े पर सवार हो गया; पर उसका

हाथ-पैर काबू में नहीं था। मानों वह गहरी नींद से उठा हो। अब लेविन घर की बातें सोचने लगा–"भाई साहब आये हैं, मिहमान कौन है? मैं आज दिन भर यहीं रह गया, किटी घबराती होगी।" आज सब तरफ वह नई बातें देखने लगा।

वह फिर सोचने लगा–"अब मुझमें वह उदासी नहीं रहेगी, विवाद नहीं होगा। किटी से प्रेम-कलह भी नहीं होगा। मेहमान की खातिर-दारी में मैं और भी तत्पर रहूँगा। सब के साथ मेरा व्यवहार एक दम भिन्न होगा।"

लेविन अपने विचारों में इस तरह निमग्न था कि रास उसके हाथ में ठीक तरह से नहीं थी। उसके सामने खन्दक थी। सचेत करने के लिये सईस ने कहा–"सरकार रास ठीक कर लीजिये।"

लेविन बिगड़ गया। वह बोला–"फजूल बक-बक मत करो।"

सईस चुप हो गया। लेविन पछताने लगा–"मैं कितना भूल कर रहा था। मैं इस भ्रम में था कि आज ही मेरी सभी बुरी आदतें छूट जायंगी और मुझमें परिवर्तन हो जायगा।"

वह घर से मील भर दूर था, तभी उसने देखा कि ग्रीशा और टेनिया दौड़ी, उसकी ओर चली आ रही हैं। और वह बोली–"मेहमान लोग आये हैं। सभी लोग आ रहे हैं।"

इतना कहते-कहते दोनों दो तरफ से रिकाब पर चढ़ गये।

लेविन–मेहमान कौन है?

टेनिया–(उसी तरह रिकाब पर पैर रखकर) बड़ा भयानक आदमी है। वह सदा हाथ हिलाया करता है।

लेविन—(हँसकर) जवान है कि बुड्ढा?

इतने में लेविन ने देखा कि सामने से सब लोग आ रहे हैं। देखते ही वह कतासो को पहचान गया। कतासो उसी तरह अपना हाथ झुलाते आ रहे थे। कतासो को दर्शन-शास्त्र से बड़ा प्रेम था। वे उस विषय की मीमांसा कर रहे थे। मास्को में लेविन के साथ कई बार इस प्रसंग पर बात-चीत भी हो चुका थी।

लेविन घोड़े से उतर पड़ा और भाई से तथा कतासो से मिलकर उसने डाली से किटी का समाचार पूछा।

डाली—वह बच्चे को लेकर पास की झाड़ी में खेल रही है। घर में गर्मी अधिक थी, इसलिये वह वहां चली गई।

लेविन ने उसे कई बार मना किया था, इससे उसका यह आचरण उसे पसन्द नहीं आया।

किटी के पिता—वह किसी का कहना नहीं मानती। बच्चों को लेकर इधर-उधर घूमा करती है। मैंने उससे कहा था कि वर्फ की टट्टी लगवा लो।

डाली—उसने सोचा था कि तुम शहद की मक्खियों की देख-रेख करते होगे, इसलिये वह वहीं आने को कह गई है, हम लोग भी वहीं जा रहे थे।

कोनिशे—तुम्हारा क्या हाल-चाल है?

लेविन—कोई नई बात नहीं है। खेती की धुन उसी तरह समाई है और उसी में लगा रहता हूँ। आपकी तबीयत कैसी है? दो महीने से आपकी बाट जोह रही हूं। आप मई में ही आनेवाले थे। अब तो कुछ दिन रहियेगा न?

कोनिशे—अधिक से अधिक पन्द्रह दिन। इस समय सिर पर काम का भार अधिक है।

इस समय दोनों भाई की चार आंखें हुईं। लेविन हृदय से चाहता था कि वह अपने पुराने भाव को बदल दे और अधिक स्नेह से मिले और बातें करे; पर उसकी आंखें झुक गईं।

लेविन ने कोनिशे की पुस्तक की प्रसंग छेड़ी। क्योंकि वह जानता था कि कोनिशे को इसमें सब से अधिक आनन्द मिलेगा। और उसने जान बूझ कर सर्विया के युद्ध का प्रसंग नहीं छेड़ा। उसने पूछा—"किन-किन पत्रों ने आपके ग्रन्थ की समालोचना की ?"

कोनिशे से यह बात छिपी न रही कि लेविन यह प्रश्न क्यों कर रहा है। उसने हंस दिया। वह बोला—"अब उस विषय से किसी को श्रद्धा नहीं रही। सब से अधिक वैराग्य मुझे उत्पन्न होगया है। (सामने बादल का एक टुकड़ा देखकर) मालूम होता है, पानी बरसेगा।"

कोनिशे के इन शब्दों में उदासीनता के भाव थे, जिन्हें लेविन दूर करना चाहता था।

लेविन वहां से हटकर कतासो के पास गया। वह बोला—"आपने यहां आने का कष्ट उठाकर बड़ी कृपा की।"

कतासो—बहुत दिनों से इरादा कर रहा था; पर सुयोग नहीं मिलता था। इधर तुम स्पेन्सर की दार्शनिक मीमांसा पढ़ रहे थे। उस पर कुछ बातें करने का अवसर मिलेगा।

लेविन—मैंने अधूरी ही उसे छोड़ दिया और अब पढ़ने का भी विचार नहीं है।

कतासो—क्यों ? वह पुस्तक तो बड़ी रोचक है।

लेविन—मैंने अच्छी तरह देख लिया कि मेरे मन में जो सन्देह ...... हुआ है, वह इन ग्रन्थों से नहीं दूर हो सकता। इस लिये अब...

इसी समय कत्तासो के गम्भीर और प्रसन्न चेहरे पर उसकी दृष्टि पड़ी। उसने अपने मन में कहा—"इस विषय की चर्चा से मेरे हृदय में फिर आन्दोलन उपस्थित हो जायगा और मेरी शान्ति भंग हो जायगी। अब मुझे इस प्रसंग की चर्चा नहीं करनी चाहिये। यह रह गया। फिर वह बोला—"फिर बातें की जायंगी। क्या शहद की मक्खियों का कोठा देखने चलने की इच्छा है?"

वह अपने मेहमानों को लेकर उसी तरह कुछ दूर तक जाकर, पेड़ की छाया में इन लोगों को खड़ा कर के खेतों के पास गया।

दूर से ही मक्खियों की भन-भनाहट सुनाई दे रही थी। लेविन सम्हल-सम्हल कर झोपड़ी में गया, तिस पर भी एक मक्खी उससे चिपट गई। किसी तरह उससे पिण्ड छुड़ा कर वह आगे बढ़ा। उसने खूंटी से कुर्ता उतारा और पहन लिया और मक्खियों के बीच में चला गया। वह खड़ा होकर मक्खियों का तमाशा देखने लगा। कोई उड़ रही है, कोई आ-जा रही है, कोई खोते पर बैठी है और कोई फूलों पर बैठी रस चूस रही है। उनकी अनवरत गुञ्जार से उसका कान भर गया। कुछ दूर पर माली नया खोता तैयार कर रहा था। न तो उसने लेविन को देखा और न लेविन ने ही उसे पुकारा।

इस क्षणिक एकान्तवास से उसे बड़ा सुख मिला। उसकी सारी चिन्ता-जनित थकावट छूट गई। सईस पर वह बिगड़ गया था, कोनिशे से इसी उदासीनता से पेश आया था और कत्तासो के साथ उसी उत्तेजना के साथ उसने बातें किया था। इसका उसे खेद था, वह भी दूर हो गया।

वह सोचने लगा—"क्या वे सौम्य विचार केवल उसी दो घड़ी के लिये आये थे। क्या वे इस तरह हमें छोड़ कर चले जायँगे और उनको

शीतल छाया का लेश भी मेरे साथ नहीं रह जायगा ?" पर उसी क्षण उसने विचार करदेखा कि उसके जीवन में परिवर्तन आ गया है। अभी तो आरम्भ हुआ है ! उस शान्ति पर वास्तविक जीवन का प्रभाव अभी एक दम से कैसे मिट सकता है ? पर उसकी जागृत अन्तरात्मा पर इस चिन्ता का प्रभाव नहीं पड़ सका, यद्यपि उसकी गति उतनी स्वतन्त्र नहीं थी, जितनीहो सकती है।

लेविन वहां से शहद और ककड़ी आदि लेकर लौटा। डाली ने बच्चों को शहद और ककड़ी देते हुए कहा—"तुमने सुना है, रंस्की सर्विया के युद्ध में शामिल होने गया है। कोनिशे उसी गाड़ी में आये हैं, जिसमें वह जा रहा था।"

कतासो-वह अपने व्यय से सैनिकों की एक टोली भी ले गया है।

लेविन-यह उसके अनुरूप है। (कोनिशे से) क्या स्वयं-सेवक सेना अभीतक जा रही है ?

कोनिशे शहद की एक मक्खी की लीला में इस तरह फँस गया था कि उसे उत्तर देने की सुध-बुध नहीं रही। वह कुछ नहीं बोला।

कतासो-हां, कल स्टेशन पर का दृश्य देखने ही लायक था। अफसोस ! तुम नहीं थे।

किटी के पिता-मेरी समझ में इसका अर्थ नहीं आ रहा है। कोनिशे ! कृपा कर ज़रा मुझे भी समझाओ कि इस युद्ध का क्या अभिप्राय है। क्यों इतनी जानें जा रही हैं ?

कोनिशे-तुर्कों ने सर्विया में भयानक अत्याचार किया है, उन्हीं से युद्ध हो रहा है। उन्हीं से लड़ने यह सेना जा रही है।

किटी के पिता-पर इस युद्ध की घोषणा किसने की है ? मेरी समझ

में तो इवानोविच, रगाजो, लीडिया और [illegible]

की प्रेरणा और चाल का यह फल है।

कोनिशे—युद्ध की घोषणा तो किसी ने नहीं की है। [illegible]

यातना से जिनका दिल पिघल गया है, वे ही [illegible]

खड़े हुए हैं।

लेविन—यहां सहायता की बात कौन पूछ रहा है! [illegible]

तो युद्ध की बात पूछ रहे हैं। इनका कहना है कि [illegible]

बिना प्रजा युद्ध में कैसे भाग ले सकती है?

कतासो—(लेविन से) आप अपने सिद्धान्त को [illegible]

कीजिये कि राजा के अनुशासन बिना प्रजा को क्यों अधिकार नहीं है।

लेविन—सुनिये, युद्ध क्या है? ईश्वर की सृष्टि का घोर [illegible]

के साथ संहार करना। इतने बड़े पाप की जिम्मेदारी अपने सिर पर [illegible]

एक व्यक्ति नहीं ले सकता। इतनी भारी जिम्मेदारी केवल राजा ले

सकता है और वह भी केवल उस अवस्था में, जब ऐसा करने के लिये

वह बाध्य किया गया हो। राजनीति, विज्ञान तथा प्रकृत धर्म दोनों डंके

की चोट पर यह बात कहते हैं कि-"जहां तक राजा से संबंध है—खासकर

युद्ध के विषय में—प्रजा को अपने व्यक्तिगत अधिकार का सर्वथा त्याग

करना पड़ता है। उसे अपने व्यक्तित्व को राजा के व्यक्तित्व में मिला देना

पड़ता है।"

कतासो और कोनिशे दोनों अपना-अपना उत्तर तैयार कर

लेविन के कथन की समाप्ति की प्रतीक्षा कर रहे थे। दोनों एक साथ ही

बोल उठे।

कतासो—कभी-कभी ऐसी अवस्था उपस्थित हो जाती है कि राजा

प्रजा की बातों पर ध्यान नहीं देता । उस समय प्रजाको बाध्य होकर अपना प्रभाव दिखाना पड़ता है।

कतासो को बोलते देख कोनिशे चुप होगया था। पर उसे कतासो का उत्तर ठीक नहीं जंचा। उसने मुँह बनाकर कहा—"आपने ठीक उत्तर नहीं दिया। असल बात यह है कि यहां युद्ध का कोई प्रसंग ही नहीं है। यहां तो धर्म का प्रश्न है। हम ईसाई हैं, इसलिये सच्चे ईसाई की हैसियत से अपने हृदय के सच्चे धार्मिक भाव को व्यक्त करना चाहिये। हमारे ईसाई भाई पीसे जा रहे हैं। अगर हमारा इतना भी संबंध न होता तो भी केवल मनुष्यत्व के नाते प्रत्येक व्यक्ति को इसमें शामिल होकर इस तरह के अत्याचार का प्रतीकार करना उचित होता। मानलो कि तुम सड़क से चले जा रहे हो, सामने से एक पियक्कड़ आ रहा है। उसने ढेला तानकर किसी निर्दोष स्त्री या बच्चे पर चलाया। उस समय तुम क्या करोगे? तुरंत उनकी रक्षा के लिये तैयार हो जाओगे या जाँच करोगे कि किसने पहले अपराध किया?"

लेविन—पर एक की रक्षा के लिये मैं दूसरे को मार नहीं डालूंगा।

कोनिशे—तुम बड़ी निर्दयता से उसे मार डालोगे।

लेविन—मैं नहीं कह सकता। मुमकिन है कि वह दृश्य देखकर उस समय मेरी वही दशा हो जाय। पर मैं अभी से उसी तरह का दृढ़ विचार नहीं प्रगट कर सकता हूँ। स्लाव लोगों की, सताये जाने की जो कथा प्रचलित है, उसके संबन्ध में तो यह बात लागू नहीं हो सकती।

कोनिशे—तुम्हारी समझ में न हो; पर औरों का विचार तो यही है। इन तुर्कों ने जो-जो जुल्म किया है, उसे अभी तक कोई भूल नहीं गया है। स्लाव लोग अब भी रो-रो कर उसका स्मरण करते हैं।

लेविन-हो सकता है। पर मैं नहीं जानता। मैं भी मनुष्य हूँ; लेकिन मुझे इन कथाओं को सुनकर, उस तरह का जोश नहीं आता।

किटी के पिता-मेरी भी यही हालत है। मैं अभी विदेश में भ्रमण करता चला आ रहा हूँ। समाचार-पत्रों में प्रति-दिन इसीकी चर्चा पढ़ा करता था। बलगेरिया वालों के कत्ले-आम के पहले, मेरी समझ में यह बात नहीं आती थी कि क्या कारण है कि रूस वालों की ओर से इस तरह की प्रेमधारा एका-एक बह निकली; पर मेरे हृदय में तो एक बार भी उत्साह नहीं आया। मुझे खेद भी हुआ। मैंने सोचा शायद यह उम्र की तासीर है। पर यहां (रूस में) आकर मुझे शान्ति मिली। मैंने देखा कि मेरे समान और भी हजारों रूसी हैं, जिन्हें स्लाव वालों से कुछ नहीं करना है।

कोनिशे-ऐसे विषयों पर व्यक्तिगत मत की प्रधानता नहीं चल सकती। खास कर जब रूस की समस्त प्रजा ने एक स्वर से अपना-अपना मत प्रगट कर दिया है।

किटी के पिता—अगर आप सचमुच विचार कर देखियेगा तो मालूम होगा कि प्रजा इस संबंध में कुछ नहीं जानती।

डाली-आप यह नहीं कह सकते। गत रविवार को गिरजा में क्या हुआ था?

किटी के पिता-क्या हुआ था। पोप साहब के पास एक पत्र भेज दिया गया था और पढ़कर सुनाने के लिये कह दिया गया था। उन्होंने पढ़ा। पर लोगों ने खाक नहीं समझा। सब उनने कहा—"कि [illegible] काम के लिये यह चन्दा हो रहा है।" लोगों ने [illegible] दो-पैसा डाल दिया; पर किसी की समझ में

कोनिशे—प्रजा बिना समझे नहीं रह सकती। प्रजा अपने आप की विधाता है। ऐसे अवसरों पर उसके हार्दिक भाव अवश्य ही प्रगट होते हैं।

पास ही माली हाथ में शहद का प्याला लिये खड़ा था। कोनिशे की बातों का एक अक्षर भी उसकी समझ में नहीं आया। पर उसने सिर हिलाकर कहा—"आपका कहना यथार्थ है।"

लेविन—इसीसे पूछिये। न तो यह उस युद्ध के बारे में कुछ जानता है और न किसी प्रकार की धारणा है। उसने पूछा—"क्या तुमने सर्विया के युद्ध के बारे में कुछ सुना है? गिरजे में क्या परचा पढ़ा गया था? उस संबंध में तुम्हारा क्या विचार है? क्या हमें उन ईसाइयों के लिये प्राण गवाना चाहिये?"

माली—हम लोगों को क्या सोचना चाहिये। निकोलस हम लोगों के बादशाह हैं। उन्हें हम लोगों की चिन्ता है। इन सब बातों को वे ही अच्छी तरह समझ सकते हैं।

कोनिशे—इसकी मुझे कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। मैं तो प्रति-दिन यही लीला देख रहा हूँ। सैकड़ों आदमी प्रति-दिन मेरे पास आते और धर्म के नाम पर सर्वस्व निछावर करके युद्ध में शामिल होते हैं। इसका क्या मतलब है?

लेविन का मिजाज धीरे-धीरे गर्म हो गया। वह बोला—"मेरी समझ में तो यही बात आई है कि इतने भारी साम्राज्य में कुछ ऐसे लोग अवश्य होंगे, जिनके जीवन का कोई स्थिर उद्देश्य नहीं है और वे बेगारी के टट्टू की भांति हर जगह जाने को तैयार रहेंगे।"

कोनिशे को भी गुस्सा आ गया था। उसने चिढ़कर कहा—"मैं बेगार

के टट्टुओं की बात नहीं कर रहा हूँ, बल्कि रूस के बड़े-बड़े लोगों की बातें कर रहा हूँ। इस तरह के लोग चन्दा दे रहे हैं।"

लेनिन—"जनता" शब्द ही धोखे की टट्टी है। चन्द पढ़े-लिखे भले ही इस बात को समझते हों और उसमें योग देने के लिये तैयार हों; पर अधिकांश जनता जो अपढ़ है, इस विषय में कुछ नहीं जानती। ऐसी दशा में जनता के नाम पर यह गप करना, मुझे न्याय-संगत नहीं प्रतीत होता।

कोनिशे बहस करने में बड़ा चतुर था। उसने लेनिन की इस बात का उत्तर नहीं दिया। चट बात बदल कर, वह बोला—"अगर तुम जनता के मत की गणना करके निश्चय करना चाहते हो तो बड़ा ही कठिन है। क्योंकि एक तो हम लोगों में वोट लेने-देने की प्रथा नहीं है और न उससे सच्चे मत का पता ही लगता है। पर दूसरे तरीके हैं, जिनसे हम लोग किसी निर्णय पर पहुंच सकते हैं। वह हृदय की प्रेरणा है। इस समय चारों ओर से यही एक आवाज उठ रही है। सारे भेद-भाव लोग भूल गये हैं। दल-बन्दियां टूट गई हैं और एक साथ ही सब लोग इस अखाड़े में कूद पड़े हैं। सभी समाचार-पत्र वाले यही एक प्रश्न लेकर चल रहे हैं।

किटी के पिता—आप का कहना मैं मान लेता हूँ। पर मैं एक बात पूछता हूँ। तूफान आने के पहले मेंढक एक स्वर से चिल्लाने लगते हैं; पर क्या कोई उनकी चिल्लाहट पर ध्यान देता है।

कोनिशे—चाहे आप उन्हें मेंढक कहें या और कुछ। मैं किसी पत्र का सम्पादक नहीं हूँ और न मैं उनकी सफाई देना चाहता हूँ। मेरा कहना तो केवल यही है, इस समय शिक्षित-समुदाय इस प्रश्न पर एक-मत हो रहा है।

लेविन इसका उत्तर देना चाहता था; पर किटी के पिता ने उसे बाधा देकर कहा—"उस संबंध में भी कुछ कहा जा सकता है। आप अब्लास्की मेरे दामाद को तो जानते ही होंगे। उसने अभी एक नौकरी की है। उसे आठ हजार रुपया वेतन मिलता है; पर काम कुछ नहीं करता है। अगर आप उससे पूछें तो वह यही कहेगा कि इस पद पर मैं जितना काम करता हूँ, उसके अनुरूप ही मुझे वेतन मिलता है। वह झूठ कभी भी नहीं बोलता। पर मैं साहस से कह सकता हूँ कि उस पद पर आठ हजार रुपया मासिक देना, अपव्यय है।"

कोनिशे को किटी के पिता की यह बात अप्रासंगिक जँची। उसने कहा—"इन्होंने मुझे एक सन्देश भी दिया था।"

किटी के पिता—समाचार-पत्रों को अपनी आमदनी बढ़ाने का अच्छा अवसर मिल जाता है और वे इससे लाभ उठाते हैं। नहीं तो उन्हें स्लाव वालों और जन साधारण के भाव से क्या करना है।

कोनिशे—मैं समस्त पत्रों की बात नहीं कह सकता। पर यह रिमार्क अनुचित है।

किटी के पिता—मैं सिर्फ एक शर्त लगा देना चाहता हूँ। आपको स्मरण होगा कि प्रसन युद्ध के पहले कार ने कहा था—"आप लोग समझते हैं, कि युद्ध अनिवार्य है। अच्छी बात है। जो लोग इसके पक्षपाती हैं, उन्हें अपना संगठन कर सब से पहले आगे बढ़ने के लिये तैयार होना चाहिये।"

कतासो—इन अखबार वालों को सबसे पहले भेजना चाहिये।

दार्सी—अगर वे भागने लगें तब ?

किटी के पिता—पीछे से हम लोग तड़-तड़ावेंगे।

लेविन कहने जा रहा था कि यह मजाक का भी समय नहीं है। इसी समय कोनिशे बोल उठा—"हर एक आदमी हर एक काम नहीं कर सकता। विचारवान् लोग युक्ति बताते हैं और उनका यही काम है। [illegible] वर्ष पहले किसे बोलने का साहस होता था, पर इस समय रूस की प्रजा का हृदय जागृत हो उठा है और लोग अपना-अपना मत इसी जागृति के अनुसार प्रकट कर रहे हैं।"

लेविन—एक तरफ बलिदान और दूसरी ओर तुर्कों की हत्या! कैसा दृश्य है। बलिदान आत्मा के लिये होता है, हत्या के लिये नहीं।

कतासो—आत्मा के लिये? क्या तुम आत्मा की बातें समझते हो? प्रकृत विचार वाले के लिये आत्मा का प्रश्न बड़ा जटिल है।

लेविन—आप तो जानते ही होंगे।

कतासो—मैं ईश्वर को साक्षी देकर कहता हूँ कि मैं आत्मा की बात कुछ नहीं समझता।

कोनिशे—ईसामसीह ने कहा है "मैं शान्ति लेकर नहीं आता; बल्कि तलवार लेकर आता हूँ।" कोनिशे ने यह अवतरण सब से सहज समझ कर दिया था। पर लेविन आज तक इसी वाक्य पर विचार करता आया था और कुछ निर्णय नहीं कर सका था।

किटी के पिता—आपका कहना ठीक है।

कतासो—(लेविन से) बस, तुम्हारा पराजय हो गया।

लेविन का चेहरा घबराहट से लाल हो गया। उसे पराजय का पछतावा नहीं था। उसे इस बात का परिताप था कि वह अपने को शक में नहीं रख सका। उसने अपने मन में कहा—"मुझे इनसे बहस नहीं करनी चाहिये थी। वे हर तरह सुसज्जित हैं और

खाली हाथ हूँ।"

उसने देखा कि न तो वह उन दोनों व्यक्तियों को सन्तुष्ट कर सकता है और न स्वयं उनके मन का हो सकता है। उन्हें विद्या का मद था और उसीने उनका नाश किया था। वह यह मानने के लिये तैयार नहीं था कि हजार दो हजार आदमियों के कहने में आकर ये लोग जनता के नाम पर किसी तरह की घोषणा कर सकते हैं; जिसका परिणाम बदला और हत्या है। उसने देखा, न तो जन-साधारण इसके लिये तैयार है और न उसकी आत्मा गवाही दे रही है। वह यह भी स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं था कि इससे किसी तरह का सार्वजनिक लाभ हो सकता है।

वह कहना चाहता था कि अगर सार्वजनिक मत ही सर्व प्रधान है तो राजक्रान्तियों को हम लोग जायज क्यों नहीं मानते? उनकी निन्दा क्यों करते हैं? पर उसके उन विचारों में स्थिरता नहीं थी। उसने एक बात प्रत्यक्ष देखी। विवाद जितना बढ़ता जाता था, उतना ही कोनिशं का क्रोध भी बढ़ता जाता था। इससे उसने आगे कुछ कहना उचित नहीं समझा। इसलिये उसने कहा—"काले-काले बादल असमान पर आ रहे हैं। पानी बरसने की संभावना है। इससे जल्दी घर पहुँच जाना चाहिये।"

७

बादल आसमान में इकट्ठे होते गये। चारों ओर अंधेरा छा गया। निश्चय घनघोर वर्षा की आशंका प्रतीत होने लगी। सब का दिल

दहल गया । लोग दौड़ पड़े । घर पहुंचते-पहुंचते बूंदें पड़ने लगीं ।

किटी अभी तक नहीं लौटी थी । लेविन का चेहरा फक हो गया । पत्नी और पुत्र दोनों का अभी तक पता नहीं । वहीं से वह मुड़ पड़ा । वाटरप्रूफ ओढ़कर वह झाड़ी की ओर चला ।

घनघोर वर्षा हो रही थी । हाथ को हाथ नहीं सूझता था । रह-रह कर बिजली कड़क-कड़ककर कलेजा दहला देती थी । पर लेविन को इसकी चिन्ता नहीं थी । उसका सारा ध्यान किटी और बच्चे की ओर था । हाथ से झाड़ियों को हटाता पानी से लथ-पथ आगे बढ़ाता जाता था ।

इस तरह वह वहां पहुंचा जहां किटी बहुधा बैठा करती थी । पर वहां उसका पता नहीं था । लेविन सन्न हो गया । काटो तो खून नहीं । मन में कहा—"भगवन् ! तू ही उसकी रक्षा कर ।" इतने में कड़कड़ाहट का घनघोर शब्द हुआ । बिजली गिरी और साथ ही एक नीबू के पेड़ को लेती जमीन पर सो गई । लेविन का हृदय फट रहा था । "वे कहां हैं ? उन पर क्या बीत रही है ?" यही सोचता वह आगे बढ़ा ।

इतने में पानी का वेग कुछ कम हुआ । रोशनी हुई । लेविन ने देखा कि एक नीबू के पेड़ के नीचे किटी और दासी झुकी खड़ी हैं और पराम्बुलेटर (बच्चों की गाड़ी) को दोनों ने तोप रक्खा है । किटी एक दम से भीग गई थी । बच्चा बेदाग था ।

किटी ने लेविन को देखा । वह डर और घबराहट के मारे सहम गई थी । फिर भी उसके चेहरे पर मन्द मुस्कराहट आगई ।

लेविन—(क्रोध में) ऐसी लापरवाही मैंने कहीं नहीं देखी । तुम्हें ज़रा भी ख्याल नहीं ।

किटी—इसमें मेरा कोई दोष नहीं है । हम लोग जाना ही -

कि……

किटी अपनी सफाई देने लगी।

लेविन ने बच्चे को छूकर देखा कि वह गहरी नींद में सो रहा है और उसपर एक बूंद भी पानी नहीं पड़ा है।

वहां से तीनों आदमी बच्चे को लेकर घर लौटे। लेविन को दुख था कि उसने किटी को कड़ी बात कही। दासी की निगाह बचा कर उसने उसका मुंह चूम लिया।

८

लेविन ने सोचा था कि मेरे विश्वास में जो परिवर्तन आया है, उस से मेरा कायापलट हो जायगा; पर उसकी आशा फलवती नहीं हुई। अपने प्रत्येक व्यवहार में वह उसी पूर्वावस्था का अनुभव कर रहा था। इससे वह दुखी अवश्य था, पर उसका हृदय उमंगों से भरा था।

पानी बरस जाने के बाद बाहर निकलना कठिन होगया था, दूसरे आकाश भी साफ नहीं था, इससे घर में भी बैठ कर दिन काटना लोगों ने तै किया।

वाद-विवाद तो एकदम से बन्द हो गया था। भोजन के बाद हरएक का हृदय उल्लास से भर गया था। एक-एक करके लोग आये और बरामदे में बैठ गये। कतामो उठा और विदूषक का अभिनय करने